L H 342
AN
122055
LBSNAA

ी राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी
Academy of Administration
मसूरी
MUSSOORIE
पुस्तकालय
LIBRARY

अवाप्ति संख्या
Accession No. ~~10757~~ 122055
वर्ग संख्या GLH
Class No. 342
पुस्तक संख्या
Book No. ~~गैट~~ GAH

आधुनिक विश्व की प्रमुख शासन-प्रणालियाँ

(MAIN CONSTITUTIONS OF THE MODERN WORLD)

[आगरा विश्वविद्यालय की बी० ए० (प्रथम वर्ष) परीक्षा के राजनीति-शास्त्र के द्वितीय प्रश्न-पत्र के हेतु]

लेखक

प्रो० डी० एन० गैंद, बी० ए० (गोल्ड मैडलिस्ट), एम० ए०
(इतिहास एवं राजनीति-शास्त्र), बी० टी०, एल-एल बी०
बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा।

तथा

प्रो० आर० पी० शर्मा, एम० ए०, बी० टी०
बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा

प्राक्कथन

डॉ० बी० एन० मेहता, एम० ए०, पी-एच० डी०
अध्यक्ष, इतिहास व राजनीति-शास्त्र विभाग,
बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा

आगरा ... यपुर

प्रथम संस्करण—१९५३
द्वितीय संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण—१९५४
तृतीय संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण—१९५६
चतुर्थ आद्योपान्त संशोधित एवं परिवर्द्धित संस्करण—१९५७

प्रकाशक :
रतन प्रकाशन मन्दिर,
राजामण्डी, आगरा।

मुद्रक :
प्रेम इलैक्ट्रिक प्रेस,
राजामण्डी, आगरा।

मूल्य ६।।) रु० मात्र

चतुर्थ संस्करण के प्रति दो शब्द

प्रस्तुत संस्करण के प्रति हमें विशेष नहीं कहना है। केवल इतना कहना ही पर्याप्त होगा कि प्रस्तुत पुस्तक को जो आशातीत सफलता प्राप्त हुई है वह उसकी उपयोगिता की साक्षी है। हमें विश्वास है कि पुस्तक विद्यार्थियों को अधिकाधिक लाभदायक सिद्ध होगी।

पुस्तक को अधिक लाभदायक बनाने के हेतु इसमें कतिपय उद्धरण और भी समाविष्ट कर दिए गए हैं। साथ ही साथ यत्र-तत्र पाठ्य-वस्तु में भी वृद्धि कर दी गई है और जिन देशों के संविधानों की इसमें व्याख्या की गई है उनसे सम्बन्धित नवीन परिवर्तनों की ओर भी संकेत कर दिया गया है।

आशा है विद्यार्थीगण पुस्तक से अधिक प्रभावित होंगे और इसे अधिक उपयोगी पावेंगे।

हम उन समस्त पाठक-समुदाय के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं जिन्होंने पुस्तक के प्रति अपनी विशेष रुचि प्रदर्शित की है। उसी का यह परिणाम है कि हमें इसमें आशातीत प्रोत्साहन मिला है और हममें पुस्तक की उत्तरोत्तर सर्वप्रियता के प्रति विश्वास बढ़ा है।

आगरा
१५ फरवरी, १९५७

डी० एन० गैंद
आर० पी० शर्मा

तृतीय संस्करण के प्रति दो शब्द

हमें यह लिखते हुए अति हर्ष का अनुभव होता है कि हमारे इस प्रयास को आशातीत सफलता प्राप्त हुई है। पुस्तक की सफलता उसकी उपयोगिता के ऊपर निर्भर करती है और इस पुस्तक की सफलता यह सिद्ध करती है कि पुस्तक पाठकों को कितनी उपयोगी साबित हुई है। हमें आशा है कि विद्यार्थी समुदाय इसका पूर्ववत् आदर करेगा।

प्रस्तुत संस्करण में पुस्तक को अधिकाधिक उपयोगी बनाने के हेतु यत्र-तत्र पाठ्य-वस्तु में पर्याप्त मात्रा में वृद्धि कर दी गई है। कतिपय नवीन उद्धरण भी समावेष्ठित कर दिये गये हैं और विद्यार्थियों की ज्ञान-वृद्धि के साथ-साथ परीक्षा सम्बन्धी सुविधा का भी ध्यान रक्खा गया है। हमें पूर्ण विश्वास है कि विद्यार्थी पुस्तक के इस संस्करण से और भी अधिक आकर्षित होंगे।

तृतीय संस्करण को पाठकों के समक्ष प्रस्तुत करते समय हमें अपने प्रकाशक महोदय को अवश्य धन्यवाद देना है जिन्होंने पुस्तक को अति सुन्दर ढंग से छपाया है और जिसको सुन्दर रूप देने में उन्होंने कोई कसर नहीं उठा रक्खी है। प्रथम व द्वितीय संस्करण की अपेक्षा प्रस्तुत संस्करण का कागज व छपाई वास्तव में प्रशंसनीय है। प्रकाशक महोदय का उत्साह सराहनीय है।

हम उन समस्त पाठक-समुदाय के आभारी हैं जिनसे हमें पुस्तक को अधिक उपयोगी बनाने के लिये कुछ सुझाव मिले। उन सब का इस संस्करण में समावेश कर दिया गया है। आशा है भविष्य में पुस्तक उत्तरोत्तर सर्वप्रियता प्राप्त करती जावेगी।

आगरा
७ फरवरी, १९५६

डी० एन० गौड़
आर० पी० शर्मा

द्वितीय संस्करण के प्रति दो शब्द

पुस्तक की विद्यार्थियों के लिये जो उपयोगिता सिद्ध हो जाती है और विद्यार्थियों द्वारा लेखकों को जो प्रोत्साहन मिलता है उसका माप करना कठिन है। हमारी पुस्तक की जो इतनी प्रगति हुई कि एक वर्ष के उपरान्त ही इसके द्वितीय संस्करण की आवश्यकता हुई, इस बात की सूचक है कि पुस्तक वास्तव में विद्यार्थी-समुदाय के लिए अत्यन्त उपयोगी है। हमें इस बात पर अत्यन्त हर्ष है और अपने प्रयास पर गर्व भी है।

द्वितीय संस्करण को अधिक उपयोगी बनाने के लिए इसमें स्थान-स्थान पर उचित परिवर्तन कर दिये गये हैं और आवश्यक पाठ्य-वस्तु को भी जोड़ दिया गया है जिससे कि पुस्तक अन्य विश्वविद्यालयों के छात्रों के लिये भी उपयोगी हो सके। हमें पूर्ण आशा है कि पुस्तक पूर्णरूपेण विद्यार्थी-वर्ग की आवश्यकताओं की पूर्ति करेगी और उनकी तुलनात्मक अध्ययन-शक्ति को बढ़ायेगी। हमें बड़ी खुशी होगी और हम उन पाठकों के बहुत आभारी रहेंगे जो हमें वस्तु-सम्बन्धी अथवा अन्य कोई सुझाव दें ताकि यदि पुस्तक में कोई त्रुटि है तो हम उसे दूर करने का प्रयत्न करें।

हम विद्यार्थियों के समस्त सुझावों को ध्यान में रखकर उन्हें पूर्ण सन्तोष देने का प्रयत्न करेंगे।

इस संस्करण में पुस्तक को और भी सुन्दर रूप दिया गया है। पाठ्य-वस्तु के साथ-साथ इसका बाह्य आवरण भी पहले से अधिक सुन्दर है। इस सम्बन्ध में हम अपने प्रकाशक महोदय को बहुत-बहुत धन्यवाद देते हैं।

आगरा
१ अक्टूबर, १९५४

डी० एन० गैद
आर० पी० शर्मा

दो शब्द

श्री द्वारकानाथ गैंद ने भारतीय विश्वविद्यालयों की डिग्री कक्षाओं में राज्य-विज्ञान के छात्रों के लिये यह पुस्तक लिखी है और इसमें ग्रेट ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियट रूस, स्विट्ज़रलैण्ड तथा भारतवर्ष के संविधानों का वर्णन किया है। संसार के विभिन्न प्रकार के संविधानों का श्री द्वारकानाथ जी ने बड़ा अच्छा अध्ययन किया है और वे कई वर्षों से उच्च कक्षाओं के छात्रों को संविधानों की शिक्षा भी दे रहे हैं। इस पुस्तक को लिखने में उन्होंने अपने विशद् अध्ययन तथा अनुभव का पूर्ण उपयोग किया है और विभिन्न राज्यों के संविधानों का वर्णन तथा उनके गुण-दोषों का आलोचनात्मक विवेचन बड़े सुन्दर ढङ्ग से किया है। सुगम शैली, सरल भाषा, छात्रों के लिये आवश्यक सामग्री का समावेश, तुलनात्मक अध्ययन तथा निष्पक्ष समीक्षा—ये इस पुस्तक की ऐसी विशेषताएँ हैं जिनके कारण यह छात्रों के लिये निस्सन्देह उपयोगी सिद्ध होगी। छात्रों के लिये ही नहीं, सामान्य नागरिकों के लिये भी, जो संसार के इन प्रमुख देशों के संविधानों एवं शासन-प्रणालियों का ज्ञान प्राप्त करना चाहते हैं, यह पुस्तक बड़े काम की होगी। पुस्तक की भाषा और शैली तो सन्तोषप्रद है परन्तु पारिभाषिक शब्दों के विषय में यह बात नहीं कही जा सकती। किन्तु इसमें श्री द्वारकानाथ जी का दोष नहीं है। अभी कोई सर्वमान्य एवं सर्वसम्मत पारिभाषिक शब्दावली बन भी तो नहीं पाई है।

ब्र० न० मेहता

अध्यक्ष, इतिहास तथा राज्यविज्ञान विभाग,
बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा

आगरा
२९ नवम्बर, १९५२

निवेदन

यह एक प्रथा-सी हो गई है कि पुस्तक के प्रारम्भ में लेखक उसके सम्बन्ध में अपने विचार संक्षिप्त भूमिका के रूप में अभिव्यक्त करें। अतः हम लोग भी यह अपना कर्त्तव्य समझते हैं कि इस दीर्घ प्रचलित परम्परा का आदर करें और अपने इस प्रयास के सम्बन्ध में दो शब्द लिखें।

इस पुस्तक के अन्तर्गत आधुनिक विश्व के चार महत्त्वपूर्ण राज्यों—इङ्गलैण्ड, संयुक्त राज्य अमेरिका, सोवियट रूस तथा स्विट्ज़रलैण्ड—के शासन-विधानों की विस्तृत व्याख्या की गई है। हमने अपने बी० ए० तथा एम० ए० के विद्यार्थियों के साथ सम्पर्क में आने से यह अनुभव किया है कि उनकी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए वास्तव में कोई ऐसी पुस्तक नहीं है जो पाठ्य-वस्तु का विस्तृत विवेचन करने के साथ-साथ उसे स्पष्ट, सरल, सम्बद्ध तथा रोचक शैली में उपस्थित करे। इसीलिए हमने यह देखा है कि विद्यार्थी सिवाय इसके कि वे कतिपय प्रश्न और उनके उत्तर याद करलें, विषय की वास्तविकता से प्रायः अनभिज्ञ ही रहते हैं और उनके लिए तत्सम्बन्धी मौलिक विचारशीलता तो कोसों दूर रहती है। वे वास्तव में परीक्षा पास करने के ध्येय को ही अपना आदर्श बना लेते हैं और वास्तविक ज्ञान-वृद्धि के महत्त्व को नहीं समझ पाते।

यदि यथार्थ में देखा जाय तो विभिन्न देशों के शासन-विधानों का अध्ययन करते समय विद्यार्थी की वास्तविक अभिरुचि तथा विषय की मनोरमता उनके अलग-अलग अध्ययन में नहीं है बल्कि उनके तुलनात्मक अध्ययन में है। पाठक को जितना आनन्द उनकी परम्पराओं, रीति-रिवाजों, वैधानिक प्रक्रियाओं तथा संस्थाओं आदि के तुलनात्मक अध्ययन में आता है और जितनी उस प्रकार के अध्ययन से उसकी तर्क-शक्ति प्रस्फुटित एवं विकसित होती है, उतना आनन्द उसे उनको पृथक्-पृथक् रखने में नहीं आता और न उसकी तर्क-शक्ति ही प्रेरणा प्राप्त करती है।

अभी तक इस प्रकार की पुस्तकों का प्रायः अभाव ही रहा है। पुस्तकें अवश्य पर्याप्त हैं परन्तु उनमें या तो पाठ्य-वस्तु इतने विस्तृत रूप में उपस्थित की गई है कि वह विद्यार्थी के लिए रुचिकर नहीं है और या उनमें सम्पूर्ण पाठ्य-सामग्री इस प्रकार एकत्रित की गई है कि विषय में सम्बद्धता नजर नहीं आती है।

हमने अपने इस प्रयास द्वारा मध्यम मार्ग का अनुसरण किया है और पाठ्य-वस्तु की व्याख्या के साथ-साथ उसको विद्यार्थी के हेतु रुचिकर बनाने का प्रयत्न किया है जिससे विद्यार्थी आनन्द का अनुभव करते हुए अपने ज्ञान की वृद्धि करें और जिसके द्वारा उनकी विचार-शक्ति को प्रेरणा मिले। हमारा उद्देश्य केवल यही नहीं है कि पाठक विभिन्न राज्यों के शासन-विधानों के सिद्धान्तों, तदंतर्गत संस्थाओं व परम्परा आदि का ही ज्ञान प्राप्त करें, बल्कि हमने यह भरसक प्रयत्न किया है कि इनके अध्ययन से उनमें समालोचनात्मक दृष्टिकोण उत्पन्न हो और वे उससे अपनी विचार-शक्ति की वृद्धि करें।

राष्ट्रभाषा हिन्दी होने की वजह से पुस्तक हिन्दी में लिखी गई है। यद्यपि हमें इसे लिखने में कुछ कठिनाइयों का सामना करना पड़ा है क्योंकि अभी अनेक अँग्रेजी के शब्दों का हिन्दी में अनुवाद नहीं हो पाया है और यदि हो भी गया है तो वे शब्द अधिक प्रचलित नहीं हैं, परन्तु फिर भी हमने इस बाधा का अतिक्रमण करके विषय को सरल भाषा में प्रस्तुत किया है।

विद्यार्थियों की सुविधा के लिये हमने प्रारम्भ में विस्तृत विषय-सूची दी है जिसमें प्रत्येक विषय सम्बन्धी पृष्ठ-सूची भी दी हुई है। इसके द्वारा विद्यार्थियों को पुस्तक पढ़ने में तथा आवश्यक बातें ढूँढ़ने में कोई कठिनाई नहीं होगी। भविष्य इस बात को सिद्ध करेगा कि हमारा यह प्रयास कितना उपयोगी सिद्ध होता है।

हम उन सब लेखकों के आभारी हैं जिन्होंने राजनीति-शास्त्र व राज्य-विज्ञान के सम्बन्ध में बड़ी-बड़ी पुस्तकें लिखी हैं और जिनमें से हमने स्थान-स्थान पर उद्धरण लिये हैं।

हम डॉ० वी० एन० मेहता, एम० ए०, पी-एच० डी० (अध्यक्ष, इतिहास व राजनीति विभाग, बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा) के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट करते हैं, जिन्होंने पुस्तक का प्राक्कथन लिख कर हमारे प्रति अपनी अनुकम्पा तथा पुस्तक के प्रति अपना प्रेम प्रकट किया है।

हमें आशा है कि हमारा यह प्रयास सफल होगा। भविष्य में हमें पाठकों से जो सुझाव प्राप्त होंगे उनका हम सहर्ष आदर करेंगे और उनको द्वितीय संस्करण में शामिल करेंगे।

बलवन्त राजपूत कॉलेज, आगरा
२६ नवम्बर, १६५२

डी० एन० गैद
आर० पी० शर्मा

विषय-सूची

चतुर्थ संस्करण की भूमिका
तृतीय संस्करण की भूमिका
द्वितीय संस्करण की भूमिका
दो शब्द
निवेदन

ग्रेट ब्रिटेन की शासन-व्यवस्था

प्रथम परिच्छेद—ब्रिटिश संविधान की विशेषताएँ व उसके मूल सिद्धान्त
[संविधान की आवश्यकता १, संविधान की परिभाषाएँ १-२, 'संविधान' के दो अर्थ २-३, ब्रिटिश संविधान की विशेषताएँ ३-९, ब्रिटिश संविधान के अंग व श्रोत—संविधान की विधियाँ, परिपाटियाँ या अभिसमय—९-१४, एक भ्रमात्मक कथन १४-१६, प्रश्न १६] १-१६

द्वितीय परिच्छेद—ब्रिटिश संविधान का विकास तथा उसके गुण व दोष
[विषय-प्रवेश १७, पाँच ऐतिहासिक युग १७-२५, ब्रिटिश संविधान के गुण व दोष २५-२६, प्रश्न २६] १७-२६

तीसरा परिच्छेद—राजा तथा क्राउन
[विषय-प्रवेश २७, 'क्राउन' की परिभाषा २७-२८, राजा और क्राउन में भेद २८-२९, क्राउन की शक्ति २९-३०, क्राउन के अधिकारों में घटाव व बढ़ाव ३०-३१, क्राउन के कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य ३१, क्राउन के विधि सम्बन्धी कार्य ३१-३२, क्राउन के न्याय सम्बन्धी कार्य ३२, क्राउन के अन्य कार्य ३२-३३, राजा और उसका पद ३३, इङ्गलैण्ड में राजतन्त्र की महत्ता ३४, राजा के वास्तविक कार्य ३५-३९, 'राजा कोई भूल नहीं करता' कथन की पुष्टि ३९, प्रश्न ४०] २७-४०

चौथा परिच्छेद—प्रीवी परिषद्, मन्त्रिमण्डल तथा केबिनेट
[विषय-प्रवेश ४१, प्रीवी कौंसिल : बनावट ४१, प्रीवी कौंसिल की मीटिङ्ग ४१-४२, प्रीवी कौंसिल की उत्पत्ति ४२, प्रीवी कौंसिल के कार्य ४२-४३, मन्त्रिमण्डल तथा केबिनेट : बनावट में भेद ४३-४४, मन्त्रिमण्डल और केबिनेट के सदस्यों की संख्या ४४-४५, मन्त्रिमण्डल

और केबिनेट के कार्यों का भेद ४५, केबिनेट प्रणाली की उत्पत्ति तथा विकास ४५-४६, प्रश्न ४६] ४१-४६

पांचवां परिच्छेद—केबिनेट—विशेषताएँ तथा कार्य

[केबिनेट व्यवस्था का महत्त्व व प्रमुख विशेषताएं ४७-५०, केबिनेट का संगठन ५०-५१, केबिनेट के कार्य ५१-५२, केबिनेट और विधि-निर्माण ५२-५३, केबिनेट के कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य ५३, केबिनेट के वित्त सम्बन्धी कार्य ५३-५४, केबिनेट के अन्य कार्य ५४, केबिनेट की स्थिति ५४-५५, केबिनेट तथा क्राउन ५५, केबिनेट तथा संसद ५५-५७, केबिनेट के संसद पर प्रभुत्व के कारण ५७-५८, केबिनेट प्रणाली की दुर्बलता ५८-५९, केबिनेटकी समितियाँ तथा मीटिङ्ग ५९-६०, प्रधान मन्त्री तथा अन्य मन्त्रियों का चुनाव ६०-६१, प्रधान मन्त्री की शक्ति व कार्य—प्रधान मन्त्री तथा मन्त्रिमण्डल ६१-६२, प्रधान मन्त्री और केबिनेट ६२, प्रधान मन्त्री तथा क्राउन ६२, प्रधान मन्त्री तथा लोकसभा ६२-६३, प्रधान मन्त्री के कार्य की अधिकता ६३, प्रधान मन्त्री के पद की कुछ कमजोरियाँ ६३-६४, इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री तथा अमेरिका का प्रेसीडेण्ट ६४-६५, प्रश्न ६५] ४७-६५

छठवां परिच्छेद—स्थायी सिविल सर्विस

[शासन के भाग ६६-६७, विभागों के रूप ६७-६८, सिविल सर्विस के सदस्यों की भर्ती ६८-६९, सिविल सर्विस के सदस्यों के प्रकार ६९, सिविल सर्विस का कार्य ७०-७१, नौसिखिए तथा विशेषज्ञ ७१-७२, प्रश्न ७२] ६६-७२

सातवां परिच्छेद—लोकसभा

[आधुनिक प्रजातन्त्र युग में लोकसभाओं के प्रमुख कार्य ७३, ब्रिटिश विधानसभा—लोकसभा ७३-७५, ब्रिटिश लोकसभा की बनावट ७५-७६, लोकसभा के उम्मीदवारों की योग्यता व अयोग्यता ७६, लोकसभा की अवधि ७६-७७, लोकसभा का गठन ७७, सदन के अध्यक्ष का पद ७७, अध्यक्ष का चुनाव ७८, अध्यक्ष के कार्य तथा कर्त्तव्य ७८-७९, इङ्गलैण्ड और अमेरिका के अध्यक्षों की तुलना ८०, लोकसभा के कार्य ८०-८२, लोकसभा के राजसत्तात्मक अधिकार व उनकी सीमाएँ ८२-८३, पार्लियामेण्ट की शक्ति का सकारात्मक रूप ८३, पार्लियामेण्ट की शक्ति का नकारात्मक रूप ८३, पार्लियामेण्ट के अधिकारों की सीमा ८३-८४, लोकसभा की समितियाँ

८५-८७, लोकसभा की प्रक्रिया ८७-८८, लोकसभा के सदस्यों के विशेषाधिकार ८६, प्रश्न ८६] ७३-८६

आठवाँ परिच्छेद—लॉर्डसभा

[विषय-प्रवेश ६०, लॉर्डसभा का गठन ६०-६१, लॉर्डसभा की शक्तियाँ व कार्य—परामर्शात्मक, विधायक तथा न्यायिक ६१-६२, लॉर्डसभा का महत्त्व ६२-६५, लॉर्डसभा के विरोध के कारण ६५-६७, लॉर्डसभा के सुधार के सुझाव ६७-६६, प्रश्न ६६] ... ६०-६६

नवाँ परिच्छेद—ब्रिटेन में विधि-निर्माण-प्रणाली

[विधेयक प्रकार १००-१०२, सार्वजनिक विधेयक के पास होने की प्रक्रिया १०३-१०४, असार्वजनिक विधेयक के पास होने की प्रक्रिया १०५-१०६, असार्वजनिक विधेयकों से लाभ और हानि १०६, धन-विधेयकों के पास होने की प्रक्रिया १०६-१०६, वित्तीय व्यवस्था की विशेषताएँ १०६-११०, प्रश्न ११०] १००-११०

दसवाँ परिच्छेद—राजनैतिक दल और उनकी व्यवस्था

[विषय-प्रवेश १११-११२, जनतन्त्र और दलबन्दी ११२-११३, द्वि-दल प्रणाली तथा ब्रिटेन ११३-११४, ब्रिटेन के राजनैतिक दलों पर ऐतिहासिक दृष्टिपात ११४-११६, इङ्गलैण्ड के विभिन्न दलों के राजनैतिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त विवरण—अनुदार दल व उसके सिद्धान्त ११७-११८, उदार व रूढ़िवादी दलों के सिद्धान्तों की तुलना ११८-१२०, श्रमिक दल और उसके सिद्धान्त १२०-१२१, अन्य दल १२१, दलीय संगठन १२१-१२३, प्रश्न १३३] ... १११-१२३

ग्यारहवाँ परिच्छेद—ब्रिटेन की न्यायिक व्यवस्था

[न्यायपालिका के कार्य १२४, इङ्गलैण्ड में विधि शासन और उसकी विशेषताएँ १२४-१२६, विधि के प्रकार १२६-१२७, इङ्गलैण्ड के विधि-न्यायालय १२७-१३१, फौजदारी अदालतें १३१-१३२, दीवानी अदालतें १३२-१३४, न्यायपालिका का अन्य विभागों से सम्बन्ध १३४, न्याय का स्तर १३५, प्रश्न १३५] १२४-१३५

बारहवाँ परिच्छेद—इङ्गलैण्ड में स्थानीय शासन और प्रशासन

[स्थानीय शासन का महत्त्व १३६, स्थानीय शासन की आवश्यकता १३६-१३७, ब्रिटिश स्थानीय शासन की प्रमुख बातें १३७, ब्रिटिश स्थानीय शासन का संक्षिप्त ऐतिहासिक सिंहावलोकन १३७-१३८, इङ्गलैण्ड में स्थानीय शासन के क्षेत्र १३६-१४२, स्थानीय शासन पर केन्द्र का नियन्त्रण १४२-१४३, लन्दन का शासन १४३-१४५, उपसंहार १४५, प्रश्न १४५] १३६-१४५

संयुक्त राज्य अमेरिका का शासन-विधान

प्रथम परिच्छेद—संविधान का इतिहास, उसका आधार तथा महत्त्व

[शासन-विधान का इतिहास १४६-१५०, उपनिवेशों का शासन १५०, गवर्नरों से झगड़ा १५०, स्वतन्त्र होने की आतुरता १५०-१५१, युद्ध-घोषणा १५१, सन् १७७६ की संघीय व्यवस्था १५१-१५२, संघ शासन की दुर्बलता १५३, सन् १७८७ का फिलाडेल्फिया सम्मेलन १५३-१५४, नवीन विधान का आरम्भ १५४, सन् १७८७ के संविधान का महत्त्व १५४, विधान की अपरिवर्तनशीलता १५५, अमेरिका का विगत एवं आधुनिक, सामाजिक व आर्थिक जीवन १५५-१५८, अमेरिका का संघ-शासन जनतन्त्रीय संघ-व्यवस्था का एक अनूठा उदाहरण है १५८-१५६, अमेरिका का संविधान राजनैतिक अनुभवों की निरीक्षणशाला है १५६, अमेरिका की संघीय व्यवस्था एक आदर्श व्यवस्था है १५६-१६०, प्रश्न १६०] **१४६-१६०**

द्वितीय परिच्छेद—संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की विशेषताएँ

[संविधान का संघीय रूप १६२-१६४, अवशिष्ट शक्तियाँ १६४-१६५, अमेरिका का संविधान पूर्णतया लिखित है १६५, अमेरिका का संविधान अपरिवर्तनशील है १६५, शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त १६५-१६६, शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त का वास्तविक प्रयोग १६६-१६७, अमेरिका में संविधान राज्य की सर्वोच्च सत्ता है १६७, संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान और इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट १६७-१६८, बन्धन व सन्तुलन की पद्धति १६८-१७१, न्याय-विभाग की अन्य भागों के ऊपर प्रभुता १७१, व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा १७१-१७२, विधान में कुछ बातों का उल्लेख नहीं है १७२, अमेरिका और इङ्गलैण्ड के संविधानों की तुलना १७३-१७४, ब्रिटिश सांविधानिक संस्थाओं व प्रथाओं का अमरीका की संस्थाओं पर प्रभाव १७४, प्रश्न १७५] **१६१-१७५**

तीसरा परिच्छेद – राष्ट्रीय संविधान का विकास

[विषय-प्रवेश १७६, संविधान में परिवर्तन १७७, संशोधन की विधि १७७-१७८, दृढ़ीकरण सम्बन्धी समय की सीमा १७८, संशोधनों की सीमा १७८-१८०, स्टैट्यूटों की व्याख्याएँ १८०-१८१, न्यायिक व्याख्याएँ १८१-१८२, रीति-रिवाज अथवा परिपाटी १८३-१८४, अमेरिका के संविधान की उत्पादन-शक्ति १८४-१८६, प्रश्न १८६] **१७६-१८६**

चौथा परिच्छेद—संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रेसीडेण्ट (राष्ट्रपति)

[विषय-प्रवेश १८७-१८८, राष्ट्रपति का निर्वाचन व उसका कार्य-काल १८८-१८९, राष्ट्रपति बनने की योग्यताएँ १८९, राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रणाली १८९-१९३, राष्ट्रपति का पद १९३-१९४, राष्ट्रपति के अधिकार व शक्ति—कार्यपालिका सम्बन्धी १९४-१९५, व्यवस्थापिका सम्बन्धी १९५-१९६, न्यायपालिका १९६, राष्ट्रपति के अपने दल का नेता होने की हैसियत से अधिकार १९६-१९७, राष्ट्रपति के विशेषाधिकार १९७, राष्ट्रपति की शक्तियों का श्रोत १९७-१९८, अमेरिका का राष्ट्रपति क्या है १९८-१९९, अमेरिका का राष्ट्रपति और इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री १९९-२०१, राष्ट्रपति तथा कांग्रेस २०१-२०२, उपसंहार २०२-२०४, प्रश्न २०४-२०५]
... ... १८७-२०५

पाँचवाँ परिच्छेद—केबिनेट और उसका शासन-विधान में स्थान

[केबिनेट तथा उसके सदस्यों के चुनाव का सैद्धान्तिक आधार २०६-२०८, मन्त्रिमण्डलीय उत्तरदायित्व २०८-२०९, केबिनेट के सदस्यों की नियुक्ति २०९-२१०, केबिनेट के सदस्यों की संख्या २१०-२११, केबिनेट के कार्य २११, केबिनेट की बैठकें २११-२१२, केबिनेट के सदस्य तथा कांग्रेस २१२-२१३, इङ्गलैण्ड और अमेरिका की केबिनेटों की तुलना २१३-२१५, उपसंहार २१५, प्रश्न २१६]
.... २०६-२१६

छठवाँ परिच्छेद—संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस

[विषय-प्रवेश २१७-२१८, कांग्रेस के सामान्य अधिकार २१८-२१९, कांग्रेस के कार्यों का वर्गीकरण—निश्चित तथा निहित अधिकार २१९-२२०, निर्देशात्मक तथा अनिर्देशात्मक अधिकार २२०, एकीय तथा सम्मिलित अधिकार २२०-२२१, कांग्रेस एक द्विसभात्मक निकाय है २२१-२२२, सीनेट २२२-२२३, सीनेट की अवधि तथा संगठन २२३-२२४, अमेरिका की संघीय सीनेट एक शक्तिशाली राजनैतिक संस्था है २२४-२२५, सीनेट की शक्ति—कार्यपालिका शक्ति २२५-२२६, विधायनी शक्ति २२६, न्यायपालिका शक्ति २२६, प्रतिनिधि-आगार २२७-२२८, प्रतिनिधि-आगार तथा सीनेट २२८-२३०, संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रतिनिधि-आगार के स्पीकर तथा इङ्गलैण्ड की लोकसभा के स्पीकर से तुलना २३०-२३१, कांग्रेस में विधि-निर्माण-प्रक्रिया २३१-२३२, इङ्गलैण्ड और अमेरिका की विधि-निर्माण-क्रियाओं की तुलना २३३-२३४, कांग्रेस की समितियाँ

२३४-२३६, इङ्गलैण्ड और अमेरिका की समितियों की तुलना २३६, लॉबीइङ्ग २३६-२३७, फिलीबस्टरिंग २३७-२३८, काँग्रेस तथा कार्यपालिका २३८-२४०, उपसंहार २४०-२४१, प्रश्न २४१] २१७-२४१

सातवाँ परिच्छेद—राजनैतिक दल

[अमेरिका के दल २४२-२४३, अमेरिका के राजनैतिक दलों की विशेषताएँ २४३-२४४, दलों का प्रोग्राम व उनकी नीति २४५, दलों का संगठन २४५-२४६, भ्रष्टाचार और दलीय व्यवस्था का कुप्रयोग २४६-२४७, राजनैतिक दलों के कार्य २४७-२४८, द्वि-दल प्रणाली २४८-२४९, अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड की दलीय व्यवस्था की तुलना २४९-२५०, प्रश्न २५०] २४२-२५०

आठवाँ परिच्छेद—संयुक्त राज्य अमेरिका की न्यायपालिका

[विषय-प्रवेश २५१-२५२, संघीय न्याय-क्षेत्र २५२, संघीय न्यायालयों का संगठन २५२-२५६, अमेरिका की न्याय-व्यवस्था की आलोचना २५६-२५७, इङ्गलैण्ड और अमेरिका की न्यायिक व्यवस्था की तुलना २५७-२५८, प्रश्न २५८] २५१-२५८

नवाँ परिच्छेद—संयुक्त राज्य अमेरिका में घटक राज्यों की शासन-प्रणाली

[अमेरिका में राज्यों का स्थान २५९, राज्यों के सम्बन्ध में कुछ विशेष बातें २५९-२६१, राज्यों का भविष्य २६१-२६२, राज्यों की व्यवस्थापिका २६२, व्यवस्थापिकाओं की अवधि २६२-२६३, व्यवस्थापिकाओं की कार्य-प्रणाली २६३, सांविधानिक संशोधन २६३-२६४, राज्यों की व्यवस्थापिकाओं की शक्ति २६४, प्रत्यक्ष विधि-निर्माण तथा प्रत्याहरण २६४-२६५, लोकमत तथा निर्बन्ध-उपक्रम को स्वीकार करने के कारण २६५-२६६, लोकमत तथा निर्बन्ध व्यवस्था के दोष २६६-२६७, प्रत्याहरण व उसका महत्त्व २६७-२६८, प्रत्याहरण व्यवस्था का दुरुपयोग २६८, राज्यों की कार्यपालिका २६८, गवर्नर व उसकी शक्तियाँ २६८-२६९, राज्यों के अन्य कर्मचारी २६९, राज्यों की न्यायपालिका २७०, प्रश्न २७१] २५१-२७१

दसवाँ परिच्छेद—अमेरिका की सरकार की दार्शनिक समीक्षा

[अमेरिका के शासन के मूलभूत दार्शनिक सिद्धान्त—शासन का प्रजातन्त्रीय स्वरूप, जनता के प्रतिनिधियों द्वारा निर्मित जनतन्त्र, समानता, सरकार की स्थिति, शक्ति-विभाजन, उदारता, वैधानिकता तथा व्यवस्थापिका, अमेरिका का जनतन्त्र, उपसंहार २७२-२७६, अमेरिका तथा ब्रिटेन की शासन-व्यवस्थाओं की तुलना—अध्यक्षात्मक प्रणाली २७६-२७७, संसदीय प्रणाली २७७, अध्यक्षात्मक एवं संसदीय

प्रणालियों की मूलभूत विभिन्नताएँ २७८, अध्यक्षात्मक प्रणाली के गुण व दोष २७८-२७९, संसदीय प्रणाली के गुण व दोष २७९,२८०, प्रश्न २८०] २७२-२८०

स्विट्ज़रलैण्ड की शासन-व्यवस्था

प्रथम परिच्छेद — स्विट्ज़रलैण्ड के संविधान की विशेषताएँ

[विषय-प्रवेश २८३, स्विट्ज़रलैण्ड की स्थिति तथा जनसंख्या २८३-२८४, स्विट्ज़रलैण्ड की राजनतिक व्यवस्था का महत्त्व २८४-२८५, संविधान की विशेषताएँ २८५-२८८, संविधान का विकास २८८-२८९, संविधान में संशोधन २८९, संघ सरकार तथा कैण्टनों की सरकारों में शक्ति का वितरण २९०-२९१, स्विट्ज़रलैण्ड और अमेरिका की संघीय व्यवस्था की तुलना २९१-२९२, प्रश्न २९२] २८३-२९२

द्वितीय परिच्छेद — राष्ट्रीय सरकार का ढाँचा

[विषय-प्रवेश २९३, संघ व्यवस्थापिका—फैडरल असेम्बली २९३, राष्ट्रीय परिषद् २९३-२९४, राज्य परिषद् २९४-२९५, फैडरल असेम्बली की शक्ति व उसके अधिकार २९५-२९६, राष्ट्रीय परिषद् तथा राज्य परिषद् के सम्बन्ध २९६-२९७, संघीय कार्यकारिणी २९७-२९९, फैडरल कौंसिल की शक्ति व कार्य २९९-३००, फैडरल कौंसिल का समालोचनात्मक अध्ययन ३००-३०३, फैडरल कौंसिल का व्यवस्थापिका से सम्बन्ध ३०३-३०५, कॉलिजियल एक्जीक्यूटिव ३०५-३०६, फैडरल कौंसिल का अध्यक्ष ३०६, सभापति की शक्तियाँ ३०६, फैडरल कौंसिल का सभापति तथा अमेरिका का अध्यक्ष ३०६-३०७, स्विट्ज़रलैण्ड की न्यायिक व्यवस्था ३०७-३०९, राजनैतिक दल ३०९, स्विट्ज़रलैण्ड में दलबन्दी की दुर्बलता के कारण ३०९-३११, प्रश्न ३११] २९३-३११

तीसरा परिच्छेद — स्विट्ज़रलैण्ड में प्रत्यक्ष जनतन्त्र

[विषय-प्रवेश ३१२, लोक-निर्णय का प्रयोग ३१३-३१५, स्विट्ज़रलैण्ड में लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम का कार्य ३१५-३१६, लैण्ड्सजीमैण्डी ३१७-३१८, प्रत्यक्ष जनतन्त्र के गुण व दोष ३१८-३२०, स्विट्ज़रलैण्ड में प्रत्यक्ष जनतन्त्र ३२०-३२१, प्रश्न ३२१-३२२] ३१२-३२२

चौथा परिच्छेद — राजनैतिक संस्थाएँ तथा स्थानीय स्वशासन

[कम्यून ३२३, कैण्टन ३२३-३२४, कैण्टनों की कार्यकारिणी ३२४,

कैण्टनों की व्यवस्थापिका ३२४-३२५, कैण्टनों का न्याय-मण्डल ३२५, प्रश्न ३२५] ३२३-३२५

सोवियट रूस की शासन-व्यवस्था

प्रथम परिच्छेद—ऐतिहासिक सिंहावलोकन तथा कम्युनिज्म का उत्कर्ष
[विषय-प्रवेश ३२६, रूस में अनेक विभिन्नताओं का मिश्रण है ३२६-३३०, रूस के संविधान का विकास ३३०-३३१, बोल्शेविक क्रान्ति ३३१-३३५, सन् १९१७ की क्रान्ति के बाद ३३६-३३७, सन् १९२३ का विधान ३३७-३३८, सन् १९२३ के शासन की विशेषताएँ ३३८-३४०, कम्युनिस्ट (साम्यवादी) पार्टी का संगठन ३४१-३४२, पार्टी का अनुशासन व एकता ३४२-३४३, कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन ३४३, केन्द्रीय कमेटी की सेक्रेटरियट ३४३-३४५, प्रश्न ३४५] ३२६-३४५

द्वितीय परिच्छेद—सोवियट रूस के आधुनिक संविधान की विशेषताएँ
[विषय-प्रवेश ३४६, रूस का नया संविधान ३४६, संविधान की विशेषताएँ ३४६-३४८, संघ सरकार की स्थिति ३४८, सोवियट रूस के संविधान के गुण ३४८-३५०, सोवियट रूस के संविधान की कमजोरियाँ ३५०-३५२, प्रश्न ३५२] ३४६-३५२

तीसरा परिच्छेद—मौलिक अधिकार तथा कर्त्तव्य
[विषय-प्रवेश ३५३-३५४, मौलिक अधिकार ३५४-३५५, कर्त्तव्य ३५५-३५७, प्रश्न ३५७] ३५३-३५७

चौथा परिच्छेद—सोवियट शासन का ढाँचा और संगठन
[संघ सरकार की शक्तियाँ ३५८-३५९, अमेरिका तथा सोवियट रूस में संघीय शक्ति के विभाजन की तुलना ३५९-३६०, संघ सरकार का ढाँचा ३६०-३६२, सुप्रीम कौंसिल की शक्ति और अधिकार ३६२-३६३, सुप्रीम कौंसिल का वास्तविक कार्य ३६३, प्रेसीडियम ३६३, प्रेसीडियम की शक्ति व कार्य ३६३-३६६, कौंसिल ऑफ कमीसर्स अथवा कौंसिल ऑफ मिनिस्टर्स ३६६, मन्त्रि-परिषद् की बनावट ३६६-३६७, कौंसिल ऑफ कमीसर्स की शक्ति ३६७-३६९, प्रश्न ३६९] ३५८-३६९

पाँचवाँ परिच्छेद—सोवियट रूस की न्याय-व्यवस्था
[विषय-प्रवेश ३७०, सोवियट न्यायालयों की सामान्य विशेषताएँ ३७०-३७२, सुप्रीम कोर्ट ३७२-३७३, अन्य न्यायालय ३७३, प्रश्न ३७३] ३७०-३७३

छठा परिच्छेद—सोवियट संघ का ढाँचा तथा इकाई राज्यों की सरकारें

[इकाई राज्य ३७४-३७६, संघ के यूनियन रिपब्लिक राज्यों के सम्बन्ध में कुछ विशेष बातें ३७६-३७८, प्रश्न ३७८] ... ३७४-३७८

सातवां परिच्छेद—सोवियट रूस का जनतन्त्र

[रूस और दलगत प्रथा ३७९-३८०, अन्य दल ३८०, कम्युनिस्ट दल के उद्देश्य—रूस का जनतन्त्र ३८०-३८२] ... ३७९-३८२

परिशिष्ट

Select Bibliography

ग्रेट ब्रिटेन की शासन-व्यवस्था

प्रथम परिच्छेद

ब्रिटिश संविधान की विशेषताएँ व उसके मूल सिद्धान्त

'संविधान' की आवश्यकता :

मानव-जाति के इतिहास का अध्ययन करने से ज्ञात होता है कि ज्यों-ज्यों मनुष्य ने सभ्यता का विकास किया त्यों-त्यों उसने अपने जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में अनियन्त्रित प्रवृत्तियों को रोककर नियन्त्रित प्रवृत्तियों को अपनाया और अपने सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक जीवन को सुडौल व सुन्दर बनाने का प्रयत्न किया। अपने मस्तिष्क के बल पर मनुष्य ने धीरे-धीरे सभी क्षेत्रों में पाशविक वृत्तियों को त्यागने की कोशिश की और सभ्यता के प्राङ्गण में एक आनन्द का अनुभव करके जीवन को सरल तथा सौम्य बनाने के लिए सहयोग, स्वतन्त्रता, सहानुभूति, भ्रातृत्व, समानता आदि को जीवन का आधार बनाया। राजनैतिक क्षेत्र में अनियन्त्रित राजसत्ता व मात्स्य न्याय को त्यागकर मानव ने वैधानिक सत्ता को अपनाया और 'मानव द्वारा शासन' के स्थान पर 'नियम द्वारा शासन' को स्वीकार किया। वैधानिक शासन का जन्म तभी हुआ जब कि मनुष्य ने अनियन्त्रित सत्ता का खण्डन करके कानूनी सत्ता को स्थान दिया। इस प्रकार की मनोवृत्ति होने पर ही संविधान की आवश्यकता पड़ी और एक बार उसका जन्म होते ही मानव ने उसके विकास व उसके विभिन्न पहलुओं पर विचार करके उसे राजनैतिक व्यवस्था का आधार बनाया एवं संगठित किया।

संविधान की परिभाषाएँ :

राजनीति-शास्त्रवेत्ताओं ने संविधान की परिभाषा कई प्रकार से की है :

(अ) लॉर्ड ब्राइस (Bryce) के अनुसार "किसी राष्ट्र व राज्य का संविधान उन नियमों व कानूनों का समूह है जो उसकी सरकार की आकृति को निर्धारित करते हैं और उसके नागरिकों के अधिकारों व कर्त्तव्यों की व्याख्या करके सरकार के प्रति उनके कर्त्तव्यों को बतलाते हैं।"[1]

(ब) डाइसी (Dicey) के मतानुसार "संविधान में वे सब नियम आते हैं जो सार्वभौम सत्ता (Sovereign power) की सदस्यता का स्पष्टीकरण करते हैं तथा उन सदस्यों के पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या करते हुए यह स्पष्ट

1 Bryce, Viscount : Constitutions.

करते हैं कि वह सत्ता व उसके सदस्यगण किस प्रकार अपनी शक्ति का प्रयोग करते हैं।"[1]

(स) गिलक्राइस्ट (Gilchrist) के अनुसार "संविधान उन लिखित व अलिखित नियमों व कानूनों का समूह है जो सरकार के संगठन व सरकार के विभिन्न अंगों के शक्ति-वितरण तथा शक्ति-प्रयोग के सामान्य सिद्धान्तों की व्याख्या करते हैं।"

(द) पैले (Paley) ने संविधान की अत्यन्त विशद व्याख्या की है। वह कहता है कि "किसी देश के संविधान का यह अर्थ है कि वह वहाँ की व्यवस्थापिका का संगठन व उसकी आकृति तथा विधि-निर्माण करने वाले निकाय के विभिन्न अंग व उसकी शक्ति व अधिकारों की व्याख्या करे। साथ ही साथ वह न्यायालयों के क्षेत्र व बनावट आदि का स्पष्टीकरण करे। संविधान सार्वजनिक नियमों के कोड का शीर्षक है और अन्य सार्वजनिक नियमों से यह इसीलिए ऊँचा है क्योंकि यह जिस विषय को लेकर उसकी व्याख्या करता है वह विषय अन्य सार्वजनिक विषयों से ऊँचा है और अधिक महत्वशाली है।"

उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि संविधान किसी राष्ट्र व राज्य के राजनैतिक संगठन की आधारशिला है और संविधान ही राज्य व नागरिकों के पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या करता है। वह लिखित हो या अलिखित, यह दूसरी बात है।

'संविधान' के दो अर्थ :

'संविधान' शब्द के राजनीति-शास्त्र में दो अर्थ निकाले जाते हैं। एक अर्थ से तो उससे एक लेख्य (Document) का बोध होता है जिसको देश के कर्णधारों ने किसी एक समय पर तथा एक स्थान पर बैठकर निर्मित किया और जिसमें शासन का ढाँचा, शासन के विभिन्न भागों के कार्य, शासन के विभिन्न अधिकारियों के कर्त्तव्य, शासक-वर्ग और प्रजा के सम्बन्ध, न्यायालय, व्यक्ति की स्वतन्त्रता, जमीन-जायदाद आदि की व्यवस्था आदि अनेक बातों के मूल सिद्धान्तों को निर्णयात्मक रूप से निश्चित कर दिया गया है। उदाहरणार्थ, संयुक्त राष्ट्र अमेरिका, फ्रान्स, गणतन्त्र भारत आदि का विधान। दूसरे अर्थ में, जो अधिक व्यापक है, संविधान से हमें एक लेख्य या एक विशिष्ट शासन-विधि का ही बोध नहीं होता है, वरन् उन सब नियमों, अधिनियमों, परिपाटियों, रूढ़ियों, प्रचलित प्रथाओं आदि का भी बोध होता है, जो उस शासन-विधि में लिपटे हुए हैं, यद्यपि उन्हें बैठकर किसी एक समय अथवा एक स्थान पर किसी ने लेखबद्ध नहीं किया है। ब्रिटिश संविधान को समझने के लिए हमें संविधान के पिछले अर्थ को अपनाना होगा। यद्यपि अन्य शासन-संविधानों में भी समय-समय पर परिवर्तन या संशोधन होते रहे हैं—और यह असम्भव है कि परिवर्तन व संशोधन न हों क्योंकि किसी भी विधान में भावी घटनाओं

1 Dicey : Law of the Constitution.

और परिस्थितियों के समस्त रूप और उनके उपाय नहीं समा सकते और न सोचे ही जा सकते हैं—लेकिन ब्रिटिश संविधान में तो हमें लगभग बिलकुल ही संविधान के दूसरे अर्थ का आश्रय लेना पड़ता है, यद्यपि इसमें कुछ लेखबद्ध लेख्य के रूप मौजूद हैं, जैसा कि हम आगे चलकर देखेंगे।

ब्रिटिश संविधान की विशेषताएँ :

संविधान की उपर्युक्त पिछली परिभाषा के आधार पर हमें ब्रिटिश संविधान की विशेषताओं पर ध्यान देना चाहिए। वे निम्नलिखित है—

(अ) ब्रिटिश संविधान की उत्पत्ति अनुभव से हुई है—ब्रिटिश संविधान जनता के अनुभव से प्रादुर्भूत हुआ है। समय-समय पर अँग्रेज जनता ने अपने अनुभव को आवश्यकता व परिस्थितियों के अनुसार बदला और उनके अनुकूल विधान में नई-नई बातों का समावेश किया। इसीलिए यह कथन सत्य माना जाता है कि ब्रिटिश संविधान "अवसर और बुद्धि की सन्तान है"[1]। यह "सिद्धान्तों और आचरणों का एक समूह है जो एक सहस्त्र वर्ष के इतिहास का निरीक्षण करने पर ही एकत्रित किये जा सकते हैं, जिसमें कोई कानून (Statute) यहाँ मिला तो कोई न्यायिक विनिश्चय वहाँ, जिसमें राजनीतिक आचरणों को सर्वमान्य रिवाजों में दृढ़ीभूत होते हुए देखा जाता है, और विधि-निर्माण, शासन, वित्त, न्याय और चुनावों की मशीन के भीतरी भागों को देखना पड़ता है कि किस प्रकार तो वे अतीत में थे और किस प्रकार वे इस समय काम कर रहे हैं।"[2] ब्रिटिश संविधान में विभिन्न कालों में परिवर्तन और संशोधन हुए परन्तु फिर भी इसकी सुडौलता में अन्तर नहीं आया। यह बात अत्यन्त ही आश्चर्यजनक है।

(ब) ब्रिटिश संविधान की एकता व सुडौलपन—यह बात स्पष्ट है कि ब्रिटिश संविधान का वर्तमान रूप बहुत वर्षों के उपरान्त तैयार हुआ है, और जैसा कि ओग (Ogg) ने कहा है कि इसकी वास्तविकता को समझने के लिए हमें एक हजार वर्ष का इतिहास अपनी नजरों के सामने रखना होगा; तथा जैसा कि सर विलियम ऐन्सन (Anson) कहते हैं कि ब्रिटिश संविधान एक "घूमते हुए ढाँचे" (rambling structure) सा प्रतीत होता है, हमें यह बात भी इसके साथ-साथ स्वीकार करनी पड़ेगी कि समय-समय पर हुए परिवर्तनों एवं संशोधनों ने इसकी एकता एवं सुडौलता को नष्ट नहीं किया, बल्कि जहाँ कहीं भी उस इमारत में कोई कोना निकलता हुआ नजर आया, उसे वहीं पर काट-छाँट कर सुरूप बना दिया गया जिससे उसमें सुन्दरता और शक्ति आ जाय।

1 It is "the child of wisdom and chance"—*Lytton Strachey.*

2 Ogg & Zink : Modern Governments, p. 27.

(स) ब्रिटिश संविधान एकात्मक एवं अलिखित है—चूँकि अँग्रेजी जनता राजा से बहुत प्रेम करती है, चाहे भले ही उसने राजा के सब अधिकार छीनकर पार्लियामेण्ट को दे दिए हों, इसलिए राज्य का सब काम राजा के नाम से ही होना चाहिये। राजा ही राज्य का सर्वोपरि अधिकारी है, भले ही उसके अधिकार वास्तविक न हों। ब्रिटिश संविधान इसलिए एकात्मक है कि ब्रिटिश जनता राजकीय अधिकारों की छाया का बँटवारा नहीं कर सकती और न करने के लिए इच्छुक है; वह तो केवल राजा के ही पास रहेगी। ब्रिटिश संविधान की यह भी विशेषता है कि वह अलिखित है। यद्यपि इसका भी बहुत-सा भाग लिखित है, जैसा कि अन्य विधानों का कुछ न कुछ भाग अलिखित है, परन्तु ब्रिटिश संविधान का अधिकतर अंश अलिखित है; क्योंकि जैसा कि संयुक्त राज्य अमेरिका का सन् १७८७ ई० में फिलाडेलफिया में विधान तैयार किया गया, ऐसा ब्रिटिश संविधान के बारे में कभी नहीं हुआ। इसके तो "विभिन्न भाग वैसे ही हैं जैसा कि ऐतिहासिक घटना-चक्र ने उन्हें बना दिया। अँग्रेजों ने उन्हें एकत्रित करने का, भिन्न-भिन्न श्रेणियों में बाँटने का, उन्हें पूर्णता प्रदान करने का तथा उन्हें एकसंगत कर संकलित करने का कभी भी प्रयास नहीं किया।"[1]

(द) ब्रिटिश संविधान लचकदार है—ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता यह है कि यह लचकदार (Flexible) है। लचकदार होने से यह तात्पर्य है कि इसमें संशोधन व परिवर्तन बड़ी सुगमता से हो सकते हैं। वैसे तो एकात्मक विधान प्रायः सभी लचकदार होते हैं, परन्तु ब्रिटिश संविधान अन्य संविधानों की अपेक्षा ज्यादा लचकदार है। इसके लचकदार होने की वजह से इसमें यह विशेषता है कि अवसर आने पर परिस्थितियों के अनुकूल यह अपने में परिवर्तन कर सकता है। इसके उदाहरण पर्याप्त संख्या में मिलते हैं। सन् १९३६ में जब एडवर्ड अष्ठम ने गद्दी से त्यागपत्र दिया तो ब्रिटिश पार्लियामेण्ट ने आधे घण्टे के अन्दर उसे कानूनी घोषित कर दिया। इसी प्रकार गत महायुद्ध में पार्लियामेण्ट की अवधि निर्धारित अवधि से बढ़ा दी गई। सन् १९३९ में उन्होंने अपना महामन्त्री भी बदल दिया, क्योंकि वह जर्मनी से युद्ध करने तथा कुशलतापूर्वक युद्ध-संचालन के योग्य नहीं था। इस प्रकार के अनेक उदाहरण ब्रिटिश संविधान में मिल सकते हैं। यदि अमेरिका के संविधान में आप ऐसा एक भी उदाहरण ढूँढ़ें तो मिलना कठिन होगा।

(य) ब्रिटिश संविधान का विकास हुआ है रचना नहीं—जैसा कि उपर्युक्त बातों से स्पष्ट होता है ब्रिटिश संविधान का विकास हुआ है इसको बनाया नहीं गया (It is a growth not a make)। समय-समय पर इसमें जोड़ और छटाव

1 Marriot : English Political Institutions. *Quoted from* Bounty.

होते रहे हैं और भविष्य में भी होते रहेंगे ; इसलिए इसका विकास-क्रम हमेशा जारी रहेगा। "सामन्तवाद इङ्गलैण्ड के संविधान की शैशवावस्था है। मैगना कार्टा (Magna Charta) ने इस नवजात शिशु का नाम-संस्करण किया। क्रान्ति ने इसे शक्ति और यौवन प्रदान किया। प्रतिनिधित्व-प्रथा ने इसे अमृत पिलाया जिसकी वजह से शताब्दियों तक इसने क्रान्तियों के तूफानों को सहा और फिर भी अमर रहा।"

इङ्गलैण्ड के वैधानिक विकास की यह विशेषता है कि इस पर क्रान्तियों का असर नहीं पड़ा और न इङ्गलैण्ड की जनता क्रन्ति के नाम से प्रसन्न ही होती है; वैसे वहाँ की जनता सुधारवादी है और सुधारों द्वारा ही उसने अपने विधान को विकसित किया है। नैपोलियन तृतीय ने ठीक ही कहा था कि फ्रान्स में हम सुधारों को जन्म नहीं देते बल्कि विद्रोह और क्रान्ति पैदा करते हैं; परन्तु इङ्गलैण्ड में विद्रोह और क्रान्ति के स्थान पर सुधार किये जाते हैं।"

(फ) परिवर्तन और प्रवाह : उनका ढंग—ब्रिटिश संविधान की यह भी विशेषता है कि परिवर्तन के साथ-साथ इसका प्रवाह भी अविरल रूप से चालू रहा है। किसी भी समय, जैसा कि फ्रीमैन (Freeman) ने कहा है, "वर्तमान और अतीत में सम्बन्ध-विच्छेद नहीं हुआ और कभी भी अँग्रेजों ने एक स्थान पर बैठकर कोई चमत्कारी वैधानिक सिद्धान्त नहीं निकाला।"[1] परिवर्तन कभी भी आकस्मिक नहीं हुए लेकिन वे इतने शनैः शनैः और निरन्तर रूप में हुए, उनमें परिपाटियों के प्रति भी इतनी श्रद्धा रही, और उनमें विगत नामों एवं संस्थाओं के प्रति भी इतना आदर रहा कि हम उन्हें क्रान्ति तो कह ही नहीं सकते प्रत्युत परिवर्तन की प्रवाहिकता और अविरलता ही कह सकते हैं। कभी भी अँग्रेज जनता ने इस धारा को तोड़ना नहीं चाहा और अतीत को तिरस्कार की दृष्टि से नहीं देखा। वास्तव में अँग्रेज अपनी क्रान्तियों में भी परिवर्तन-विरोधी ही रहे हैं।[2]

(ग) सिद्धान्त और आचरण में अन्तर—ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता यह है कि उसमें सिद्धान्त और आचरण में महान् अन्तर है। इसके सम्बन्ध में एक लेखक ने कहा भी है कि इङ्गलैण्ड में "कोई बात जैसी दिखाई देती है वैसी नहीं है और जैसी है वैसी दिखाई नहीं देती।" इसका तात्पर्य यह है कि संविधान में जैसी बात अभिलेखों या प्रपत्रों में लिखित है वैसी कार्य-रूप में होती हुई दिखाई नहीं देती। हम पढ़ते हैं कि कानून राजा का है, न्याय राजा का है, मन्त्री और उनके आधीन कर्मचारी "क्राउन के कर्मचारी" हैं, पार्लियामेण्ट का चुनाव बिना राजा की अनुमति के नहीं हो सकता, आदि। हम यह भी सुनते हैं कि राजा जल,

1 Freeman : The Growth of the English Constitution.

2 "The English man is conservative even in his revolutions."
(*Ogg & Zink : Modern Foreign Governments, p. 33*)

थल तथा नभ सेना का स्वामी है, राजा की ही आज्ञा से सब कुछ होता है, राजा ही युद्ध की घोषणा करता है, सब कर्मचारी राजा के ही भक्त होते हैं, आदि। परन्तु यदि वास्तव में देखा जाय तो राजा का कोई अधिकार नहीं है जिसे वह कार्य-रूप में परिणत कर सके। वह मन्त्रियों के बिना कुछ भी नहीं कर सकता। वह उनके हाथ की कठपुतली है। यहाँ तक कि राजा पार्लियामेण्ट के अधिवेशन में जो भाषण देता है वह भी उसके मन्त्रियों द्वारा ही तैयार किया जाता है। राजा केवल शक्ति का प्रतीक है, वास्तविक शक्ति उसके हाथ से बिलकुल निकल चुकी है।

(ह) संसदीय राज्य-शक्ति और शक्ति-विभाजन की सीमा—ब्रिटिश संविधान की एक विशेषता जो ऊपर लिखी हुई बात से सम्बन्ध रखती है, यह है कि इङ्गलैण्ड में संसद की पूर्ण वैधानिक प्रभुता (Legal Sovereignty) है। यह ब्रिटिश संविधान की बहुत बड़ी विशेषता है कि संसद की विधि-निर्माण सम्बन्धी शक्ति की कोई सीमा नहीं है। वह किसी भी नियम, अधिनियम, परिपाटी, राजाज्ञा, समझौता तथा कॉमन लॉ (Common Law) के किसी भी नियम को बदल सकती है अथवा रद्द कर सकती है। संसद वैधानिक रूप से सर्वशक्तिमान् है। इसका अभिप्राय यह है कि प्रथम तो संसद कोई भी कानून बना सकती है, रद्द कर सकती है या संशोधन कर सकती है, और दूसरे कोई अन्य ताकत उसके अधिकार में हस्तक्षेप नहीं कर सकती है। यदि कोई उसके ऊपर बन्धन है तो नैतिक—जैसे, जनमत, अन्तर्राष्ट्रीय कानून, अन्तर्राष्ट्रीय समझौते। इनके अलावा संसद पर कोई नियन्त्रण नहीं है।

इसी के आधार पर हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि इङ्गलैण्ड में शक्ति-विभाजन (Separation of Powers) भी अधिक दृढ़ नहीं है। व्यवस्थापिका और कार्यपालिका तो केबिनेट-प्रणाली के अनुसार काफी अंश तक मिल गई हैं, केवल न्याय-विभाग ही कैबिनेट के अधिकार से परे है। परन्तु न्यायालयों को भी संसद के नियमों को अवैध या रद्द करने का अधिकार नहीं है। इङ्गलैण्ड-निवासी सरकार के तीनों अङ्गों को अलग-अलग स्वतन्त्र रखने में विश्वास नहीं करते। जहाँ तक व्यवस्थापिका और कार्यपालिका का सम्बन्ध है, हमें इङ्गलैण्ड में विभाजन के स्थान पर सम्मिलित केन्द्रीयकरण दिखलाई पड़ता है।[1] इससे फायदा है या नुकसान, यह मान्य है या त्याज्य, यह एक अलग प्रश्न है।

(इ) विधि-शासन—ब्रिटिश संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि उसमें कानून का प्राधान्य है। व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा कानून से होती है और

Rule of Law.

1 "In Britain executive and legislature are dovetailed together in a single working unit; and this is the great merit or the basic defect, of the Cabinet system, depending on the point of view."—*Ogg & Zink.*

बिना कानून के द्वारा सिद्ध किये कोई भी व्यक्ति दण्ड का भागी नहीं ठहराया जा सकता। विधि-शासन (Rule of Law) के अनुसार तीन बातें स्पष्ट हैं :

(१) कोई भी व्यक्ति दण्ड का भागी नहीं—शारीरिक अथवा साम्पत्तिक—जब तक कि देश के न्यायालयों द्वारा वैधानिक प्रणाली से उसे कानून का उल्लंघनकर्ता न ठहरा दिया जाय।

(२) कोई व्यक्ति कानून से परे नहीं है लेकिन प्रत्येक व्यक्ति चाहे उसका कुछ भी पद या स्थिति हो, राज्य की साधारण विधि के आधीन है और राज्य के साधारण न्यायालय के क्षेत्र में है।

(३) व्यक्ति के अधिकारों से सम्बन्ध रखने वाले विधान के मुख्य-मुख्य सिद्धान्त, न्यायालयों से द्वारा परिभाषित निश्चयों एवं निर्णयों के परिणाम हैं जो समय-समय पर दिए गए हैं, जब विशेष प्रकार के मामलों में व्यक्ति न्यायालयों के सामने लाए गए हैं। इसका अर्थ यह है कि बहुत से मामलों में, जिनकी विधान में स्पष्टता नहीं है, न्यायालयों के निर्णय ही अन्तिम माने गए हैं। इसलिये विधान में व्यक्तिगत स्वतन्त्रता सम्बन्धी विधियाँ न्यायालयों के निर्णयों का परिणाम हैं। विधान उनका स्रोत न होकर उनका परिणाम है।

विधि-शासन इङ्गलैण्ड के संविधान की एक अनूठी विशेषता है। इसका आशय यह है कि सब व्यक्ति कानून के समक्ष बराबर हैं और केवल राजा ही जो कानून से ऊपर है, कोई भूल करता हुआ नहीं माना जाता।[1] परन्तु इस सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि राजा स्वयं कोई कार्य कर ही नहीं सकता। उसके समस्त आदेशों की जिम्मेदारी मंत्रिमण्डल के ऊपर होती है। अतः वह भूल कर ही नहीं सकता क्योंकि वह व्यक्तिगत अधिकार से कोई प्रशासकीय कार्य ही नहीं करता। उसके समस्त कार्यों की जिम्मेदारी मंत्रियों पर है।

विधि-शासन की प्रधानता के कारण इङ्गलैण्ड में प्रशासकीय न्यायालय (Administrative courts) नहीं हैं जैसे कि यूरोप के अन्य देशों में हैं। इन न्यायालयों में सरकारी अफसरों के मुकद्दमे होते हैं जिन पर साधारण न्यायालयों में मुकद्दमे नहीं चलाये जा सकते। परन्तु इङ्गलैंड के प्रधान मन्त्री से लेकर एक कान्स्टेबुल तक प्रत्येक अफसर सामान्य नागरिक की भाँति अपने अवैध कार्य के लिये सामान्य न्यायालयों के समक्ष उत्तरदायी है।[2]

1 "The king can do no wrong."

2 In England "every official from the Prime Minister down to a constable, or a collector of taxes, is under the same responsibility for every act done without legal justification as any other citizen."
(*Dicey : Law of the Constitution*)

अतः यह स्पष्ट है कि इस प्रकार का विधि-शासन नागरिकों की स्वतन्त्रता का महान् प्रतीक है। विधि-शासन कार्यपालिका के अनियन्त्रित आचरण पर रोक लगाता है।[1] इङ्गलैण्ड की जनता ने इस प्रकार के विधि-शासन की प्रधानता को शताब्दियों के संघर्ष के उपरान्त प्राप्त कर पाया है यद्यपि आधुनिक काल में इस विधि-शासन की ओर कुछ अश्रद्धा भी प्रकट होने लगी है और डाइसी ने लिखा है कि आधुनिक काल में कार्यपालिका में अपना सामाजिक व राजनैतिक उद्देश्यों की पूर्ति के लिए अवैध कदम उठाने की कुछ प्रवृत्ति-सी हो गई है।[2]

इस प्रकार के विधि-शासन का ह्रास हमें कई प्रकार से नजर आता है। पहली बात तो यह है कि किसी सरकारी अफसर के द्वारा किसी व्यक्तिगत नागरिक की कुछ साम्पत्तिक हानि हुई होती है तो उसकी क्षति-पूर्ति सरकारी कोष से की जाती है। अतः सरकारी अफसर यह समझने लगते हैं कि चूँकि उस मामले में उन्हें कुछ नहीं देना पड़ा अतः वे विधि-शासन से बद्ध नहीं हैं। इस प्रकार उनकी अनियन्त्रितता के अवरुद्ध न होने की सम्भावना रहती है। दूसरी बात यह है कि आधुनिक काल में कुछ ऐसे अधिनियम व्यवस्थापिका द्वारा पारित किये गए हैं जिनके द्वारा विधि-शासन को ठेस पहुँची है और सरकारी कर्मचारियों के हाथ और अधिक मजबूत हो गए हैं। इन अधिनियमों में सन् १९०२ का शिक्षा अधिनियम (Education Act), सन् १९१९ का वित्त अधिनियम (Finance Act), सन् १९१२ का राष्ट्रीय इन्श्योरेंन्स अधिनियम (National Insurance Act of 1912), सन् १९११ का संसदीय अधिनियम (Parliamentary Act of 1911), सन् १९३३ का सार्वजनिक अधिकारी रक्षा अधिनियम (The Pubic Authorities Protection Act of 1933) आदि आते हैं जिनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि आधुनिक काल में संसद ने सरकारी अफसरों को अपने-अपने क्षेत्र में कुछ अधिक अधिकार देकर उनके हाथ बहुत मजबूत कर दिये हैं। न्यायाधीश तथा ट्रेड यूनियनों के अफसरों को विशेष अधिकार प्राप्त हैं और अभी हाल में ही कुछ ऐसे प्रशासकीय बोर्डों की स्थापना भी कर दी गई है जो प्रशासकीय विभागों व नागरिकों के झगड़ों को तय करते हैं; और उसकी सामान्य न्यायालयों में अपील नहीं हो सकती। इस प्रकार अब

---

1 The persons who compose the government of the day cannot do just as may please, but must exercise their powers strictly in accordance with the rules which Parliament has laid down."

(*Hegal & Powel : Government of Great Britain, p. 9*)

2 In present times "there is a marked tendency towards the use of lawless methods for the attainment of social or political ends."

(*Dicey : Op. Cit., Introduction (XXXVIII)*)

इङ्गलैण्ड में भी अफसरों को किसी तरह से अधिकाधिक शक्ति प्राप्त होती जा रही है और विधि-शासन की मान्यता को ठेस पहुँच रही है।[1]

(ह) **दलबन्दी शासन**—अन्त में यह और कहा जा सकता है कि इङ्गलैण्ड में दलबन्दी शासन है और जिस प्रकार इङ्गलैण्ड की संसद 'संसदों की जननी' कही जाती है उसी प्रकार इङ्गलैण्ड की दलबन्दी प्रथा समस्त दलबन्दी प्रथाओं की जननी मानी जा सकती है। इङ्गलैण्ड की संसदीय प्रणाली की सफलता का मुख्य कारण वहाँ की दलबन्दी प्रथा ही है और जब किसी दल की चुनावों में हार या जीत होती है तो वह दल की इतनी हार व जीत नहीं मानी जाती जितनी दलीय सिद्धान्तों की हार व जीत मानी जाती है। किसी दल की विजय इस बात की सूचक होती है कि इङ्गलैण्ड की जनता अब उसी दल के सिद्धान्तों की ओर प्रवृत्त हो रही है।

ब्रिटिश संविधान के अंग व स्रोत :

ब्रिटिश संविधान के मूल तत्वों का विश्लेषण करने पर प्रतीत होता है कि वे प्राय: दो श्रेणियों में विभक्त हैं—(१) संविधान की विधियाँ, और (२) परिपाटियाँ या अभिसमय। इन दोनों में यही अन्तर नहीं है कि इनमें प्रथम तो लिखित हैं और दूसरे अलिखित वरन् इनमें वास्तव में भेद यह है कि संविधान की विधियाँ विधान के वे अंग हैं जिन्हें न्यायालय स्वीकार करेंगे और मानेंगे, परन्तु अभिसमयों को न वे मानेंगे और न लागू करेंगे ; और यदि उन्होंने ऐसा किया भी तो वे परिपाटी या अभिसमय न रह कर विधि के ही अंग हो जावेंगे।

संविधान की विधियों के चार वर्ग हैं :

(१) संविधान की विधियाँ—

(अ) पहले वर्ग में वे ऐतिहासिक लेख्य या समझौते हैं जो संकट-काल में राजा और प्रजा के बीच तै हुए। इनमें मैगना कार्टा (Magna Charta, 1215), अधिकार याचना-पत्र (Petition of Rights, 1628), अधिकार-पत्र (Bill of Rights, 1689) हैं।

(ब) दूसरे वर्ग में वे संसदीय विधियाँ आती हैं जिन्होंने समय-समय पर राजा की शक्ति को नियन्त्रित किया, या व्यक्तिगत स्वतन्त्रता, या स्थानीय अधिकारियों अथवा न्यायालयों तथा शासन की मशीनरी व जनमत को स्थापित किया या उन्हें परिभाषित किया। इनमें निम्नलिखित हैं :

(१) बन्दी प्रत्यक्षीकरण नियम (Habeas Corpus Act, 1679)।

---

1 "Thus England suffers from a system which at the moment may result in serious injustice to the individual, the public, the official. There is no uniformity of principles, for the Rule of Law has been superseded by a number of sporadic and unregulated growths.

(*Finer : Theory and Practice of Modern Governments, p. 1447*)

(२) समझौते का अधिनियम (Act of Settlement, 1701), और सन् १९३६ के सिंहासन-त्याग अधिनियम (Abdication Act) द्वारा इसका परिवर्तित रूप।

(३) स्कॉटलैण्ड से संयोग का नियम (Act of Union with Scotland, 1707)।

(४) आयरलैण्ड से संयोग का नियम (Act of Union with Ireland, 1800)।

(५) सन् १८३२, १८६७, १८८४ के सुधार नियम (Reform Acts of 1832, 1867, 1884)।

(६) सन् १८३५ का म्यूनिसिपल कॉरपोरेशन एक्ट (Municipal Corporation Act, 1835)।

(७) सन् १८७२ का संसदीय तथा म्यूनिसिपल चुनाव अधिनियम (Parliamentary and Municipal Elections Act, 1872)।

(८) न्यायालय अधिनियम (१८७३-७६) (Judicature Acts of 1873-76)।

(९) सन् १८८८, १८९४, १९२९ व १९३३ के स्थानीय शासन अधिनियम (Local Govt. Acts of 1888, 1894, 1929 and 1933)।

(१०) सन् १९११ का संसदीय अधिनियम (Parliamentary Act of 1911)।

(११) सन् १९१८ का जनमत प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of Peoples Act of 1918)।

(१२) सन् १९२० का आयरिश सरकार अधिनियम (Govt. of Ireland Act of 1920)।

(१३) सन् १९३६ का जनता-शान्ति अधिनियम (Public Order Act of 1936)।

(१४) सन् १९३७ का क्राउन के मन्त्रियों का अधिनियम (Ministers of Crown Act of 1937)।

(स) तीसरे वर्ग में वे न्यायिक निर्णय हैं जिनके द्वारा चार्टरों और विधियों के अर्थ निश्चित किये गये हैं और उनकी सीमाएँ निर्धारित कर दी गई हैं। इन निर्णयों ने ब्रिटिश संविधान के विकास में बहुत योग दिया है। इसी कारण डाइसी ने कहा है कि "ब्रिटिश संविधान न्यायाधीशों द्वारा निर्मित है।"[1]

1 "The British Constitution is a judge-made Constitution."—*Dicey*
यह कथन इसलिये सत्य है कि ऊपर दिये गये समस्त चार्टरों व अधिनियमों की व्याख्या न्यायालयों ने ही समय-समय पर की है।

(द) चौथे वर्ग में कॉमन लॉ (Common Law) के सिद्धान्त हैं जिनमें से अनेक का सम्बन्ध शासन के कार्य, पद्धति, शक्ति तथा सम्बन्धों से है। इन सिद्धान्तों को संसद ने कभी नहीं बनाया परन्तु वे व्यवहार के कारण शासन-प्रणाली के अंग-प्रत्यंग में घुस आये हैं। उदाहरणार्थ, क्राउन का विशेषाधिकार, भाषण की स्वतन्त्रता, जूरी द्वारा जाँच व निर्णय, आदि।

इन चारों वर्गों में प्रथम तीन तो लिखित हैं और जैसे-जैसे कोई वैधानिक समस्या आती है वैसे-वैसे वह न्यायालयों के सामने आती है और लिखित भाग में वृद्धि भी होती जाती है; परन्तु कॉमन लॉ के सिद्धान्त तो कभी भी लिखित रूप में नहीं आये। केवल वही भाग लिखित रूप में हैं जो रिपोर्टों या न्यायालयों के निर्णयों के रूप में आ गये हैं।

(२) परिपाटियाँ या अभिसमय—

सांविधानिक अभिसमय या परिपाटियाँ प्रत्येक देश के शासन-विधान में पाई जाती हैं। ब्रिटिश संविधान में इनका अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। इन्हीं के कारण ब्रिटिश संविधान का विकास हुआ है और इन्होंने ही उसके ढाँचे को समय-समय पर सामाजिक और राजनैतिक परिस्थितियों के अनुकूल बनाया है। ये हमें ब्रिटिश संविधान में लिखित रूप में नहीं मिलती हैं और इसीलिए कानून नहीं कहला सकती हैं। ये तो परम्परा तथा चिरकाल के व्यवहार से व्यवहृत रूप में आ गई हैं और लोगों को उनमें श्रद्धा उत्पन्न हो गई है जिनके कारण कोई उनका उल्लंघन नहीं कर सकता।[1]

सांविधानिक अभिसमय क्या हैं?—"सांविधानिक अभिसमय वे समझौते, रीतियाँ और व्यवहार हैं जो अपने राजनैतिक महत्त्व के कारण शासन के बड़े-बड़े अधिकारियों के दिन-प्रति-दिन के सम्बन्ध निर्धारित करते हैं, जो कानून की सूखी हड्डियों पर माँस चढ़ाते हैं, विधान को चलाते हैं और उसे सामाजिक और राजनैतिक आवश्यकताओं के अनुकूल परिवर्तनशील बनाते हैं।"[2] उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट

1 "The association of Constitutional Conventions with law", according to a classic report, "has long been familiar in the history of the British Commonwealth.........it has permeated both executive and legislative powers. It has provided a means of harmonising relations where a purely legal solution of practical problems was impossible; and which would have impaired development or would have failed to catch the spirit which gives life to institutions. Such conventions take their place among the constitutional principles which are in practice regarded as binding and sacred, whatever the powers of Parliament in theory may be."

2 Ogg & Zink : Modern Foreign Governments, p. 29.

होता है कि सांविधानिक अभिसमय शासन के वास्तविक चालन में बहुत महत्त्व रखते हैं और उनको समझ लेना प्रत्येक विद्यार्थी के लिये नितान्त आवश्यक है। बहुत से अभिसमय तो विद्वानों, वकीलों और सार्वजनिक कार्य करने वालों के लेख्यों में मिल जायेंगे, परन्तु अधिकतर वे अलिखित ही हैं और परम्परानुसार प्रचलित हैं।

"सांविधानिक अभिसमय इस बात को निर्धारित करते हैं कि कानून के नियम कैसे प्रयोग में लाए जायँ और इसीलिए वे संविधान की मूल शक्ति कहे जाते हैं। दूसरे, ये अभिसमय इस बात को भी निश्चित करते हैं कि शासन का कार्य शासन-सिद्धान्तों के अनुसार ही हो रहा है।" (*एडमंड बर्क*) इन्हीं सांविधानिक अभिसमयों के आधार पर ब्रिटिश शासन-विधान का समस्त ढाँचा निर्भर है और यही उसे लचीला बनाते हैं। सांविधानिक अभिसमय नियम हैं, कानून नहीं हैं।[1]

सांविधानिक अभिसमयों के प्रकार—सांविधानिक अभिसमय तीन वर्गों में विभाजित किए जा सकते हैं—

(अ) प्रथम वर्ग में वे आते हैं जो केबिनेट और संसद से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे—

(१) केबिनेट की लोकसभा के प्रति सामूहिक जिम्मेदारी।

(२) केबिनेक को लोकसभा का विश्वासपात्र न रहने पर त्याग-पत्र दे देना होगा।

(३) यदि मन्त्रिमण्डल की संसद में किसी विधेयक पर हार हो गई है तो वह त्याग-पत्र दे अथवा फिर चुनाव लड़े।

(ब) दूसरे वर्ग में आते हैं जिनमें राजा और केबिनेट तथा मंत्रिमण्डल के सम्बन्ध निर्धारित हैं—

(१) अगर दोनों सभाओं ने कोई विधेयक पास कर दिया है तो राजा को उस पर हस्ताक्षर करने होंगे।

(२) राजा को संसद प्रति वर्ष एक बार अवश्य बुलानी ही होगी।

(३) राजा मन्त्रिमण्डल की सलाह पर ही काम करेगा।

(४) राजा संसद में बहुसंख्यक दल के नेता को ही प्रधान मन्त्री बनायेगा।

(५) लोकसभा का अध्यक्ष दलबन्दी से दूर रहेगा।

(६) लॉ लॉर्डों (Law Lords) के अलावा दूसरे पीयर (Peer) लॉर्डसभा के न्यायिक मामलों में भाग नहीं लेंगे।

(७) लोकसभा द्वारा तीन बार पारित विधेयक को लॉर्डसभा को मानना ही होगा, आदि।

[1] Dicey calls them "maxims or practices, which, though they regulate the ordinary conduct of the Crown, of Ministers, and of other personals under the Constitution, are not in strictness, laws at all."

(स) तीसरे वर्ग में वे हैं जो ब्रिटिश राज्य और उसके औपनिवेशिक राज्यों के सम्बन्धों से सम्बन्ध रखते हैं। वैस्टमिनिस्टर के स्टेच्यूट (Statutes of Westminsiter) में ऐसे बहुत के अभिसमय लिखित हैं, परन्तु फिर भी कुछ अलिखित भी हैं। यह केवल एक परिपाटी ही है कि राजकीय पदवियाँ स्टाइल के परिवर्तन के नियम में ब्रिटेन की संसद और उसके उपनिवेशों की संसदों की अनुमति की आवश्यकता है।

सांविधानिक अभिसमयों की क्यों मान्यता होती है?—उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है कि सांविधानिक अभिसमय कानून (विधि) के अन्तर्गत नहीं हैं और न उन्हें न्यायालय ही कानून द्वारा लागू कर सकते हैं। वे तो जनता की श्रद्धा के ऊपर निर्भर हैं और जनता ने उनमें इसलिये आदर और श्रद्धा की स्थापना की है कि उनके बिना उनका सांविधानिक ढाँचा, जो इतने वर्षों बाद तैयार हुआ है और जिसकी सफलता उन्हीं के ऊपर निर्भर है, बिखर जायगा। उदाहरण के लिए यदि संसद प्रति वर्ष न बुलाई जाय या राजा मनमानी करे या केबिनेट पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी न हो या बहुसंख्यक दल का नेता प्रधान मन्त्री न बनाया जाय तो इसमें प्रथम के ही केवल व्यवहृत न होने पर बहुत कुछ गड़बड़ी हो जायेगी। वार्षिक सेना अधिनियम (Army Act) तथा वार्षिक विनियोग अधिनियम (Appropriation Act) पारित ही नहीं हो सकेंगे, सेना का अनुशासन बिगड़ जायेगा और सम्पूर्ण शासन-यन्त्र बिगड़ जायेगा। इसीलिये डाइसी (Dicey) ने कहा है कि "उनमें बहुत से तो विधि (Law) से इस प्रकार बँधे हुए हैं कि उनका उल्लंघन विधि का उल्लंघन किये बिना हो ही नहीं सकता। कम से कम विधि के उस अंग को तो खतरा है ही जो अभिसमय से सम्बन्धित है।"

परन्तु अभिसमयों को मान्यता प्रदान करने का केवल यही कारण नहीं है कि उनको न मानने पर विधि को क्षति पहुँचती है अपितु जैसा कि लॉवेल (Lowell) ने कहा है इङ्गलैण्ड इसलिए प्रति वर्ष संसद को बुलाने के लिये बाध्य नहीं है कि सेना अधिनियम या वित्तीय विनियोग अधिनियम पारित किये जायँ। संसद सदैव के लिए भी अधिनियम पारित कर सकती है, क्योंकि वह सर्वशक्तिमान् है। अभिसमयों की मान्यता केवल उनके विधि से सम्बन्ध रखने पर ही है, यह बात असङ्गत है। वास्तव में उनकी मान्यता इसलिए होती है कि "वे आदरसूचक नियम हैं"[1] जिनका पालन हमें उसी प्रकार करना है जिस प्रकार हम खेल के नियमों का पालन करते हैं।

[1] Lowell remarks, "In the main the conventions are observed because they are a code of honour. They are, as it were, the rules of the game and the single class in the community, which hitherto had the conduct of English public life almost entirely in its own hands, is the very class that is peculiarly sensitive to obligation of this kind."
(*Lowell : The Government of England*)

अतः यह स्पष्ट है कि अभिसमयों की मान्यता केवल इसीलिए नहीं होती कि उनका विधि से सम्बन्ध है, परन्तु इसलिए अधिक होती है कि वे जनता की पवित्र धरोहर हैं और उनकी रक्षा करना प्रत्येक राजनैतिक दल का परम कर्त्तव्य है। अभिसमय इङ्गलैंड के विधान में एक बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखते हैं। वैध नियमों एवं सांविधानिक अभिसमयों में सबसे बड़ा अन्तर यही है कि वैध नियम तो लिखित हैं परन्तु अभिसमय अलिखित हैं। परन्तु उनका महत्व अत्यधिक है।[1] हाँ, यह भी यथार्थ है कि उनके किसी के द्वारा मानने पर या उनका उल्लंघन करने पर कोई कानूनी कार्यवाही भले ही न की जावे, परन्तु उसके राजनैतिक परिणाम अत्यन्त भयङ्कर होंगे।

एक भ्रमात्मक कथन

ब्रिटिश संविधान की अलिखितता तथा संसद द्वारा इसमें संशोधन करने की शक्ति के आधार पर फ्रान्सीसी विद्वान पेन (Paine) और डी टौकविली (De Tocqueville) ने ब्रिटिश संविधान के बारे में कुछ भ्रमात्मक बात कह डाली है। उनका आधार तो ठीक है, क्योंकि फ्रान्स के इतिहास और इङ्गलैण्ड के इतिहास में बहुत अन्तर है और जैसा पहले कहा जा चुका है, फ्रान्स में परिवर्तन के लिए क्रान्ति होती है, परन्तु इङ्गलैण्ड में सुधार होते हैं। दूसरे फ्रान्स में संविधान बनाया गया है, इङ्गलैण्ड में तो बन गया है। यहाँ रचना नहीं हुई बल्कि विकास हुआ है। तीसरे, फ्रान्स में चिरकाल से लोग लिखित शासन-विधान से आदी रहे हैं और उसमें परिवर्तन विशेष ढंग पर ही किये गये हैं। इङ्गलैण्ड में इसके बिलकुल विपरीत बात नजर आती है। इन्हीं सब बातों के आधार पर इन दोनों विद्वानों ने ब्रिटिश संविधान की जो आलोचना की है उसे हम निष्पक्ष भाव से देखेंगे।

टॉमस पेन (Thomas Paine) ने तो यह बात स्पष्ट रूप से घोषित कर दी कि जो विधान लिखित नहीं है वह विधान ही नहीं है[2] और चूंकि इङ्गलैण्ड का विधान लिखित रूप से नहीं दिखाया जा सकता इसलिए वह विधान ही नहीं है। इसी प्रकार डी टौकविली (De Tocqueville) ने भी कहा कि अँग्रेजी

1 They "cover the most important of the constitutional relations and utterly transform the practical meaning of legal enactments." (*Keith, A. B.: The Constitutional Administration and Laws of the Empire, p. 5*)

2 Where a constitution "cannot be produced in visible form, there is none." "Can Mr. Burke," he asked in replying to the argument in defence of English Constitution in his Reflections on French Revolution, "produce the English Constitution ?" If he cannot, we may fairly conclude that though it has been so much talked about, no such thing as a constitution exists or did ever exist."

(*Thomas Paine : Writings, II*)

विधान वास्तव में है ही नहीं।[1] उसका यह कथन निम्नलिखित बातों पर आधारित था—

(अ) ब्रिटिश संविधान अलिखित है।

(ब) ब्रिटेन में संसद विधान में चाहे जब उसी तरीके से परिवर्तन कर सकती है जिस तरीके से वह दूसरे अधिनियम पारित करती है।

(स) ब्रिटेन में वास्तव में कोई विधान ऐसा नहीं जो सब कानूनों व विधियों से ऊपर हो और जिसकी धाराएँ अनुल्लंघनीय हों।

(द) ब्रिटेन का शासन-विधान अत्यधिक लचकदार है। उसकी कोई सीमा नहीं है, वह बढ़ता ही रहता है।

(य) कोई भी लेख्य स्वतः पूर्ण नहीं है और जैसा कि एक लेखक ने कहा है, 'अँग्रेजों ने अपने विधान के विभिन्न भागों को वहीं छोड़ दिया है जहाँ इतिहास की लहरों ने उन्हें लगा दिया है।" [2]

(फ) ब्रिटिश संविधान में सिद्धान्त तथा आचरण में बहुत अन्तर है। अतः सिद्धान्त आचरण का आधार नहीं है।

यदि इन सब कारणों से डी टौकविली ने यह कह दिया कि ब्रिटिश संविधान है ही नहीं तो कोई आश्चर्य नहीं। परन्तु अगर वास्तव में गौर किया जाय तो उपर्युक्त बातें भ्रमात्मक ही हैं।

उपर्युक्त कथन की इङ्गलैण्ड में विधान नहीं हैं, भ्रमात्मक है, जिसके निम्नलिखित कारण हैं—

(अ) इङ्गलैंड में लिखित विधान के न होने का यह अर्थ नहीं है कि वहाँ विधान ही नहीं है। जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं विधान शब्द को दो अर्थों में प्रयुक्त किया जाता है। यदि हम विधान को शासन का विधियुक्त आधार (Legal basis of government) समझें (और यही समझना ठीक होगा) तो निस्सन्देह यह ज्ञात होगा कि ब्रिटिश संविधान इस परिभाषा को पूरा करता है। यह आवश्यक नहीं है कि सम्पूर्ण विधान लेखबद्ध ही हो। मुनरो (Munro) के कथनानुसार ब्रिटिश संविधान चार्टरों, निर्णयों, स्टैच्यूटों, उदाहरणों, परम्पराओं तथा व्यवहारों का समूह है जो समय-समय पर इकट्ठे होते रहे हैं।"[3] अतः ब्रिटिश संविधान को संविधान न कहना सरासर भूल है।

(ब) ब्रिटिश संविधान में बहुत-सा अंश लिखित रूप में भी है।

1 Alexis De Tocqueville says "The English constitution does not exist."
2 Bounty : Studies on Constitutional Law.
3 Munro : Governments of Europe.

(स) ब्रिटिश संविधान में अनेक ऐसी विधियाँ, कानून, लोक-प्रथाएँ, अभिसमय तथा परम्पराएँ हैं जो लेखबद्ध न होने पर भी अंग्रेज जनता की आदर और श्रद्धा का पात्र बनी हुई हैं और कोई भी उनका उल्लंघन करने की नहीं सोच सकता।

(द) संशोधन और परिवर्तन प्रत्येक विधान में होने चाहिए, इसलिए यह कहना कि ब्रिटिश संविधान में संशोधन और परिवर्तन होते रहते हैं, एक असंगत बात है।

(य) ब्रिटिश संविधान का एक स्रोत नहीं है बल्कि हजारों स्रोत हैं, इसलिए वह लेखबद्ध भी नहीं हो सकता। मुनरो (Munro) के अनुसार "यह चार्टरों, कॉमन लॉ, उदाहरणों, न्यायिक विनिश्चयों, परम्पराओं तथा रूढ़ियों का एकत्रीकरण है। यह एक लेख्य नहीं है बल्कि हजारों लेख्यों में है। इसका एक स्रोत नहीं है बल्कि हजारों स्रोत हैं।"[1]

सर विलियम ऐन्सन (Sir William Anson) के शब्दों में 'यह संविधान विभिन्न प्रकार की भवन-निर्माण-सामग्री द्वारा निर्मित एक ऐसा महल है जिसमें समय-समय पर विभिन्न मालिकों ने अपनी-अपनी आवश्यकतानुकार दालान, बरंडे, खम्भे, शयन-गृह तथा अतिथि-गृह आदि बना लिए हैं। इसके बनाने में अनेक का हाथ है।"

उपर्युक्त तथ्यों से यह स्पष्ट है कि डी टौकविली (D. Tocqueville) तथा टॉमस पेन (Thomos Paine) के कथन पूर्णतया भ्रमात्मक थे। उन्होंने अपने देश (फ्रान्स) के विधान को देखकर विधान की परिभाषा बनाई। परन्तु उनकी परिभाषा संकुचित सिद्ध हुई।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. The English Constitution does not, in reality, exist. Discuss. (*Nagpur, 1943,44 ; Punjab, 1935*)
2. Mention the characteristics of English Constitution. (*Cal., 1941; Agra, 1943; Nagpur, 1943, 44*)
3. Describe the different sources of the British Constitution. Discuss the main elements that go to make the British Constitution. (*Punjab, 1935; Patna, 1930; Nag., 1943*)
4. What is meant by "Conventions of the Constitution"? Give some examples and explain why they are enforced. (*Agra, 1931, 40,42; Punj., 1938; Patna, 1939; Alld., 1942; Nag., 1939*)

---

1 Munro : Governments of Europe.

द्वितीय परिच्छेद

ब्रिटिश संविधान का विकास तथा उसके गुण व दोष

विषय-प्रवेश :

ब्रिटिश संविधान जिस रूप में हमें आज मिलता है वह शताब्दियों की उत्पत्ति है, जैसा कि पहले परिच्छेद में कहा जा चुका है। ब्रिटिश संविधान के विकास की जड़ के तन्तुओं को ढूँढने के लिए हमें आज से करीब १३०० वर्ष पूर्व से चलना होगा और इन वर्षों में जो-जो प्रमुख धाराएँ इसके विकास की लहर में आ मिलीं उन्हें अलग-अलग देखना होगा; क्योंकि जैसा पहले कहा जा चुका है, अनेक घटनाओं ने इसे वह रूप प्रदान किया है जो वर्तमान समय में हमारी आँखों के सामने है।[1]

पाँच ऐतिहासिक युग :

ब्रिटिश संविधान के विकास का प्रारम्भ किस समय से हुआ, यह आज भी वाद-विवाद का प्रश्न है। परन्तु इतना सत्य है कि इसका विकास निम्नलिखित पाँच युगों में हुआ :—

(१) प्राचीन बादशाहों की शक्ति में कमी (सातवीं शताब्दी से मैगना कार्टा (Magna Charta, 1215) तक)।

(२) राजा की परिषद् में जनता के प्रतिनिधित्व की वृद्धि (सन् १२१५ से आदर्श पार्लियामेण्ट (१२९५) के निर्माण तक)।

(३) पार्लियामेण्ट द्वारा वित्त पर नियन्त्रण प्राप्त करना (सन् १२९५ से १३४० तक)।

(४) पार्लियामेण्ट द्वारा राजकीय क्षेत्र में सर्वेसर्वा बनना (१३४० से प्रथम हनोवर राजा के सिंहासनारूढ़ होने (१७१४) तक।

(५) सार्वजनिक मताधिकार की प्राप्ति (१९२८) होने तक।

प्रथम युग : सातवीं शताब्दी से १२१५ ई० तक—प्रारम्भ में सातवीं और आठवीं शताब्दी में इङ्गलैण्ड में छोटे-छोटे अनेक कबीले थे और लोग गाँवों में समुदाय बनाकर

[1] "It (British Constitution) owes its constitutional character not to any single event or movement, but to a process of growth at least as old as the Norman conquest. We might indeed look back still farther to the Saxon Kings under whom the realm of England and its shires came into existence, most of all to Alfred, the best of our Kings, who in his life and character seems an English Constitution in himself."
—*G. M. Travelyan*

रहते थे। प्रत्येक समुदाय का एक नेता होता था जिसकी आज्ञा सब को शिरोधार्य होती थी। धीरे-धीरे शक्तिशाली समुदायों द्वारा कमजोर समुदायों पर विजय प्राप्त करने का क्रम प्रारम्भ हुआ और इङ्गलैण्ड में राजकीय शासन की स्थापना हुई।

प्रारम्भ में राजा सर्वशक्तिमान् था। वह परामर्श के लिये एक समिति बुलाता था जिसमें छोटे-छोटे राजे, बिशप, आर्च तथा अनेक राजाओं के उच्च कर्मचारी होते थे। इस समिति को विटनेजमोट (Witenagemot) या "बुद्धिमान पुरुषों की समिति"[1] (Council of Wisemen) कहा जाता था।

इस समिति के पास काफ़ी शक्ति थी। "यह राजा को गद्दी से उतार सकती थी। यह नया राजा चुन सकती थी। शासन-प्रबन्ध में इसका पूरा अधिकार था। राजा के साथ यह कानून बनाती थी और कर लगाती थी। यह संधि वगैरह कर सकती थी और समय आने पर जल व थल सेना इकट्ठी कर सकती थी। यह पादरियों व शाइरों तथा चर्च के बड़े-बड़े पदाधिकारियों की नियुक्ति करती थी व उन्हें पदच्युत करती थी। यह दीवानी तथा फ़ौजदारी मामलों में उच्च न्यायालय का कार्य भी करती थी।"[2] शक्ति तो इसके पास बहुत थी परन्तु वास्तव में यह उसका प्रयोग नहीं कर सकती थी। यह आधुनिक संसद की सूक्ष्म आकृति कही जा सकती है परन्तु आधुनिक संसद की शक्ति के प्रयोग में यह उससे कहीं निम्न थी। उस समय राजा की शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी और उसके व्यक्तित्व के समक्ष विटन की शक्ति का प्रयोग न हो पाता था। यह एक रुचिकर कहानी है कि किस प्रकार आज शक्ति हस्तान्तरित हो गई है। आज राजा की कहने को शक्ति बहुत है परन्तु प्रयोग में कुछ नहीं है। उस काल में विटन की कहने को शक्ति बहुत थी परन्तु प्रयोग में न थी। इङ्गलैण्ड के संविधान के विकास की कहानी इसी शक्ति के हस्तान्तरित (Transfer) होने की कहानी है।[3] वैसे राजा युद्ध में नेता माना जाता था, परन्तु चूँकि उसके पास फौज नहीं होती थी, इसलिए विटन की शक्ति बहुत थी। वह राजा को सिंहासन से उतार भी सकती थी तथा राजा की मृत्यु के बाद दूसरे किसी को भी चाहे वह राजघराने का न हो, सिंहासन पर बिठा सकती थी। परन्तु कालान्तर में जैसे-जैसे शक्तिशाली राजे आते गये, विटन की यह शक्ति घटती गई। राजाओं ने भी अपने मित्रों को विटन में भरना शुरू कर दिया और विटन राजा की हाँ में हाँ मिलाने वाली संस्था मात्र रह गई।

1 It was a body consisting of "the King, the alderman or governor of shires, the King's thegns, the bishops, the abbots, and generally the *principles* and *sapientes*."

2 Tanswell-Langmead : English Constitutional History, p. 8.

3 It is, therefore, said that "The whole development of the British constitution has been marked by a steady transfer of powers and prerogatives from the King to the Crown.

इस युग में स्थानीय स्वशासन की भी स्थापना हुई। सारा देश विभिन्न शाइरों (Shires) में विभक्त था और प्रत्येक शाइर में कई हण्ड्रेड्स (Hundreds) होते थे जो विभिन्न गाँवों तथा नगरों को मिलाकर बनते थे। प्रत्येक हण्ड्रेड या जिले में स्थानीय सभा होती थी और प्रत्येक शाइर में शाइर-मूट (Shire-moot)। गाँवों में जनता इकट्ठी होकर अपने आपस के मामलों पर विचार करती थी। इस प्रकार स्थानीय शासन की इसी काल में नींव पड़ गई। इस काल में न्यायाधीशों की व्यवस्था न थी बल्कि शाइर-मूटों में उनके प्रधान तथा प्रधान पादरी वग़ैरह ही न्याय करते थे।

सब से पहले जनता में जागृति तथा शिक्षा और कानून की व्यवस्था अल्फ्रेड महान् (८७१ से ६०१ ई० पू०) ने की जिसने डेन जाति के आक्रमणकारियों को हराकर इङ्गलैण्ड को एक सूत्र में बाँधा, फौज और जल-सेना तैयार की तथा शिक्षा और कानून की व्यवस्था की।

सन् १०६६ ई० में इङ्गलैण्ड में नॉर्मन जाति का शासन स्थापित हुआ और उसके नेता विजेता विलियम ने शासन की सुविधा तथा जनता की सहानुभूति प्राप्त करने के लिए फ्यूडल प्रथा को प्रारम्भ किया जिसके अनुसार भूमि बैरनों को जो अपने पास सेना रखते थे और आवश्यकता के समय राजा को मदद देते थे, बाँट दी गई। विलियम ने विटन को हटा दिया और उसके स्थान पर एक महान् परिषद् (Great Council or Curia Regis) की स्थापना की जिसमें बैरन और राज्य के बड़े-बड़े पदाधिकारी ही बुलाये जाते थे। इसका प्रथम कार्य राजकीय मालगुजारी (royal revenue) वसूल करना और उसका हिसाब देना था। वर्तमान चांसलर ऑफ दी एक्सचेकर (Chancellor of the Exchequer) की उत्पत्ति यहीं से होती है।

यह क्रम तभी तक चल सकता था जब तक कि न्यायप्रिय, बुद्धिमान् और शक्तिशाली राजा राज्य करते रहें। कमजोर राजाओं के आने पर फ्यूडल ढाँचा नहीं चल सकता था।

सन् ११६६ से १२१६ ई० तक इङ्गलैण्ड में एक बहुत ही निर्दयी, दुष्ट तथा अत्याचारी राजा हुआ जिसका नाम जॉन था। उसने सन् १२०२ में अपने भतीजे आर्थर को अपनी जागीर से हटा दिया तथा अन्य बैरनों को, जिन्होंने उसका विरोध किया, जेल में डाल दिया। सन् १२१५ में बड़े-बड़े बैरनों ने मिलकर जॉन को गृह-युद्ध की धमकी दी और उससे एक चार्टर पर हस्ताक्षर कराए जो मैगना कार्टा (Magna Charta) के नाम से प्रसिद्ध है। इसके द्वारा यह निश्चित हुआ कि राजा महान् परिषद् की आज्ञा के बिना किसी विशेष प्रकार के कर नहीं लगायेगा तथा परिषद् में बड़े-बड़े बैरनों, शाइरों के उपाधि-प्राप्त लोगों तथा शैरिफों को आमन्त्रित करेगा। यद्यपि इस चार्टर से जन-साधारण को कोई विशेष लाभ या

अधिकार प्राप्त नहीं हुआ, तथापि राजा के अधिकार नियन्त्रित हो गये। इसीलिए मैगना कार्टा अँग्रेज जनता की स्वतन्त्रता का प्रथम घोषणा-पत्र माना जाता है।

द्वितीय युग : सन् १२१५ से १२९५ ई० तक : महान् परिषद् में प्रतिनिधियों की वृद्धि—ब्रिटिश संविधान के विकास में दूसरा कदम यह था कि महान् परिषद् में प्रजा के प्रतिनिधियों की वृद्धि हुई। अभी तक महान् परिषद् में केवल बिशप, बैरन, राज्य के उच्चाधिकारी आदि ही सम्मिलित होते थे, यद्यपि यात्रा के साधन कठिन होने के कारण ये लोग भी बहुत कम संख्या में उसकी बैठकों में भाग लेते थे।

सन् १२५८ में एक परिवर्तन यह हुआ कि राजा हेनरी तृतीय का महान् परिषद् के बैरनों से मतभेद हो गया और बैरनों ने उसके ऊपर नियन्त्रण करने के लिये ऑक्सफोर्ड में एक सभा की, जिसमें उसे उनकी शर्तें माननी पड़ीं और राजा पर नियन्त्रण रखने के लिये १५ बैरनों की एक कमेटी बना दी गई। परन्तु हेनरी ने ऑक्सफोर्ड की शर्तें मानने के ५ वर्ष बाद ही उन्हें ठुकरा दिया जिसके फलस्वरूप सन् १२६४ में साइमन डी मोण्टफोर्ड के नेतृत्व में बैरनों ने राजा से युद्ध किया और उसे हराकर बन्दी बना लिया। तदुपरान्त साइमन ने एक पार्लियामेण्ट बुलाई जिसमें बिशप तथा बैरनों के साथ-साथ प्रत्येक शाइर से दो-दो उपाधि-प्राप्त व्यक्ति (Knights) तथा प्रत्येक बरो (Borough) से दो-दो स्वतन्त्र नागरिक भी बुलाए गए। इस प्रकार बड़े-बड़े लोगों के साथ-साथ छोटे-छोटे लोगों का भी पार्लियामेण्ट में आना प्रारम्भ हुआ और लोकसभा की नींव पड़ी।

सन् १२९५ में एडवर्ड प्रथम ने एक पार्लियामेण्ट बुलाई जिसका नाम आदर्श पार्लियामेण्ट (Model Parliament) रक्खा गया। इसमें शाइरों और बरों के १७२ तथा बैरनों, क्लर्जी, बिशप आदि के ४०० प्रतिनिधि थे। इस पार्लियामेण्ट में वास्तव में जनता के प्रतिनिधि अधिक संख्या में सम्मिलित हुए और धीरे-धीरे पार्लियामेण्ट में जनता के प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ती गई।

चौदहवीं शताब्दी के मध्य में पार्लियामेण्ट दो भागों—लॉर्डसभा तथा लोक-सभा—में विभक्त हो गई। यह विभाजन स्वतः ही हो गया। समयानुसार जैसे-जैसे पार्लियामेण्ट बुलाई जाती थी वैसे-वैसे बड़े-बड़े लोगों ने अपना अलग संगठन बना लिया और छोटे-छोटे प्रतिनिधियों ने अपना अलग। वे अलग-अलग स्थानों पर बैठने लगे और उन्होंने अपने अलग-अलग दल बना लिए। इस प्रकार लॉर्डसभा और लोक-सभा की उत्पत्ति हुई। प्रथम में तो बैरन, बिशप तथा बड़े-बड़े लोग शामिल होते थे, तथा दूसरे में शाइरों और बरों से चुने हुए उपाधि-प्राप्त लोग तथा स्वतन्त्र नागरिक। दूसरे दल में व्यापारी वर्ग भी शामिल था और कालान्तर में जनता के प्रतिनिधि होने के कारण इनका दल राजा और लॉर्डसभा दोनों से अधिक शक्तिशाली बन गया।

तीसरा युग : सन् १२९५ से १३४० ई० तक : पार्लियामेण्ट द्वारा वित्त पर नियन्त्रण—प्रारम्भ में राजा रुपये की आवश्यकता को रेवेन्यू से ही पूरा कर लेते थे, परन्तु युद्धों के अधिक बढ़ने के कारण उन्हें रुपये की अत्यधिक आवश्यकता पड़ी। परिणाम यह हुआ कि पार्लियामेण्ट को उन्हें नये करों की स्वीकृति के लिये बार-बार बुलाना पड़ा। सन् १३४०-४१ में पार्लियामेण्ट ने एडवर्ड तृतीय को अधिक करों के आरोपण की आज्ञा प्रदान करते हुए उससे निम्नलिखित शर्तें स्वीकार करवा लीं :—

(१) राजा पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के बिना कोई नया कर न लगावे।
(२) पार्लियामेण्ट हिसाब की जाँच के लिए कमिश्नर नियुक्त करे।
(३) मन्त्री पार्लियामेण्ट के द्वारा नियुक्त किए जावें।
(४) पार्लियामेण्ट के नये अधिवेशन से पूर्व मन्त्री राजा के समक्ष अपना इस्तीफा प्रस्तुत करें और अपने खिलाफ हुई शिकायतों का जवाब दें।

इस प्रकार पार्लियामेण्ट ने राज-धन तथा मन्त्रियों पर नियन्त्रण प्राप्त करना प्रारम्भ किया। परन्तु अभी पार्लियामेण्ट की शक्ति अधिक नहीं हो पाई थी, क्योंकि उसका बुलाना, उसे विसर्जित करना आदि काम राजा के ही हाथ में थे।

चतुर्थ युग : सन् १३४० से १७१४ ई० तक : पार्लियामेण्ट की विजय और उसके हाथ में शक्ति का निहित होना—यह कार्य चार शताब्दियों में तथा ५ राजवंशों के कार्य-काल में हुआ। प्रथम वंश प्लाण्टेजेनेट (सन् ११५४ से १३९९ ई०) तक रहा, जिसके समय में पार्लियामेण्ट की शक्ति अत्यधिक बढ़ गई। सर्वप्रथम इङ्गलैण्ड के इतिहास में सन् १३२७ में पार्लियामेण्ट ने एडवर्ड द्वितीय को सिंहासन से च्युत कर दिया। रिचार्ड द्वितीय को भी पार्लियामेण्ट के समक्ष झुकना पड़ा। पार्लियामेण्ट ने लङ्कास्टर वंश के राजा हेनरी को इङ्गलैण्ड का राजा बनाया।

लङ्कास्टर वंश (सन् १३९९ से १४८५ ई० तक) के जमाने में बहुत कुछ परिवर्तन हुए और पार्लियामेण्ट की शक्ति और अधिक बढ़ गई।

(१) सर्वप्रथम हेनरी चतुर्थ के समय में 'प्रीवी कौंसिल' नाम का प्रयोग हुआ और राजा द्वारा मनोनीत मन्त्रियों का समूह इस नाम से पुकारा जाने लगा।

(२) सन् १४०१ में लोकसभा ने यह जिद की कि नए करों की स्वीकृति देने से पूर्व राजा प्रजा की शिकायतों का निवारण करे। धीरे-धीरे यह प्रथा बन गई कि नये करों की स्वीकृति तभी दी जायगी जब राजा प्रजा की शिकायतों के निवारण का वायदा करेगा।

(३) सन् १४०७ में लोकसभा ने वित्त विधेयक को अपनी संसद में ही प्रारम्भ होने का अधिकार प्राप्त कर लिया (पूर्ण अधिकार तो उसे सन् १९११ में प्राप्त हुआ)।

यह सब होते हुए भी इङ्गलैण्ड में अभी वैधानिक शासन की स्थापना करना तो एक असफल प्रयत्न ही रहा, तथा गुलाबों के युद्धों (War of Roses) के कारण देश में ऐसी अशान्ति तथा अव्यवस्था फैल गई कि लोग यह चाहने लगे कि भले ही किसी निरंकुश राजा का राज्य हो परन्तु देश में शान्ति की स्थापना हो।

ट्यूडर वंश (सन् १४८५ से १६०३ ई० तक) के समय में पालियामेण्ट की शक्ति बहुत क्षीण हो गई। ट्यूडर राजा शक्तिशाली थे। उन्होंने काफी धन इकट्ठा कर लिया था और इसलिए उन्हें पालियामेण्ट के नियन्त्रण में रहने की आवश्यकता ही नहीं थी। इसके अलावा लोग गुलाबों के युद्ध से बहुत परेशान हो गये थे, अतः उन्होंने ट्यूडर वंश के निरंकुश शासन को हर्षपूर्वक स्वीकार कर लिया।

ट्यूडर वंश के जमाने में इङ्गलैण्ड ने उन्नति भी काफी की। उसके व्यापार की वृद्धि हुई, सामुद्रिक शक्ति बढ़ी तथा विदेशों में उपनिवेशों की स्थापना हुई। अतः ट्यूडर वंश की निरंकुशता इङ्गलैण्ड के लिए हितकर ही रही। रानी एलिजबेथ का युग तो इङ्गलैण्ड के इतिहास का स्वर्ण-युग कहलाता है।

स्टुअर्ट वंश (सन् १६०३ से १७१४ ई० तक) के समय में परिस्थिति बदल गई। जनता में जागृति पैदा हुई और उसने राजा के निरंकुश शासन का विरोध करना प्रारम्भ कर दिया। इधर स्टुअर्ट राजे जेम्स प्रथम तथा चार्ल्स प्रथम राजा के दैवी अधिकार (Divine Rights) के पक्के मानने वाले थे। परिणाम यह हुआ कि स्टुअर्ट राजाओं के समय में राजा और पालियामेण्ट में फिर संघर्ष शुरू हुआ जिसके परिणामस्वरूप अन्त में पालियामेण्ट की विजय हुई। स्टुअर्ट वंश के समय में पालियामेण्ट के विकास के हेतु निम्नलिखित कदम उठाए गये :—

(१) सन् १६२८ का अधिकार याचना-पत्र (Petition of Rights)।

राजा चार्ल्स प्रथम और पालियामेण्ट में संघर्ष हुआ और सन् १६२८ में करों की स्वीकृति देने से पूर्व पालियामेण्ट ने राजा से उपर्युक्त प्रार्थना-पत्र पर हस्ताक्षर कराए। इसके अनुसार यह निश्चित हुआ कि—

(अ) राजा बिना पालियामेण्ट की स्वीकृति के नए कर नहीं लगावे।

(ब) राजा बिना पालियामेण्ट की आज्ञा के धन उधार न लेगा।

(स) राजा अकारण किसी व्यक्ति को बन्दी न बनायेगा।

(द) राजा युद्ध की अनुपस्थिति में युद्ध-सम्बन्धी नियम लागू न करेगा।

(२) सन् १६७९ का बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम (Habeas Corpus Act)।

इसके अनुसार राजा जिन लोगों को बन्दी करेगा उनके ऊपर तुरन्त ही अभियोग चलायेगा।

(३) सन् १६८९ का अधिकार-पत्र (Bill of Rights)।

विलियम और मेरी के सिंहासनारूढ़ होने पर पार्लियामेण्ट ने उनसे इस पत्र पर हस्ताक्षर कराए। इसके अनुसार—

(अ) राजा बिना पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के कोई नए कर न लगायेगा।

(ब) राजा पार्लियामेण्ट की बैठक प्रति वर्ष बुलायेगा।

(स) राजा पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के बिना सेना न रख सकेगा।

(द) राजा कोई नये न्यायालय, जैसे हाई कमीशन कोर्ट आदि स्थापित नहीं कर सकेगा।

(य) पार्लियामेण्ट में सदस्यों को बोलने की पूर्ण स्वतन्त्रता होगी। इस नियम ने राजा की शक्ति पर बहुत नियन्त्रण कर दिया।

(४) सन् १७०१ का समझौते का अधिनियम (Act of Settlement)।

रानी ऐन के कोई सन्तान न थी इसलिए उत्तराधिकार तथा अन्य तत्सम्बन्धी झगड़ों को तय करने के लिए यह अधिनियम पारित किया गया। इसके अनुसार—

(अ) रानी ऐन के बाद इङ्गलैण्ड का सिंहासन जेम्स प्रथम की नातिनी सोफिया के लड़कों को मिले।

(ब) राजा बिना पार्लियामेण्ट की स्वीकृति के न तो अन्य देशों को जा सकता है और न उनसे युद्ध ही कर सकता है।

(५) विलियम और मेरी के शासन-काल के समाप्त होने से पहले ही द्वि-दल प्रथा (Two-party system) शुरू हो गई। इसकी उत्पत्ति सन् १६७९-८१ में हुई जबकि पार्लियामेण्ट में बहिष्कार-प्रस्ताव (Exclusion Bill) रक्खा गया, जिसके अनुसार जेम्स द्वितीय को चार्ल्स द्वितीय के बाद सिंहासन से वंचित रखना था, क्योंकि जेम्स कैथोलिक था। बिल के समर्थक ह्विग और विरोधी टोरी कहलाये। इन लोगों ने एक दूसरे को चिढ़ाने के लिए ये नाम रक्खे थे। वर्तमान काल में ह्विग लिबरल (Liberals) और टोरी कन्जरवेटिव (Conservatives) कहलाते हैं।

(६) केबिनेट का प्रारम्भ : सन् १६९३ से १६९६ ई० तक के समय में राजा विलियम ने एक मन्त्रिमण्डल बनाया जो 'जुन्टा' (Junta) कहलाया। इसके सदस्य उन दलों में से थे जिनका पार्लियामेण्ट में बहुमत था।

(७) सन् १६८९ में सेना अधिनियम (Army Act) पास किया गया जिसके द्वारा केवल एक साल के लिए ही सैनिक भर्ती किए जाना निश्चित हुआ। राजा को अब और भी आवश्यक हो गया कि वह प्रति वर्ष पार्लियामेण्ट की बैठक बुलाए।

(८) सन् १६९४ में त्रैवार्षिक अधिनियम (Triennial Act) पास हुआ जिसके अनुसार पार्लियामेण्ट की अवधि तीन साल निश्चित करदी गई और यह

निश्चित हो गया कि पार्लियामेण्ट का अधिवेशन किसी भी हालत में तीन साल से अधिक न जाय। बाद में सप्तवार्षिक नियम भी पास हो गया।

(९) सन् १७०७ में स्कॉटलैण्ड से संयोग नियम (Act of Union with Scotland) भी पास हो गया जिसके अनुसार वहाँ से भी लॉर्डसभा और लोक-सभा में क्रमशः १६ और ४५ सदस्य भेजने की अनुमति मिल गई।

(१०) सन् १७१४ में, जब हनोवर वंश का राजा जॉर्ज प्रथम इङ्गलैण्ड का राजा हुआ, पार्लियामेण्ट की शक्ति बहुत बढ़ी हुई थी; क्योंकि (अ) प्रथम तो पार्लियामेण्ट के द्वारा ही सन् १७०१ के एक्ट ऑफ सैटिलमेण्ट (Act of Settlement, 1701) के अनुसार वह राजा बनाया गया था; और (ब) दूसरे अँग्रेजी न जानने के कारण उसे प्रत्येक बात के लिये पार्लियामेण्ट पर ही निर्भर रहना पड़ता था। हनोवर राजा अँग्रेजी नहीं जानते थे, इसलिये उन्होंने पार्लियामेण्ट की बैठकों में आना छोड़ दिया। उनके स्थान की पूर्ति मन्त्रियों में से ही एक ने शुरू करदी और वह मन्त्री प्रधान मन्त्री कहलाया। इस प्रकार केबिनेट प्रणाली द्वारा, जिसमें एक प्रधान मन्त्री और अन्य मन्त्री हों, शासन का कार्य करने की प्रथा ने बल पकड़ा। राजा की कमजोरी ही पार्लियामेण्ट की शक्ति को बढ़ाने वाली थी।

पाँचवाँ युग : सन् १७१४ से १६२८ ई० तक : सार्वजनिक मताधिकार की प्राप्ति—हनोवर वंश के प्रारम्भ होते ही लोकसभा के अधिकारियों में वृद्धि हुई। लेकिन सब से बड़ी कमजोरी यह थी कि इसमें बहुत कम जनसंख्या का प्रतिनिधित्व था। सन् १७१४ के बाद का इतिहास लोकसभा में प्रतिनिधित्व की वृद्धि से सम्बन्ध रखता है। इस सम्बन्ध में पार्लियामेण्ट ने कई सुधार-नियम पास किये जिनके द्वारा लोक-सभा में जन-साधारण के प्रतिनिधियों की वृद्धि हुई। वे निम्नलिखित हैं—

(१) सन् १८३२ का सुधार-नियम, जिसके अनुसार पार्लियामेण्ट में मध्यम श्रेणी के लोगों के प्रतिनिधियों का आना शुरू हुआ।

(२) सन् १८३५ का म्युनिसिपल कॉरपोरेशन एक्ट, जिसके अनुसार स्थानीय संस्थाओं में जनता के प्रतिनिधियों की संख्या बढ़ी। सन् १८८८ तथा सन् १८६४ के अधिनियमों द्वारा आगे चलकर इङ्गलैण्ड में स्थानीथ स्वशासन की और प्रतिष्ठा बढ़ी और उसका प्रभाव मान्य हुआ।

(३) सन् १८६७ का सुधार-नियम, जिसके अनुसार मध्यम-वर्ग के अतिरिक्त अन्य दस्तकार तथा शहर के मजदूरों को भी मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ।

(४) सन् १८८४ का सुधार-बिल, जिसके अनुसार खेती पर काम करने वाले मजदूरों को भी मताधिकार प्राप्त हुआ।

(५) १६११ का पार्लियामेण्ट एक्ट, जिसके अनुसार वित्तीय विधेयकों पर

लोकसभा का एकाकी अधिकार स्थापित हुआ अर्थात् यदि लॉर्डसभा उसे पास भी न करे तो भी लोकसभा उसे पास कर दे।

(६) सन् १९१८ का एक्ट, जिसके अनुसार तीस साल की उम्र से अधिक आयु वाली स्त्रियों को भी मताधिकार प्राप्त हुआ।

(७) सन् १९२८ का एक्ट, जिसके अनुसार सार्वजनिक मताधिकार निश्चित हुआ और २१ वर्ष से अधिक आयु वाले प्रत्येक स्त्री-पुरुष को मताधिकार मिला।

उपर्युक्त विवरण केवल सूक्ष्म रूप में ही ब्रिटिश संविधान के विकास को बताता है परन्तु इससे यह भली-भाँति स्पष्ट हो जाता है कि किस प्रकार इन १३०० वर्षों में पार्लियामेण्ट ने यह वर्तमान स्वरूप प्राप्त किया और किस प्रकार समयानुसार इसके अधिकारों में वृद्धि हुई। आजकल पार्लियामेण्ट का क्या रूप है और किस प्रकार इङ्गलैण्ड का शासन-कार्य चलता है, यह अगले परिच्छेदों में स्पष्ट किया जायेगा।

ब्रिटिश संविधान के गुण और दोष—

संविधान के गुण—(१) ब्रिटिश संविधान लचकदार होने के कारण परिस्थितियों के अनुकूल बनाया जा सकता है क्योंकि इसमें संशोधन सुविधापूर्वक हो सकते हैं।

(२) इङ्गलैण्ड की संसद संसदीय संस्थाओं का घर है। इङ्गलैण्ड की संसद संसदों की जननी कही जाती है (The English Parliament is the mother of Parliaments); अतः इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट एक आदर्श पार्लियामेण्ट है।

(३) राजकीय शक्ति राजा के हाथ में न होकर पार्लियामेण्ट में निहित है, इसलिए शासन वैधानिक है। निरंकुशता के लिए वहाँ कोई अवसर नहीं है।

(४) ब्रिटिश संविधान इङ्गलैण्ड की राष्ट्रीय जागृति का परिचायक है। यह इस बात को सिद्ध करता है कि इङ्गलैण्ड की जनता किस प्रकार अपनी स्वतन्त्रता और अधिकारों की रक्षा के लिए उत्सुक है।

(५) इङ्गलैण्ड के संविधान का विकास सुधारों से हुआ है, विद्रोहों से नहीं; इसलिए सुधार ही यहाँ के वैधानिक जीवन के चालक हैं।

(६) द्वि-सभात्मक प्रणाली के होते हुए भी लोकसभा का महत्व अधिक है; इसलिए जनता की आवाज बुलन्द है।

(७) विधि-शासन (Rule of Law) तथा कॉमन लॉ (Common Law) द्वारा जनता की स्वतन्त्रता पूर्ण रूप से सुरक्षित है।

(८) इङ्गलैण्ड का विधान संसार में अति प्राचीन है और इसका संसार में बहुत बड़ा महत्व है।

संविधान के दोष—(१) लचकदार होने के कारण इसमें आवश्यकतानुसार परिवर्तन हो सकते हैं, इसलिए इसकी स्थिरता की जड़ कमजोर है; यद्यपि लचकदार होना इसका एक विशेष गुण है।[1]

(२) केबिनेट का प्रभुत्व होने के कारण अधिकांशत: उसी की तानाशाही है।

(३) पार्लियामेण्ट विधान में संशोधन करने का अधिकार रखती है; अतः यह विधान को जब चाहे उलट सकती है।

(४) बहुमत-दल की सरकार होने के कारण बहुमत-दल वाले चाहें तो सारे देश के स्वार्थों का अपने लिए बलिदान कर सकते हैं।

(५) उपर्युक्त कारणों से यह स्पष्ट है कि इङ्गलैण्ड में विधान की कोई निजी शक्ति नहीं है। यह संसद के हाथ का खिलौना है और चाहे जैसे तोड़ा-मरोड़ा जा सकता है।

(६) संसद आवेश में गलत नियम भी बना जाती है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Discuss briefly the evolution of the British Constitution.
2. "The English Constitution is highly flexible." (*Marriot*) Explain.
   How far do you agree that the flexibility of the English Constitution is at once its glory and danger? (*Punjab, 1944, 46*)
3. "The whole development of the British Constitution has been marked by a steady transfer of powers and prerogatives from the King to the Crown." Discuss.

---

1 Dr. Finer says about the flexibility of the British Constitution that "It is not worthwhile to question the usefulness of its flexible character. In it, it is as easy to remedy mistakes as it is to make them, but its benefits should not be lost in order to safeguard against rare and remote possibilities."

तृतीय परिच्छेद

राजा तथा क्राउन

विषय-प्रवेश :

शासन के तीन अंग होते हैं—व्यवस्थापिका (Legislature), कार्यकारिणी (Executive), तथा न्याय-विभाग (Judiciary)। प्रथम का काम कानून बनाना है, दूसरे का काम कानून का पालन कराना और तीसरे का कानून न मानने वाले को दण्ड देना है। किसी भी शासन-विधान का अध्ययन करते समय हमें इसी क्रम में उसके अंगों का अध्ययन करना चाहिये। परन्तु इङ्गलैण्ड के शासन-विधान में और प्रत्येक शासन-प्रणाली में जहाँ केबिनेट-प्रणाली प्रचलित है, व्यवस्थापिका तथा कार्यकारिणी इस प्रकार एक दूसरे से गुथी हुई हैं, और विशेषकर इङ्गलैण्ड में तो कार्यपालिका ने इस प्रकार व्यवस्थापिका पर अपना प्रभुत्व स्थापित कर लिया है कि हमें अपने अध्ययन में कार्यपालिका को ही प्रथम स्थान देना होगा और दूसरा व्यवस्थापिका को। अतः इङ्गलैण्ड की शासन-प्रणाली का अध्ययन हम कार्यकारिणी के सर्वोच्च अधिकारी क्राउन से आरम्भ करेंगे।

'क्राउन' की परिभाषा :

क्राउन की परिभाषा करना एक कठिन कार्य है। वास्तव में इसकी परिभाषा नहीं की जा सकती, इसकी केवल व्याख्या ही की जा सकती है और उसके लिये हमें ऐतिहासिक घटनाओं का सहारा लेना होगा। प्रारम्भ में राजा ही इङ्गलैण्ड का वास्तविक शासक था। उसकी मृत्यु के उपरान्त दूसरा राजा गद्दी पर बैठता और राज्य-कार्य सम्हालता था। धीरे-धीरे राजत्व (Kingship) पैतृक (hereditary) हो गया और यह प्रथा बन गई कि राजा की मृत्यु के बाद दूसरा राजा आये, फिर तीसरा आये, और यह क्रम जारी रहे; पर राजकीय काम राजा के नाम से चलता रहे। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि राजत्व एक संस्था बन गई और उसका राजाओं की गद्दी पर बैठने तथा मरने या दूसरे राजा के गद्दी पर आने आदि बातों से कोई सम्बन्ध न रहा। राज्य का काम राजा के नाम से न चलकर उस संस्था के नाम से चलने लगा जो संस्था कभी विनाश को प्राप्त न हो।[1] राजा व्यक्ति होने के नाते एक अलग चीज थी, राजा संस्था के रूप में राजकीय कार्यों को चलाता हुआ

[1] "Henry, Edward or George may die," said Blackstone, "but the King survives them all."

बिलकुल दूसरी। राजा के व्यक्ति होने के नाते कार्य कुछ और हैं, राजा के संस्था होने के नाते कुछ और। आजकल भी शासन के समस्त कार्य राजा के ही नाम से होते हैं, परन्तु राजा के व्यक्तिगत रूप में नहीं बल्कि उसके संस्थागत रूप में। राजा का यह संस्थागत रूप केवल एक अदृश्य संज्ञा (abstraction) है, जिसमें राजा, मन्त्री तथा पार्लियामेण्ट—इन सब का एक अनूठा संयोग है।[1] इसीलिये सिडनी लो (Sidney Low) क्राउन को "एक सुविधाजनक कार्य करती हुई कल्पना" (a convenient working hypothesis) बतलाते हैं; परन्तु क्राउन इस कल्पना से कहीं ज्यादा है। यह देश की शासन-प्रणाली का केन्द्र है; संविधान के ढाँचे की धुरी है। इसका दृश्य-रूप मन्त्रिमण्डल (जिसमें केबिनेट भी शामिल है) है। यह देश की सबसे बड़ी कार्यकारिणी तथा विधि-निर्मात्री शक्ति है।[2]

राजा और क्राउन में भेद :

इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री ग्लेड्स्टन (Gladstone) ने कहा था कि इङ्गलैण्ड के विधान में बहुत ऐसे विषय हैं जिनमें भेद करना सहज है और जो इतना महत्त्व भी नहीं रखते हैं जितना राजा और क्राउन का भेद। इस भेद को समझ लेना हमारे लिए बहुत आवश्यक है, क्योंकि इसी के न समझने पर साधारण बोलचाल में लोग असंगत बात निकाल सकते हैं। क्राउन की उपर्युक्त व्याख्या के आधार पर हम राजा तथा क्राउन में निम्नलिखित भेद पाते हैं :—

(अ) राजा एक व्यक्ति है, क्राउन एक संस्था। राजत्व को जब वैधानिक रूप में परिवर्तित किया जाता है तब तक क्राउन कहलाता है।

(ब) राजा का जन्म होता है, वह गद्दी पर बैठता है, मरता है, परन्तु क्राउन एक संस्था होने के नाते इन अवस्थाओं से परे है, और इसीलिये कहावत प्रसिद्ध है कि "The king is dead, long live the Crown."

(स) क्राउन राजकीय ऐक्य का प्रतीक है और यह ब्रिटिश साम्राज्य के विभिन्न अंगों को एक सूत्र में बाँधता है। जनता की भक्ति क्राउन के प्रति है।

(द) क्राउन ही कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी है और उसकी शक्ति का

---

1 "......the institutional King is only a sort of fiction standing back of the actual supreme executive authority embodied in a subtle association of sovereign, ministers and parliament. This somewhat intangible synthesis of authority is what we call the Crown." (*Ogg & Zink : op. cit., p. 48*)

2 "It is the supreme executive and policy-framing agency in the government which means a wholesome combination of sovereign, ministers and parliament. It is the institution to which substantially all prerogatives and powers once belonging to the king in person have gradually been transferred."—*Ogg*.

प्रयोग राजा के द्वारा मन्त्रियों की सलाह से किया जाता है। अतः राजा व्यक्तिगत रूप में प्रशासकीय क्षेत्र में कुछ महत्त्व नहीं रखता। क्राउन के नाम में अनेक ऐसे कार्य किये जाते हैं जिनमें राजा बिलकुल अनभिज्ञ रहता है। सामाजिक जीवन से राजा का व्यक्तिगत महत्त्व बहुत है परन्तु प्रशासकीय क्षेत्र में नहीं है।

प्रारम्भ में राजा ही शक्ति का मूल स्रोत था परन्तु इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट ने अपने अधिकारों की रक्षा के लिये राजा से समय-समय पर उसके बहुत से अधिकार छीन लिये। वे सब अधिकार राजा के पास न रहकर एक संस्था में निहित कर दिये गये। उसी संस्था को क्राउन कहते हैं। वास्तव में राजा और क्राउन के अधिकारों में सांविधानिक विधियों या परिपाटियों में कोई अन्तर नहीं है। अब की वैधानिक शब्दावली में राजा ही सत्ता का स्रोत है परन्तु राजा की निरंकुशता पर नियन्त्रण है। वह कुछ भी कार्य अपनी इच्छा से नहीं कर सकता। परन्तु फिर भी राजा ही के नाम से सब कार्य होता है। यह क्यों ? इसका मतलब यह है कि राजा के पास जो शक्तियाँ थीं वह राजा ही की थीं, परन्तु अब वे राजा के पास व्यक्तिगत रूप से हटाकर संस्थागत रूप में निहित करदी गई हैं। यह सब जनता की इच्छा द्वारा हुआ है। जनता ने इसके लिये कष्ट सहे हैं, युद्ध लड़े हैं और राजा की निरंकुशता को समाप्त किया है। इसीलिये तो क्राउन का अर्थ जनता की इच्छा में भी लिया जाता है।

क्राउन की शक्ति :

क्राउन की शक्ति के दो स्रोत हैं—(१) विशेषाधिकार (Prerogatives), और (२) कानून व स्टैच्यूट (Statutes)। इनमें द्वितीय अर्थात् स्टैच्यूट के सम्बन्ध में किसी विशेष व्याख्या की आवश्यकता नहीं है। संसद द्वारा कोई भी नया काम कार्यपालिका को सौंपा जाय, कोई नये कर्मचारी नियुक्त किये जायँ, अथवा शासन-सम्बन्धी कोई अधिकार क्राउन को दिये जायँ वे सब स्टैच्यूट अर्थात् कानून के आधार पर हैं, क्योंकि संसद ने उसे प्रदान किये हैं। विशेषाधिकार वे अधिकार हैं जो किसी के द्वारा प्रदान नहीं किये जाते हैं, अपितु नियमानुसार स्वयं प्राप्त हो जाते हैं और परिपाटी द्वारा मजबूती पकड़ जाते हैं।[1] दूसरे शब्दों में ये अधिकारों के अवशेष हैं जो विधिपूर्वक क्राउन के हाथ में छोड़ दिये गये हैं।[2] ये विशेषाधिकार जिनका

1 "Prerogative, therefore, denotes powers possessed without having been granted or conferred—powers acquired by prescription, confirmed by usage (perhaps also by judicial decision), and accepted and tolerated even after parliament gained authority to abolish or alter them at pleasure." (*Ogg & Zink : op. cit., p. 49*)

2 "Prerogative is the residue of discretionary or arbitrary authority which at any time is legally left in the hands of the Crown."—*Dicey.*

उल्लेख नीचे किया जा रहा है, शासन की स्थिरता तथा अतिरिक्त झमेलों से बचाव व अन्य राज्यों से सम्बन्ध रखने के लिये बहुत आवश्यक हैं।[1] इन अधिकारों के प्रमुख उदाहरण हैं—क्राउन द्वारा संसद को बुलाना, विघटित करना तथा समाप्त करना, पीयर (Peer) बनाना, मंत्री तथा न्यायाधीशों को नियुक्त करना, युद्ध की घोषणा करना तथा सन्धि करना, क्षमादान करना, मताधिकार देना, राजकीय चार्टरों द्वारा कॉरपोरेशन स्थापित करना, जल-सेना रखना (थल सेना व नभ सेना का रखना प्रति वर्ष संसद द्वारा पास किया जाता है), आदि। यद्यपि संसद का विशेषाधिकारों पर भी नियन्त्रण रखने का अधिकार है तथापि इन अधिकारों को प्रयोग में लाते समय क्राउन के लिये प्रायः यही कहा जाता है कि यह ऐसा अपने विशेषाधिकारों द्वारा कर रहा है।

क्राउन के अधिकारों में घटाव व बढ़ाव :

क्राउन की शक्ति घटती-बढ़ती रहती है, जैसा कि समय-समय पर मैगना कार्टा के समय से होता रहा है। किसी-किसी समय पर राजा को कुछ अधिकार दिये गये हैं और किसी-किसी समय पर वे छीन भी लिये गये हैं। कभी-कभी प्रयोग में न लाये जाने पर वे अधिकार नष्ट भी हो गये हैं। इसका सबसे अच्छा उदाहरण यह है कि ट्यूडर वंश के समय से राजा ने लोकसभा में प्रतिनिधि नियुक्त करने के अधिकार का प्रयोग नहीं किया, तथा उससे कुछ पहले से लॉर्डसभा में आजन्म पीयर (Peer) नियुक्त करने के (यदि संसद अनुमति न दे) अधिकार का भी प्रयोग नहीं किया, जिसके परिणामस्वरूप ये दोनों अधिकार समाप्त हो गये हैं। क्राउन की वास्तविक शक्ति वही है जो घटते-बढ़ते अवशिष्ट रह गई है।[2] वास्तव में तो क्राउन की शक्ति राज्य-विस्तार, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ आदि के कारण वर्तमान युग में और भी अधिक बढ़ गई है।[3] मन्त्रिमण्डल, केबिनेट, कार्यपालिका के विभाग, सिविल सर्विस, औपनिवेशिक राज्य, बाह्य-सम्बन्ध, गृह-समस्याएँ, वित्त, रक्षा, चर्च, न्यायालय आदि

1 Prerogatives are the sum-total of "those (powers) which are essential for the maintenance of government, for preservation of the realm against internal tumults, for the conduct of relations with other States."
(*Keith : The King and the Imperial Crown*)

2 "The powers of the Crown at any given moment comprise, therefore, the sum-total of authority resulting from this pull and haul of forces—of processes building up and others tearing down."
(*Ogg & Zink : op. cit., p. 50*)

3 "One of the seeming paradoxes of British Constitution—although logical enough once the true situation is understood—is that the powers of the Crown have expanded as democracy has grown." (*Ibid, p 50*)

"We must not confound the truth," says Fredrick W. Maitland, "that the King's personal will has come to count far less and less with the falsehood—that his legal powers have been diminished, on the contrary of late years, they have enormously increased."

अनेक विभाग हैं जो क्राउन द्वारा ही नियन्त्रित हैं। इसीलिए सर विलियम ऐन्सन ने जहाँ संसद के कार्य व शक्ति का उल्लेख ४२५ पृष्ठों में किया है वहाँ क्राउन के लिये ७५० पृष्ठों का प्रयोग किया है।[1]

क्राउन के कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य—कार्यपालिका सम्बन्धी क्राउन के निम्न-लिखित अधिकार और कर्त्तव्य हैं :—

(१) क्राउन ग्रेट ब्रिटेन की सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति है, इसलिए सभी राष्ट्रीय विधियों का पालन करवाती है।

(२) राज्य के सभी उच्च अधिकारी और जल, स्थल तथा नभ-सेना के समस्त पदाधिकारी क्राउन के द्वारा ही नियुक्त किये जाते हैं।

(३) क्राउन ही के द्वारा प्रधान मन्त्री तथा अन्य मन्त्रियों की नियुक्ति होती है।

(४) ग्रेट ब्रिटेन के अन्य देशों से सम्बन्ध, औपनिवेशिक राज्य तथा अधीनस्थ प्रदेशों का शासन आदि कार्य क्राउन द्वारा ही निर्धारित किये जाते हैं।

(५) क्राउन ही राजदूतों तथा वाणिज्य-दूतों को नियुक्त करता है।

(६) क्राउन ही युद्ध-घोषणा व सन्धि-वार्ता करता है।

(७) घोर अपराधों के लिये क्षमादान देना या दण्ड कम करना क्राउन का ही अधिकार है।

(८) व्यक्तिगत रूप में या सामूहिक रूप में जो काम मन्त्रिगण करते हैं वे सब क्राउन के ही नाम से होते हैं।

संक्षेप में, जिस प्रकार अमेरिका में राष्ट्रपति राष्ट्रीय शासन के प्रत्येक कार्य का संचालन करता है, उसी प्रकार इङ्गलैण्ड में क्राउन शासन के कार्य को चलाता है। कानूनों का पालन कराना, रेवेन्यू इकट्ठा करना तथा उसका खर्च करना—इन सब का उत्तरदायित्व क्राउन पर ही है।

क्राउन के विधि सम्बन्धी कार्य—औपचारिक रूप से क्राउन कोई विधि नहीं बनाता। विधि बनाने का कार्य राजा सहित संसद (King-in-Parliament) का है। परन्तु फिर भी विधि-निर्माण सम्बन्धी क्राउन के अनेक कार्य हैं। वे निम्नलिखित हैं—

(१) संसद को बुलाना, विघटित करना तथा समाप्त करना।

(२) संसद के प्रारम्भ में राजकीय भाषण तैयार करना क्राउन के मन्त्रियों का ही काम है।

(३) कोई भी विधेयक उस समय तक पास हुआ नहीं समझा जाता जब तक राजा के उस पर हस्ताक्षर न हो जायँ।

1 Sir William Anson : The Law and Custom of the Constitution.

(४) संसद में क्राउन के मन्त्री ही विधेयक प्रस्तुत करते हैं और उसे पास कराना भी उन्हीं का कार्य है।

(५) परिषद्-आदेश (Orders in Council) निकलवाना क्राउन का ही कार्य है।

(६) संसद द्वारा नीति निर्धारित की जाती है। क्राउन उसे लागू करते समय उसमें कुछ संशोधन भी कर सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि संसद तो नीति की एक रूपरेखा मात्र ही बनाती है, उसे विस्तृत कर कार्य-रूप में परिणत करना क्राउन का ही कार्य है।

यह बात यहाँ विशेष रूप से ध्यान में रखनी है कि क्राउन औपचारिक रूप में किसी विधि का निर्माण नहीं करता; यह काम तो संसद-सहित-राजा (King-in-Parliament) का ही है।

क्राउन के न्याय सम्बन्धी कार्य—क्राउन को न्याय का स्रोत कहा जाता है। न्यायालय और न्यायाधीश क्राउन के हैं। क्राउन के द्वारा ही वे नियुक्त किए जाते हैं और संयुक्त संसद की प्रार्थना पर ही वह उन्हें अलग कर सकता है। वास्तविक रूप में यह सब एक अवशिष्ट परम्परा ही है, क्योंकि सिवाय इसके कि राजा प्रीवी कौंसिल की न्यायिक समिति की मन्त्रणा के अनुसार उपनिवेशों के न्यायालयों की अपीलें सुने, उसका न्यायपालिका सम्बन्धी और कोई अधिकार नहीं है। जैसा कि कहा जा चुका है, क्राउन को क्षमादान तथा दण्ड घटाने-बढ़ाने का अधिकार भी है; परन्तु वह उसका प्रयोग गृह-मन्त्री की सलाह से ही करता है।

क्राउन के अन्य कार्य—कार्यपालिका, विधि-निर्माण एवं न्याय सम्बन्धी कार्यों के अतिरिक्त क्राउन के कुछ अन्य कार्य भी हैं जो निम्नलिखित हैं :—

(१) क्राउन सम्मान का स्रोत है। इसका यह अर्थ है कि राजा सार्वजनिक सम्मानों को प्रदान करता है। प्रधान मन्त्री की सलाह पर वह नये पीयर बनाता है और प्रतिष्ठित एवं योग्य व्यक्तियों को उपाधि प्रदान करता है।

(२) राजा चर्च का सर्वोच्च अधिकारी है। वह चर्च पर अनुशासन रखता है और चर्च के अधिकारियों की नियुक्ति करता है। वह चर्च के नियमों तथा अधिनियमों पर अपनी स्वीकृति देता है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि क्राउन के बहुत कार्य हैं। प्रारम्भ में जितने कार्य राजा के थे, वे शनैः शनैः क्राउन के हाथ में आ गये हैं। क्राउन की शक्तियों का प्रयोग भिन्न-भिन्न रूप में होता है। कुछ शक्तियों का प्रयोग सम्पूर्ण केबिनेट करती है, कुछ का प्रयोग प्रधान मन्त्री करता है तथा कुछ का अन्य मन्त्री करते हैं। कुछ प्रीवी कौंसिल के हाथों में हैं और कुछ विविध समितियों के। वास्तव में राजा का व्यक्तिगत रूप में शासन में कोई हाथ नहीं है, वह सिर्फ एक कठपुतली है। समस्त कार्य क्राउन

के द्वारा होता है। क्राउन राज्य के जहाज को चलाने वाली शक्ति नहीं है, परन्तु यह वह मस्तूल है जिन पर पाल बँधा हुआ है और इसलिए यह लाभदायक ही नहीं वरन् राज्य का एक आवश्यक अंग है।[1]

राजा और उसका पद :

जैसा कि उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट है, ब्रिटेन में राजा की व्यक्तिगत रूप में शासन-कार्य में कोई शक्ति नहीं है। वह राजमुकुट धारण करता है, और औपचारिक रूप में उसके पास सब शक्तियाँ हैं, परन्तु वास्तविक रूप में वह उनका अपनी इच्छानुसार प्रयोग नहीं कर सकता। राजा के प्रत्येक कार्य में किसी न किसी मन्त्री का हाथ होता है और वही उसके लिए उत्तरदायी होता है। अब प्रश्न यह पैदा होता है कि अगर राजा का वास्तविक शासन-कार्य में कोई अधिकार नहीं है तो राजा का पद रखा ही क्यों जाय? और क्यों न ४,१०,००० पौण्ड प्रति वर्ष बचा लिए जायँ जो राजा पर खर्च होते हैं? इस प्रश्न का उत्तर देने से पूर्व हम राजा के पद के सम्बन्ध में कुछ विशेष बातों पर ध्यान देंगे, जो निम्नलिखित हैं :—

(१) राजा का पद पुश्तैनी है।

(२) राजा जीवन-पर्यन्त क्राउन धारण करने का अधिकारी है।

(३) यह राजमुकुट उसे कानूनी हक से प्राप्त होता है।

राज्याभिषेक के समय उसे शपथ लेनी पड़ती है कि वह—

(अ) जनता पर उनके अधिकारों की रक्षा करता हुआ तथा विधि व परिपाटियों का पालन करता हुआ राज्य करेगा।

(ब) इङ्गलैण्ड के प्रोटेस्टैण्ट धर्म की रक्षा करेगा।

(स) इङ्गलैण्ड के चर्च के निर्णय की रक्षा करेगा तथा उसे कायम रखेगा।

ग्रेट ब्रिटेन में प्रजातन्त्र को बनाये रखने के विशेष कारण हैं। यद्यपि ब्रिटेन में पार्लियामेण्ट ही सर्वेसर्वा है, परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि राजा कठपुतली मात्र ही है। आधुनिक युग में उसके कार्यों में अत्यधिक वृद्धि हो गई है और वैधानिक नियमों में बँधे रहने के कारण उसका कार्य भी बहुत कठिन है। यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिए कि निरंकुशतापूर्वक राज्य करना सहज है, परन्तु विधान में बँध कर राज्य करना कठिन है। कैनन डिक शेफर्ड (Canon Dick Shefford) के मतानुसार "जो राजा राज्य करता है और वास्तविक शासन-संचालन करता है, वह चाहे जो कुछ अपनी इच्छा से कर सकता है; परन्तु एक नियमानुमोदित राजा चुपचाप मौन रहकर मन मसोस लेगा, अगर उसके मन्त्री कोई ऐसा कार्य करें जिसे वह गलत समझे।"

1 It is "no longer the motive power of the ship of the State, it is the spar upon which the sail is bent and as such, it is not only useful but an essential part of the vessel."

इङ्गलैण्ड में राजतन्त्र की महत्ता :

इङ्गलैण्ड में जनता द्वारा राजतन्त्र स्थापित रखने के अनेक उद्देश्य हैं:—

(१) प्रथम, राजा दलबन्दी से अलग होता है इसलिए किसी भी दल में उसकी दिलचस्पी नहीं होती। सब के साथ निष्पक्षता का बर्त्ताव करता है।

(२) दूसरे, अँग्रेज गणराज्य को पसन्द नहीं करते। राजा की अनुपस्थिति में उन्हें चैन नहीं पड़ता। उदाहरणार्थ जेम्स द्वितीय के फ्रान्स भाग जाने पर उन्होंने गणतन्त्र की स्थापना नहीं की वरन् उससे पहले ही दूसरे राजा को सिंहासन पर बैठाने की योजना बनाली, और जेम्स के भागने से पहले ही विलियम आ गया था। यह घटना इङ्गलैण्ड के इतिहास में अत्यन्त महत्वपूर्ण है और सन् १६८८ की गौरवपूर्ण राज्यक्रान्ति (Glorious Revolution) के नाम से प्रसिद्ध है। इस क्रान्ति ने इङ्गलैण्ड में दो बातों की स्पष्टता प्रकट करदी। प्रथम तो यह कि अँग्रेज जनता राजा की निरंकुशता को सहन नहीं कर सकती और दूसरी यह कि वह राजा बिना रह भी नहीं सकती। वैधानिक राजतन्त्र (Constitutional Monarchy) का प्रेम अँग्रेज जनता में सदा से रहा और उसे ही प्राप्त करने का इतिहास उसके सांविधानिक विकास की कहानी है। इससे पहले की घटना क्रामवेल के युग की है। अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए उन्होंने चार्ल्स प्रथम का बध कर दिया; परन्तु क्रामवेल की संरक्षता भी उन्हें पसन्द नहीं आई और अन्त में चार्ल्स द्वितीय को उन्होंने राजा बनाया, और उसे राजा बनाकर उन्हें कितनी खुशी हुई और किस प्रकार उन्होंने उल्हासपूर्वक अपना जीवन बिताया यह उस समय के सामाजिक जीवन के अध्ययन से भली-भाँति विदित होता है।

सन् १६४६ ई० में स्टुअर्ट राजा चार्ल्स प्रथम का बध हुआ और सन् १६६० ई० में चार्ल्स द्वितीय सिंहासनारूढ़ हुआ। सन् १६४६ से सन् १६६० तक इङ्गलैण्ड में राजा न रहा और इस काल में जनता को इतनी बेचैनी हो गई कि उसने सन् १६६० में चार्ल्स द्वितीय को फ्रान्स से बुलाकर गद्दी पर बैठाया। यह घटना इङ्गलैण्ड की जनता का राजतन्त्र (monarchy) से प्रेम बतलाती है।

(३) अँग्रेज रूढ़िवादी हैं और वे प्राचीन पद्धतियों को जड़मूल से नष्ट करना अथवा उन्हें पलट देना पसन्द नहीं करते। उनका विश्वास है कि राजतन्त्र को समाप्त करने से शताब्दियों के संघर्ष और प्रयत्नों से बना हुआ ढाँचा उलट जायगा और साथ ही ब्रिटिश संविधान भी लड़खड़ा कर गिर पड़ेगा।

इस बात से हम अपने पूर्वोक्त प्रश्नों के उत्तर पर आते हैं। जब राजा वास्तविक रूप में कोई शासकीय शक्ति नहीं रखता है, तो उस पद के रखने का क्या अभिप्राय है? व्यावहारिक दृष्टि से देखा जाय तो ज्ञात होगा कि यद्यपि राजा शासन में नेता नहीं है, परन्तु फिर भी वह बहुत से कार्य करता है।

राजा के वास्तविक कार्य :

(१) प्रत्येक राजनैतिक संगठन में एक सर्वोच्च अधिकारी होना चाहिए। राजतन्त्र में राजा होता है, गणतन्त्र में प्रेसीडेण्ट होता है और तानाशाही राज्य में डिक्टेटर होता है। इङ्गलैण्ड में राजतन्त्र है इसलिए राजा वहाँ का सर्वोच्च अधिकारी है। इस पद के धारण करने की हैसियत से वह—

(अ) अपनी प्रजा की ओर से दूसरे राज्यों के राजदूतों, अन्य उच्च पदाधिकारियों तथा दर्शकों का स्वागत करता है।

(ब) संसद का उद्घाटन करता है।

(स) राष्ट्रीय उत्सवों पर राज्य का नेतृत्व ग्रहण करता है।

(द) राष्ट्रीय महत्व के बहुत से संगठन, जैसे ब्रिटिश लीजन (British Legion), बॉय स्काउट्स, अस्पताल आदि का निरीक्षण करता है।

(य) उपाधियाँ प्रदान करता है।

(फ) अन्य बहुत से ऐसे लेख्य हैं जिन पर उसके हस्ताक्षर करना बहुत आवश्यक है।

(२) राजा ब्रिटिश राज्य तथा उपनिवेशों और अधीनस्थ प्रदेशों को एक सूत्र में बाँधने वाली कड़ी है।[1]

(३) राजा न्याय और सम्मान का स्रोत (Fountain of justice and honour) है; इसीलिए यह कहा जाता है कि राजा कोई भूल नहीं कर सकता ("The king can do no wrong")। यद्यपि इसका आशय यह भी है कि चूंकि राजा कोई कार्य अपनी इच्छा से नहीं कर सकता इसलिए वह कोई भूल कर ही नहीं सकता; परन्तु इसका वास्तविक अभिप्राय यह है कि राजा चूंकि कोई भूल नहीं करता इसलिए वह न्याय और सम्मान का स्रोत है।

(४) राजा सेना का कमाण्डर या नायक है। यद्यपि यह पद भी उसे औपचारिक रूप में ही प्राप्त है, परन्तु इसका उसके लिए बहुत महत्व इसलिए है कि वह वर्ष भर सेना का निरीक्षण करता रहता है, सेना के उच्चाधिकारियों को परामर्श आदि देता रहता है, वर्दी वगैरह के नमूने तथा उनके रंग आदि की स्वीकृति भी देता है, मन्त्रियों की सलाह पर नए अधिकारियों को नियुक्त करता है, सैनिक-सम्मानसूचक उपाधियाँ वितरित करता है तथा सेना के हित में विशेष दिलचस्पी लेता है।

"King is what the Imperial Parliament has never been, the typical representative of Imperial unity throughout every part of the empire.'
—*Dicey*

Great Britain and dominions are "autonomous communities within the British Empire equal in status and in no way subordinate to one another in any respect of their domestic or internal affairs, though *united by a common allegiance to the Crown.*"

(५) राजा कार्यपालिका का सर्वोच्च पदाधिकारी है। उसी के नाम में शासन का कार्य होता है। परन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह सब अधिकार उसके पास नाममात्र को ही हैं। वैसे तो व्यवहार में इन्हीं शब्दावलियों का प्रयोग होता है; जैसे–His Majesty's Govt., His Majesty's Forces, Enacted in the name of His Majesty, at His Majesty's Command, आदि।

(६) पार्लियामेण्ट का उद्घाटन करते समय राजा का भाषण पढ़ा जाता है। यह भाषण पिछली घटनाओं तथा वर्तमान परिस्थितियों पर विहंगम दृष्टि डालता है और इसका उत्तरदायित्व प्रधान मन्त्री पर है, जो उसे तैयार करता है।

(७) राजा के कुछ विशेषाधिकार (Prerogatives) भी हैं। इन विशेषाधिकारों के न होने पर राजा का कोई महत्व नहीं रह जाता।

विशेषाधिकार दो प्रकार के हैं—(१) व्यक्तिगत, तथा (२) राजनैतिक।

व्यक्तिगत विशेषाधिकारों के अनुसार राजा अपने व्यक्तिगत कार्यों के लिए किसी भी न्यायालय के समक्ष पेश नहीं किया जा सकता और डाइसी (Dicey) के कथनानुसार तो यदि वह प्रधान मन्त्री को गोली भी मार दे तो भी उस पर मुकद्दमा नहीं चलाया जा सकता। उसे गिरफ्तार नहीं किया जा सकता, उसे किसी प्रकार की माली क्षति नहीं पहुँचाई जा सकती। उसके पास रहने को आलीशान महल है। उसके पास खुद की अलग जायदाद हो सकती है और उसका वह स्वयं प्रबन्ध कर सकता है।

परन्तु इन विशेषाधिकारों के सम्बन्ध में यह बात ध्यान में रखने की है कि ये विशेषाधिकार ऐसे नहीं हैं जिन्हें राजा अपनी इच्छानुसार किसी भी समय प्रयोग कर सके। राजा के विशेषाधिकारों की सीमा है और सन् १६१० में ही यह निश्चित हो गया था कि "राजा का कोई विशेषाधिकार नहीं है सिवाय उसके जो उसे विधिपूर्वक दिए गये हैं और वह किसी सामान्य विधि, स्टैट्यूट व प्रथा को अपनी घोषणा द्वारा नहीं बदल सकता।" अतः राजा के विशेषाधिकार वही हैं जो उसे विधिवत् दे दिए गए हैं।[1]

राजनैतिक अधिकार विभिन्न हैं परन्तु वास्तविक रूप में वे राजा के नहीं वरन् क्राउन के हैं।

(८) ब्रिटिश सार्वजनिक जीवन में राजा का स्थान सर्वोच्च है। राजा देश की

1 Halsbury defined royal prerogative as "that pre-eminence which the Sovereign enjoys over and above all other persons by virtue of the Common Law, but out of its ordinary course, in right of his real dignity, and comprehends all the special dignities, liberties, privileges, power and royalties allowed by Common Law to the Crown of England.

समाज का नेता है, सामाजिक ग्रादर्श का प्रतीक है ग्रौर शिष्टाचार व सदाचार का नमूना पेश करता है।

(९) राजा प्रधान मन्त्री स्वयं बनाता है। यद्यपि जिस दल का संसद में बहुमत होता है उसी दल के नेता को उसे प्रधान मन्त्री बनाना पड़ता है परन्तु कभी-कभी तीनों दलों की या दो दलों की करीब-करीब बराबर शक्ति होती है तो राजा स्वयं प्रधान मन्त्री की नियुक्ति करता है। उदाहरणार्थ, सन् १९२४ में राजा ने रैमजे मैकडोनेल्ड को प्रधान मन्त्री बनाया यद्यपि पार्लियामेण्ट में उसका बहुमत नहीं था।

(१०) एक मन्त्रिमण्डल के त्यागपत्र देने तथा दूसरे मन्त्रिमण्डल के बनने के बीच के ग्रन्तरिम काल में समस्त राजनैतिक एवं कार्यपालिका शक्ति राजा में निहित रहती है।

(११) राजा प्रधान मन्त्री से समस्त कार्यों की सूचना रखता है।

(१२) राजा पार्लियामेण्ट को भंग कर सकता है; यदि उसे यह विश्वास हो जाय कि केबिनेट जनता की विश्वासपात्र नहीं रही।

(१३) राजा ग्रपने प्रभाव का प्रयोग कर सकता है। उसने कई बार ऐसा किया भी है जिसके निम्नलिखित उदाहरण हैं :—

(ग्र) सन् १८५१ में रानी विक्टोरिया ने तत्कालीन प्रधानमन्त्री पामर्स्टन को पदच्युत कर दिया, क्योंकि वह ग्रपने कार्यों की उसे सूचना नहीं देता था।

(ब) एडवर्ड ने प्रथम महायुद्ध से पूर्व फ्रान्स से मित्रता करने की भरसक कोशिश की ग्रौर उसमें वह सफल रहा।

(स) जॉर्ज पंचम ने प्रथम महायुद्ध में मित्र राष्ट्रों की विजय का पक्का इरादा कर लिया ग्रौर उस समय तक युद्ध जारी रहा जब तक कि उनकी पूर्ण विजय नहीं हो गई।

(द) सन् १९१४ में जॉर्ज पंचम ने ग्रायरिश होम रूल बिल (Irish Home Rule Bill) के सम्बन्ध में काफी प्रभाव डाला।

संक्षेप में, राजा तीन प्रकार के कार्य करता है—वह परामर्श देता है, प्रोत्साहन देता है, तथा चेतावनी देता है।[1] बेजहॉट के ग्रनुसार एक बुद्धिमान ग्रौर विवेकशील राजा इससे ग्रधिक माँग भी नहीं सकता। परामर्श देने का ग्रभिप्राय यह है कि राजा मन्त्रियों के कार्यों की पूर्ण जानकारी रक्खे ग्रौर उन्हें उचित परामर्श दे, ग्रच्छे कार्यों के लिए केबिनेट को प्रोत्साहन दे, तथा संकट के समय यदि कोई गलत काम मन्त्रिमण्डल ने कर दिया है तो उसे चेतावनी दे।

[1] He has three rights, *viz.*, (i) The right to be consulted, (ii) the right to encourage, and (iii) the right to warn.

यह कहना निरर्थक होगा कि राजा इन कार्यों को नहीं कर सकता। वास्तव में राजा को जितनी राज्य-कार्य से जानकारी होती है उतनी मन्त्रियों को नहीं, क्योंकि मन्त्रिमण्डल बदलते रहते हैं। पील (Peel) के मतानुसार राजा को राज्य-कार्य में देश में सबसे अधिक ज्ञान होना चाहिये। अपने परामर्श देने के अधिकार का विवेकशील राजा समय-समय पर उचित प्रयोग करते हैं।

अन्त में यह कहना उचित ही होगा कि इङ्गलैण्ड में राजा का पद एक विशेष महत्त्व रखता है और उसके बिना इङ्गलण्ड के शासन का ढाँचा अधूरा ही नहीं वरन् शून्य के बराबर है। इसलिए अगर राजा में कुछ कमजोरियाँ भी होंगीं तो जनता उसे स्वीकार ही करेगी।[1]

राजा की इच्छा व उसके कार्यों में एक अनोखी शक्ति है। जनता उन्हें इसलिए नहीं मानती कि वह उसे जबरदस्ती मानने हैं; परन्तु इसलिए मानती है कि वह राजा को प्रेम करती है, उसका सम्मान करती है और राजा को राज्य का मूर्तिमान प्रतीक मानती है।[2]

इङ्गलैण्ड में राजतन्त्र राष्ट्र की उन्नति तथा प्रजातन्त्रीय प्रगति में कभी भी बाधक नहीं हुआ है, और यदि देखा जाय तो जो खर्च राजा पर होता है वह उसके पद, उस पद के प्रति श्रद्धा और सम्मान, तथा उसके वास्तविक कार्यों के मुकाबिले कुछ नहीं है।[3] यह सर्वमान्य ही है कि प्रत्येक राज्य में कोई न कोई सर्वोच्च अधि-

1 "Parliamont is the body, the King is the spirit, the author of the being of the parliament. What prejudices or injuries the King shall suffer, we must feel."—*Sir John Eliot.*

2 "Little are they who gaze from without upon long trains of splendid equipages rolling towards a palace conscious of the meaning and force that live in the form of monarchy, probably the most ancient and certainly the most solid and most revered in all Europe. The acts, the wishes, the examples of the Sovereign in this country are a real power. An immense reverence and tender affection wait upon the person of the one permanent and ever faithful guardian of the fundamental conditions of the constitution"—*Gladstone.*

3 The continuance of Kingship has proved no bar to the progressive development of domestic government. If royalty had been found blocking the road to fuller control of public affairs by the people it is inconceivable that all the forces of tradition could have pulled it through the past three-quarters of a century. The royal establishment does not cost the nation much, considering the returns of the investment in actual figures; the outlay is only a small fraction of one percent, of the total British budget. The Cabinet system upon which the entire scheme of British Govt. hinges has rarely or never proved a workable place without some titular head, some dignfied and detached figure, whether a King, or as in France a President, with some of the attributes of Kingship." (*Ogg & Zink : op. cit., p. 65*)

"The essential and peculiar characteristic of the British monarchy, therefore, is that the king retains the symbolism of absolute power, although he has completely lost the control of it."

(*Munro : Governments of Europe, p. 26*)

कारी होगा और रखना ही पड़ेगा, जैसा कि प्रारम्भ में ही कह दिया गया है। इङ्गलैण्ड में यदि राजतन्त्र न रहा तो केबिनेट-प्रथा जिस रूप से है और शासक का जो स्वरूप है—सब समाप्त हो जायेगा।

'राजा कोई भूल नहीं करता' (The king can do no wrong) :

'राजा कोई भूल नहीं करता'—इस कथन से ब्रिटिश संविधान में राजा के कार्यों पर विशेष प्रकाश डाला जाता है।

इस कथन का आशय सत्य है और वह यह है कि चूँकि राजा स्वयं अपनी इच्छा से कोई कार्य नहीं करता, इसलिए वह कोई भूल नहीं कर सकता। कोई भी कार्य जो राजा के नाम से होता है उसका उत्तरदायित्व किसी न किसी मन्त्री पर होता है, इसलिए राजा उस भूल के लिए उत्तरदायी नहीं है और कोई भी मन्त्री राजा के नाम का सहारा लेकर अपनी गलती के लिए बच नहीं सकता। उदाहरणार्थ, सन् १६७८ में डेनवी ने फ्रान्स में अँग्रेजी राजदूत के नाम पत्र लिखने में भूल करदी थी और उसने इसके लिए राजा का सहारा लिया था, परन्तु पार्लियामेण्ट ने यह नियम पास कर दिया कि कोई भी मन्त्री अपनी भूल के लिए राजा का सहारा न लेगा। इसके विपरीत राजा यदि कोई गलती कर बैठे तो कोई न कोई मन्त्री विधिवत् उसके लिए उत्तरदायी होगा।

इस कथन की वास्तविकता दो रूपों में प्रकट होती है—प्रथम, राजा कोई भी कार्य बिना मन्त्रियों की सलाह के नहीं करता; और दूसरे, उसके प्रत्येक कार्य का उत्तरदायित्व मन्त्रियों पर है। इसीलिये तो कहा जाता है कि इङ्गलैण्ड का राजा राज्य करता है, शासन या हुकूमत नहीं करता (The king rules but does not govern)।

लेकिन 'राजा कोई भूल नहीं कर सकता' इसका यह अभिप्राय नहीं है कि राजा बिलकुल शून्य है और कुछ कार्य नहीं करता। राजा के अस्तित्व के लिए बहुत-से कारण हैं और राजा वास्तव में अनेक कार्य करता है। जैसा कि इससे विदित होगा राजा का धार्मिक, नैतिक, सामाजिक तथा साहित्यिक क्षेत्र में भी अत्यधिक प्रभाव है।[1] वह दलबन्दी के चक्कर से दूर रहता हुआ देश की संस्कृति और सभ्यता का एक अनूठा प्रतीक है, जिसके पद को समाप्त कर देना ब्रिटिश राज्य को समाप्त कर देना होगा।[2]

1 "His influence in matters of religion, morality, benevolent fashion and even in art and literature is immense."—*Jenks*.

2 "The masses of the people have come to realise that the monarchy seated above the turmoil of personal and party strife, neutral in politics, and with no ambitions to gratify, is a very useful institution."

UNIVERSITY QUESTIONS

1. State cleary what you understand by the 'Crown' in the English Constitution. Bring out the difference between King and Crown. (*Nagpur, 1937* ; *Agra, 1944* ; *Punjab, 1949*)
2. (a) Elucidate the position of the Crown in the English Constitution.
   (b) "He reigns but does not govern" How far is it true of the King of England ?
   (c) "His acts are the acts of his ministers." Discuss.
   (*Cal., 1944, 47* ; *Madras, 1929*)
3. "The king can do no wrong." Discuss the statement with reference to English Constitution, and bring out clearly the position occupied by the monarch in the machinery of Government.
   (*Agra, 1939, 1950* ; *Cal., 1947*)
4. What do you understand by the expression "Royal Prerogatives"? Classify them. What is the present position of the King as a person ?

[**Hint :** The royal prerogatives are prerogatives of the Crown. They are personal and political.

Personal prerogatives include the following :—

(*a*) The king can do no wrong.
(*b*) The king is God's minister on earth.
(*c*) The king never dies.
(*d*) The king is never infant.
(*e*) In case of conflict of rights, the king's rights supersede.

Political prerogatives are as follows :—

(*a*) Administrative.
(*b*) Judicial.
(*c*) Ecclesiastical.
(*d*) Foreign.
(*e*) Legislative.

For the expansion of all these, see the chapter given above.]

चतुर्थ परिच्छेद

प्रीवी परिषद्, मन्त्रिमण्डल तथा केबिनेट

विषय-प्रवेश

ब्रिटिश राज्य तथा इङ्गलैण्ड की प्रशासकीय शक्ति कार्यपालिका में निहित है। कार्यपालिका में भी केबिनेट प्रमुख है और वही शासन की वास्तविक धुरी है। इसीलिए तो डाइसी ने कहा है कि "यद्यपि शासन का प्रत्येक कार्य क्राउन के नाम पर किया जाता है, परन्तु इङ्गलैण्ड की वास्तविक कार्यपालिका शक्ति केबिनेट में ही निहित है।"[1]

कार्यपालिका के पाँच विभाग हैं, जिनके द्वारा पार्लियामेण्ट द्वारा निर्मित नियमों का पालन होता है और समस्त शासन का कार्य संचालित होता है। वे विभाग निम्नलिखित हैं :—

(१) राजा।
(२) प्रीवी कौंसिल।
(३) केबिनेट।
(४) राज्य के विभिन्न विभाग।
(५) सिविल सर्विस।

राजा के बारे में हम पढ़ चुके हैं। इस और अगले परिच्छेद में उचित स्थान पर बारी-बारी से अन्य संस्थाओं का वर्णन किया जयगा।

प्रीवी कौंसिल :

प्रीवी कौंसिल की बनावट—प्रीवी कौंसिल में करीब ३३० सदस्य हैं और इसका कार्य जैसा कि इसके अर्थ से स्पष्ट होता है, राजा को व्यक्तिगत (private) परामर्श देना है। इसके सदस्य राजा द्वारा ही नियुक्त किये जाते हैं और ये अपनी विद्वता एवं योग्यता के कारण ही इसके पदाधिकारी हो पाते हैं। बड़े-बड़े राजनीतिज्ञ, पीयर, वकील, सैनिक, व्यवसायी, चर्च के अधिकारी आदि इसमें आते हैं। इसकी सदस्यता जीवन-पर्यन्त रहती है और सदस्यों को 'राइट ऑनरेबुल' (Right Honourable) कहलाने का अधिकार होता है।

प्रीवी कौंसिल की मीटिंग—प्रीवी कौंसिल की मीटिंग में प्रायः बहुत कम सदस्य

[1] "While every act of State is done in the name of the Crown the real Executive Government of England is the Cabinet......"
(*Dicey : Law of the Constitution*)

आ पाते हैं। विशेष अवसरों पर, जैसे राज्याभिषेक, अधिक से अधिक सदस्य उपस्थित होते हैं वैसे अधिकांश अवसरों पर ५-७ ही आ पाते हैं। गणपूर्ति (quorum) तीन सदस्यों से पूरी हो जाती है।

प्रीवी कौंसिल की उत्पत्ति—प्राचीन काल से ही, जब से राजा अपने परामर्श के लिए विटन (या कौंसिल ऑफ वाइज़मैन) रखते थे, यह प्रथा चल गई कि राजा परामर्श के लिए एक समिति रक्खे। इस समिति के अधिकारों में समय-समय पर परिवर्तन होते रहे हैं। इस परिवर्तन का कारण यह है कि कालान्तर में राजा की इस परिषद् में से राज्य के विभिन्न कार्य करने के लिए छोटी-छोटी समितियाँ बन गईं और इस प्रकार इसकी शक्ति बँट गई। कुछ समय में इन समितियों की शक्ति निश्चित हो गई और इसलिये प्रीवी कौंसिल की शक्ति घट गई। उदाहरण के लिये केबिनेट है। दरअसल देखा जाय तो यह सब से बड़ी कार्यपालिका शक्ति है, परन्तु यह वास्तव में प्रीवी कौंसिल के चुने हुए सदस्यों की समिति है। न्यायपालिका की उत्पत्ति भी प्रीवी कौंसिल से हुई। प्रीवी कौंसिल न्यायालय के रूप में बैठती थी। राज्य-कोष भी प्रीवी कौंसिल की वित्तीय उप-समिति का स्वरूप है। विभिन्न अन्य विभागों—एज्यूकेशन बोर्ड, बोर्ड ऑफ ट्रेड, मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड फिशरीज़ आदि—की उत्पत्ति भी प्रीवी परिषद् से ही हुई। प्रीवी कौंसिल के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें ध्यान में रखने योग्य हैं:—

(अ) राजा अपनी इच्छानुसार किसी भी व्यक्ति को इसका सदस्य बना सकता है।

(ब) प्रीवी परिषद् राजा की स्वयं की परिषद् है।

(स) समस्त वर्गों के लोग इसमें होते हैं। लोकसभा में तो न्यायाधीश, क्लर्जी वगैरह नहीं बैठ सकते, परन्तु इसमें सब को स्थान है।

(द) इसकी सदस्यता जीवन-पर्यन्त चलती है।

प्रीवी कौंसिल के कार्य—लोगों के मस्तिष्क में एक भ्रम उत्पन्न हो गया है कि प्रीवी परिषद् का शासन-कार्य में कोई महत्व नहीं है और इसका मुख्य कारण यह है कि इसके सदस्य कभी अधिक संख्या में इकट्ठे ही नहीं होते। वास्तव में इसका कार्य बहुत महत्वशाली है। इसके कार्य निम्नलिखित हैं:—

(१) आज्ञाप्तियाँ (Decrees) तथा आध्यादेश (Ordinances) जारी करना, जिन्हें परिषद्-आदेश (Orders-in-Council) कहा जाता है।

(२) मन्त्रियों को नई सरकार के बनने के समय शपथ दिलाना।

(३) विश्वविद्यालयों तथा नगरपालिकाओं को चार्टर प्रदान करना।

(४) लाइसेन्स देना तथा जुर्माने माफ करना।

(५) इसकी न्यायिक समिति में विख्यात कानूनवेत्ता होते हैं, जो सिविल मुकद्दमों में अपील के न्यायालय के रूप में बैठते हैं, और जिनमें ब्रिटिश साम्राज्य के (इङ्गलैण्ड

के बाहर) मुकद्दमों की अपीलें सुनी जाती हैं। यह उसी प्रकार कार्य करते हैं जैसे लॉर्डसभा संयुक्त राष्ट्र (United Kingdom) के मामलों की अन्तिम अपीलें सुनने के लिए बैठती है।

प्रीवी परिषद् का सबसे अधिक महत्वपूर्ण कार्य परिषद्-आदेशों (Orders-in-Council) का जारी करना है। निम्नलिखित आदेश परिषद्-आदेशों के रूप में जारी किए जाते हैं:—

(अ) उद्घोषणाएँ (Declarations)।
(ब) संसद के बुलाने, सत्रावसान करने तथा विघटित करने के लिये लेख।
(स) युद्ध सम्बन्धी आदेश।
(द) नगरपालिकाओं तथा अन्य संस्थाओं के लिए आदेश।
(य) सिविल सर्विस सम्बन्धी आदेश।
(फ) उपनिवेश सम्बन्धी आदेश।

ऐसे आदेश ६०० से भी अधिक प्रति वर्ष निकाले जाते हैं।

प्रीवी कौंसिल के विषय में यह ध्यान रखना है कि यह कोई ऐसी शक्ति नहीं है जो स्वयं नीति निर्धारित करे और शासन-कार्य चलाये। जैसा कि कहा जा चुका है, इसके कार्य विभिन्न विभागों ने ले लिये हैं और उन्हीं पर अलग २ उनका उत्तरदायित्व है। प्रीवी कौंसिल प्राचीन काल में शक्ति की प्रतीक थी परन्तु यह आज विशेषतया उस शक्ति की नहीं वरन् उस शक्ति के गौरव की प्रतीक है।

मन्त्रिमण्डल तथा केबिनेट—

मन्त्रिमण्डल और केबिनेट की बनावट के भेद—शासन का वास्तविक संचालन जिस शक्ति द्वारा होता है वह प्रीवी कौंसिल के अलावा दूसरी है। उसमें मन्त्रिमण्डल और केबिनेट शामिल हैं। मन्त्रिमण्डल में क्राउन के वे सब उच्चाधिकारी सम्मिलित हैं जिन्हें संसद में स्थान प्राप्त है, जो प्रत्यक्ष रूप में अपने कार्यों के लिये संसद के समक्ष उत्तरदायी हैं और जो संसद में अपने दल के बहुमत के आधार पर ही मन्त्रिमण्डल में स्थान प्राप्त किए हुए हैं।[1] इसी आधार पर (संसद के प्रति उत्तरदायित्व और बहुमत-दल की सदस्यता) हम मन्त्रियों और सिविल सर्विस के दलों में भेद पाते हैं। सिविल सर्विस के सदस्य स्थायी होते हैं और मन्त्रिडमण्ल के उथल-पुथल या बदले जाने पर भी वे अपने पद पर स्थित रहते। केबिनेट मन्त्रिमण्डल का भीतरी चक्र है। इसमें मन्त्रिमण्डल में से चुने हुए वे सदस्य होते हैं जिन्हें प्रधान मन्त्री "देश के शासन में राजा को परामर्श देने के लिये चुनता है"।[2] केबिनेट का सदस्य भी मन्त्री

1 Ogg & Zink, op. cit., p. 70.
2 Ibid, p. 72.

ही कहलाता है और उसका मन्त्रिमण्डल से परे कोई अन्य पद नहीं होता। वह सिर्फ केबिनेट की मीटिंग में शामिल होता है क्योंकि प्रधान मन्त्री ने उससे इसके लिए कहा है। अतः "केबिनेट के सब सदस्य मन्त्री होते हैं परन्तु सब मन्त्री केबिनेट के सदस्य नहीं होते"।[1]

मन्त्रिमण्डल और केबिनेट के सदस्यों की संख्या—ब्रिटिश मन्त्रिमण्डल की संख्या निश्चित नहीं है। प्रायः सदस्यों की संख्या ५० और ६० के बीच में होती है, परन्तु युद्ध-काल में यह बढ़ जाती है। प्रथम तथा द्वितीय महायुद्धों में मन्त्रियों की संख्या १०० तक भी पहुँच गई थी। मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को चार वर्गों में बाँटा जा सकता है—

(१) प्रथम वर्ग में वे हैं जो कार्यपालिका के बड़े-बड़े अधिकारी हैं; जैसे विदेश विभाग का मन्त्री, रक्षा विभाग का मन्त्री, चान्सलर ऑफ दी एक्सचेकर, स्वास्थ्य विभाग का मन्त्री, श्रम मन्त्री, आदि।

(२) दूसरे वर्ग में वे हैं जो राज्य के उच्च कर्मचारी हैं परन्तु किसी विभाग के अध्यक्ष नहीं हैं; जैसे लॉर्ड चान्सलर, लॉर्ड प्रीवी सील, लॉर्ड प्रेसीडेण्ट ऑफ दी कौंसिल।

(३) तीसरे वर्ग में संसदीय सेक्रेटरी आदि आते हैं। इन सेक्रेटरियों में कुछ स्थायी भी होते हैं, परन्तु वे मन्त्री नहीं होते।

(४) चौथे वर्ग में राजकीय घराने के पाँच पदाधिकारी आते हैं जिनमें कोषाध्यक्ष तथा वाइस चैम्बरलेन (Vice-Chamberlain) शामिल हैं।

मन्त्रिमण्डल की भाँति केबिनेट के सदस्यों की संख्या भी निश्चित नहीं है। प्रारम्भ में इसमें ७ या ८ सदस्य होते थे। उन्नीसवीं शताब्दी में इसकी संख्या १३-१४ तक पहुँच गई। सन् १८९२ में लॉर्ड सेलिसबरी की केबिनेट में १७ सदस्य थे। सन् १९०० और १९१४ के मध्य में यह संख्या २० तक पहुँच गई। राज्य के कार्यों में घटाव-बढ़ाव होने पर केबिनेट के सदस्यों की भी संख्या घटती-बढ़ती है, परन्तु आजकल राज्य की जिम्मेदारी को देखते हुए उसके सदस्यों की संख्या १५-१६ तक रहना कोई विशेष आपत्तिजनक बात नहीं है।

आधुनिक केबिनेट में प्रायः निम्नलिखित मन्त्री शामिल किये जाते हैं:—

(१) प्रधान मन्त्री। यह कोष का प्रथम लॉर्ड भी होता है।

(२) परिषद् का लॉर्ड प्रेसीडेण्ट।

(३) लॉर्ड चान्सलर।

(४) चान्सलर ऑफ दी एक्सचेकर।

---

1 Ibid, p. 72.

(५) निम्नलिखित विभागों के सेक्रेटरी—
(अ) गृह-विभाग ; (ब) वैदेशिक विभाग ; (स) औपनिवेशिक विभाग ; (द) युद्ध-विभाग ; (य) नभ-सेना तथा स्कॉटलैण्ड सम्बन्धी कार्यालय ।

(६) लॉर्ड प्रीवी सील ।

इनके अलावा प्रधान मन्त्री शासन के अन्य विभागों में से जिन्हें चाहे केबिनेट का सदस्य बना सकता है।

मन्त्रिमण्डल और केबिनेट के कार्यों का भेद—मन्त्रिमण्डल और केबिनेट में, जैसा कि कहा जा चुका है, अन्तर यही है कि केबिनेट मन्त्रिमण्डल का भीतरी चक्र है। दूसरी बात यह है कि मन्त्रिमण्डल के सदस्यों की व्यक्तिगत रूप में अपने-अपने विभाग की जिम्मेदारी है परन्तु केबिनेट के सदस्यों की व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों प्रकार की जिम्मेदारियाँ हैं। केबिनेट के सदस्य अपनी पार्टी की मजबूती के लिए भी प्रयत्न करते हैं। केबिनेट के सदस्य समय-समय पर गुप्त मीटिंग करते हैं और नई नीति का निर्णय करते हैं, परन्तु मन्त्रिमण्डल के सदस्य कभी एक स्थान पर इकट्ठे होकर ऐसी मीटिंग नहीं करते। उनकी कोई सामूहिक जिम्मेदारी नहीं है।

केबिनेट प्रणाली की उत्पत्ति तथा विकास—"ब्रिटिश केबिनेट का इतिहास राज्य-विज्ञान के क्षेत्र में एक बहुत ही महत्वपूर्ण शैक्षणिक प्रभाव रखता है।" इसकी उत्पत्ति किसी विशेष दबाव या कानूनी कारण से नहीं हुई बल्कि परिस्थितियों से सहज ही होगई।

प्रारम्भ में राजाओं को राज्य-कार्य में परामर्श देने के लिए महान् परिषद् होती थी। इस महान् परिषद् से प्रीवी कौंसिल की उत्पत्ति हुई। लेकिन प्रीवी कौंसिल की सदस्यता अधिक थी इसलिए सब सदस्य एक स्थान पर एक समय नहीं इकट्ठे हो सकते थे। अतएव ट्यूडर काल में प्रीवी कौंसिल को फिर से संगठित करके एक अन्तः-परिषद् (Interior Council) की स्थापना की गई। इसके सदस्य हमेशा मिलते थे और राजा को राज्य-कार्य में परामर्श देते थे।

केबिनेट शब्द का प्रयोग प्रथम बार चार्ल्स द्वितीय के समय में हुआ। उसने एक मन्त्रिमण्डल बनाया जिसका नाम केबेल (Cabal) रक्खा गया। संसद के प्रति वे उस समय उत्तरदायी न थे। मन्त्री राजा के द्वारा नियुक्त किये जाते थे। वैसे पालिया-मेण्ट मन्त्रियों के उत्तरदायित्व के सम्बन्ध में चार्ल्स प्रथम के समय से ही लड़ती आ रही थी, परन्तु इस सम्बन्ध में उसने कोई विशेष शक्ति प्राप्त नहीं कर पाई थी। मन्त्रियों को अपने प्रति उत्तरदायी बनाने के लिए पालियामेण्ट ने उनके ऊपर अभियोग (Impeachment) चलाने के अस्त्र को ग्रहण किया और सन् १६७९ में डेनबी को उसके पद से हटा कर अपनी शक्ति का प्रयोग दिखाया। पालियामेण्ट ने इस बात पर जोर दिया कि राज्य-मन्त्री पालियामेण्ट के विश्वासपात्र हों। जेम्स द्वितीय और उससे

पहले उसके भाई चार्ल्स द्वितीय दोनों की ही इस मामले में पार्लियामेण्ट से बड़ी कशमकश चली, परन्तु उन्हें सफलता न मिली। झगड़ा चलता रहा और सन् १६८८ में यह बात निश्चित हो गई कि मन्त्री पार्लियामेण्ट के विश्वासपात्र होंगे।

सन् १६६५ में विलियम ने एक नवीन प्रथा को जन्म दिया। उसने लोकसभा के बहुमत-दल में से मन्त्री चुनना प्रारम्भ किया, और चूंकि उस समय ह्विग-दल का बहुमत था इसलिये ह्विग-दल का मन्त्रिमण्डल स्थापित हुआ।

अभी प्रधान मन्त्री का कोई स्थान नहीं था। सन् १७१४ में इङ्गलैंड में नये राजवंश (हनोवर) की स्थापना हुई। प्रथम दो हनोवर राजा जॉर्ज प्रथम और जॉर्ज द्वितीय अंग्रेजी नहीं जानते थे, इसलिए उन्होंने पार्लियामेण्ट की बैठकों में आना बन्द कर दिया। मन्त्रियों में से एक, जो अधिक प्रभावशाली था, उसके स्थान पर बैठने लगा और इस प्रकार प्रधान मन्त्री के पद की उत्पत्ति हुई। प्रथम प्रधान मन्त्री रॉबर्ट वालपोल था। इसीलिए कहा जाता है कि समझौते के राजनियम ने इङ्गलैण्ड को एक विदेशी राजा दिया (जॉर्ज प्रथम हनोवर जर्मनी का था) और एक विदेशी राजा की उपस्थिति ने इङ्गलैण्ड को प्रधान मन्त्री दिया। प्रधान मन्त्री बहुमत दल का होने के नाते अपने दल का लोकसभा में नेता भी बनने लगा।

जॉर्ज प्रथम और द्वितीय के समय में केबिनेट की शक्ति बहुत बढ़ गई, क्योंकि राजा कमजोर थे। परन्तु जॉर्ज तृतीय ने (१७६०-१८२०) पुनः राज्य-शक्ति को वापस लेने की कोशिश की परन्तु वह सफल न हो सका; क्योंकि उस समय ऐसी विषम समस्याएँ पैदा हो गईं, जैसे अमेरिका स्वातन्त्र्य-युद्ध (१७७४-१७७३), फ्रान्सीसी राज्य-क्रान्ति और युद्ध (१७८६-१८१५), तथा आयरलैण्ड की समस्या आदि, जिन्हें वह अपने पिट्ठू मन्त्रियों द्वारा हल करवाने में असमर्थ रहा और इसलिए शक्तिशाली मन्त्रियों की नियुक्ति करनी पड़ी। मन्त्रियों के शक्तिशाली होने के कारण राजा की शक्ति क्षीण हो गई।

बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ से केबिनेट की शक्ति और भी अधिक बढ़ गई और गत महायुद्धों में तो वह अत्यधिक शक्तिशाली बन गई। महायुद्धों में आवश्यकता पड़ने पर युद्ध-केबिनेट अलग बनाई गई और उसके ५ सदस्य होते थे। आधुनिक काल में केबिनेट ही शासन-कार्य में सर्वेसर्वा है। राजा तो उसके हाथ की कठपुतली है, पार्लियामेण्ट उसके इशारे पर नाचती है और शासन-कार्य उसी की नीति के आधार पर चलता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Trace the growth of cabinet system in Great Britain.
   (*Agra*, *1948*; *Punjab*, *1943*)
2. Bring out cleary the distinction between Cabinet and Ministry
   (*Cal.*, *1939*)

पाँचवाँ परिच्छेद

केबिनेट–विशेषताएँ तथा कार्य

केबिनेट-व्यवस्था का महत्व व प्रमुख विशेषताएँ :

ब्रिटिश शासन में केबिनेट का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। सारे शासन का संचालन केबिनेट द्वारा ही होता है।[1] समस्त राजकीय कार्यों का उत्तरदायित्व उसी पर है। अतः उसके कार्यों की विवेचना करने से पूर्व हमें उसके महत्व और उसकी प्रमुख विशेषताओं पर ध्यान देना चाहिए।

शासन-विधान के लेखकों ने ब्रिटिश केबिनेट के महत्व का उल्लेख अत्यन्त रंगीन शब्दावलियों में किया है। बेजहाँट (Bagehot) के मतानुसार केबिनेट "कार्यपालिका तथा विधान-सभा को जोड़ने वाली कड़ी (Buckle) है जो उन्हें साथ रखती है।" लॉवेल (Lowell) ने इसे "राजनैतिक भवन की प्रधान शिला" (Key-stone of the political arch) कहा है। सर जॉन मेरिअट (Marriott) के कथनानुसार यह "वह धुरी है जिसके चारों ओर समूची राजनैतिक मशीन घूमती है" (The pivot round which the whole political machinery revolves)। रैम्ज़े म्योर (Ramsay Muir) के अनुसार यह "राज्य रूपी जहाज को घुमाने वाला चालक-चक्र है" (Steering-wheel of the ship of the State)। रानी विक्टोरिया के समय के प्रसिद्ध प्रधान मन्त्री ग्लैड्स्टन ने भी कहा था कि केबिनेट "सूर्य-पिण्ड है जिसके चारों ओर अन्य पिण्ड घूमते हैं" (The solar orb round which other bodies revolve)।

उपर्युक्त कथनों से यह स्पष्ट है कि ब्रिटिश शासन-विधान में केबिनेट का स्थान अत्यन्त महत्वपूर्ण है। ऐसा क्यों है और उसके कार्यों का कितना विस्तृत क्षेत्र है, यह हम अगले पृष्ठों में देखेंगे। उससे पहले केबिनेट-सरकार की विशेषताओं को समझ लेना अत्यावश्यक है, क्योंकि उन्हीं के कारण केबिनेट शासन-संचालन में अपना प्रभुत्व रखती है।

1 "While every act of State is done in the name of Crown, the real executive head of England is the Cabinet"—*A, V. Dicey.*

"According to the conventions of the constitution, the cabinet is the responsible executive having the complete control of administration and the general direction of all national business, but strict supervision of the representative chamber to which it is accountable for all its acts and omissions."—*Sydney Low.*

(१) केबिनेट-प्रणाली के सम्बन्ध में पहली बात यह है कि यह संसद में बहुमत-दल के आधार पर बनती है और तभी तक जीवित रह सकती है जब तक पार्लियामेण्ट में उस दल का बहुमत है। बहुमत दल के आधार पर निर्मित होने के कारण इसे अपने दल के आदर्शों को, जिन्हें जनता के समक्ष रखकर इसने चुनाव लड़े थे, पूरा करना पड़ता है। साथ ही केबिनेट के सदस्य एक ही दल के होने के नाते कुशलतापूर्वक कार्य करते हैं, क्योंकि उनके राजनैतिक सिद्धान्तों में विभिन्नता नहीं होती है। इसका यह अर्थ नहीं है कि अन्य दलों के सदस्य कभी भी केबिनेट में न लिये जायँ। विशेष परिस्थितियों में जब देश पर कोई संकट है अथवा पार्लियामेण्ट में किसी दल का स्पष्ट बहुमत नहीं है, तब संयुक्त मन्त्रिमण्डल (Coalition Ministry) बनाये जाते हैं अन्यथा साधारण परिस्थितियों में तो केबिनेट "लोकसभा में बहुमत-दल की एक समिति है, जिसे देश का शासन चलाने के लिए एक व्यक्ति चुनता है"।

(२) केबिनेट-प्रणाली की दूसरी विशेषता यह है कि उसमें एकता (unity) का भाव समस्त मन्त्रिमण्डल को एक सूत्र में बाँधे रहता है, इसलिये शासन का कार्य सुचारु रूप से चलता रहता है। अगर आपस में केबिनेट के सदस्यों में किसी प्रश्न पर मतभेद हो भी जाता है तो वे उसे राजा, लोकसभा या जनता के सामने प्रकट नहीं होने देते।

(३) केबिनेट-प्रणाली की तीसरी विशेषता है उसकी मीटिंगों की गुप्तता। केबिनेट के सदस्यों को लोकसभा में आलोचनाओं और प्रश्नों का सामना करना पड़ता है और उनका जबाब देना होता है, इसलिये वे अपनी बातों को गुप्त रखते हैं। अपनी बातों को गुप्त रखने के लिये प्रत्येक मन्त्री को प्रीवी कौंसिल के समक्ष शपथ लेनी पड़ती है।

(४) केबिनेट-प्रणाली की चौथी विशेषता यह है कि इसका नेता प्रधान मन्त्री होता है। वह अपने दल का नेता होने के कारण प्रधान मन्त्री बनाया जाता है और प्रधान मन्त्री होने के नाते केबिनेट का भी नेता होता है। इन दो कारणों से—प्रधान मन्त्री का नेतृत्व तथा केबिनेट मीटिङ्गों की गुप्तता—केबिनेट एक ठोस संयुक्त मोर्चा बन जाती है।

(५) केबिनेट-प्रणाली की पाँचवीं विशेषता है इसके सदस्यों का सामूहिक उत्तर-दायित्व। केबिनेट एक दल से बनती है और यह अपनी नीति को लोकसभा में स्वीकृति प्राप्त कराने के लिये भरसक प्रयत्न करती है, इसलिए इसके सदस्य एक सूत्र में बँधे रहते हैं और इसीलिये वे एक साथ ही केबिनेट में आते हैं और एक साथ ही निकाले जाते हैं। लोकसभा में हार हो जाने पर केबिनेट के समस्त सदस्यों—मन्त्रियों—को एक साथ ही स्तीफा दे देना होता है।

(६) केबिनेट-प्रणाली की छठी विशेषता यह है कि केबिनेट के सदस्यों का व्यक्तिगत उत्तरदायित्व भी है। प्रत्येक मन्त्री प्रधान मन्त्री के प्रति उत्तरदायी है,

वह उसके खिलाफ नहीं जा सकता। यदि कहीं मतभेद है और समझौता असम्भव है तो उस मन्त्री को त्यागपत्र दे देना होगा।

(७) उपर्युक्त बातों से हम यह निष्कर्ष निकालते हैं कि केबिनेट के तीन प्रकार के उत्तरदायित्व हैं—वैधानिक, राजनैतिक और अन्त:केबिनेट। प्रथम का आशय यह है कि क्राउन के नाम से जो आदेश प्रचलित किये जाते हैं (और उस पर किसी न किसी मन्त्री के हस्ताक्षर होना आवश्यक है) उनका उत्तरदायित्व किसी न किसी मन्त्री पर है और उसके परिणामों के लिये वही उत्तरदायी है। बुरे परिणाम होने पर उस पर न्यायालय में दावा भी हो सकता है। राजनैतिक उत्तरदायित्व का आशय यह है कि प्रत्येक मन्त्री अपने कार्यों के लिए लोकसभा के प्रति उत्तरदायी है। यदि उसने अपने कार्यों से लोकसभा को अप्रसन्न कर दिया तो लोकसभा निन्दा व अविश्वास का प्रस्ताव पास करके उसे त्यागपत्र देने के लिये विवश कर सकती है। यदि संसद चाहे तो सम्पूर्ण केबिनेट तथा मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र देने के लिये विवश कर सकती है। अन्त:केबिनेट उत्तरदायित्व से यह तात्पर्य है कि मन्त्रीगण व्यक्तिगत और सामूहिक दोनों ही रूप में उत्तरदायी हैं, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है। केबिनेट के सदस्य एक साथ ही तैरते और डूबते हैं (Swim and sink together)। वहाँ "प्रत्येक सब के लिये है और सब प्रत्येक के लिए हैं"।

(८) केबिनेट की मीटिंगों में राजा शामिल नहीं होता। इस प्रथा का प्रारम्भ जॉर्ज प्रथम के समय से हुआ।

समझौते के अधिनियम (Act of Settlement, 1701) के अनुसार यह तय हो गया था कि रानी ऐन (Anne) की मृत्यु के पश्चात् इङ्गलैण्ड का सिंहासन हनोवर वंश को प्राप्त हो। प्रथम हनोवर राजा जॉर्ज प्रथम (George I) सन् १७१४ में इङ्गलैण्ड का राजा हुआ। जॉर्ज प्रथम अँग्रेजी नहीं जानता था, इसलिये उसने केबिनेट की मीटिंगों में जाना भी छोड़ दिया। तब से यह प्रथा चल गई कि राजा का स्थान प्रधान मन्त्री ले और राजा केबिनेट की मीटिंगों में शामिल न हो।

(९) ब्रिटिश केबिनेट के बारे में सबसे बड़ी आश्चर्यजनक बात यह है कि वह आज भी अवैध रूप से संगठित है, उसकी कार्यवाही अभी तक लेखबद्ध नहीं हुई। केबिनेट तथा प्रधान मन्त्री—इन दोनों का ही परम्परा के आधार पर जन्म हुआ और उसी आधार पर ये अब तक जीवित हैं। इनकी स्थिति कानूनी नहीं है।

(१०) जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, प्रधान मन्त्री केबिनेट का नेता होता है। वैसे तो उसे बराबर वालों में प्रथम (Primus inter pares, अर्थात् First among equals) कहा जाता है परन्तु यदि वास्तव में देखा जाय तो

उसकी इतनी शक्ति है कि उसे इस पदवी से पुकारना सर्वथा मूर्खता है, जैसा कि हम आगे चल कर देखेंगे।

केबिनेट का संगठन :

केबिनेट का संगठन करना प्रधान मन्त्री का एक बहुत ही महत्वपूर्ण कार्य है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, प्रधान मन्त्री बहुमत दल का नेता होता है और वह राजा के द्वारा नियुक्त किया जाता है। परन्तु केबिनेट के अन्य सदस्य व मन्त्रिगण प्रधान मन्त्री द्वारा चुने जाते हैं और राज्य द्वारा उनकी नियुक्ति की घोषणा होती है। केबिनेट के सदस्यों को चुनने में प्रधान मन्त्री को अपने दल का विशेष ध्यान रखना पड़ता है और साथ ही साथ उसे योग्यता व अनुभव का भी ख्याल करना पड़ता है। प्रायः योग्य व अनुभवी व्यक्ति ही केबिनेट में आते हैं। केबिनेट के सदस्य लोकसभा में से ही चुने जाते हैं और वे प्रधान मन्त्री के दल के होते हैं परन्तु सन् १९३७ के मिनिस्टरर्स ऑफ क्राउन एक्ट (Ministers of Crown Act) के अनुसार कम से कम तीन केबिनेट के सदस्य व तीन अंडर-सेक्रेटरी (Under-Secretaries) लॉर्डसभा में से होने ही चाहिए। केबिनेट के सदस्यों का वेतन उसी एक्ट के द्वारा नियत कर दिया गया था। इस एक्ट के द्वारा प्रधान मन्त्री का वेतन १०,००० पौण्ड सालाना नियत हुआ था और अन्य मन्त्रियों का ५,००० पौण्ड तथा कुछ मन्त्रियों व सेक्रेटरियों का १,५०० पौण्ड से लेकर ३,००० पौण्ड तक नियत हुआ।

सन् १९३७ के एक्ट के अनुसार केबिनेट[1] में निम्नलिखित सदस्य होते हैं :—

१. प्रधान मन्त्री तथा कोष का प्रथम लार्ड (Prime Minister and First Lord of the Treasury)
२. चान्सलर ऑफ एक्सचैकर (Chancellor of the Exchequer)
३. सचिव गृह-विभाग (Secretary of State for Home Affairs)
४. उपनिवेशों का सचिव (Secretary of State for Dominions)
५. विदेश विभाग का सचिव (Secretary of State for Foreign Affairs)
६. युद्ध सचिव (Secretary of State for War)

१ केबिनेट तथा मन्त्रिमण्डल में भ्रम न होना चाहिए। इनमें क्या अन्तर है, इसके लिए देखो पृष्ठ ४३।

७. नभ सेना सचिव (Secretary of State for Air)
८. भारत-सचिव[1] (Secretary of State for India)
९. जल सेना का लॉर्ड (First Lord of Admiralty)
१०. स्कॉटलैण्ड का सचिव (Secretary of State for Scotland)
११. बोर्ड ऑफ ट्रेड का प्रेसीडेण्ट (President of the Board of Trade)
१२. शिक्षा बोर्ड का प्रेसीडेण्ट (President of the Board of Education)
१३. कृषि व फिशरी (Fishery) विभाग का सचिव (Minister for Agriculture and Fisheries)
१४. स्वास्थ्य विभाग का मन्त्री (Minister for Health)
१५. यातायात विभाग का मन्त्री (Minister for Transport)
१६. श्रम-मन्त्री (Labour Minister)
१७. लॉर्ड प्रीवी सील (Lord Privy Seal)
१८. पोस्टमास्टर जनरल (Postmaster General)
१९. लॉर्ड प्रेसीडेण्ट ऑफ कौंसिल (Lord President of Council)
२०. फर्स्ट कमिश्नर ऑफ वर्कस एण्ड पैन्शन (First Commissioner of Works and Pensions)
२१. मिनिस्टर ऑफ कोर्डीनेशन (Minister of Co-ordination)।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है केबिनेट के सदस्यों की संख्या घट-बढ़ भी सकती है और कार्य-विभाग हस्तान्तरित भी हो सकते हैं। यह प्रधान मन्त्री की इच्छा पर निर्भर है कि वह किस को क्या विभाग सौंपता है। एक सदस्य पर एक से अधिक विभाग (Folios) भी हो सकते हैं।

केबिनेट में लॉर्डसभा के कुछ सदस्य लिए ही जाते हैं जैसा कि सन् १९३७ के समझौता अधिनियम द्वारा निश्चित कर दिया गया था। परन्तु महत्वपूर्ण विभाग लोकसभा के प्रधान मन्त्री के दल के सदस्यों के पास ही रहते हैं क्योंकि कार्य-विभाजन प्रधान मन्त्री ही करता है।

केबिनेट के कार्य :

ब्रिटिश केबिनेट के कार्यों का वर्णन संक्षेप में नहीं हो सकता क्योंकि केबिनेट का

१ भारत-सचिव का पद भारत को स्वतन्त्रता प्रदान करने के उपरान्त समाप्त हो गया है।

कार्य एक विभाग या संस्था से सम्बन्ध नहीं रखता। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, यह एक ऐसी पिण्ड है, जिसके चारों ओर शासन के समस्त विभाग-रूपी पिण्ड घूमते रहते हैं, और जो राजा, लॉर्डसभा तथा लोकसभा तीनों को एक दूसरे से मिलाती हुई उनको परस्पर शासन-कार्य के लिये एक सूत्र में बाँधती है।[1]

केबिनेट के कार्यों की व्याख्या करने के लिए हमें उन्हें तीन श्रेणियों में विभक्त कर लेने से सुविधा होगी। यद्यपि केबिनेट के कुछ ऐसे कार्य भी हैं जो तीन श्रेणियों में नहीं आते हैं परन्तु उनका वर्णन बाद में होगा। केबिनेट के कार्य साधारणतया निम्नलिखित हैं:—

(अ) विधि-निर्माण सम्बन्धी।
(ब) कार्यपालिका सम्बन्धी।
(स) वित्त सम्बन्धी।

केबिनेट और विधि-निर्माण—विधि-निर्माण में केबिनेट का प्रमुख हाथ है। विधि तथा बिल (Law and Acts) दोनों को ही संसद में पास कराने में केबिनेट का प्रमुख हाथ है। इस कार्य में केबिनेट का इतना प्रभुत्व है कि विधि-निर्माण संसद द्वारा नहीं, वरन् केबिनेट द्वारा संसद के परामर्श तथा सम्मति से होता है। केबिनेट के मन्त्री ही संसद के सत्रारम्भ (Opening of the Parliament) के समय राजा का भाषण तैयार करते हैं। वे ही देश की पिछली हालत का सारांश देते हुए नई नीति का निर्धारण करते हैं। वे ही संसद में विधि-निर्माण सम्बन्धी बिल पेश करते हैं, उनकी व्याख्या करते हैं और उन्हें पास कराते हैं। बिल यद्यपि लॉर्डसभा में भी पेश होते हैं और वे व्यक्ति भी जो मन्त्री नहीं हैं बिल पेश कर सकते हैं, परन्तु महत्वपूर्ण बिल मन्त्रियों द्वारा ही पेश किये जाते हैं। अन्य बिलों की तरफ इतना ध्यान भी नहीं दिया जाता। केबिनेट की ही सिफारिश पर संसद को बुलाया जाता है, विघटित किया जाता है तथा सत्रावशिष्ट (Prorogue) किया जाता है।

केबिनेट का विधि-निर्माण में इतना हाथ है कि अक्सर इसे पार्लियामेण्ट की कमेटी कहा जाता है हालाँकि केबिनेट न पार्लियामेण्ट की ही कमेटी है और न प्रीवी कौंसिल की ही। पार्लियामेण्ट न तो इसे नियुक्त करती है और न इसको किसी बिल की जाँच करने के लिये ही कहती है, जैसा कि अन्य कमेटियों के साथ होता है। केबिनेट तो स्वयं बिल उत्पादन करती है। परन्तु फिर भी इसे पार्लियामेण्ट का भीतरी

[1] "The cabinet is the three-fold hinge that connects together for action the British Constitution of king or queen, lords and commons; like a stout buffer-spring it receives all shocks, and within it their opposing elements neutralise one another."—*Gladstone.*

चक्र कहा जाय तो अत्युक्ति न होगी, जैसा कि लॉवेल (Lowell) के कहा है कि केबिनेट इङ्गलैण्ड की शासन-व्यवस्था में "चक्रों के भीतर चक्र है"।[1]

केबिनेट के कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य—केबिनेट राष्ट्र की सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति (Executive Power) है। परन्तु यह नहीं समझना चाहिए कि केबिनेट ही कार्यपालिका है। ऐतिहासिक और कानूनी दृष्टि से तो सर्वोच्च कार्यपालिका राजा है; परन्तु राजा की शक्ति क्राउन में निहित हो गई है। यद्यपि क्राउन एक अदृश्य संज्ञा (Abstraction) है और उस अदृश्य संज्ञा के परे हमें दृश्य शक्ति को देखना है जो दिन प्रति दिन के शासन का कार्य-संचालन करती है। वह शक्ति मन्त्रिमण्डल है। परन्तु ६० या ६५ मन्त्रियों का समूह हमेशा इकट्ठा होकर कभी कार्य नहीं करता। वह कभी नीति निर्धारित नहीं करता, कभी आदेश जारी नहीं करता। यह सब कार्य केबिनेट का है। केबिनेट के कार्यपालिका सम्बन्धी कार्य-जो शासन-यन्त्र-समिति (Machinery of Govt. Committee) ने बतलाए हैं, तीन हैं:—

(१) संसद के समक्ष प्रस्तुत की जाने वाली नीति का अन्तिम निर्धारण।

(२) संसद द्वारा निर्धारित नीति के अनुसार राष्ट्रीय कार्यपालिका का पूर्ण नियन्त्रण।

(३) राज्य के विभिन्न अङ्गों में परस्पर सम्बन्ध स्थापित करना तथा उनके कार्यों की सीमा निर्धारित करना। ऑग (Ogg) के अनुसार वास्तव में असली कार्यपालिका कानून की दृष्टि में राजा है, या यों कहिये क्राउन है, परन्तु व्यावहारिकत: केबिनेट ही है। "ऐतिहासिक और कानूनी तौर पर कार्यपालिका राजा या रानी, या कोई कहे क्राउन, भले ही हो; परन्तु वह प्रधान कार्य जिसके द्वारा राजा या रानी या क्राउन के राष्ट्रीय नीति सम्बन्धी कार्य कार्यरूप में परिणित किए जाते हैं, और जिसके द्वारा विविध विभागों का सम्बन्ध निश्चित किया जाता है, केबिनेट ही है।"[2]

केबिनेट के वित्त सम्बन्धी कार्य—देश के वित्त की जिम्मेदारी केबिनेट पर ही है। यही इस बात को तै करती है कि किस प्रकार रेवेन्यू उगाया जायगा, क्या-क्या टैक्स लगेंगे और किस-किस प्रकार किस-किस मद्द में कितना-कितना खर्च किया जायगा।

1 The governmental machinery is "one of wheels, within wheels; the other ring consisting of the party that has a majority in the House of Commons, the next ring being the ministry, which contains the men who are most active in that party, and the smallest of all being the cabinet containing the real leaders or chiefs. By this means is secured that unity of party action which depends upon placing the directing power in the hands of a body small enough to agree, and influential enough to control." (*Lowell : Government of England*)

2 Ogg and Zink : op. cit., p. 38.

यद्यपि बजट संसद में चान्सलर ऑफ दी एक्सचेकर द्वारा प्रस्तुत किया जाता है, परन्तु केबिनेट के सभी सदस्य उसके ऊपर विचार कर लेते हैं। भिन्न-भिन्न विभागों के खर्च सम्बन्धी झगड़े प्रायः पहले ही केबिनेट के सदस्य तै कर लेते हैं।

केबिनेट के अन्य कार्य—उपरोक्त कार्यों के अलावा केबिनेट के अन्य कार्य भी हैं, जैसे—

(अ) दूसरे देशों से सन्धि करना व बाह्य नीति निर्धारित करना।

(ब) विभिन्न पदों पर नियुक्तियाँ करना तथा ऊँचे-ऊँचे पदक देना।

(स) क्राउन के द्वारा क्षमा के विशेषाधिकार का प्रयोग करना।

(द) संसद द्वारा बनाई गई नीति की रूपरेखा की विस्तृत व्याख्या करना। संसद तो नीति की रूपरेखा ही बनाती है, उसकी व्याख्या करना तथा विभिन्न विभागों के कार्यों का परिसीमन करना केबिनेट का ही कार्य है।

रेम्जे म्योर (Ramsay Muir) ने केबिनेट के कार्यों को सात भागों में बाँटा है—

(१) केबिनेट की विधि-निर्माण में जिम्मेदारी है।

(२) रेवेन्यू का इकट्ठा करना तथा उसका खर्च किया जाना केबिनेट निर्धारित करती है।

(३) संसद में क्या-क्या पेश होगा और उसे कितना-कितना महत्व दिया जायगा, यह भी केबिनेट तै करती है।

(४) ग्रेट ब्रिटेन में तथा उपनिवेशों में महान् पदों पर नियुक्तियाँ करती है।

(५), (६), (७) यह तीन कार्य वही हैं जो शासन-यन्त्र-समिति द्वारा बताये गये हैं।

केबिनेट की स्थिति :

उपर्युक्त कथन से सिद्ध हो जाता है कि केबिनेट का ब्रिटिश-शासन में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान है। बहुमत-दल के आधार पर खड़ी रहने के कारण केबिनेट का शासन के तीनों विभागों में सर्वोच्च स्थान है। वास्तव में देखा जाय तो केबिनेट ही देश की वास्तविक शासक है। मुनरो (Munroe) के कथनानुसार "केबिनेट ब्रिटिश शासन-रूपी ढाँचे में सबसे महत्वपूर्ण पुर्जा है"। वास्तव में यह व्यवस्थापिका की ही एक निकाय है और इसे कार्यपालिका का कार्य करना पड़ता है। व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका का सम्बन्ध जोड़ने वाली यह एक महत्वपूर्ण कड़ी है।[1] लोकसभा में बहुमत-दल में से बनी होने के कारण यह विधि-निर्माण सम्बन्धी सभी कार्यों पर

[1] "The cabinet is a hyphen which joins the legislative part of the State to the executive part of the State."

नियन्त्रण रखती है और उधर कार्यपालिका सम्बन्धी सभी कार्य उसके ऊपर हैं हीं क्योंकि वह वास्तविक सर्वोच्च कार्यकारणी शक्ति है। इस प्रकार वह व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका का सम्बन्ध जोड़ने वाली श्रृंखला है। हैरोल्ड लास्की (Laski) ने केबिनेट के तीन प्रकार के कार्य बतलाए हैं और उनसे उसकी महत्ता स्पष्ट हो जाती है। वे निम्नलिखित हैं—

(१) यह संसद के बहुमत दल की एक कमेटी है जो व्यवस्थापिका के समक्ष प्रस्ताव रखती है और अपनी स्थिति में तब तक रह सकती है जब तक वह व्यवस्थापिका की विश्वासपात्र बनी रहती है।

(२) यह विधि को कार्यरूप में परिणित करने वाली एक निकाय है जो विधि को जनता द्वारा मान्यता प्रदान कराने के लिये अफसरों को नियुक्त करती है और उनके द्वारा प्रशासन का कार्य चलाती है।

(३) अपने प्रशासकीय कार्यों द्वारा उसका नागरिकों से अविरल सम्बन्ध स्थापित होता है। केबिनेट के सदस्य संसद के कार्य का संचालन भी करते हैं और साथ ही अपने प्रशासन के कार्य द्वारा जनता के सम्पर्क में भी आते हैं। इस प्रकार केबिनेट की संसद के प्रति तथा संसद के द्वारा नागरिकों के प्रति जिम्मेदारी है।

केबिनेट की इङ्गलैण्ड में जो स्थिति है उससे यह स्पष्ट हो जाता है कि उसकी महती शक्ति है। हमने इस परिच्छेद के प्रारम्भ में केबिनेट की शक्ति व उसके महत्व की ओर इंगित किया है और राजनीति-शास्त्रवेत्ताओं के कुछ उद्धरण दिए हैं जिनसे यह स्पष्ट हो जाता है कि केबिनेट की कितनी शक्ति है व उसका कितना महत्व है। हमें अब यह देखना है कि इसका क्राउन तथा संसद के साथ क्या सम्बन्ध है।

Relation **केबिनेट तथा क्राउन**—जैसा कि पहले कह चुके हैं, केबिनेट की नियुक्ति राजा द्वारा होती है। ऐतिहासिक तथा कानूनी दृष्टि से राजा ही राज्य का संचालक है, परन्तु व्यवहार में राजा की सम्पूर्ण शक्ति केबिनेट में निहित है। उसे बहुमत-दल के नेता को प्रधान मन्त्री बनाना ही पड़ता है, तथा प्रधान मन्त्री की सिफ़ारिश पर अन्य मन्त्रियों को नियुक्त करना पड़ता है। राजा केबिनेट को सिर्फ परामर्श दे सकता है, वह अपनी इच्छा उसके ऊपर थोप नहीं सकता; और इसीलिये राजा की कोई जिम्मेदारी नहीं है। यद्यपि राजा राज्य के मामलों में बिलकुल नगण्य तो नहीं है, परन्तु मन्त्रियों की दृढ़ता के सामने उसे झुकना ही पड़ता है। प्रभावशाली राजा अपना प्रभाव मन्त्रियों पर काफी डाल देते हैं, परन्तु सांविधानिक रूप में वह मन्त्रियों की बातों को मानने के लिए बाध्य हैं।

Relation **केबिनेट तथा संसद**—केबिनेट के साथ संसद का गहरा सम्बन्ध है। इस विषय में एक बात ध्यान देने योग्य यह है कि केबिनेट और संसद के सम्बन्धों में सैद्धान्तिक

Q. 4. → It is not the House of People which

और आचरण सम्बन्धी बहुत भारी अन्तर है, जैसा कि आगे स्पष्ट हो जायेगा। केबिनेट और संसद के सम्बन्ध के बारे में सैद्धान्तिक बातें निम्नलिखित हैं:—

(१) केबिनेट का प्रत्येक सदस्य संसद का सदस्य होना चाहिए। यदि नहीं है, तो नियुक्ति के बाद ६ माह के अन्दर उसे किसी निर्वाचन-स्थान से संसद की सदस्यता प्राप्त कर लेनी होगी।

(२) केबिनेट के सदस्य संसद के बहुमत-दल में से चुने जाते हैं।

(३) केबिनेट के सदस्य व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से लोकसभा के समक्ष अपने कार्यों के लिए उत्तरदायी हैं। लोकसभा मन्त्रिगत उत्तरदायित्व को नीचे लिखे तरीके से लागू करती है:—

(अ) प्रश्नों द्वारा—प्रत्येक अधिवेशन में ३-० बजे से ३-४५ तक का समय इस बात के लिये नियत है कि लोकसभा के सदस्य मन्त्रियों से उनकी नीति के सम्बन्ध में प्रश्न करें। प्रत्येक प्रश्न उस मन्त्री के क्षेत्र से सम्बन्ध रक्खे जिससे वह पूछा जा रहा है। कम से कम एक दिन पहले मन्त्री को इसकी सूचना दी जाती है कि उससे प्रश्न पूछे जायेंगे। प्रश्नों में कोई व्यंग वगैरह नहीं होता और कोई भी संसद का सदस्य तीन से ज्यादा प्रश्न नहीं पूछ सकता।

(ब) निन्दा का प्रस्ताव पास करना।

(स) अविश्वास का प्रस्ताव पास करना। विरोधी दल यदि शक्तिशाली हो गया है तो (ब) और (स) के पारित होने की सम्भावना रहती है।

(४) संसद ही केबिनेट को शासन का कार्य सौंपती है।

(५) संसद की आज्ञा के बिना केबिनेट एक आना की उगाही भी नहीं कर सकती और न खर्च कर सकती है।

(६) संसद की आज्ञा के बिना केबिनेट न युद्ध कर सकती है और न शान्ति-प्रस्ताव व सुलह कर सकती है।

(७) अप्रसन्न संसद केबिनेट को त्यागपत्र देने के लिये बाध्य कर सकती है।

(८) संसद केबिनेट के कार्यों की आलोचना कर उसे ठीक ढंग पर लाती है।

इन सब बातों से स्पष्ट है कि संसद के प्रति केबिनेट की पूरी-पूरी जिम्मेदारी है और संसद की आज्ञा के बिना केबिनेट का कोई काम नहीं होता। सिद्धान्ततः सब बातें ठीक हैं, परन्तु व्यवहार में सब उल्टी हैं। केबिनेट लोकसभा की अनुचरी और सेविका होने के बजाय उसकी स्वामिनी बन गई है, और एक प्रकार से तानाशाह की भाँति शासन करती है। पिछले सत्तर वर्षों के इतिहास से यह बात स्पष्ट है कि इन वर्षों के सांविधानिक विकास में केबिनेट का सर्वशक्तिमान् बन जाना एक बहुत ही महत्वपूर्ण घटना है। इन वर्षों में लोकसभा ने किसी भी केबिनेट को पदच्युत नहीं

कर पाया है। केबिनेट जैसे चाहती है वैसे ही अपना कार्य लोकसभा में समर्थित करा लेती है। पार्लियामेण्ट तो एक रबर का स्टाम्प मात्र रह गई है जो केबिनेट के कार्यों का अनुमोदन मात्र करती है।[1]

बिल वगैरह मन्त्री ही पेश करते हैं, और जिन्हें वे पेश करते हैं उन्हें पास ही करा लेते हैं। वित्त का उगाहना, नए टैक्स लगाना, रुपया खर्च करना—ये कार्य पूर्णतया केबिनेट पर ही निर्भर हैं। लोकसभा तो सिर्फ खानापूरी करने के लिए उन पर बहस वगैरह: करती है। इसी प्रकार युद्ध-घोषणा, शान्ति-वार्ता, विदेश-नीति, इत्यादि बातों में भी केबिनेट की ही तानाशाही चलती है। इसीलिए तो यह कहा जाता है कि आजकल लोकसभा का केबिनेट पर नियन्त्रण नहीं है बल्कि केबिनेट ही लोकसभा पर नियन्त्रण रखती है। सन् १८०० के क्वार्टरली रिव्यू (Quarterly Review) ने यह शिकायत की थी कि इङ्गलैण्ड की कार्यकारिणी कमजोर है और इसे लोकसभा के सामने झुक जाना पड़ता है। परन्तु आज हम देखते हैं कि कार्यपालिका ने अपना रौब जरूरत से भी ज्यादा गाँठ लिया है।

हमने पहले कहा है कि लोकसभा प्रश्न पूछ कर केबिनेट पर नियन्त्रण रखती है, परन्तु यह प्रश्न भी इस ओर ज्यादा महत्व नहीं रखते। कारण यह है कि या तो प्रश्न ही बहुत मामूली ढंग के होते हैं और या मन्त्री ही उनका जवाब देने से इंकार कर देते हैं; हालाँकि मन्त्री इस बात को समझते हैं कि स्वस्थ प्रश्नों का उत्तर देना उनका कार्य है, और बिना उसके वे जनहित के प्रतिनिधि कहलाने का हक नहीं रख सकते।

केबिनेट के संसद पर प्रभुत्व के कारण :

केबिनेट और संसद के सम्बन्ध में सिद्धान्त और आचरण में इतना भेद है कि इसके कारणों का निरूपण करना आवश्यक है।

(१) प्रथम बात तो यह है कि केबिनेट की तानाशाही उसके दल के बहुमत के भरोसे पर चलती है। यदि लोकसभा उसे हटाना भी चाहे तो खिसिया कर रह जायेगी, क्योंकि केबिनेट अपने दल के बहुमत के आधार पर राजा के द्वारा पार्लियामेण्ट को भंग करा कर दुबारा चुनाव करा सकती है और चुनाव के उपरान्त वही फिर केबिनेट के सदस्य होंगे और पार्लियामेण्ट को मुँह की खानी पड़ेगी।

(२) दूसरी बात यह है कि पार्लियामेण्ट के सदस्यों को यह डर रहता है कि यदि सरकार की नीति की उन्होंने तीव्र आलोचना की तो वे दुबारा नहीं चुने जायँगे क्योंकि उनका कोई समर्थक न होगा। वे भी किसी न किसी दल के बूते पर ही संसद

1 It is, therefore, said, "Today it is not the House of Commons which controls the cabinet but the cabinet which controls the House."

में आज बैठे हैं। यदि सब की आलोचना करना शुरू कर दिया तो फिर वहाँ बैठने का अवसर भी उन्हें नहीं मिलने का। अतः बहुत से इसीलिए चुप्पी साधे बैठे रहते हैं।

(३) आजकल के जमाने में चुनाव सम्बन्धी खर्च बहुत बढ़ गये हैं। आमतौर पर लोग व्यक्तिगत रूप में उतना खर्च सहन नहीं कर सकते। उन्हें निर्वाचित होने के लिए किसी न किसी दल का सहारा लेना पड़ता है और फिर उसी की हाँ में हाँ मिलानी पड़ती है।

(४) एक बात जो केबिनेट की तानाशाही को प्रोत्साहन देती है वह यह है कि संसद में अधिकतर समय केबिनेट द्वारा ही ले लिया जाता है और सभा को वे ही शासन-कार्य की नीति में उलझाए रखते हैं। व्यक्तिगत आलोचना को तथा व्यक्तिगत सदस्यों को कानून-निर्माण में अपने विचार प्रकट करने तथा वाद-विवाद करने का अवसर ही नहीं मिलता।

(५) सन् १९११ के संसदीय अधिनियम के अनुसार लॉर्डसभा की शक्ति कम हो गई और लोकसभा की बहुत बढ़ गई है, अतः लोकसभा में बहुमत-दल का विरोध कोई महत्व ही नहीं रखता और चूँकि केबिनेट बहुमत-दल की ही बनती है इसलिए केबिनेट का कोई विरोध नहीं कर सकता।

(६) केबिनेट पद तथा उपाधियाँ देकर लोगों को अलंकृत करती है, इसलिए बड़े-बड़े लोग उस लालच में फँस कर या उसके लिए लालायित होकर उसके खिलाफ आवाज नहीं उठाते।

(७) आधुनिक काल में समाजवादी प्रवृत्ति का जोर है और इस कारण केबिनेट का प्रभुत्त्व विशाल है। जनता अपने ही प्रतिनिधियों से हाथ में सम्पूर्ण शक्ति रखने के पक्ष में है।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि इङ्गलैण्ड में केबिनेट की तानाशाही है और यह तानाशाही समाप्त भी नहीं हो सकती जब तक कि निर्वाचन-प्रणाली में हेरफेर न किया जाय क्योंकि वर्तमान निर्वाचन-प्रणाली के अनुसार बहुमत-दल का ही लोकसभा में बहुमत होगा और बहुमत-दल की ही केबिनेट बनेगी तथा बहुमत का विरोध न होने के कारण केबिनेट की तानाशाही चलती रहेगी। यदि किसी प्रकार या रूप में आनुपातिक प्रतिनिधित्व (Proportional Representation) प्रारम्भ कर दिया जाय, तो बहुमत-दल का लोकसभा में बहुमत जरूरी नहीं होगा और केबिनेट की शक्ति पर कुछ नियन्त्रण हो जायेगा।

केबिनेट प्रणाली की दुर्बलता :

केबिनेट-प्रणाली की यह महान् दुर्बलता है कि वह प्रायः तानाशाह बन कर जनता के स्वार्थ का बलिदान कर देती है। इसके अलावा केबिनेट का आकार बड़ा होता है अतः एक साथ बैठ कर यदि किसी गम्भीर समस्या पर शीघ्र निर्णय करना

हो तो नहीं हो सकता। तीसरी बात यह है कि केबिनेट के सदस्यों को प्रायः अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में फँसा रहने के कारण विदेशों में जाना पड़ता है और गृह-नीति में इसीलिए केबिनेट कुशलतापूर्वक कार्य नहीं कर पाती। केबिनेट-प्रथा के कारण देश में गुटबन्दी जोर पकड़ती है। काबिल और योग्य व्यक्ति संसद में नहीं आ पाते। दलबन्दी के आधार पर बहुत से पिट्ठू भर जाते हैं। योग्य व्यक्ति दलबन्दी के चक्कर में नहीं पड़ना चाहते। केबिनेट को अपनी शक्ति पर घमण्ड होता है और इसीलिए कभी-कभी वह अनुचित कार्य भी कर सकती है।

कुछ भी हो, यह मानना ही होगा कि केबिनेट-प्रणाली शासन का एक बहुत ही ठोस प्रकार है। यों तो प्रत्येक व्यवस्था में दोष स्वाभाविक हैं, परन्तु कोई न कोई व्यवस्था तो अपनानी ही पड़ती है। इङ्गलैण्ड में केबिनेट-प्रणाली ही उचित है और यही इसके कार्य का सुचारु रूप से संचालन कर रही है।

केबिनेट की समितियाँ तथा मीटिङ्ग :

केबिनेट के कार्यों का निरीक्षण करने से विदित होता है कि केबिनेट, जहाँ तक इसके कार्य-क्षेत्र का सम्बन्ध है, प्रीवी कौंसिल की एक समिति है। दूसरे रूप में हमें यह संसद की भी समिति मालूम पड़ती है या यों कहिए कि संसद में बहुमत-दल की एक समिति है। परन्तु केबिनेट वास्तव में कोई समिति नहीं है। हाँ इतना अवश्य निश्चित है कि केबिनेट अपने मध्य से अनेक समितियाँ बनाती है, और प्राय. उनमें अन्य सदस्य भी जो केबिनेट के सदस्य नहीं हैं, नियुक्त किए जाते हैं। ऐसे सदस्य बहुधा अन्य मन्त्रियों में से चुने जाते हैं। ऐसी समितियों की संख्या निश्चित नहीं है। सन् १९४८ में इनकी संख्या करीब २० थी। ये घटती-बढ़ती रहती हैं। आधुनिक काल में केबिनेट की प्रमुख समितियाँ निम्नलिखित हैं :—

(१) गृह-विभाग सम्बन्धी समिति।

(२) वित्त-सम्बन्धी समिति।

(३) साम्राज्य-रक्षा समिति (यह केबिनेट में सम्मिलित नहीं है परन्तु उसी का कार्य करती है)।

सन् १९१७ से पूर्व केबिनेट के विनिश्चयों का कोई रिकॉर्ड (लेखा) नहीं रक्खा जाता था और प्रधान मन्त्री के अलावा और कोई भी उसकी कार्यवाही को नहीं लिख सकता था; परन्तु प्रथम विश्व-युद्ध में सर लॉयड जॉर्ज ने इस प्रथा को तोड़कर एक सेक्रेटरी नियुक्त किया जो केबिनेट के कार्यक्रम को लिखे। तब से सेक्रेटरी का पद चला आ रहा है और एक अलग दफ्तर, जिसका नाम केबिनेट सेक्रेटेरिएट है, बना दिया गया है। अब तो कभी-कभी ऐसा होता है कि सब सदस्य एक साथ इकट्ठे न भी हों, और यदि बहुत आवश्यक कार्य है, तो प्रधान मन्त्री उस मन्त्री या अन्य दो-एक मन्त्रियों की सलाह से, जिनके कार्य-क्षेत्र में अमुक कार्य आता

है, निर्णय कर लेता है। सेक्रेटरी उन सब रिपोर्टों को तैयार कर लेता है। ऐसी समिति या बैठक अन्तःकेबिनेट (Inner Cabinet) बन जाती है।

केबिनेट की बैठकें प्रधान मन्त्री के सभापतित्व में उसके सरकारी निवास-स्थान—नं० १०, डाउनिंग स्ट्रीट—पर होती हैं। बैठकों की बाबत, जैसा कि कहा जा चुका है, गुप्तता रक्खी जाती है। कार्य-सूची (agenda) प्रधान मन्त्री द्वारा तैयार की जाती है।

प्रधान मन्त्री :

प्रधान मन्त्री तथा अन्य मन्त्रियों का चुनाव—इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री का पद कानूनी नहीं है, परन्तु परम्परागत होने के कारण निश्चित हो गया है। सन् १९३७ तक विधान में इस पद के लिए कोई स्थान नहीं था। सब से पहले सन् १९३७ में ही उसके पद को सरकारी स्वीकृति मिली और उसे "प्रधान मन्त्री तथा कोष का प्रथम लॉर्ड" (Prime Minister and the First Lord of Treasury) कहा गया। यह क्राउन के मन्त्री सम्बन्धी अधिनियम (Ministers of the Crown Act) द्वारा हुआ। इसने उसकी तनख्वाह सालना १०,००० पौण्ड और अन्य साथियों की ५,००० पौण्ड निश्चित की।

प्रधान मन्त्री राजा के द्वारा चुना जाता है और वह लोकसभा में बहुमत-दल का नेता होता है। प्रधान मन्त्री फिर अन्य मन्त्रियों की सूची बनाता है और उसे राजा के सामने पेश करता है तथा राजा उसे स्वीकृति देता है। वैसे तो राजा प्रधान मन्त्री की सूची को ज्यों का त्यों स्वीकार कर लेता है परन्तु यदि वह किसी नाम पर आपत्ति भी करे और अगर प्रधान मन्त्री अपनी सिफारिश पर दृढ़ रहे, तो राजा को उसकी बात माननी पड़ती है।

प्रधान मन्त्री को अन्य मन्त्रियों के चुनने में बड़ी सावधानी से काम लेना पड़ता है। उसे योग्य और दूरदर्शी तथा अनुभवी व्यक्ति ही लेने होते हैं। उसे यह भी ध्यान रखना पड़ता है कि उसके दल वाले किसी प्रकार उसकी नियुक्तियों से असन्तुष्ट न हो जायँ। उसे लॉर्डसभा में से भी मन्त्री चुनने पड़ते हैं। यदि कोई व्यक्ति पार्लियामेण्ट का सदस्य नहीं है लेकिन मन्त्री बनने के योग्य है, और प्रधान मन्त्री उसे मन्त्रिमण्डल में रखना पसन्द करता है, तो वह उसे (जैसा कि नियम है) किसी निर्वाचन-क्षेत्र से ६ माह के अन्दर पार्लियामेण्ट की सदस्यता प्राप्त कराने की कोशिश करता है। प्रधान मन्त्री को मन्त्रिमण्डल बनाते समय देश की भौगोलिक परिस्थिति का भी ध्यान रखना पड़ता है कि देश के प्रमुख भागों में से कोई न कोई मन्त्रिमण्डल में अवश्य हो। उसे पिछली केबिनेट के उन तीव्र समालोचकों को स्थान देना पड़ता है जिन्होंने दूसरे दल की केबिनेट की उसके पक्ष में आलोचना की हो। अगर उसकी

केबिनेट पहले और कभी बन चुकी है तो उसे उस केबिनेट और मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को भी स्थान देना पड़ता है। अपने दल के अतिरिक्त यदि किसी अन्य दल का कोई व्यक्ति अपने अनुभव, बुद्धि व राजनैतिक दूरदर्शिता के लिए प्रसिद्ध है, तो प्रधान मन्त्री उसे अपने मन्त्रिमण्डल में रखकर उसके अनुभव का लाभ उठाने की चेष्टा करता है।

कहने की आवश्यकता नहीं कि मन्त्रिमण्डल का चुनाव एक बड़ी टेढ़ी खीर है। योग्य, ईमानदार, समझदार व्यक्ति भी आ जायँ, अपने दल की शक्ति भी न टूटे, दोनों सभाएँ खुश रहें, सारा देश सन्तुष्ट रहे, राजा भी स्वीकार कर ले—ये और ऐसे अन्य विचार प्रधान मन्त्री को अपना मन्त्रिमण्डल बनाते समय ध्यान में रखने होते हैं। उसका कार्य बड़ा कठिन है। उसे ऐसे लोगों को चुनना है जो एक सूत्र में बाँधे जा सकें। वह एक बच्चे के समान है जो विभिन्न प्रकार के पत्थरों को लेकर एक इमारत खड़ी करता है।[1]

प्रधान मन्त्री की शक्ति व कार्य :

प्रधान मन्त्री तथा मन्त्रिमण्डल—ग्लैड्स्टन ने प्रधान मन्त्री को केबिनेट-रूपी भवन की आधारशिला बतलाया है।[2] परन्तु उसकी शक्ति को देखकर यह कहा जा सकता है कि वह उससे भी अधिक है। उसके पास इतनी शक्ति है कि जितनी संसार के किसी भी शासक के पास नहीं है; यहाँ तक कि अमेरिका के प्रेसीडेण्ट के पास भी नहीं है। उसे हम छोटे-छोटे तारागणों में चन्द्रमा (A moon among lesser stars), जैसा कि लैटिन में कहा गया है, कहें तो भी हम उसकी शक्ति को पूरा सम्मान नहीं पहुँचा सकते। ऐसा इसलिए है कि मन्त्रिमण्डल में वह प्रधान व्यक्ति है। "उसी ने लोगों को वहाँ पहुँचाया है जहाँ वे हैं। यह सब के कार्यों का निरीक्षण करता है तथा विभिन्न विभागों के कार्यों का सम्बन्ध निश्चित करता है। वह केबिनेट की सभाओं में सभापतित्व ग्रहण करता है। जितने समय तक सम्भव है उतने समय तक वह व्यक्तिगत सदस्यों से परामर्श करता है। उन्हें कभी प्रोत्साहन देता है तो कभी झिड़की देता है, कभी सलाह देता है और कभी आज्ञा देता है। वह मन्त्रिगण और अन्य विभागों से सम्बन्ध रखने वाली समस्याओं को सुलझाता है। अगर आवश्यकता हो तो वह अपने सहयोगी-वर्ग से अपनी बात को मनवाता है, अन्यथा त्यागपत्र (अपना अथवा उसका) के लिए विवश करता है क्योंकि राजनैतिक दृष्टि से यह बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है कि दरवाजों के अन्दर

1 Lowell remarks, "His work is like that of constructing a figure out of blocks which are too numerous for the purpose and which are not of shapes to fit perfectly together."

2 "Key-stone of the cabinet arch." (*Marriott*)

केबिनेट में चाहे कितनी ही फूट हो, लोकसभा में तो उसे मोर्चा ही बनाना है। वह राजा या रानी से किसी मन्त्री को बर्खास्त करने के लिए कह सकता है। वह मन्त्रि-मण्डल का नेता होता है, उसका प्रधान वक्ता होता है और वह उसके प्रति हुए समस्त हमलों का बोझ सहता है। इसीलिए यह आवश्यक है कि उसका प्रभाव अनुशासन तथा नीति के आधार पर स्थिर रहे। यह तो सत्य है ही कि उसे कठोर, हठी तथा व्यावहारिक रूप में अकुशल न होना चाहिये। चाहे कितना ही बढ़िया उसका शासन-कार्य हो, उसे बाधाओं का सामना करना पड़ेगा। उसकी मजबूती तथा चरित्र को पारस्परिक फूट द्वारा खतरा नहीं पैदा होना चाहिये।"[1]

प्रधान मन्त्री और केबिनेट—केबिनेट में प्रधान मन्त्री प्रमुख होता है। उसे वैसे तो बराबर वालों में प्रधान (Primus inter pares, अर्थात् First among equals) कहा जाता है, परन्तु वह उनके बराबर का नहीं कहा जा सकता। व्यावहारिक रूप में उसका दर्जा बहुत ऊँचा है। सब सदस्य उसकी आज्ञा शिरोधार्य करते हैं। उसके त्याग-पत्र देने पर सब को त्यागपत्र देना पड़ता है। वह जनता की निगाहों में सब मन्त्रियों से अधिक महत्त्व रखता है।[2]

प्रधान मन्त्री तथा क्राउन—प्रधान मन्त्री केबिनेट और क्राउन के मध्य सम्बन्ध का प्रधान जरिया है। उसी की सलाह पर राजा अपने समस्त अधिकारों का प्रयोग करता है। बिना उसका परामर्श लिए वह कुछ नहीं कर सकता। उसी की सलाह से स्वतन्त्रता से पूर्व भारत का गवर्नर जनरल, राजदूत तथा अन्य पदाधिकारी नियुक्त किये जाते थे। ब्रिटिश कामनवैल्थ से सम्बन्धित सभी मामलों में वही राजा को परामर्श देता है और उसी की सलाह से राजा सब कार्य करता है।

प्रधान मन्त्री तथा लोकसभा—वह लोकसभा में अपने दल का नेता है। वही लोकसभा में महत्वपूर्ण भाषण वगैरह देता है, वही शासन-तन्त्र की ओर से महत्व-पूर्ण विषयों की वहाँ व्याख्या करता है। उसी की ओर लोग जिज्ञासा भरी दृष्टि से लोकसभा में देखते हैं और उसकी बात को स्वीकार करते हैं। "अगर अन्य मन्त्री लोकसभा को अपनी नीति से सन्तुष्ट नहीं कर पाते हैं तो प्रधान मन्त्री ही उसे सन्तुष्ट करता है और लोकसभा भी उसी की ओर देखती है।" लोकसभा में वह केबिनेट का प्रतिनिधि होता है और प्रत्येक बिल को, जो उसके सहयोगी मन्त्रियों ने प्रस्तुत किये हैं, पास कराने में दिलचस्पी लेता है।

वह कानूनों में संशोधन कर सकता है और लोकसभा को उन्हें मानने के लिए विवश कर सकता है। सिडनी लॉ के विचारानुसार वह जर्मन सम्राट तथा अमेरिकन

---

1 Ogg & Zink : op. cit., pp. 90-91.

2 "No one knows and no one cares where other ministers dwell, but the fool of fools knows the meaning of 10, Downing Street."—*Munroe.*

प्रेसीडेण्ट तथा संयुक्त राज्य काँग्रेस-कमेटियों के सभापतियों से कहीं अधिक शक्तिशाली है। बेजहॉट के शब्दों में वह "शासन-विधान के सफल तथा कुशल अंग का प्रधान है"।

प्रधान मन्त्री के कार्य की अधिकता—उपर्युक्त बातों से स्पष्ट है कि प्रधान मन्त्री वास्तव में कार्य-भार से लदा हुआ रहता होगा। उसका प्रत्येक क्षण बड़ा ही कीमती होगा और हर समय विभिन्न प्रकार की चिन्ताओं तथा जिम्मेदारियों से उसका मस्तिष्क भरा रहता होगा। "उसे अनेक कागजात देखने पड़ते हैं, पत्र-व्यवहार करना होता है, सार्वजनिक कार्यों के सम्बन्ध में या व्यक्तिगत मामलों के सम्बन्ध में आये हुए लोगों को मुलाकात का समय देना पड़ता है, केबिनेट की सभाएँ करनी पड़ती हैं, अलग-अलग मन्त्रियों से सलाह करनी पड़ती है, राजा के सामने सब कागजात तथा रिपोर्ट रखनी पड़ती हैं और जब पार्लियामेण्ट का अधिवेशन हो रहा होता है, तो अधिकतर समय ट्रैज़री बेंच (Treasury bench) अथवा लोकसभा के स्पीकर की कुर्सी के पीछे बैठकर बिताना पड़ता है या किसी सरकारी नीति के पक्ष में वाद-विवाद करना पड़ता है। अपनी पार्टी का नेता होने के नाते उसे अपने दल के मामलों को भी देखना पड़ता है। इसमें आश्चर्य नहीं कि सर्वेसर्वा होने के नाते उसके ऊपर बहुत से मन्त्रियों की जिम्मेदारी आकर पड़ गई है।"[1] साथ ही साथ यह भी एक आश्चर्य है, जैसा कि ग्लैड्स्टन ने कहा था, "संसार में कोई ऐसा भौतिक पदार्थ नहीं है जिसकी इतनी लघु छाया हो, और न कोई ऐसा व्यक्ति है जिसके पास इतनी शक्तियाँ हों और कानून की नज़र में उनका इतना प्रदर्शन हो।"

प्रधान मन्त्री के पद की कुछ कमजोरियाँ—प्रधान मन्त्री का पद बड़ा नाजुक है और इसमें बहुत ही गम्भीर दुर्बलताएँ हैं।

(१) अपनी शक्ति का दुरुपयोग कर प्रधान मन्त्री कहीं राजा न बन बैठे, यह बात अत्यन्त भयकारी है।

(२) उसकी शक्ति उसे तानाशाह बना देती है और वह कभी-कभी केबिनेट को झमेले में डालकर मुसीबतों का सामना कर सकता है।

(३) इसके पास इतनी शक्ति का भण्डार होने के कारण वह अन्य मन्त्रियों की शक्ति को कम कर सकता है, उनके मुँह बन्द कर सकता है और स्वतन्त्र विचारों को समाप्त कर सकता है।

(४) वह क्राउन को भी अपनी उँगली पर नचा सकता है।

यद्यपि यह बात तो माननी ही है कि विवेक और बुद्धि वाले व्यक्ति ही प्रधान मन्त्री बनते हैं, और वे विवेक और बुद्धि से ही कार्य करते हैं। हठधर्मी, महत्वाकांक्षी,

1 Ogg & Zink : op. cit., p. 93.

शक्ति-लोलुप न तो दल के नेता ही बन पाते हैं और न प्रधान मन्त्री ही ; और यदि बन भी गये तो अधिक चल नहीं पाते हैं।

इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री तथा अमेरिका का प्रेसीडेण्ट—

अमेरिका के प्रेसीडेण्ट तथा इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री की बहुधा तुलना की जाती है और वास्तव में दोनों पदों की शक्तियों में बहुत कुछ समानता भी है; परन्तु जैसा कि हम ऊपर कह चुके हैं, इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री का कार्य-क्षेत्र देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि उसकी शक्ति संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रेसीडेण्ट से कहीं अधिक है। दोनों की तुलना करते हुए हमें यह विदित होता है कि—

(अ) दोनों ही प्रजातन्त्र राज्यों में अपने-अपने राज्य में सर्वेसर्वा है।

(ब) दोनों ही राष्ट्र के बड़े-से-बड़े अधिकारी हैं।

(स) दोनों ही जनता के द्वारा चुने जाते हैं। एक अपने दल का नेता होने के नाते प्रधान मन्त्री बन जाता है, और दूसरा जनता के प्रतिनिधियों द्वारा चुनकर प्रेसीडेण्ट बनता है।

(द) दोनों की शक्तियाँ बहुत अधिक हैं और युद्ध तथा अन्य संकटकालीन अवस्थाओं में तो अत्यधिक बढ़ जाती हैं।

दोनों का अन्तर—(अ) प्रधान मन्त्री के पद की अवधि निश्चित नहीं है। पार्लियामेण्ट की अवधि ५ साल की होती है, इसलिये यह मान लिया जाता है कि केबिनेट की अवधि भी ५ ही साल की होगी। परन्तु केबिनेट पार्लियामेण्ट द्वारा या पार्लियामेण्ट केबिनेट द्वारा—जैसी भी परिस्थिति हो और जिसका भी जोर हो—बीच ही में खत्म भी हो सकती है। इसके अलावा एक बात यह भी है कि ५ साल तक पार्लियामेण्ट के चलने के बाद यदि दुबारा चुनाव में भी वही दल बहुमत में आ जाता है जो पहले रह चुका है, तो उसी दल की केबिनेट बनेगी और वही प्रधान मन्त्री बनेगा जो पहले था, क्योंकि वह उस दल का नेता है। इसके विपरीत अमेरिका के प्रेसीडेण्ट का चुनाव केवल ४ वर्ष के लिए होता है, हालाँकि सर्वप्रिय तथा योग्य होने पर वह पुनः चुना जा सकता है।

(ब) प्रेसीडेण्ट की शक्तियाँ विधान द्वारा निश्चित हैं। प्रधान मन्त्री की शक्ति की सीमा नहीं हो सकती।

(स) प्रेसीडेण्ट राष्ट्र का पति है और सबसे बड़ी कार्यपालिका-शक्ति है। इङ्गलैण्ड में औपचारिक कार्यपालिका-शक्ति क्राउन के साथ में है।

(द) यद्यपि प्रधान मन्त्री इङ्गलैण्ड में सर्वेसर्वा है, परन्तु फिर भी वह अपने बराबर वालों में से एक है और उनका मुखिया है। परन्तु प्रेसीडेण्ट एक संगठन का

मालिक है, जिसमें उसके अधीन कर्मचारी हैं परन्तु बराबर का कोई नहीं है।[१]

(य) प्रधान मन्त्री का पद ऐसा है कि वह जैसा चाहे उसके द्वारा अपनी योग्यता से बनाया जा सकता है।[२] अर्थात् दबंग और तीव्र प्रधान मन्त्री ज्यादा शक्ति प्राप्त कर लेते हैं परन्तु प्रेसीडेण्ट की शक्तियाँ साधारण समयों में निश्चित हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give the salient characteristics of the Cabinet Government in England. (*Allahabad, 1943; Calcutta, 1935; Punjab, 1944*)
2. "The Cabinet is the most important single piece of mechanism in the structure of the British Government." Amplify this statement. (*Agra, 1939*)
3. "A Cabinet is a hyphen which joins the legislative part of the State to the executive part of the State." Discuss. (*Punjab, 1936; Culcutta, 1938*)
4. "To-day it is not the House of Commons which controls the Cabinet but the Cabinet which controls the House." Explain and account for the development. (*Agra, 1942, 47, 50 ; Punjab, 1941 ; Patna, 1946*)
5. Write a comprehensive note on the position of the Prime Minister in the British Cabinet. Discuss that the Prime Minister is the key-stone of the cabinet arch. (*Agra, 1940, 43 ; Calcutta, 1939 ; Punjab, 1941*)
6. "The Prime Minister is the key-stone of the cabinet arch." (*Marriot*). Discuss this statement with reference to the working of the cabinet system in England. (*Delhi University, 1952, 1954; Rajputana, 1949, 1953*)
7. Examine the statement that "the cabinet system is the most important single piece of mechanism in the structure of the British Government and the Prime Minister is the key-stone of the cabinet." (*Delhi University, 1951; Rajputana, 1950, 1955*)
8. Discuss the statement that "the British Government makes for firm and effective leadership but it has also tended to develop legislative dictatorship." (*Punjab Suppementary, 1953*)

[१] "He is the master of an organisation in which he has important subordinates but quite certainly no equal".........improbable that any Prime Minister has been so fully the master of his forces, least of all in a coalition government."—*Laski.*

[२] The office of the Prime Minister is "what its holder chooses to make it." (*Lord Oxford & Asquith : Fifty Years of Partiament*)

छठा परिच्छेद

स्थायी सिविल सर्विस

"ब्रिटेन के सार्वजनिक जीवन की यह एक विशेष परिपाटी है कि जनता बिना किसी पारितोषिक व बिना किसी ख्याति की आशा के राज्य की सेवा में अपना ज्ञान अर्पण करने को तैयार रहे।"[1] कार्यपालिका में चाहे कितनी ही शक्ति क्यों न हो और मन्त्री चाहे कितने ही योग्य क्यों न हों, शासन का वास्तविक कार्य सुचारु रूप से तब तक नहीं चल सकता जब तक एक कुशल सिविल सर्विस प्रथा न हो। शासन के प्रत्येक विभाग का अध्यक्ष तो मन्त्री होता है परन्तु मन्त्री तो नीति निर्धारित ही कर सकता है, उसे कार्य-रूप में परिणत करना तथा नई नीति को जनता से मनवाना—यह काम तो अन्य अफसरों का है जो सिविल सर्विस के सदस्य होते हैं। इङ्गलैण्ड में केन्द्रीय शासकीय मशीन में हमें सिविल सर्विस का बहुत बड़ा कार्य दिखाई पड़ता है। अपने-अपने विभाग में कुशलतापूर्वक सरकार की नीति को चलाना उन्हीं का काम है।

स्थायी सिविल सर्विल के कार्य का केन्द्र व्हाइट हाल (White Hall) है। यह स्थायी सिविल सर्विल का सबसे बड़ा दफ्तर है। नं० १०, डाउनिंग स्ट्रीट (10, Downing Street) ब्रिटिश प्रधान मन्त्री का ऑफिस है और वहाँ पर केबिनेट की मीटिङ्ग होती हैं। व्हाइट हाल (White Hall) में प्रशासकीय विभागों के अध्यक्षों के दफ्तर हैं जिनके द्वारा शासन का कार्य चलाया जाता है। मन्त्रिमण्डल बनते हैं तथा बिगड़ते हैं परन्तु व्हाइट हाल के स्थायी सिविल सर्विस के कर्मचारी अपना कार्य शान्तिपूर्वक करते रहते हैं।

शासन के भाग—

इङ्गलैण्ड के शासन को निम्नलिखित भागों में विभाजित किया जाता है:—

(१) गृह-विभाग (Home Affairs) :
- (अ) कोष (Treasury)
- (ब) गृह-दफ्तर (Home Office)
- (स) पोस्ट ऑफिस (Post Office)
- (द) बोर्ड ऑफ ट्रेड (Board of Trade)

---

1 Cf. : Ivor Jennings ; The British Constitution, p. 141.

(य) बोर्ड ऑफ ऐज्यूकेशन (Board of Education)
(फ) स्वास्थ्य विभाग (Ministry of Health)
(ग) मिनिस्ट्री ऑफ एग्रीकल्चर एण्ड फिशरीज़ (Ministry of Agriculture and Fisheries)
(ह) मिनिस्ट्री ऑफ पेंशन्स (Ministry of Pensions)
(इ) ऑफिस ऑफ वर्क्स (Office of Works)
(ज) मिनिस्ट्री ऑफ लेबर (Ministry of Labour)
(क) मिनिस्ट्री ऑफ ट्रान्सपोर्ट (Ministry of Transpot)
(ल) वायु मिनिस्ट्री (Air Ministry)

(२) विदेश विभाग (Foreign Affairs)।

(३) साम्राज्य से अन्य सम्बन्धित विभाग (Empire Affairs) :
(अ) औपनिवेशिक ऑफिस (Colonial Office)
(ब) डोमीनियन ऑफिस (Dominion Office)

(४) रक्षा (Defence) :
(अ) बोर्ड ऑफ एडमिरलटी (Board of Admiralty)
(ब) सेना परिषद् (Army Council)
(स) वायु सेना परिषद् (Air Council)
(द) राजकीय रक्षा-समिति (Committee of Imperial Defence)

(५) कानून (Law) :
(अ) लॉर्ड ऑफ चान्सलर का ऑफिस
(ब) एटोर्नी जनरल तथा सौलिसिटर जनरल का ऑफिस (Office of the Attorney General and Solicitor General)

विभागों के रूप :

यह कहा जा चुका है कि शासन का वास्तविक कार्य करने वाली मशीन मन्त्री के अलावा कोई और ही है। शासन को सुविधा के लिये विभिन्न भागों में बाँट दिया जाता है। प्रत्येक का सर्वोच्च अधिकारी एक मन्त्री या एक बोर्ड होता है। जिन विभागों में बोर्ड हैं उनमें एक सदस्य उसका चेअरमैन या प्रधान होता है। विभागीय अध्यक्ष प्रधान मन्त्री द्वारा अपने दल में से चुना जाता है और वह अपने पद पर तभी तक स्थित रहता है जब तक उसकी पार्टी की केबिनेट रहती है। ऐसे लोगों का पार्लियामेण्ट के विषय में तो बहुत ज्ञान रहता है, परन्तु अपने विभाग की कार्य-वाही के विषय में नहीं। ये लोग राजनीतिज्ञ अवश्य होते हैं, परन्तु शासन के

वास्तविक कार्य में प्रायः अनभिज्ञ ही रहते हैं। शासन के वास्तविक कार्य के लिए प्रत्येक विभाग में अन्य ही कर्मचारी होते हैं।

विभागीय अध्यक्ष के बाद दूसरा व्यक्ति राजनैतिक उप-सचिव (Under-Secretary) होता है। वह भी राजनैतिक आधार पर ही चुना जाता है और तभी तक रहता है जब तक उसके भाग्य-विधाताओं का मन्त्रिमण्डल रहता है।

उसके बाद एक या कई स्थायी उप-सचिव (Permanent Under Secretaries) होते हैं, जिनकी स्थिति पर राजनैतिक हेर-फेरों का कोई प्रभाव नहीं पड़ता और जो अपने विभाग के कार्यों का गट्ठर एक मन्त्री के बाद अन्य मन्त्री या उप-सचिव को सौंपते जाते हैं व उनकी आज्ञाओं का पालन करवाते रहते हैं।

स्थायी उप-सचिवों के नीचे प्रत्येक विभाग में अनेक सचिव (Secretary), परामर्शदाता, प्रमुख तथा सहायक सचिव तथा बहुत से क्लर्क होते हैं। वे विशेषज्ञ होते हैं और स्थायी सिविल सर्विस के सदस्य होते हैं।

कभी-कभी ये लोग शासन का पूर्ण कार्य करते हैं क्योंकि राजनैतिक सचिव व अध्यक्ष शासकीय मामलों में प्रायः अल्प-अनुभव वाले होते हैं। उनका शासन सम्बन्धी मामलों में विशेष प्रभाव होता है। मन्त्री उनकी सलाह मानता है और अगर नहीं भी मानता है तो उसे उन्हीं की सूचना पर भरोसा करना पड़ता है। प्रायः ये लोग अपने अध्यक्ष के, चाहे वह किसी भी दल का क्यों न हो, स्वामिभक्त होते हैं। विवेकशील मन्त्री या अध्यक्ष को यह उचित है कि उनकी सलाह व परामर्श का आदर करे तथा उनका पूर्ण सहयोग प्राप्त करे, नहीं तो वे उसकी नीति को कुशलता तथा सफलतापूर्वक चलाए जाने में काफी रोड़ा अटका सकते हैं।

सिविल सर्विस के सदस्यों की भर्ती :

सिविल सर्विस के सदस्य क्राउन के द्वारा नियुक्त किये जाते हैं और उनको राज्य-कोष से वेतन प्राप्त होता है। राज्य के उपरोक्त विभिन्न विभागों के सभी स्थायी कर्मचारी, जिनका उल्लेख हो चुका है, सिविल सर्विस के सदस्य होते हैं। पहले इन सदस्यों को उनके बहुमत-दल का पक्ष लेने के कारण चुना जाता था, परन्तु सन् १८५५ में उनकी योग्यता की जाँच के लिए परीक्षा की प्रथा चालू की गई। सन् १६१० में एक परिषद्-आदेश (Order-in-Council) के अनुसार प्रतियोगिता परीक्षाएँ (Competitive Examinations) प्रारम्भ हुईं, हालाँकि किसी-किसी उच्च पद पर सीधी नियुक्तियाँ (Direct appointment) भी होती हैं।

सिविल सर्विस के सदस्यों को संसद का सदस्य होना आवश्यक नहीं है, और सन् १६३७ में यह बात निश्चित भी हो गई है कि उनके राजनैतिक विचार उनके

व्यक्तिगत मामले हैं और वे चाहें जैसे राजनैतिक विचार रख सकते हैं, बशर्ते कि उनके वे विचार उनके कार्यों पर उलटा असर नहीं डालते हैं और राज्य के लिए खतरा पैदा नहीं कर देते हैं।

सिविल सर्विस की शर्तें भी अच्छी हैं। यदि ये लोग ईमानदारी तथा कुशलता से अपना कार्य करते हैं तो उनकी पदोन्नति भी होती रहती है और साठ साल की उम्र तक कार्य करने के बाद पेंशन भी मिल जाती है। वे लोग अपना संघ (Civil Service Association) भी बना सकते हैं, बशर्ते कि इन संघों का कोई राजनैतिक उद्देश्य या सम्बन्ध न हो।

इसकी सदस्यता के लिये निम्नलिखित बातें आवश्यक हैं:—

(१) वह व्यक्ति जो इसकी सदस्यता के लिए उम्मीदवार है, ब्रिटेन का जन्म से नागरिक हो। उसका पिता भी जन्म से ब्रिटेन का नागरिक हो।

(२) उसकी आयु सिविल सर्विस के लिए निर्धारित आयु-सीमा के ही अन्दर आती हो।

(३) उसमें कोई शारीरिक विरूपता न हो जो उसके कार्य में बाधा डाले।

(४) उसने उस परीक्षा में बैठने के लिए निर्धारित शिक्षा प्राप्त की हो।

सिविल सर्विस के सदस्यों के प्रकार :

इङ्गलैंड में सिविल सर्विस के सदस्य तीन प्रकार के हैं:—

(१) शासकीय विभाग (Administrative class)।

(२) कार्यपालिका विभाग (Executive class)।

(३) क्लर्क विभाग (Clerical class)।

प्रथम विभाग में एक अध्यक्ष या सेक्रेटरी होता है। यह संसदीय उप-सचिव के नीचे होता है और इसकी विशेष रूप से नियुक्ति होती है। इसे सबसे अधिक वेतन मिलता है। इसके नीचे उप-सेक्रेटरी, प्रिंसिपल या प्रधान, डिप्टी सेक्रेटरी आदि होते हैं जो उस विभाग के विभिन्न कार्यों को सम्हालते हैं, उनकी जिम्मेदारी रखते हैं और उनके विभिन्न कार्यों का सम्बन्ध स्थापित रखते हैं। इस विभाग के लिये जो सदस्य चुने जाते हैं वे किसी विश्वविद्यालय से डिग्री प्राप्त किये होते हैं और वे ही प्रतियोगिता-परीक्षा में सम्मिलित हो सकते हैं।

दूसरे विभाग की प्रतियोगिता-परीक्षाओं में हाईस्कूल पास उम्मीदवार भी बैठ सकते हैं। इनका कार्य एक दिनचर्या (routine) के रूप में है, और ये उच्च अधिकारियों से प्राप्त आदेशों का पालन करते और उनके सम्बन्ध में अधिकारियों को रिपोर्ट तथा सूचनाएं देते हैं।

क्लर्कीय विभाग द्वितीय विभाग के आधीन होता है। इसके लिए भी परीक्षा होती है। इसका कार्य तो बिलकुल ही एक निश्चित दिनचर्या के रूप में है।

सिविल सर्विस का कार्य : (Functions of Amateurs & Experts)

जैसा कि हम पहले कह चुके हैं कि विभाग सम्बन्धी नीति का निर्धारित करना तो उस विभाग के मन्त्री या बोर्ड का काम है, परन्तु उस नीति पर अमल करवाना सिविल सर्विस के सदस्यों का कार्य है। सिविल सर्विस के सदस्य अपने-अपने विभागीय कार्य में जितनी क्षमता रखते हैं उतनी प्रायः उसके अध्यक्ष नहीं। अध्यक्ष व मन्त्री तो बदलते रहते हैं परन्तु सिविल सर्विस के सदस्य स्थायी होते हैं। वे पिछले कार्य को पूर्ण रूप से समझते हैं, उसकी कमजोरी को भी जानते हैं और उसके आधार पर उनको दूर करने तथा अपने विभाग में सुधार करने आदि की सलाह नए-नए मन्त्रियों को देते हैं जिन्हें शासन-कार्य में अनुभव नहीं होता।

सिविल सर्विस के विषय में नियुक्त किए गए रॉयल कमीशन की उसके तथा मन्त्रियों के सम्बन्ध के बारे में नीचे लिखी हुई टिप्पणी है, जो संक्षेप में है—

"नीति का निर्धारण करना तो मन्त्री का कार्य है। एक बार नीति निर्धारित होने के उपरान्त सिविल सर्विस के सदस्य का यह काम है कि उसे कार्य-रूप में परिणत करे, चाहे वह उससे सहमत हो या न हो। साथ ही उनका यह कर्त्तव्य है कि अपने राजनैतिक प्रधान के सामने अपना अनुभव तथा सूचनाएँ पेश करें और चाहे मन्त्री राजी हो या न हो वे पक्षपात व भय से रहित हों। प्रासंगिक तथ्यों (References) को मन्त्रियों से सामने सावधानी से रक्खें और उनका अर्थ तथा निष्कर्ष निकालने में विवेक से काम लें। सिविल सर्विस का सदस्य मन्त्री को मन्त्रणा देकर तथा उसके सामने अपने विचार रखकर नीति पर अपना प्रभाव डालता है।"

सिविल सर्विस के सदस्य नीति को कार्य-रूप में परिणत तो करते हैं परन्तु उसके परिणामों का उत्तरदायित्व मन्त्री पर ही होता है। परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिये कि सिविल सर्विस के सदस्य आँख मींचकर मन्त्री द्वारा निर्धारित नीति का अनुसरण करें। अवसर पाने पर तथा समय-समय पर वे मन्त्री को सभी अवस्थाओं से परिचित करायें तथा अपनी बुद्धि और अनुभव के आधार पर सलाह दें। यह उनके लिए ऐच्छिक ही नहीं किन्तु कर्त्तव्य-रूप में है।

मन्त्री भी इस बात को जानकर कि इन लोगों का अनुभव व योग्यता उस विभाग में उससे ज्यादा है, उनकी बातों को ठुकराते नहीं हैं। प्रायः यही होता है कि मन्त्री अपने अधीनस्थ कर्मचारियों के विचारों को स्वीकार कर लेता है और 'नियत स्थान' पर हस्ताक्षर कर देता है। "समूचे केन्द्रीय शासन में स्थायी सिविल सर्विस का प्रभाव एक मुख्य वस्तु है।"[1]

विधान-क्षेत्र में भी सिविल सर्विल का प्रभाव है। वह तीन प्रकार का है:—

1 Ramsay Muir : How Britain is Governed, p. 58.

... the functions and activities

(१) सिविल सर्विस के सदस्य ही जनता के विचारों को इकट्ठा करके उनका संक्षिप्त सार बनाकर संसद के विचारार्थ मन्त्री को देते हैं, और मन्त्री उन्हें संसद में प्रस्तुत करके उनको पास कराता है। इसका श्रेय तो सरकार को ही मिलता है, परन्तु कार्य सिविल सर्विस के सदस्य ही करते हैं। इन विचारों में वे वायदे शामिल होते हैं जो मतदाताओं को चुनाव के समय दिये जाते हैं।

(२) जनता के हित के लिये सुझाव मन्त्री के समक्ष पेश करना तथा उसके द्वारा संसद में उन्हें पास करा लेने का भी अप्रत्यक्ष श्रेय उन्हीं को है। प्रत्यक्ष श्रेय तो मन्त्री को है।

(३) तीसरा कार्य शासन से सम्बन्ध रखता है। संसद के द्वारा मन्त्रियों को अपने-अपने क्षेत्र में आदेश निकालने की परिमित शक्ति दे दी जाती है। आजकल तो इस शक्ति का अत्यधिक प्रयोग होता है, क्योंकि शासन-कार्य प्रत्येक विभाग में बहुत बढ़ गया है। इस शक्ति का वास्तविक प्रयोग सिविल सर्विस के सदस्य ही करते हैं। उन्हीं की सलाह पर मन्त्री आदेश जारी करता है और वे ही उनका पालन करवाते हैं। आधुनिक काल में यदि कृषि, स्वास्थ्य, दीन-सहायता, शिक्षा आदि सम्बन्धी ऐसे आदेशों को इकट्ठा किया जाय तो एक पोथा बन जायगा।

यही हाल वित्त के क्षेत्र में भी है। चान्सलर ऑफ दी एक्सचैकर मनमानी नहीं कर पाता। अगर करे तो सिविल सर्विस के उस विभाग के सदस्य उसे परेशान कर दें। सन् १९२४ में श्रम-दल, सेना के खर्च को कम करना चाहता था परन्तु उसे लेने के देने पड़ गए। बजाय खर्च के घटने के करोड़ों रुपयों का व्यय बढ़ गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सिविल सर्विस के सदस्यों का प्रशासकीय विभाग में बहुत बड़ा हाथ है। वास्तव में शासन का वास्तविक संचालन यही लोग करते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं कि इन लोगों को विवेकशील, पक्षपात-रहित, निर्भय, कार्य-कुशल तथा अनुभवी होना चाहिए। इन्हीं की कार्य-कुशलता पर बहुत कुछ हद तक प्रशासन की कुशलता निर्भर है।

नौसिखिए तथा विशेषज्ञ :

उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट है कि इङ्गलैण्ड में प्रशासन-कार्य दो प्रकार के व्यक्तियों द्वारा होता है—(१) नौसिखिये (Amateurs), और (२) विशेषज्ञ (Experts)। दोनों ही परस्पर सहयोग से कार्य करते हैं और दोनों के सहयोग पर ही कार्य की कुशलता तथा सफलता निर्भर है। प्रत्येक विभाग में प्रधान या अध्यक्ष मन्त्री या बोर्ड होता है। मन्त्री प्रायः नौसिखिये होते हैं क्योंकि वे लोग राजनैतिक प्रपंचों को तो भली-भाँति समझते हैं, परन्तु प्रशासन के वास्तविक कार्य को संचालित करने में प्रायः कम अनुभव रखते हैं। विशेषज्ञ सिविल सर्विस के उच्च अधिकारी होते हैं

(जिनका वर्णन अभी हो चुका है)। वे अपने-अपने विभाग के सभी दाँव-पेचों को भली-भाँति समझते हैं। वे राजनैतिक प्रपंचों से दूर रहते हैं। वे स्थायी पदाधिकारी होते हैं जिन्होंने अपने विभाग की अन्दरूनी बातों को तथा उनके परिणामों को खूब देखा है। वे मन्त्रियों को उचित सलाह देते हैं और उनके द्वारा निर्धारित नीति को कार्य-रूप में परिणत कराते हैं। ब्रिटिश-प्रशासन में इन दोनों प्रकार के अधिकारियों के सुन्दर सहयोग के कारण ही इतनी सफलता दृष्टि-पथ में आती है। इन दोनों के सम्बन्धों के विषय में हम पहले कह चुके हैं।

जैसा कि कहा जा चुका है, स्थायी सिविल सर्विस के सदस्य ही मन्त्रियों को उचित मार्ग पर रखते हैं। विधान में तो उनके लिए नीति-निर्माण में कोई स्थान नहीं है, परन्तु वास्तव में उन्हीं की सलाह पर शासन का कार्य होता है।[1] मन्त्री जो एक विभाग का अध्यक्ष होता है सामान्य नीति को निर्धारित कर देता है जो उस विभाग के अफसरों द्वारा कार्य में लाई जाती है। पार्लियामेण्ट के प्रति उस कार्य की जिम्मेदारी मन्त्री की ही है[2] परन्तु मन्त्री के इंगित पर चलकर कार्य स्थायी सर्विस के विशेषज्ञों द्वारा ही चलाया जाता है। परन्तु मन्त्री तो नौसिखिए होते हैं और विभागों के विशेषज्ञों की बात का पूरा-पूरा आदर करते हैं। मन्त्री तो "सौ में से निन्यानवे मामलों में उनके मत को स्वीकार कर लेता है और बिन्दु-अंकित रेखा (Dotted line) पर अपने हस्ताक्षर कर देता है।"[3]

सिविल सर्विस का महत्व रॉयल कमीशन की रिपोर्ट (पृष्ठ ७०) से स्पष्ट हो जाता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the activities and functions of amateurs and experts in the English Constitution. (*Agra, 1950; Alld., 1942; Nag., 1944*)
2. "Like the King of England the Civil Services can do no wrong." Do you agree with this view ? (*Delhi University, 1949, 52*)
3. "So far as the responsiblity is concerned the Minister is the department." (*Ogg & Zink*) (*Punjab, 1951 ; Calcutta, 1954*)

---

1 "Minister's work is not to work in his work but to get it worked." (*Bagehot*)

2 "It (Civil Service) maintains the government as a going concern. It corrects the risks of popular election by subduing its results to a medium where ascertainable knowledge is the protective envelope of action. It oils the machinery of politics by relating the popular will. Its authority is that of influence and not of power. It indicates consequences, it does not impose commands." (*Laski : op. cit., pp. 312-13*)

3 "At the end, however, there lies before him a definite statement of practicable alternatives, with the arguments for and against each of them. He can see the files, if he wishes, but generally there is no need, because the combined wisdom of the department has brought the question down to an issue when commonsense and political *savoir faire* are the qualities required." (*W. Ivor Jennings : op. cit., p. 129*)

सातवाँ परिच्छेद

लोकसभा

आधुनिक प्रजातन्त्र युग में लोकसभाओं के प्रमुख कार्य :

आधुनिक प्रजातन्त्र युग में लोकसभा के विविध कार्य हैं। प्रत्येक देश की शासन-पद्धति में कुछ न कुछ अपनी-अपनी अलग-अलग विशेषताएँ होती हैं और इसीलिये विभिन्न देशों की लोकसभाओं के कार्य तथा अधिकार-क्षेत्रों में थोड़ा-बहुत अन्तर होता है। उदाहरणार्थ, हमें आज के युग में दो प्रकार की सरकारें विशेष रूप से दिखाई देती हैं—(१) संसदीय (Parliamentary), और (२) अध्यक्षात्मक (Presidential)। जिन देशों में संसदीय सरकार है उनमें विधान-सभा का बहुत अधिकार है और वह कार्यपालिका पर पूरी शक्ति से नियन्त्रण रखती है। जहाँ प्रेसीडेण्ट देश की सरकार का अध्यक्ष है वहाँ उनका इतना नियन्त्रण नहीं होता। अमेरिका में विधान-सभा यह निश्चित करती है कि प्रेसीडेण्ट का चुनाव वैध है। स्विट्जरलैण्ड में विधान-सभा फैडरल कौंसिल के सदस्यों को चुनती है और प्रेसीडेण्ट चुनती है। फ्रान्स का प्रेसीडेण्ट पार्लियामेण्ट द्वारा चुना जाता है। विधान-सभाएँ कभी-कभी विधान में भी परिवर्तन कर देती हैं और कर सकती हैं। सारांश यह है कि भिन्न-भिन्न देशों में इनके भिन्न-भिन्न कार्य हैं जिन्हें सीमित समय या स्थान में नहीं लिखा जा सकता। जहाँ पर केबिनेट प्रणाली है वहाँ उनके कार्य बहुत कुछ एक दूसरे से मिलते-जुलते हैं। वे निम्नलिखित हैं:—

(अ) विधि-निर्माण।

(ब) वित्त पर नियन्त्रण।

(स) कार्यपालिका पर नियन्त्रण।

(द) जनता के कल्याण का ध्यान रखकर विधि-निर्माण करना।

(य) जनता की शिकायतों को दूर करने का प्रयत्न करना।

(फ) सभा में प्रस्तावित हुए विधेयकों अथवा प्रस्तावों पर गम्भीरतापूर्वक विचार करना तथा वाद-विवाद करना।

प्रायः संसार की सभी विधान-सभाओं को ये अधिकार थोड़ी-बहुत मात्रा में प्राप्त हैं। ब्रिटिश विधान-सभा को तो ये अत्यधिक मात्रा में प्राप्त हैं।

ब्रिटिश विधान-सभा—लोकसभा :

एक समय था जब ब्रिटिश पार्लियामेण्ट के कार्य-क्षेत्र को थोड़े से ही शब्दों में

बतलाया जा सकता था, जब इसका गठन बिलकुल सरल और सहज था। परन्तु कालान्तर में इसके कार्यों की वृद्धि हुई, धीरे-धीरे नई-नई प्रणालियों ने इसमें प्रवेश किया और इसे एक बहुत ही जटिल और पेचीदी संस्था बना दिया। आधुनिक काल में ब्रिटिश पार्लियामेण्ट क्या नहीं कर सकती है, यह बताना कठिन है। यह कानून बनाती है, टैक्स लगाती है, वित्त उगाहती है और खर्च करती है, मन्त्रियों के कार्यों की आलोचना करती है, जनता की शिकायतें दूर करती है, विधान में आवश्यकता पड़ने पर संशोधन करती है तथा कभी-कभी उत्तराधिकार तक का निर्णय करती है।[1]

ब्रिटिश पार्लियामेण्ट संसार की सबसे पुरातन पार्लियामेण्ट है और इसका इतना ऊँचा आदर्श है तथा इतनी शक्ति है, साथ ही साथ इसकी अन्य देशों की संसदों को इतनी देन है कि इसे संसदों की जननी (Mother of Parliaments) कहा जाता है। कुछ समय पहले तो यह संसार की जनसंख्या के लगभग चतुर्थांश के लिए कानून बनाती थी।

ब्रिटिश संसद के दो भाग हैं—लोकसभा तथा लॉर्डसभा। सन् १९११ के संसदीय अधिनियम के पारित होने के बाद लॉर्डसभा का महत्व बहुत कम हो गया है। आजकल शासन-विधान में लोकसभा के अधिकार बहुत हैं। उसके द्वारा पारित नियमों पर अन्त में लॉर्डसभा को भी झुकना पड़ता है। उसी में से प्रधान मन्त्री चुना जाता है। मन्त्रिगण अधिकतर उसी में से लिये जाते हैं। वही कार्यपालिका तथा वित्त पर पूर्ण अधिकार व नियन्त्रण रखती है। राजा को उसके द्वारा पारित नियमों पर हस्ताक्षर करने ही पड़ते हैं। वास्तव में जब हम कहते हैं कि ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की शक्ति इतनी है, उतनी है, तो हमारा तात्पर्य लोकसभा की ही शक्ति से होता है। ब्रिटिश लोकसभा का महत्व बतलाते हुए सर सिडनी लो (Sir Sydney Low) कहते हैं—

"लोकसभा संसार में सबसे ज्यादा महत्वपूर्ण सार्वजनिक सभा है। उसकी आदरणीय प्राचीनता, उसका स्फूर्ति देने वाला इतिहास, उसकी महती परम्परा, उसकी

1 "Parliament is, indeed, a vast, vibrant machine which enacts statutes, levies taxes, appropriates money, interrogates ministers, and passes judgment on policy, underrules of procedure almost as precise, and sometimes nearly as rigid, as the laws governing the succession of the seasons." (*Ogg & Zink : op. cit., p. 236*)

"It (Parliament) hath sovereign and uncontrollable authority in the making, confirming, enlarging, restraining, abrogating, repealing, reviving and expounding of laws, concerning matters of all possible denominations, ecclesiastical or temporal, civil, military, maritime, or criminal, this being the place where that absolute despotic power, which must in all governments reside somewhere, is entrusted by the constitution of these kingdoms."—*Blackstone's Commentaries.*

नवयुवक जैसी शक्ति और भावना, उसका संसदों के लिए आदर्श तथा उन पर उसका प्रभाव, ब्रिटिश राष्ट्रीय जीवन से उसका अभिन्न सम्बन्ध, केन्द्रीय शासन-यन्त्र के चलाने में उसका हाथ —ये सब बातें उसे एक ऐसी संस्था बनाती हैं कि जिसके मुकाबिले की दूसरी संस्था नहीं है। लोकसभा राजपद तथा केबिनेट से भी अधिक मात्रा में अँग्रेजों का ही नहीं विदेशियों का भी अपनी ओर ध्यान आकर्षित करती है। उसके वाद-विवाद इङ्गलिश चैनेल तथा समुद्रों को पार करके दूसरे देशों में पढ़े जाते हैं। ऐसी विधान-सभा में स्थान पाना तथा उसके नेताओं व विश्वसनीय परामर्शदाताओं तथा लोकप्रिय वक्ताओं में गिना जाना एक व्यक्ति के लिए अपने समय के अग्रगण्य व्यक्तियों में गिना जाना है।"[1]

ब्रिटिश लोकसभा की बनावट :

ब्रिटिश लोकसभा में ग्रेट ब्रिटेन (इङ्गलैण्ड तथा स्कॉटलैण्ड) तथा उत्तरी आयरलैण्ड के प्रतिनिधि शामिल हैं। सदस्यों की संख्या घटती-बढ़ती रही है, परन्तु सन् १९४८ में जन-प्रतिनिधित्व अधिनियम (Representation of Peoples' Act) के अनुसार यह निश्चित कर दिया गया है कि लोकसभा के सदस्यों की संख्या ग्रेट ब्रिटेन के लिए कम से कम ६१३ हो। इनके अलावा १२ सदस्य उत्तरी आयरलैण्ड के हों। ६१३ सदस्यों में कम से कम ७१ सदस्य स्कॉटलैण्ड के और कम से कम ३५ वेल्स के हों। अत: फरवरी सन् १९५० में जो सभा बनी थी उसमें ६२५ (६१३ + १२) सदस्य थे।

लोकसभा पूर्ण रूप से एक निर्वाचित सभा है। उसके ६२५ सदस्यों में से प्रत्येक प्रादेशिक निर्वाचन-क्षेत्रों (Territorial Constituencies) से वयस्क मताधिकार (Adult Franchise) के आधार पर चुना जाता है। पहले विश्वविद्यालय प्रतिनिधित्व व्यवस्था के कारण दुहरे मतदान की भी प्रथा थी परन्तु वह अब समाप्त कर दी गई है और एक-मतीय आधार पर ही सदस्य चुने जाते हैं और अब 'एक व्यक्ति, एक मत' का सिद्धान्त चालू हो गया है। आजकल इङ्गलैण्ड की जनसंख्या के लगभग ३० प्रतिशत भाग को मतदान देने का अधिकार है। सन् १९५०

1 ब्रिटिश पार्लियामेण्टरी शक्ति व महत्व के विषय में जे० ए० आर० मेरिएट (J.A.R. Marriot) ने कहा था कि "From whatever point of view it be regarded, the English Legislature is the most interesting and the most important in the world. In point of antiquity incomparable, in jurisdiction the most extensive, and in power unlimited. Competent and at all times called upon to legislate for one-fourth of the human race, Parliament—or more technically the King-in-Parliament—recognizes no domestic authority superior to itself. It is, in a word, sovereign in all matters, ecclesiastical as well as temporal, within the dominions of the king,"

में मतदाताओं की संख्या ३,४२,६६,४७७ थी। इसमें कुल २,८७,७१,३६२ व्यक्तियों ने वोट डाले।

लोकसभा के उम्मीदवारों की योग्यता व अयोग्यता :

ग्रेट ब्रिटेन में कोई ऐसी विधि नहीं है कि संसद के लिए खड़ा होने वाला व्यक्ति उसी निर्वाचन-क्षेत्र का निवासी हो जिससे वह खड़ा हुआ है। वह किसी भी निर्वाचन-क्षेत्र से खड़ा हो सकता है, बशर्ते कि उसका नाम किसी भी क्षेत्र की निर्वाचन-सूची में है। उम्मीदवार के लिये कोई विशेष योग्यता लिखित नहीं है। केवल वह ब्रिटिश प्रजाजन हो व उसकी आयु नियमानुकूल हो तथा वह निष्ठा की शपथ (Oath of allegiance) के लिये तैयार हो। निम्नलिखित संसद के सदस्य नहीं हो सकते:—

(१) इङ्गलैण्ड और स्कॉटलैण्ड के पीयर तथा आयरलैंड से निर्वाचित पीयर। (जो आयरलैण्ड से निर्वाचित नहीं हैं वे खड़े हो सकते हैं)।

(२) जो नागरिक बालिग़ नहीं हैं।

(३) विदेशी, पागल, दिवालिया, अपराधी।

(४) वे लोग जो सात साल तक के लिए अपराध के अभियोग में अयोग्य घोषित कर दिए गये हैं। सात साल बाद वे पुन: चुनाव लड़ सकते हैं।

(५) एँग्लीकन, स्कॉटिश तथा रोमन चर्च—तीनों के पादरी।

(६) वे लोग जो सरकार से ठेके पाए हुए हैं और मुनाफा करते हैं।

(७) क्राउन के उच्चाधिकारी, न्यायाधीश तथा सिविल सर्विस के सदस्य।

(८) क्राउन से पेंशन पाने वाले व्यक्ति। इनमें से कुछ विशेष परिस्थितियों में खड़े भी हो सकते हैं।

लोकसभा में स्त्रियाँ भी सदस्य हो सकती हैं। इस समय कुछ स्त्रियाँ लोकसभा की सदस्य हैं।

लोकसभा की अवधि :

सन् १९११ से पूर्व लोकसभा की अवधि सात साल थी, परन्तु सन् १९११ के एक्ट ने घटाकर ५ साल कर दी है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं कि लोकसभा ५ साल तक ही चले। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, केबिनेट से मतभेद होने पर या अन्य किसी सङ्कटापन्न अवस्था के उदित होने पर, जिसके लिए नए चुनाव की आवश्यकता हो, प्रधान मन्त्री लोकसभा को अवधि से पूर्व ही भङ्ग करवा सकता है। पिछले १५० वर्षों में सिवाय एक पार्लियामेण्ट (१८६७-७३) के कोई भी पार्लियामेण्ट पूर्ण अवधि तक नहीं चल पाई। सन् १९१० में ही दो बार चुनाव हो गए तथा १९२२, २३, २४ में हर साल होते रहे। कभी-कभी आपत्ति के समय चुनाव टाले भी जा सकते हैं। प्रथम महायुद्ध के कारण सन् १९१० के बाद सन् १९१८

में चुनाव हुए। इसी प्रकार सन् १९३५ में चुनाव होने के ४ साल बाद ही द्वितीय महायुद्ध छिड़ गया, अतः चुनाव टाल दिये गए और फिर सन् १९४५ में हुए।

लोकसभा का गठन :

नई पार्लियामेण्ट चुनाव के लगभग दो सप्ताह के भीतर ही बुला ली जाती है। जब पहली बार पार्लियामेण्ट बुलाई जाती है तो लॉर्डसभा का एक सन्देश-वाहक जिसे 'जैण्टिलमैन अशर ऑफ दी ब्लैक रॉड" (Gentleman Usher of the black rod) कहते हैं, सब सदस्यों को सदन में जाने के लिए बुलाता है। वहाँ पर लॉर्ड चान्सलर उन्हें अपना अध्यक्ष (Speaker) चुनने के लिए कहता है। अध्यक्ष के अलावा सदन में अन्य पदाधिकारी भी चुने जाते हैं। इनमें एक क्लर्क और दो उसके सहायक, सार्जेण्ट-एट-आर्म्स तथा उसके सहायक, तथा एक चैप्लेन होते हैं। क्लर्क, सार्जेण्ट-एट-आर्म्स तथा उसके सहायक प्रधान मन्त्री की सलाह पर राजा द्वारा नियुक्त किए जाते हैं, और चैप्लेन अध्यक्ष (Speaker) द्वारा नियुक्त होता है। ये सब पदाधिकारी जीवन भर के लिए होते हैं और अध्यक्ष के समान संसद की कालावधि तक नहीं होते। संसद में दो और पदाधिकारी होते हैं—एक सम्पूर्ण सदन की समिति (House of Commons as a Committee) का सभापति तथा एक उप-सभापति। ये अपने समर्थकों में से सरकार द्वारा चुने जाते हैं और सरकार के पदच्युत हो जाने पर अपने-अपने पदों से त्यागपत्र दे देते हैं।

सदन के क्लर्क के कई काम हैं। वह सदन की आज्ञाओं पर हस्ताक्षर करता है, लॉर्डसभा से आए हुए तथा लॉर्डसभा को भेजे जाने वाले बिलों को पृष्ठांकित (endorse) करता है, सदन की कार्यवाही का लेखा रखता है, सरकारी पत्रिका (Official Journal) को अध्यक्ष की सहायता से तैयार करवाता है और सार्जेण्ट-एट-आर्म्स सदन को आन-बान व शान के साथ रखता है और सदन की अब आज्ञाओं को लागू करवाता है। वह द्वारपाल तथा सन्देश-वाहकों को निर्देश देता है और सदन के अधिपत्रों (Warrants) पर अमल कराता है।

सदन के अध्यक्ष का पद :

यह बात ठीक-ठीक नहीं कही जा सकती कि इस पद का आरम्भ कब से हुआ परन्तु इतना कहा जा सकता है कि सन् १३७६ ई० में सर थॉमस ह्यू ज़र फोर्ड प्रथम अध्यक्ष बने। अध्यक्ष का पद बहुत ही प्रतिष्ठा, मान व शक्ति का होता है। इसका नाम 'स्पीकर' शायद इसलिए पड़ गया कि प्राचीन काल में जब कि स्पीकर राजा के द्वारा नियुक्त किया जाता था, तब उसे सदन और राजा के बीच प्रवक्ता का काम करना पड़ता था (स्मरण रहे कि आजकल यह काम प्रधान मन्त्री ही करता है), इसलिए वह स्पीकर कहलाया।

अध्यक्ष का चुनाव—स्पीकर राजा के द्वारा नियुक्त नहीं किया जाता, लोकसभा ही उसे चुन लेती है; हालाँकि राजा के द्वारा उसकी स्वीकृति आवश्यक है। परन्तु ये दोनों ही क्रियाएँ—लोकसभा द्वारा निर्वाचन और राजा द्वारा स्वीकृति—औपचारिक हैं। वास्तव में स्पीकर को प्रधान मन्त्री चुनता है। वह ऐसे व्यक्ति को चुनता है जिसमें सब दलों की श्रद्धा हो। इसके दो कारण हैं। प्रथम तो यह कि अध्यक्ष निर्वाचित होने पर अपने को राजनैतिक क्षेत्र से बिलकुल अलग कर लेता है और किसी राजनैतिक दल की बैठक या कार्यवाही में भाग नहीं लेता। दूसरी बात यह कि इङ्गलैण्ड में ऐसी परम्परा चली आई है कि जो पहले स्पीकर था वही फिर भी चुन लिया जाता है। (Once a Speaker, always a Speaker) जो एक बार स्पीकर बन गया वह हमेशा बना रहता है। यह रिवाज वहाँ परम्परा से चली आ रहा है। निर्वाचन-क्षेत्र में भी उसके विरोध में कोई खड़ा नहीं होता।

स्पीकर का पद जैसा कि कहा जा चुका है, बहुत ही आदरणीय है। इस पद के लिए व्यक्ति को अत्यन्त योग्य, चैतन्यशील, विवेकशील, शान्त, सर्वप्रिय, मिष्टभाषी तथा विधि-निर्माण के ढंग से परिचित होना चाहिये। स्पीकर को ५,००० पौण्ड सालाना वेतन मिलता है, तथा रिटायर होने पर ४,००० पौण्ड पेंशन मिलती है और वह पीयर भी बना दिया जाता है।

अध्यक्ष के कार्य तथा कर्त्तव्य—लोकसभा के अध्यक्ष के कार्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हैं। अपने पद पर आसीन होने के नाते उसे निम्नलिखित कार्य करने पड़ते हैं:—

(१) जब सदन का सत्र (session) होता रहता है, तब वह उसका सभापति होता है।

(२) बिना अध्यक्ष की आज्ञा के कोई भी सदस्य भाषण नहीं दे सकता तथा कोई भी व्यक्ति किसी बिल के सम्बन्ध में अपने विचार प्रकट नहीं कर सकता। भाषण, वक्तव्य और प्रश्न सदन की ओर सम्बोधन करके किये जाते हैं।

(३) अध्यक्ष सदन में सार्जेण्ट-एट-आर्म्स की सहायता से अनुशासन रखता है। वही यह निश्चित करता है कि कौन बोलेगा। वह अनुशासन भङ्ग करने वाले सदस्य को रोकता है, और यदि वह अशिष्ट व्यवहार करता है तो उसे सदन से उठ जाने के लिये बाध्य कर सकता है।

(४) वह सदन के नियमों को लागू करता है तथा उनकी व्याख्या करता है। अगर किसी विषय पर मतदान होता है तो वही मत लेता है और उसके नतीजे की घोषणा भी वही करता है।

(५) वह संसदीय क्रिया के सब दाँव-पेंच जानता है और यह निश्चित करता

है कि अमुक बिल धन-विधेयक (Money Bill) है या नहीं है। यह अधिकार उसे सन् १९११ के संसदीय अधिनियम से प्राप्त हुआ है।

(६) वह लॉर्डसभा तथा राजा से बात करने के लिये लोकसभा का प्रमुख वक्ता है।

(७) वह कभी-कभी बड़ी २ कान्फ्रेंसों तथा कमीशनों के सदस्यों की भी नियुक्ति करता है।

(८) जब किसी प्रश्न पर लोकसभा में बराबर-बराबर वोट आते हैं, तब उसे अपना वोट किसी पक्ष में देने का अधिकार है। ऐसे वोट को कास्टिङ्ग वोट (Casting vote) कहते हैं। परन्तु कास्टिङ्ग वोट देने की प्रथा यह है कि यदि किसी प्रस्ताव के द्वारा लोकसभा की विचार-अवधि हटाने (adjourn) का निश्चय है तो वह 'न' करेगा और यदि विचार-अवधि बढ़ाने का प्रस्ताव है तो वह 'हाँ' करेगा।

(९) वह सरकारी सदस्यों तथा विरोधी दल के सदस्यों के मुकाबिले में व्यक्तिगत सदस्यों (Private members) के हितों की रक्षा करता है।

(१०) वह समस्त उत्सवों पर लोकसभा का प्रतिनिधि होता है।

उसके नकारात्मक कर्त्तव्य निम्नलिखित हैं:—

(१) वह व्यक्तिगत सहानुभूति तथा दलीय गठबन्धन से बिल्कुल अलग रहता है।

(२) वह कभी वाद-विवाद में भाग नहीं लेता, चाहे लोकसभा कमेटी के रूप में भी बैठी हो।

(३) वह बराबर-बराबर वोट आने पर ही अपना मत देता है और इस प्रकार देता है कि जिससे प्रश्न पर विचार अधिक हो जाय।

(४) दलों की सभाएँ, उनके समाचार-पत्र, उनके दाँव-पेंच तथा गठबन्धन आदि से उसे कोई सरोकार नहीं रहता। निर्वाचित होने के बाद वह अपनी दलीय भावना को उठाकर अलग रख देता है।

लोकसभा का अध्यक्ष वास्तव में एक आदर्श अध्यक्ष होता है। सदन को उसमें पूर्ण विश्वास होता है और इसलिए जो कुछ वह करता है वह सब को मान्य होता है। शायद ही कोई ऐसा अवसर आता हो जब वह गलती करता हुआ पाया जाता है।[1]

---

1 "The chair, like the Pope," said Speaker Lowther once humorously, "is infallible."
"The great thing, Mr. Speaker about the office which you now hold," said a Clydeside rebel James Maxton, as he addressed the newly elected Speaker Brown, "is the fact that the man who occupies your position sits there not maintained by the force of bayonets, with no powerful bodyguards, no powerful statutes. The man who occupies that position occupies it because he has the confidence and respect of his fellow-members."

इङ्गलैण्ड और अमेरिका के अध्यक्षों की तुलना :

अमेरिका और इङ्गलैण्ड के अध्यक्षों की तुलना करते समय हमें निम्नलिखित अन्तर स्पष्ट मालूम पड़ते हैं :—

(१) अमेरिका में हाउस ऑफ रिप्रेजेण्टेटिव (House of Representatives) का अध्यक्ष स्पष्ट रूप में एक दल का व्यक्ति होता है (अर्थात् बहुमत दल का व्यक्ति होता है)। इङ्गलैण्ड में निर्वाचित होने के बाद अध्यक्ष अपनी दलीय भावना को फेंक देता है और वह बिल्कुल निष्पक्ष रहता है तथा किसी दलबन्दी के चक्कर में नहीं पड़ता। अमेरिका में स्पीकर अपने दल का पूर्ण समर्थन करता है। इसीलिए इङ्गलैण्ड का अध्यक्ष अधिक सम्मान का पात्र है।

(२) इसी से यह भी निष्कर्ष निकलता है कि इङ्गलैण्ड में अध्यक्ष दल के आधार पर नहीं चुना जाता, वरन् वह अपनी योग्यता के आधार पर चुना जाता है। अमेरिका में वह दल के आधार पर चुना जाता है।

(३) अमेरिका में स्पीकर के विरोध में चुनाव लड़ा जाता है, इङ्गलैण्ड में नहीं। इसका कारण भी दलीय आधार ही है।

(४) इङ्गलैण्ड में सन् १९११ के संसदीय अधिनियम के अनुसार यह निश्चित हो गया है कि स्पीकर यह तै करेगा कि अमुक बिल धन-विधेयक है अथवा नहीं। अमेरिका में स्पीकर को यह अधिकार नहीं है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि अमेरिका में स्पीकर को इतना सम्मान प्राप्त नहीं है जितना इङ्गलैण्ड में है; हालाँकि ऐसी रिवाजें प्रारम्भ हो गई हैं, जिनसे अमेरिका का स्पीकर भी उसी सम्मान का पात्र हो जाय जो इङ्गलैण्ड के स्पीकर को प्राप्त है।

लोकसभा के कार्य :

लोकसभा के कार्यों को हम चार भागों में बाँट सकते हैं। वे निम्नलिखित हैं:—

(१) **विधि-निर्माण**—लोकसभा में विधि-निर्माण कैसे होता है, इसका विस्तृत वर्णन नवें परिच्छेद में होगा। यहाँ पर यही कह देना आवश्यक है कि लोकसभा का प्रमुख कार्य विधि-निर्माण है। ब्रिटिश लोकसभा संसार की सब से प्राचीन विधि-निर्मात्री संस्था है। यद्यपि विधि-निर्माण में लॉर्डसभा तथा राजा का भी हाथ है, परन्तु इन दोनों का वास्तविक हाथ नहीं है। ये सिर्फ एक साल तक बिल के पास होने को रोक सकते हैं। सन् १९११ के संसदीय अधिनियम के अनुसार लॉर्डसभा की इस क्षेत्र में शक्ति बहुत सीमित हो गई है, और राजा को भी अपनी सम्मति देनी ही पड़ती है। इसके साथ ही साथ हमें एक बात अवश्य माननी होगी कि विधि-निर्माण में केबिनेट का बहुत हाथ है। वास्तव में देखा जाय तो केबिनेट लोकसभा की सम्मति से विधि-निर्माण करती है। लोकसभा केबिनेट के इशारे पर चलती है।

(२) **वित्त पर नियन्त्रण**—लोकसभा का दूसरा कार्य वित्त पर नियन्त्रण करना है, हालाँकि यहाँ पर भी हम केबिनेट का ही प्रमुख हाथ पाते हैं। वस्तुत: लोकसभा ही असली कार्य-कर्त्री है जो यह पास करती है कि विभिन्न विभागों पर कितना-कितना खर्च किया जाय। वह यह भी निश्चित करती है कि घाटे को कैसे पूरा किया जाय तथा कौन-कौन से नये कर लगाये जायें या पुराने हटाए जायें। (यह सब कुछ होता केबिनेट के सुझाव पर ही है)। धन-विधेयक इसी में पेश होते हैं और यही विभिन्न मद्दों में खर्च की घटा-बढ़ी भी कर सकती है।

इङ्गलैण्ड में लोकसभा को वित्त पर पूर्ण अधिकार है और यह है भी उचित। जनतन्त्र का महत्व तभी है जब जनता के हित के साथ-साथ जनता के प्रतिनिधि ही शासन के अन्य कार्य करते हुए जनता के वित्त पर भी नियन्त्रण रक्खें। इङ्गलैण्ड में यह बात पूर्ण रूप से मानी जाती है। लोकसभा निम्न तरीकों से वित्त पर नियन्त्रण रखती है :—

(अ) धन-विधेयक लोकसभा में ही पेश किये जाते हैं और ऐसे विधेयकों पर सम्पूर्ण सभा की समिति द्वारा ही विचार किये जाते हैं। सम्पूर्ण सभा की समिति ही यह निश्चय करती है कि धन का कैसे खर्च हो। उसी के द्वारा बजट पास किया जाता है।

(ब) बिना संसद की स्वीकृति के कोई भी नया कर नहीं लगाया जा सकता।

(स) खर्च की मद्दों में घटा-बढ़ी भी संसद ही करती है।

(द) एकत्रित कोष (Consolidated fund) में से कोई भी खर्च नहीं कर सकता जब तक कि कण्ट्रोलर-जनरल की स्वीकृति न मिल जाय। यह अधिकारी संसद द्वारा ही नियुक्त किया जाता है।

(य) संसद इस बात का पूर्ण ध्यान रखती है कि खर्च उसी प्रकार हो रहा है, जैसा कि उसने पास किया है।

(फ) ऑडीटर जनरल इस बात का पूरी-पूरी जाँच करता है कि खर्च में कोई गड़बड़ तो नहीं है। यदि कोई गड़बड़ पाई जाती है तो वह संसद के समक्ष उचित कार्यवाही के लिये रक्खी जाती है।

वास्तव में संसद का वित्त पर कितना नियन्त्रण है यह उसी दृष्टि से देखा जाय जिससे कार्यपालिका के ऊपर इसके नियन्त्रण को देखा जाता है। अन्य क्षेत्रों के समान यहाँ पर भी केबिनेट का ही प्रभुत्व है। दूसरी बात यह भी है कि चूँकि वित्त सम्बन्धी बिल सम्पूर्ण सदन की कमेटी में विचारार्थ रक्खे जाते हैं इसलिये उन पर पूर्ण विचार नहीं हो सकता। अत: केबिनेट का प्रभुत्व स्थापित होना स्वाभाविक है।

(३) **शासकीय—कार्यपालिका पर नियन्त्रण**—लोकसभा का तीसरा प्रमुख कार्य कार्यपालिका पर नियन्त्रण करना है। लोकसभा ही जनता की ओर से कार्यपालिका के कार्यों की आलोचना करती है और यह देखती है कि शासन जनता के हित में हो रहा है या नहीं। मन्त्रियों की लोकसभा के प्रति अपने कार्यों की पूर्ण जिम्मेदारी है। उन्हें अपने नीति-सम्बन्धी प्रश्नों का लोकसभा में उत्तर देना पड़ता है। यदि अपनी नीति पर वे लोकसभा में हार जायँ या लोकसभा की ओर से उनके प्रति अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दिया जाय, तो उन्हें त्यागपत्र दे देना पड़ता है। लोकसभा की समितियाँ इस बात की सूचक हैं कि लोकसभा मन्त्रियों को मनमानी करने से रोकती है। वित्त पर अधिकार प्राप्त होने के कारण लोकसभा कार्यपालिका को नियन्त्रित रखती है।

(परन्तु वास्तव में ये सब अधिकार औपचारिक रूप में ही प्रयोग में लाये जाते हैं। केबिनेट प्रत्येक क्षेत्र में लोकसभा को अपने अनुकूल चलाती है।)

(४) **जनता की शिकायतों का निवारण**—लोकसभा का चौथा प्रमुख कार्य जनता की शिकायतों को सुनना तथा उन्हें दूर करने का प्रयत्न करना है। लोकसभा एक ऐसा स्थान है जहाँ पर जनता के प्रति किये गये अन्याय व अत्याचार रक्खे जाते हैं और सरकार का उनकी ओर ध्यान आकर्षित किया जाता है। लोकसभा के सदस्य उनके विषय में तत्सम्बन्धित मन्त्रियों से प्रश्न करते हैं और जबाब तलब कर सकते हैं। विविध विभाग सम्बन्धी सूचनाएँ भी प्राप्त की जाती हैं और उनकी वास्तविकता की जाँच की जाती है।

लोकसभा में ही लोगों को राजनैतिक क्षेत्र में अपनी योग्यता प्रदर्शित करने तथा राजनीति की चालों की शिक्षा प्राप्त करने का अवसर प्राप्त होता है। भावी प्रशासक तथा राजनीतिज्ञों को उत्पन्न करने वाली संस्था लोकसभा ही है।

लोकसभा के राजसत्तात्मक अधिकार व उनकी सीमाएँ :

डी होम (De Holmes) ने कहा है कि "पार्लियामेण्ट सब कुछ कर सकती है, केवल मर्द को औरत और औरत को मर्द नहीं बना सकती"। इस कथन का अर्थ यही है कि ब्रिटिश पार्लियामेण्ट एक ऐसी शक्तिशाली संसद है जिसके पास इतनी शक्ति है कि वह स्वाभाविक को अस्वाभाविक और अस्वाभाविक को स्वाभाविक कर सकती है। उसकी शक्ति राजा व लॉर्डसभा से बढ़कर है और वे उसके प्रभुत्व का उल्लंघन नहीं कर सकते।[1]

1 By "Local and Private Act, Parliament can adjudge infant or minor of full age, naturalise an alien and make him a subject born, bastard a child that by law is legitimate or legitimise one that is illegitimate. It can enable heirs of a person to inherit during the life-time of the ancestor, it can absolve a man of treason after death, something which is against all notions of criminal injustice."—*Dicey*.

पार्लियामेण्ट की शक्ति के दो पहलू हैं—(१) सकारात्मक (Positive), और (२) नकारात्मक (Negative)।

पार्लियामेण्ट की शक्ति का सकारात्मक रूप—

(१) पार्लियामेण्ट के नियमों का पालन करना प्रत्येक व्यक्ति का कर्त्तव्य है। पालियामेण्ट को सब विषयों पर—धार्मिक, राजनैतिक, सामुद्रिक, सैनिक—कानून बनाने का अधिकार है।

(२) पार्लियामेण्ट द्वारा बनाए गए सब नियम न्यायालयों की स्वीकृति पायेंगे और उनको भंग करने वाले दण्ड के भागी होंगे।

(३) पालियामेण्ट को उपर्युक्त सब विषयों पर कानून बनाना ही नहीं, बल्कि उनको दुहराना, उनमें संशोधन करना, उनमें काट-छाँट करना, उनको हटाना व उनमें और कुछ मिलाना आदि सब प्रकार का अपरिमित अधिकार है। यहाँ तक कि पालियामेण्ट उत्तराधिकार तक का निर्णय कर सकती है जैसा कि सन् १७०७ में उत्तराधिकार-निर्णय अधिनियम पास करके उसने दिखा दिया।

(४) पार्लियामेण्ट विधान में भी परिवर्तन कर सकती है जैसा कि सन् १७०७ और १८०० में स्कॉटलैण्ड तथा आयरलैण्ड के संयोग अधिनियमों द्वारा क्रमशः हुआ।

(५) पार्लियामेण्ट प्रजा के व्यक्तिगत अधिकारों में भी हस्तक्षेप कर सकती है।

(६) पार्लियामेण्ट अपने लिए भी समयानुकूल नियम बना सकती है जैसा कि सन् १७१८ में उसने किया और सप्तवार्षिक अधिनियम पास कर लिया।

पार्लियामेण्ट की शक्ति का नकारात्मक रूप—

(१) कोई भी व्यक्ति पार्लियामेण्ट द्वारा बनाए गए नियमों का विरोध नहीं कर सकता।

(२) राजा, मतदाता, न्यायाधीश, लॉर्डसभा आदि सब पार्लियामेण्ट के कानूनी क्षेत्र में मातहत हैं। वे सामूहिक अथवा व्यक्तिगत किसी भी रूप में पार्लियामेण्ट का विरोध नहीं कर सकते और न स्वतन्त्र रूप से कोई कानून बना सकते हैं।

पार्लियामेण्ट के अधिकारों की सीमा :

पार्लियामेण्ट की शक्ति की कोई भी सीमा नहीं है, ऐसी बात नहीं है। पार्लियामेण्ट की सत्ता पर निम्नलिखित प्रतिबन्ध हैं :—

(अ) प्राचीन—

पहले राजा को पार्लियामेण्ट के किसी भी कानून को अस्वीकार करने का अधिकार था, परन्तु अब वह अधिकार छिन चुका है।

(ब) कानूनी प्रतिबन्ध—

(१) व्यक्तिगत अथवा सार्वजनिक नैतिकता (morality) के नियमों को पार्लियामेण्ट नहीं बना सकती।

(२) अन्तर्राष्ट्रीय कानून व नैतिकता के विरोध में भी पार्लियामेण्ट कानून नहीं बना सकती।

(३) पिछली पार्लियामेण्ट द्वारा बनाये हुए कानून के विरोध में नई पार्लियामेण्ट कानून नहीं बना सकती। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि आगे आने वाली पार्लियामेण्टों के हाथ हमेशा के लिये बँध जाते हैं।

(४) ऐसा कहा जाता है कि पार्लियामेण्ट राजा के विशेषाधिकारों के खिलाफ कानून नहीं बना सकती। परन्तु इस बात में सत्यता कम ही है, क्योंकि पार्लियामेण्ट ने ही तो राजा के अधिकारों को छीन-छीन कर इतनी शक्ति प्राप्त की है।

वास्तव में, ये सब प्रतिबन्ध दिखावटी हैं। ये कानून में तो हैं, परन्तु वस्तुतः नहीं हैं। वास्तव में पार्लियामेण्ट पर निम्नलिखित प्रतिबन्ध हैं :—

(१) **बाह्य** (External) **प्रतिबन्ध**—यदि पार्लियामेण्ट कोई अन्यायपूर्ण नियम बनाये तो जनता भारी संख्या में विद्रोह कर सकती है।

(२) **आन्तरिक** (Internal) **प्रतिबन्ध**—राजसत्तात्मक शक्ति हमेशा समयानुकूल परिस्थितियों द्वारा नियन्त्रित की जाती है। पार्लियामेण्ट आज ऐसा कोई कार्य नहीं कर सकती जो उसके विरुद्ध हो। उदाहरणार्थ, किसी उपनिवेश पर वह बिना उसकी इच्छा के कर नहीं लगा सकती।

(३) **मतदाता** (Electorate)—यह देश की राजनैतिक राजसत्ता है। पार्लियामेण्ट जनमत से बहुत प्रभावित होती है। बिना उसकी सहायता के कब तक चलेगी ?[1]

(४) **स्वतन्त्र प्रेस** (Free Press)—यह निडर होकर पार्लियामेण्ट के कार्यों की आलोचना कर सकता है और जनता की शिकायतें लोगों तक पहुँचा सकता है।

(५) **केबिनेट** (Cabinet)—आधुनिक युग में पार्लियामेण्ट पर नियन्त्रण रखने वाली केबिनेट है, जिसने राज्य में विधि-निर्माण के समस्त कार्य अपने अधिकार में ले लिये हैं। यह लोकसभा पर भी शासन करती है और उसे बना या बिगाड़ भी सकती है। इसीलिये यह कहा जाता है कि "आज लोकसभा केबिनेट पर नियन्त्रण नहीं रखती, बल्कि केबिनेट लोकसभा पर नियन्त्रण रखती है"।

1 "Members must therefore sniff every breeze that blows, lest it develop into a gale that sweeps away enough votes to lose their seats."
(*W. Ivor Jennings : op. cit., p. 73*)

लोकसभा की समितियाँ :

लोकसभा समय की बचत करने के लिये तथा कुशलतापूर्वक कार्य करने के लिये बिल तथा अन्य प्रस्तावों के विस्तृत विचारार्थ अपनी शक्ति कमेटियों (समितियों) को दे देती है। ब्रिटिश लोकसभा में भी समितियाँ हैं जो इस अभिप्राय को सिद्ध करती हैं। ये समितियाँ पाँच प्रकार की हैं :—

(१) सम्पूर्ण सदन की समिति (The Committee of the Whole House)।

(२) सार्वजनिक विधेयकों पर प्रवर समितियाँ (Select Committees on Public Bills)।

(३) सार्वजनिक विधेयकों पर सत्रीय समितियाँ (Sessional Committees on Public Bills)।

(४) सार्वजनिक विधेयकों पर स्थायी समितियाँ ("Grand" or Standing Committees on Public Bills)।

(५) व्यक्तिगत (असार्वजनिक) विधेयकों पर समितियाँ (Committees on Private Bills)।

(१) **सम्पूर्ण सदन की समिति**—इस समिति में सदन के पूरे सदस्य होते हैं। इसमें और लोकसभा में अन्तर यही है कि (अ) इसका सभापति स्पीकर नहीं होता बल्कि समिति का अध्यक्ष होता है जो स्पीकर की कुर्सी पर भी नहीं बैठता बल्कि टेबिल के पास रक्खी हुई क्लर्क की कुर्सी पर बैठता है। (ब) स्पीकर की शक्ति की प्रतीक गदा (mace) प्रथम बार मेज के नीचे रख दी जाती है। (स) वहाँ पर क्रिया औपचारिक नहीं होती, क्योंकि प्रस्ताव का समर्थन (seconding) करने की आवश्यकता नहीं, और एक सदस्य चाहे जितनी बार बोल सकता है। (द) प्रीविअस क्वेश्चन (previous question) का प्रस्ताव करके वाद-विवाद खत्म नहीं किये जा सकते।

जब समिति का कार्य समाप्त हो जाता है तब सदन का कार्य शुरू होता है। स्पीकर पुनः अपनी कुर्सी पर बैठ जाता है और गदा पुनः मेज पर रख दी जाती है।

इस समिति में प्रायः सभी धन-विधेयक (Money Bills) भेजे जाते हैं। जब यह समिति धन की माँगों पर विचार करती है तब वह 'कमेटी इन सप्लाई' (Committee in Supply or House in Supply) के नाम से पुकारी जाती है, और जब धन के खर्च करने के ढङ्ग पर विचार करती है तब 'कमेटी ऑफ वेज़ एण्ड मीन्स' (Committee of Ways and Means) के नाम से पुकारी जाती है।

अन्य विधेयक विभिन्न समितियों में उनके क्षेत्रानुसार भेजे जाते हैं। सम्पूर्ण सदन की समिति में उनका आना व उन पर ठीक प्रकार विचार किया जाना असम्भव है, क्योंकि न तो उन पर गहन विचार ही हो सकता है और न उसके लिये समय ही दिया जा सकता है। अधिकतर कार्य प्रवर समितियों द्वारा किया जाता है। सम्पूर्ण सदन की समिति के बारे में एक बात और ध्यान देने योग्य यह है कि "यद्यपि इसकी कार्यवाही लोकसभा की कार्यवाही से भिन्न है, परन्तु फिर भी राजनैतिक वातावरण में कोई अन्तर नहीं आता। दलीय अनुशासन प्रत्यक्ष रूप में रहता है। उस विधेयक से सम्बन्धित मन्त्री ही वहाँ अपना प्रभुत्व रखता है और वोट भी दलबन्दी के आधार पर आते हैं। यहाँ पर सरकार का हार जाना बड़ी गम्भीर बात है।"[1]

(२) **सार्वजनिक विधेयकों पर प्रवर समितियाँ**—नियमानुसार प्रवर समितियों के १५ से अधिक सदस्य नहीं होने चाहिये। ये समितियाँ समय-समय पर विशेष मामलों पर विचार करने के लिये बनाई जाती हैं। ये मामलों की छानबीन करती हैं और रिपोर्ट तैयार करती हैं। प्रत्येक समिति अपना अध्यक्ष चुनती है तथा अपनी कार्यवाही का लेखा रखती है, और अपना कार्य समाप्त करने के बाद खत्म हो जाती है।

(३) **सार्वजनिक विधेयकों पर सत्रीय समितियाँ**—ये समितियाँ पूरे सत्र (sossion) के लिए बनाई जाती हैं। इनकी संख्या ८–१० होती है। इनमें सिलेक्शन समिति (Selection Committee), स्थायी आदेशों (Standing Orders) की समिति, सार्वजनिक याचिका (Petition) समिति, सार्वजनिक लेखा (Accounts) समिति प्रमुख हैं।

(४) **सार्वजनिक विधेयकों पर स्थायी समितियाँ**—सत्रीय समितियों से अधिक महत्त्वपूर्ण स्थायी समितियाँ हैं। इसकी संख्या ५ है। ये A, B, C, D, तथा स्कॉटलैण्ड सम्बन्धी मामलों की समिति (Committee on Scottish Affairs) के नाम से पुकारी जाती हैं। प्रत्येक पार्लियामेण्ट के निर्माण के बाद प्रथम अधिवेशन पर ये बना दी जाती हैं और तब तक रहती हैं जब तक उस पार्लियामेण्ट का सत्र खत्म न हो जाय। इनमें प्रत्येक के सदस्यों की संख्या २० है, लेकिन किसी विशेष विधेयक के विचारार्थ इनमें तीस तक और सदस्य नियुक्त किये जा सकते हैं, अतः ५० तक इनके सदस्यों की संख्या हो सकती है। नये सदस्यों की नियुक्ति तत्सम्बन्धी विधेयक के प्रति उनके ज्ञान व अनुभव के आधार पर होती है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा अन्य यूरोपीय देशों में संसदों की जो समितियाँ हैं, उनमें और

1 Ogg & Zink : op. cit., p. 254.

इनमें यह अन्तर है कि प्रथम में तो विशिष्ट विषय सम्बन्धी विधेयकों पर ही विचार होता है, परन्तु इङ्गलैण्ड में ऐसा नहीं है। इसकी दूसरी बात यह है कि इन समितियों में प्रायः सभी शक्तिशाली दलों के सदस्य नियुक्त किये जाते हैं अर्थात् ये दलबन्दी के आधार पर नहीं बनाई जाती हैं। तीसरी बात यह है कि समिति के सदस्यों का स्थान निश्चित करने का कोई सख्त तरीका नहीं है। यहाँ तक कि अध्यक्ष भी लोकसभा के स्पीकर द्वारा १० सदस्यों के पेनल (Panel) द्वारा बना दिया जाता है या कभी-कभी स्पीकर ही चुन देता है।[1]

(५) **व्यक्तिगत (असार्वजनिक) विधेयकों पर समितियाँ**—इस प्रकार की समितियाँ इङ्गलैण्ड में ही पाई जाती हैं। ये अमेरिका व फ्रान्स में नहीं हैं, क्योंकि वहाँ सार्वजनिक व असार्वजनिक (Public and Private) विधेयकों में अन्तर नहीं माना जाता। इङ्गलैण्ड में सार्वजनिक विधेयक वह है जो समस्त जनता से सम्बन्ध रखता हो, जैसे शिक्षा, सैनिक-सेवा, राजस्व, पेंशन आदि सम्बन्धी विधेयक। असार्वजनिक विधेयक वे हैं जो स्थान विशेष या व्यक्ति व दल विशेष अथवा किसी संस्था विशेष से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे किसी काउण्टी कौंसिल को रेलवे लाइन या ट्रामवे की लाइन बढ़ाने का अधिकार देना।

इन समितियों में प्रत्येक में चार-चार सदस्य होते हैं। लॉर्डसभा में भी ऐसी ही समितियाँ होती हैं।

लोकसभा की प्रक्रिया (Rules of Procedure):

यहाँ पर हमें संक्षेप में इस बात पर ध्यान देना है कि लोकसभा की कार्य-प्रक्रिया क्या है और किस प्रकार इसका दिन प्रति दिन का कार्य होता रहता है।

लोकसभा की अवधि सन् १९११ के अधिनियम के द्वारा ५ साल नियुक्त करदी गई है यद्यपि यह तै नहीं किया गया है कि यह पाँच ही साल चलेगी। लोकसभा का सत्र प्रायः फरवरी में प्रारम्भ होता है और अगस्त तक चलता है। शेष महीनों में सदस्य अधिकतर छुट्टी का आनन्द लेते हैं और अपने-अपने निर्वाचन-क्षेत्रों में प्रचार-कार्य (propaganda) करते हैं। राजा प्रधान मन्त्री की सलाह से सत्र के आरम्भ व अवसान की तिथि निश्चित करता है। जब सत्र नवम्बर में प्रारम्भ होता है तब सदस्यों को इतना अवकाश नहीं मिल पाता।

लोकसभा के स्वयं के अपने कार्यक्रम के तरीके हैं, जिन्हें स्थायी आदेश कहा जाता है। स्पीकर को अधिकार है कि वह उनका पालन करवाये। यदि कोई सदस्य

1 आजकल इन समितियों में सुधार करने के लिये बड़ा जोश है। एक तो इनके सदस्यों की संख्या कम कर देने की माँग है और दूसरे सदस्य ज्यादा फुर्ती से काम लें। अमेरिका में ऐसी समितियाँ लगभग ४८ हैं।

उनको भंग करता है तो स्पीकर को अधिकार है कि वह उसको नाम से सम्बोधित करे। सम्पूर्ण सदन की समिति उस पर विचार करती है और उसका दोष पाकर उसे मुअत्तिल कर देती है।

इन स्थायी आदेशों में संसद के कार्य-भार को सुचारु रूप से चलाने के नियम हैं तथा सरकार व विरोधी दल की न्यायसंगत माँगों का समझौता (reconcile) कराने के उपाय हैं। इनके द्वारा यह भी निश्चित कर दिया गया है कि व्यक्तिगत सदस्यों के विधेयक सिर्फ शुक्रवार को पेश किये जायेंगे, तथा प्रत्येक बैठक में सरकारी काम को (मंगलवार व बुधवार को ८-१५ बजे के बाद छोड़कर) सार्वजनिक काम की अपेक्षा अधिक महत्त्व दिया जायगा।

क्लोजर (Closure)—आधुनिक काल में काम बहुत बढ़ जाने के कारण संसद में वाद-विवाद को समाप्त करने की एक युक्ति निकाली गई है जिसे क्लोजर (Closure) कहते हैं। वाद-विवाद के दौरान में कोई भी व्यक्ति खड़ा होकर यह कह सकता है कि "अब इस पर मत ले लिये जायँ"। यदि कम से कम १०० सदस्य इसका समर्थन करें और अध्यक्ष देख ले कि सभा के नियम तथा अल्पसंख्यक सदस्यों के अधिकारों का उल्लंघन नहीं हुआ है, तो वह वाद-विवाद समाप्त करके उस पर मत ले सकता है।

गिलोटिन (Guillotine)—यह तरीका अधिक कठोर है। इसके द्वारा विधेयक के लिये अवधि निश्चित कर दी जाती है। उस दिन और उस समय उस पर मतदान अवश्य होगा, चाहे वाद-विवाद समाप्त हो पावे या नहीं।

विभाजन (Division)—इसके द्वारा किसी कार्य के लिये बिना अधिक विलम्ब के निश्चय पर पहुँचने हेतु अध्यक्ष सदस्य के प्रस्ताव पर (कि मतदान ले लिया जाये) 'हाँ' तथा 'न' का जवाब सदन से लेता है और निश्चय करता है। कभी-कभी यह कार्य बड़ा मुश्किल हो जाता है, तब ऐसी दशा में 'हाँ' वाले दाहिनी तरफ और 'न' वाले बाँयी तरफ एकत्रित होने के लिये आदेश पाते हैं। दो गणक उनको गिनने के लिये नियुक्त किये जाते हैं।

संसद का अर्थ है बातचीत या वाद-विवाद का स्थान। वहाँ पर जो भाषण व वाद-विवाद होते हैं वे संसार भर में पढ़े जाते हैं। ये भाषण या प्रश्न लोकसभा में अध्यक्ष को सम्बोधित करके दिये जाते हैं। एक सदस्य प्रायः एक घण्टे से अधिक नहीं बोलता, यद्यपि इसके लिये कोई निश्चित कालावधि नहीं है। एक ही सदस्य उस प्रश्न पर दो बार नहीं बोल सकता। व्यंग या चुभने वाले शब्दों का भी प्रयोग नहीं किया जा सकता। अध्यक्ष को अधिकार है कि वह वक्तृता सम्बन्धी आदेशों का उल्लङ्घन न होने दे।

लोकसभा के सदस्यों के विशेषाधिकार :

लोकसभा के सदस्यों को प्राचीन काल से ही कुछ विशेषाधिकार प्राप्त हैं, जिनके द्वारा उनके पद की शान व इज्जत कायम रहती है। इनको समाप्त नहीं किया जा सकता। इनको राजा व संसद दोनों की स्वीकृति प्राप्त है। ये निम्नलिखित हैं:—

(१) लोकसभा के किसी भी सदस्य को उसके द्वारा सभा में कही हुई बात पर कोई भी न्यायालय दण्ड नहीं दे सकता। अमुक बात संगत है या असंगत, संसद के नियम के अनुकूल है या प्रतिकूल—इसका निर्णय सभा ही करती है।

(२) लोकसभा के सदस्य सभा के सत्र के प्रारम्भ व समाप्त होने के ४० दिन पहले और बाद में तथा सत्र के मध्य में गिरफ्तार नहीं किए जा सकते; बशर्ते कि वे राजद्रोह, शान्ति-भंग या दुराचार के अपराधी नहीं हैं।

(३) लोकसभा के सदस्य अध्यक्ष के द्वारा क्राउन तक अपनी पहुँच रखते हैं।

(४) लोकसभा के सदस्य अपना विधान स्वयं बनाने का अधिकार रखते हैं। वे ही यह निश्चय करते हैं कि सदस्यों की क्या योग्यता हो और वे किसी भी सदस्य को, जो संसद के नियमों का उल्लंघन करता है, संसद से निकाल सकते हैं।

(५) लोकसभा के सदस्य अजनबी व्यक्ति को संसद से बाहर निकाल सकते हैं।

(६) संसद को अधिकार है कि जो कोई उसके अधिकार या सम्मान को क्षति पहुँचाता है उसे दण्ड दे। वह ऐसे अपराधी को जेल भी भेज सकती है। परन्तु यह अधिकार तभी तक रहता है जब तक संसद का सत्र होता रहता है।

(७) लोकसभा को यह अधिकार है कि वह राजा से इस बात की माँग करे कि वह उसकी व्याख्याओं पर उसके पक्ष में ही विचार करे।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What are the functions of legislatures in democracies? How and to what extent are these performed by the British House of Commons? (*Agra, 1935; Nagpur, 1941*)
2. "Parliament can do every thing but make a woman of a man and a man a woman." Discuss the nature of parliamentary sovereignty in England. What are the limitations on parliamentary sovereignty? (*Agra, 1941; Punj., 1937, 41*)
3. Write a comprehensive note on the functions and powers of the Speaker in the House of Commons. Compare and contrast his powers with those of the Speaker in the House of Representatives (U. S. A.). (*Cal., 1930; Patna, 1934; Punj., 1935; Agra, 1942*)
4. Describe the composition and functions of the British House of Commons. Do you agree with the view that the function of the House of Commons is not to control the government, but to act as a forum of criticism and a forum for public opinion? (*Delhi University, 1949, 1951*)

आठवाँ परिच्छेद

लॉर्डसभा

विषय-प्रवेश :

लॉर्डसभा संसार की सबसे अधिक प्राचीन धारासभा है। लगभग १००० वर्ष से यह राजनैतिक क्षेत्र में काम करती चली आ रही है। करीब १०० वर्ष पहले इसकी शक्ति लोकसभा से कहीं अधिक थी। राज्य की सारी शक्तियाँ इसी के पास थीं, और उनका लॉर्डसभा में केन्द्रित होने का कारण यह था कि इसके सदस्य भूमिपति, जागीरदार, बड़े-बड़े बिशप आदि होते थे जिनका राजतन्त्रात्मक सत्ता में बड़ा प्रभुत्व था। जनतन्त्र के विकास के साथ-साथ उनकी भी शक्ति छिन गई। अब तो लॉर्डसभा एक बहुत कम महत्वशाली सभा रह गई है और सन् १९११ के संसदीय अधिनियम ने तो इसे लोकसभा का बिल्कुल मातहत बना दिया है।[1]

लॉर्डसभा का गठन :

लॉर्डसभा के सदस्यों की संख्या इस समय ७५० है। यह घटती-बढ़ती भी रहती है। सन् १९३९ में यह ७९० थी। दो शताब्दियों पहले यह ३३९ ही थी। इस सभा का अध्यक्ष लॉर्ड चान्सलर होता है जिसे प्रधान मन्त्री चुनता है। लॉर्ड चान्सलर हमेशा केबिनेट का सदस्य रहता है। इसकी तनख्वाह १०,००० पौण्ड वार्षिक है।

लॉर्डसभा की सदस्यता वंशगत आधार पर है। इसके सदस्यों को हम छः वर्गों में बाँट सकते हैं :

(१) **राजवंश के राजकुमार**—इनमें तीन-चार से अधिक एक बार में सदस्य नहीं होते। ये लोकसभा के अधिवेशनों में बहुत कम आते हैं और उसकी कार्यवाही में भी कोई महत्व नहीं रखते।

(२) **संयुक्त राज्य** (United Kingdom) **के वंशगत** (hereditary) **पीयर**—इनकी संख्या सबसे अधिक है और कुल पीयरों की संख्या की ९० प्रतिशत है। इनकी संख्या घटती-बढ़ती भी रहती है क्योंकि नए बनाए हुए पीयर इसी वर्ग में आते हैं।

(३) **१६ स्कॉटलैण्ड के प्रतिनिधि पीयर**—ये पीयर नहीं बल्कि प्रतिनिधि पीयर होते हैं क्योंकि ये संसद के कार्य-काल अर्थात् सिर्फ ५ वर्ष के लिए चुने जाते हैं। वैसे लॉर्डसभा के पीयर जीवन-पर्यन्त रहते हैं।

---

1 A "Second" chamber has become "secondary" as well.—*Ogg & Zink.*

(४) **आयरलैण्ड के प्रतिनिधि पीयर**—ये ५ वर्ष के लिए चुने जाते हैं और इनकी संख्या लॉर्डसभा में १५ से अधिक नहीं होती।

(५) २६ **आध्यात्मिक लॉर्ड** (Spiritual Lords)—ये पीयर नहीं होते बल्कि लोकसभा के धार्मिक (Ecclesiastical) सदस्य होते हैं। यॉर्क, कैण्टरबरी लन्दन आदि के बिशप इनमें शामिल हैं।

(६) **सात 'कानून के लॉर्ड'** (Seven Law Lords)—इन्हें अपील के लॉर्ड (Lords of Appeal) भी कहा जाता है। ये मिलकर ब्रिटेन का सर्वोच्च अपील का न्यायालय बनाते हैं। ये अत्यन्त अनुभवी होते हैं और देश के सर्वोत्तम न्यायवेत्ताओं में से चुने जाते हैं।

लॉर्डसभा के सभी सदस्य बड़े-बड़े उच्च घरानों के होते हैं। वे अपनी बुद्धि और विवेक के आधार पर ही वहाँ आदर के पात्र होते हैं। राजनैतिक अथवा सामाजिक, राष्ट्रीय या अन्तर्राष्ट्रीय विषयों पर उनके विचार उच्च कोटि के होते हैं। लॉर्डसभा का काम लोकसभा की अपेक्षा अधिक शान्तिपूर्ण ढङ्ग से होता है। वहाँ वाद-विवाद बड़े आराम के साथ होता है और लोकसभा जैसी किचकिच नहीं होती।

लॉर्डसभा की शक्तियाँ व कार्य :

लॉर्डसभा के सदस्यों को वही अधिकार प्राप्त हैं जो लोकसभा के सदस्यों को हैं। इनके अलावा उनको कुछ विशेषाधिकार भी प्राप्त हैं जो निम्नलिखित हैं—

(१) लॉर्डसभा के सदस्य प्रौक्सी (Proxy) से भी वोट दे सकते हैं, परन्तु यह अधिकार प्रयोग में नहीं लाया जाता।

(२) लॉर्डसभा के सदस्यों पर लॉर्डसभा ही अभियोग चला सकती है। परन्तु दुश्चरित्रता के अभियोग में साधारण न्यायालय भी उन पर मुकदमा चला सकते हैं।

(३) लोकसभा के सदस्य तो राजा पर अपने स्पीकर के द्वारा सामूहिक रूप में पहुँचते हैं, परन्तु लॉर्डसभा के सदस्य व्यक्तिगत रूप में राजा तक पहुँच सकते हैं और सार्वजनिक मामलों पर बातचीत कर सकते हैं।

(४) पीयर बनाने से सम्बन्ध रखने वाले विधेयक लॉर्डसभा में ही पेश होते हैं।

(५) लॉर्डसभा के सदस्य ग्रेट ब्रिटेन का सर्वोच्च अपील का न्यायालय बनाते हैं।

(६) लोकसभा द्वारा लगाए गए अभियोगों को वे जाँच सकते हैं।

(७) लोकसभा के सदस्य तो सभा की सत्रावधि तक अपने विशेषाधिकारों का प्रयोग कर सकते हैं, परन्तु लॉर्डसभा के सदस्य सत्रावसान के बाद भी उनका प्रयोग कर सकते हैं।

(८) लॉर्डसभा के सदस्य संसद द्वारा पारित किसी भी निर्णय का विरोध कर सकते हैं।

लॉर्डसभा के कार्य तीन प्रकार के हैं :

(१) परामर्शात्मक (Advisory)।
(२) विधायक (Legislative)।
(३) न्यायिक (Judicial)।

परामर्शात्मक कार्य—प्राचीन काल से ही जब कि लॉर्डसभा नहीं थी और केवल विटन थी—जिसका कि आधुनिक रूप लॉर्डसभा है—इसके सदस्यों को व्यक्तिगत रूप में राजा को परामर्श देने का अधिकार प्राप्त रहा है, यदि कभी राजा को ऐसे परामर्श की आवश्यकता पड़ी है। आधुनिक काल में इस अधिकार का विशेष प्रयोग नहीं होता है (क्योंकि राजा को परामर्श लेने की आवश्यकता ही नहीं होती। करीब-करीब सब कार्य मन्त्री करते हैं, राजा केवल सम्मति देता है), परन्तु पार्लियामेण्ट के भंग होने पर या अधिवेशन की अनुपस्थिति में जब मन्त्री परामर्श के लिए प्राप्य न हों तब राजा लॉर्डसभा के सदस्यों से परामर्श लेता है।

विधायक कार्य—सन् १९११ से पूर्व लॉर्डसभा को लोकसभा के बराबर ही विधि-निर्माण में अधिकार प्राप्त थे, परन्तु अब उसके अधिकार छिन गए हैं। अब तो उसका कार्य प्रायः विधेयकों को दोहराना, आलोचना करना व संशोधन करना मात्र रह गया है। धन-विधेयक के सम्बन्ध में यह भी अधिकार लागू नहीं होता। अन्य विधेयकों के सम्बन्ध में भी लॉर्डसभा के अधिकार सीमित हैं। वह किसी विधेयक के पास होने में देर करा सकती है, उसे रोक नहीं सकती। क्योंकि अगर लोकसभा ने लगातार तीन सत्रों में किसी विधेयक को पास कर दिया तो लॉर्डसभा भले ही टाँग अड़ाए, वह पास ही हो जायेगा। परन्तु लॉर्डसभा के विरोध का लोकसभा ख्याल रखती है और उसके सुझावों तथा संशोधनों पर ध्यान देती है।

न्यायिक कार्य—लॉर्डसभा ग्रेट ब्रिटेन और आयरलैण्ड की अपीलों का सर्वोच्च न्यायालय है। इसे मौलिक तथा अपील सम्बन्धी दोनों ही प्रकार के कानून के क्षेत्र में अधिकार हैं। यह पीयरों के ऊपर द्रोह या धोखेबाजी के मुकदमे चला सकती है, यदि वे दोषी हैं। यह लोकसभा द्वारा लाए गये अभियुक्तों की जाँच करती है। ग्रेट ब्रिटेन तथा आयरलैण्ड के मुकदमों की अपीलें यहाँ आती हैं और इसका निर्णय अन्तिम होता है। परन्तु न्यायिक कार्य सिर्फ लॉ लार्डों के द्वारा तथा अन्य पीयरों के द्वारा, जिन्हें उस कार्य के लिए नियुक्त किया गया है, ही किया जाता है। इसका अध्यक्ष लॉर्ड चान्सलर होता है।

लॉर्डसभा का महत्व :

बहुत समय से ब्रिटेन में समस्त दलों के ध्यान में यह बात विचारणीय है कि लॉर्ड-सभा या यों कहिये कि द्वितीय भवन की आवश्यकता है भी या नहीं। करीब चालीस साल पहले जब श्रम-दल ने शक्ति प्राप्त की थी, तब यह प्रश्न अत्यधिक जोर पकड़

गया था। सन् १९१७-१८ में समस्त दलों की कान्फ्रेन्स हुई, जिसमें यह निश्चित हुआ कि लॉर्डसभा में सुधार करके इसको रखा जा सकता है और इसकी आवश्यकता भी है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—

(१) लॉर्डसभा का प्रमुख कार्य लोकसभा से आये हुए विधेयकों की जाँच करना और उनको दुहराना है। यह कार्य आजकल बहुत जरूरी हो गया है, क्योंकि लोकसभा कार्य की अधिकता होने के कारण कभी-कभी विधेयकों पर पूर्णतः विचार नहीं कर पाती है।

(२) कुछ विधेयक जिनमें अधिक वाद-विवाद की आवश्यकता नहीं है, पहले लॉर्डसभा में पेश किये जा सकते हैं, और लोकसभा में आने से पूर्व और उसमें शीघ्र पास हो जाने के हेतु, लॉर्डसभा द्वारा अच्छे रूप में रखे जा सकते हैं। लोकसभा का कार्य इस प्रकार सरल हो जाता है।

(३) लोकसभा द्वारा विधेयक के पास किए जाने के बाद विधेयक लॉर्डसभा में जाता है जहाँ उस पर विचार किया जाता है। इस बीच में देश की जनता की उस विधेयक के प्रति राय भी मालूम पड़ जाती है और वह भी विधेयक के प्रति अपनी सम्मति प्रकट कर सकती है। यदि लॉर्डसभा न हो तो लोकसभा द्वारा विधेयक के पास हो जाने के बाद वह फौरन राजा के हस्ताक्षर होकर नियम बन जाय और जनता की उसके प्रति प्रतिक्रिया न मालूम पड़े।

(४) लॉर्डसभा की इसलिए भी आवश्यकता है कि बड़े-बड़े और महत्वपूर्ण विषयों पर—जैसे विदेश नीति—पूर्ण रूप से विचार हो सके। लोकसभा पर इतना कार्य-भार रहता है कि उसे पूर्ण रूप से विचार के लिए पर्याप्त समय नहीं मिलता।

ये कार्य बहुत ही महत्वपूर्ण हैं और यह बात बड़ी रोचक है कि आधुनिक युग के दो बड़े-बड़े श्रम दल के लेखक–सिडनी (Sydney) और बिएट्रिस वैब (Beatrice Webb)–भी इस बात को मानते हैं कि यद्यपि एक आदर्श विधान में लॉर्डसभा के लिए कोई स्थान नहीं होना चाहिये, तथापि लोकसभा द्वारा पारित विधेयकों का किसी न किसी के द्वारा दुहराया जाना तथा संशोधन किया जाना आवश्यक है। ब्रिटेन में तो लॉर्डसभा की अत्यधिक आवश्यकता है क्योंकि वहाँ का विधान लचकदार है और वहाँ कोई ऐसी व्यवस्था नहीं है जिससे किसी विधेयक के बारे में जनता की सम्मति मालूम पड़ जाय या न्यायालयों द्वारा उसकी जाँच हो जाय।[1]

1 "Indeed, on the ground that Britain has none of the safeguards afforded by a rigid constitution, by referendum procedure, like that of Switzerland, or by judicial review like that of the United States, it is sometimes contended that she, beyond most other States, has need of a second chamber with full deliberative revisory powers."

(*Ogg & Zink : op. cit., p 231*)

प्राय: यह कहा जाता है कि लॉर्डसभा की कोई आवश्यकता नहीं है, और क्योंकि इसमें जनता के प्रतिनिधि नहीं हैं इसलिए यह जनतन्त्र के सिद्धान्त का विरोधी प्रतीक है। एक बार एक श्रम दल के नेता ने कहा था कि यह "स्वयं को छोड़कर और किसी की प्रतिनिधि नहीं है" (Represents nobody but itself)। हमें यह देखना है कि लॉर्डसभा कहाँ तक समालोचना की कसौटी पर कसी जा सकती है और क्या वास्तव में इसका महत्व और इसकी आवश्यकता है ?

जे० एस० मिल (Mill) ने कहा था कि "जिन कारणों से रोम को दो परिषदों की जरूरत पड़ गई, उन्हीं कारणों से यहाँ पर भी धारासभा के दो भाग कर देना ठीक समझा गया, ताकि अविभाजित शक्ति में जो दोष आ जाते हैं वे पार्लियामेण्ट में न आने पावें।"

(१) लॉर्डसभा संसार की सबसे प्राचीन सभा है। ब्रिटिश शासन में यह पूर्ण रूप से गुथ गई है, अतएव इसे अलग करना शासन को भारी क्षति पहुँचाना है।

(२) यद्यपि इसमें बहुत से ऐसे सदस्य हैं जिनमें शासन सम्बन्धी कार्य करने की न तो योग्यता है और न उनमें दिलचस्पी ही है, परन्तु ऐसे सदस्य लोकसभा में भी अनेक हैं। लॉर्डसभा के बारे में तो यह भी कहना उचित है कि इसमें अयोग्य व्यक्ति मुश्किल से ही स्थान पाते हैं जबकि लोकसभा में वे आसानी से घुस जाते हैं।

(३) लॉर्डसभा में ऐसे चुने हुए व्यक्ति हैं जिन्होंने अपनी योग्यता, अनुभव, विद्या तथा बुद्धिमानी के लिए बहुत ख्याति पाई है। इसे यदि जीवित प्राणियों का वेस्ट-मिनिस्टर कहा जाय तो कोई अत्युक्ति न होगी। इसीलिए तो डिज़रेजे (Disraeli) ने एक बार कहा था कि राजा पीयर तो बना सकता है परन्तु लॉर्डसभा नहीं बना सकता।

(४) लॉर्डसभा ने बड़े-बड़े महारथी पैदा किये हैं और सैलिसबरी, ग्रे, लैंसडोन, एस्क्विथ, रीडिंग, बर्किनहैड, टैनीसन, ब्राइस, कर्जन आदि जैसे इसके सदस्य रह चुके हैं। इस भवन में व्यवसाय, वित्त, कृषि, विज्ञान, धर्म आदि के प्रकाण्ड विद्वानों ने स्थान पाया है।

(५) लॉर्डसभा केबिनेट के मन्त्रियों का भण्डार है। लॉर्डसभा में से भी कुछ मन्त्री चुने जाते हैं। विदेश मन्त्री तो प्राय: लॉर्डसभा में से ही चुना जाता है।

(६) लॉर्डसभा देश की समस्याओं पर गम्भीरता से विचार करती है, और जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, लोकसभा द्वारा जल्दबाजी में जो विधेयक पास कर दिए जाते हैं उन पर पुन: विचार करती है और इस प्रकार वह दुहरी छलनी का काम करती है।

(७) बेजहॉट ने कहा था कि "यदि लॉर्डसभा क्रान्ति को रोक नहीं सकती तो उसे रोकने में सहायता अवश्य करती है। जब तक लॉर्डसभा के पास थोड़ी सी भी

ताकत है तब तक देश में असन्तोष से अंकुर पैदा नहीं हो सकते, न कोई राजनैतिक तूफान इङ्गलैण्ड के शान्तिमय जीवन में उथल-पुथल पैदा कर सकता है।"

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि "धन, उच्च पद, उच्च कुटुम्ब, भू-सम्पत्ति, विचार तथा भावनाओं का समाज पर जो प्रभाव पड़ता है वह सम्पूर्ण लॉर्डसभा का अँग्रेजी जनता पर पड़ा है। आचार, परम्पराओं तथा रीति-रिवाजों ने भी उच्च भवन को एक विशेष रंग दिया है। समय और अवसर ने मिलकर जो यह आश्चर्यजनक वस्तु बनाई है वह कृत्रिम मिश्रण द्वारा नहीं बन सकती थी।"

उपर्युक्त विवरण से यह स्पष्ट हो जाता है कि लॉर्डसभा ब्रिटिश शासन-संविधान में ही नहीं अपितु ब्रिटिश राजनैतिक जीवन में एक अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखती है। यह ब्रिटेन के राष्ट्रीय जीवन में घुस गई है और इसे अलग करना एक भयंकर प्रमाद होगा। इतिहास इसकी सार्थकता का साक्षी है। यदि कालान्तर में इसकी उपयोगिता किन्हीं कारणोंवश कम हो गई है, तो सुधार की आवश्यकता है।[1] लोग इसे वर्तमान जनतन्त्र शासन में एक 'काल-विरोध' (anachronism) कहते हैं, परन्तु वास्तव में यह ऐसी है नहीं। इसमें सुधार की आवश्यकता है, इसे खत्म नहीं करना चाहिए (It should be mended and not ended)।

लॉर्डसभा के विरोध के कारण :

लॉर्डसभा का विरोध किए जाने के क्या कारण हैं? इतनी पुरानी सभा आधुनिक युग में क्यों आलोचना की शिकार बन रही है? हम संक्षेप में उन कारणों का अध्ययन करेंगे :

(१) प्रथम बात तो यह है कि जनतन्त्र युग में इस प्रकार की कोई सभा नहीं होनी चाहिए जिसमें जनता के प्रतिनिधि चुनकर न आए हों। अतः यह संस्था भ्रमात्मक तथा असामयिक है।

1 "The fact is not to be overlooked, too, that many of the most active members (of House of Lords) have in their earlier days had the advantage of long service in the House of Commons—that, indeed, the popular branch is to a very considerable degree a nursery of the House of Lords. No student of English history needs to be told that upon sundry occasions the upper house has interpreted the will of the nation, or the realities of a political situation more correctly than the lower and that more than once it has saved the country from hasty and ill-considered legislation. It is not altogether the sort of a second chamber that Englishmen would plan if they were confronted to-day with the necessity of creating one *do novo*. But since it exists, and so deeply woven into the texture of the national life, the most sensible course would seem to be, not to discard it outright, but rather to reconstruct it on some such lines as those laid down in the Bryce Report. Certainly that would be most in keeping with the traditional method of English political development."

(*Ogg & Zink : op. cit., pp. 230-231*)

(२) इसके ६० प्रतिशत प्रतिनिधि वंशगत आधार पर बने हुए हैं। क्या आजकल भी पूँजीवाद की निशानी के लिए स्थान है? इसीलिए वेब्स (Webbs) कहता है कि "जनतन्त्र रूपी राज्य में लॉर्डसभा जैसी संस्था के लिए कोई स्थान नहीं। वर्तमान रूप में इसकी उपस्थिति कभी भी हितकर नहीं हो सकती। इसका जितना जल्दी से जल्दी लोप हो जाय उतना ही अच्छा होगा।"

(३) यह सब आलोचना इसीलिए होती है कि लॉर्डसभा अनुदार दल की एकत्रित शक्ति बनी हुई है और सभी प्रकार की प्रगतिशील भावनाओं को कुचलने की कोशिश करती रहती है। यह पूँजीपतियों तथा रूढ़िवादियों का गढ़ है।

(४) वंशगत कुलीनता के आधार पर सदस्यता प्राप्त कर लेना और उनका आधुनिक युग में चला आना एक बहुत ही असामयिक बात है।

(५) लॉर्डसभा रूढ़ि में इतनी जकड़ी हुई है कि समय के अनुसार अपने में कोई परिवर्तन नहीं करती है। आजकल जमाना कितना बदल गया है और बदलता जा रहा है, परन्तु उसका ढाँचा, उसकी भावना व उसके आदर्श वही पुराने हैं और पूर्व की भाँति ही मजबूती पकड़े हुए हैं।

(६) लॉर्डसभा का सन् १९११ के संसदीय अधिनियम से कोई विशेष महत्त्व विधि-निर्माण-क्षेत्र (Legislation) में नहीं रहा। यदि लोकसभा लगातार तीन सत्रों में कोई विधेयक पास कर दे तो लॉर्डसभा के विरोध का कोई महत्त्व ही नहीं रहता। जब यह बात है तो फिर इसकी जरूरत ही क्या है कि लॉर्डसभा रहे और अपनी टाँग अड़ाए।

(७) लॉर्डसभा "इङ्गलैण्ड के सिर पर कलंक का टीका है। यह देखकर विस्मय होता है कि कुलीनतन्त्र (Aristocracy) के भग्नावशेष अब भी इङ्गलैण्ड में सुरक्षित हैं जब कि संसार के अन्य भागों में इनकी मृत्यु का डंका बज चुका है।"

उपर्युक्त सब बातों से यह निष्कर्ष नहीं निकालना चाहिए कि लॉर्डसभा को खत्म ही कर देना उचित होगा; क्योंकि एक तो यह जनतन्त्र की विरोधी प्रतीक है और दूसरे इसकी शक्ति अत्यन्त सीमित है। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, लॉर्डसभा में सुधारों की आवश्यकता है। इसे खत्म कर देना ब्रिटिश शासन-संविधान को ही नहीं बल्कि ब्रिटिश राष्ट्रीय जीवन को भारी धक्का देना होगा। दूसरी बात यह भी है कि द्वितीय भवन का जो काम होता है, उसे तो लॉर्डसभा बहुत कुछ अंश तक करती ही है। जोश, उद्वेग व उतावलेपन में लोकसभा जो कोई कानून बनाती है, लॉर्डसभा उस पर गम्भीर विचार करती है, और कानून बनाने की अपेक्षा कानून पर विचार करना, उसके गुण व दोष छाँटना, उसके प्रभाव के सम्बन्ध

में सोचना, उसमें संशोधन करना या दुहराना—क्या ये सब काम कम महत्त्व रखते हैं ?[1]

लॉर्डसभा के सुधार के सुझाव :

लॉर्डसभा के सुधार के सम्बन्ध में हमें कुछ सिद्धान्तों को आधार मान कर विचार करना होगा। पहली बात तो यह है कि एक ऐसा सिद्धान्त बनाया जाय जिसके द्वारा केवल वंशगत सदस्यता ही लॉर्डसभा की सदस्यता प्राप्त करने का आधार न हो। दूसरे, वंशगत पीयरों द्वारा अधिक से अधिक पीयर चुने जायँ, जो उनके प्रतिनिधि हों। तीसरे, अधिक से अधिक सदस्य जीवन भर के लिए या निश्चित समय के लिए नियुक्त किए जायँ, जो कानून और राजनीति में पूर्ण अनुभवी हों।

इस तीसरे आधार को—यद्यपि यह रूढ़िवाद का प्रतीक है—छोड़ा नहीं जा सकता। ऐसे देश में, जहाँ संघ-शासन-व्यवस्था है, द्वितीय सदन के बनाने की समस्या अधिक नहीं होती; क्योंकि जनता के प्रतिनिधि तो छोटी सभा में जा सकते हैं और राज्यों के प्रतिनिधि बड़ी में। परन्तु ब्रिटेन तो राजतन्त्रात्मक है, वहाँ संघ-व्यवस्था नहीं है, इसलिए राज्य व उनके प्रतिनिधियों का सवाल ही पैदा नहीं होता। वहाँ तो राज्यों के बजाय निश्चित वर्ग व निकाय ही अपने प्रतिनिधि भेज सकते हैं, और उन वर्गों व निकायों में जमींदार, चर्चाधिकारी, विश्वविद्यालय, वैज्ञानिक निकाय (bodies), चेम्बर ऑफ कॉमर्स, कानूनी व औषधिक संस्थाएँ, व्यापार-मण्डल आदि सम्मिलत हैं।

समय-समय पर लॉर्डसभा में संशोधन करने के लिए अनेक प्रयत्न भी किए गए हैं। सन् १८६९ और १८८९ के बीच कई बार इसमें सुधार करने के प्रयत्न किए गए, परन्तु सब विफल रहे। सन् १९१०–११ तक इसके सम्बन्ध में पार्लियामेण्ट में वाद-विवाद चलता रहा और अन्त में सुधार के स्थान पर सन् १९११ में लॉर्डसभा की शक्ति क्षीण कर दी गई। तदुपरान्त सन् १९१७ में ब्राइस कमीशन ने इसके सुधार का प्रश्न लिया। पहले तो यह सोचा गया कि इसको समाप्त ही कर दिया जाय, परन्तु इसकी उपयोगिता समझ कर इसे कायम रखा गया और इसमें सुधार के सुझाव रक्खे गए। वे सुझाव निम्नलिखित हैं:—

(१) लॉर्डसभा के सदस्यों की संख्या ३२७ कर दी जाय।

1 "The main use of a Second Chamber is to promote deliberations on actions minimising the chances of a legislature being swept off its feet by waves of passion or excitement······The House of Lords has served the British nation well in the past, it may, of course, presently be cast into the discard. Wisely reconstructed, it should, however, be capable of still greater usefulness in years that lie ahead."
(*Ogg & Zink : op. cit., p. 235*)

(२) इस सभा की सदस्यता दो प्रकार की हो—एक-तिहाई तो शिष्टजनों द्वारा चुने जायँ और दो-तिहाई लोकसभा के सदस्यों द्वारा प्रादेशिक गुट बनाकर चुने जायँ।

(३) सभा की अवधि १२ साल की कर दी जाय।

(४) दोनों प्रमुख गुटों में से एक-तिहाई सदस्य प्रति चार साल बाद सदस्यता छोड़ते जायँ।

(५) ३२७ सदस्यों में से ८१ सदस्य समस्त शिष्टजनों में से संसद के दोनों सदनों की एक स्थायी सम्मिलित समिति (Standing Joint Committee) द्वारा चुने जायँ।

(६) शेष २४६ सदस्य १३ भिन्न-भिन्न गुट बनाकर लोकसभा द्वारा निर्वाचित किये जायँ।

(७) यदि दोनों भवनों में मतभेद हो तो प्रत्येक भवन से तीस-तीस सदस्य बुलाकर उसे शान्त किया जाय।

ये सुधार भी ठुकरा दिए गए। फिर सन् १९२२ में लॉयड जॉर्ज ने पाँच प्रस्ताव लॉर्डसभा के समक्ष रक्खे। उनमें ब्राइस योजना के भी कुछ अंश थे। उन प्रस्तावों के द्वारा लार्डसभा में निम्नलिखित सदस्य हों:—

(१) राजकीय वंश के पीयर, धार्मिक लॉर्ड तथा कानूनी लॉर्ड (Law Lords)।

(२) प्रत्यक्ष रूप से चुने हुए बाहर के प्रतिनिधि।

(३) अपने क्रम के अनुसार चुने गए वंशगत पीयर।

(४) क्राउन के द्वारा निर्वाचित सदस्य।

(५) प्रथम को छोड़ बाकी सब ९ साल के लिए निर्वाचित हों। कुल सदस्य ३५० हों।

ये प्रस्ताव भी टाँय-टाँय फिस हो गए। इसके बाद सन् १९२५ में केबिनेट-कमेटी द्वारा लॉर्डसभा के सुधार का काम उठाया गया और सन् १९२७ में रिपोर्ट प्रकाशित हुई। इसके द्वारा भी निर्वाचन-प्रणाली द्वारा सदस्य बनाने की माँग पर जोर दिया गया। सन् १९३३ में लॉर्ड सेलिसबरी द्वारा पुनः एक विधेयक प्रस्तुत किया गया, परन्तु यह भी विफल रहा।

इन सब बातों से स्पष्ट होता है कि लॉर्डसभा को हटाने के पक्ष में जनता नहीं है, परन्तु साथ ही साथ उसमें सुधार करने के जबरदस्त पक्ष में है। परन्तु सुधार का काम पूरा नहीं हो पाया है। इसके कुछ विशेष कारण हैं:—

(१) कोई भी सुधार-योजना सन्तोषजनक नहीं है। यदि क्राउन द्वारा सदस्य

बनाए जायँ तो दलबन्दी का थोड़ा बहुत आधार आ ही जायगा, और यदि निर्वाचन-प्रणाली के आधार पर चुने जायँ तो लोकसभा का ही दूसरा रूप (duplicate) हो जायगा।

(२) ब्रिटिश जीवन में परम्परा इतनी जड़ पकड़ गई है कि जैसे संविधान में इसकी अभेद्य स्थिति है वैसी ही लॉर्डसभा के सम्बन्ध में भी है।

(३) राजतन्त्र में द्वितीय भवन सन्तोषजनक आधार पर बनाना कठिन है।

(४) लॉर्डसभा की शक्ति बिल्कुल क्षीण हो गई है और उसमें सुधार करने के साथ-साथ उसकी शक्ति को वापिस करने का भी प्रश्न उठ खड़ा होगा।

परन्तु यह तो निश्चित ही सत्य है कि इसे खत्म नहीं करना चाहिए बल्कि इसमें सुधार हों। कैसे हों और उनका क्या रूप हो—यह कहना बड़ा मुश्किल है।

UNIVERSITY QUESTIONS

24th Oct. 57
26th Feb. '58

1. Discuss the composition, privileges and functions of the House of Lords. On what lines, in your opinion, should the House of Lords be reformed ?

(*Agra, 1938*; *Punjab, 1937*; *Calcutta, 1937*)

नवाँ परिच्छेद

ब्रिटेन में विधि-निर्माण-प्रणाली

ब्रिटेन की संसद प्रति वर्ष अनेक विधेयकों को पास करती है और उनकी प्रक्रिया समझ लेना अत्यन्त आवश्यक है। संसद के द्वारा बनाए गए कानून जनता की रुचि के प्रतीक हैं। जनता को जिस प्रकार के नियमों की आवश्यकता होती है संसद द्वारा वे पारित किए जाते हैं। नियम अथवा कानून हमारे लिए अथवा किसी राष्ट्र के लिए स्वतन्त्रता-अवरुद्ध नहीं होते बल्कि वे स्वतन्त्रता की रक्षा करते हैं।[1] अतः इस कानून बनाने की प्रक्रिया का समझ लेना नितान्त आवश्यक है और यह प्रक्रिया है भी बहुत कुछ लम्बी[2] यद्यपि यह भी स्पष्ट हो जावेगा कि अच्छे तथा लोकप्रिय कानून बनाने के लिए इतनी लम्बी प्रक्रिया का होना जरूरी है।

विधि-निर्माण-क्रिया का वर्णन करने से पहले हम यह आवश्यक समझते हैं कि विधेयक (Bill) तथा एक्ट (Act) का भेद स्पष्ट कर दिया जाय।

विधेयक या बिल एक्ट का प्रारम्भिक रूप है जब कि वह संसद में प्रस्तुत किया जाता है और संसद द्वारा पास होने पर वह एक्ट बन जाता है। विधेयक एक प्रकार से प्रस्तावों का समूह है जो संसद में प्रस्तुत किया जाता है। एक्ट पास किया हुआ कानून है जिसे संसद के दोनों सदनों ने पास कर दिया है।

विधेयक के प्रकार :

यह देखने से पहले कि ब्रिटेन में विधि-निर्माण की क्या प्रक्रिया (Process) है, हमें विधेयकों के प्रकारों के ऊपर थोड़ा-सा ध्यान देना है। साथ ही साथ यह बात भी ध्यान में रखनी है कि आजकल विधि-निर्माण पूर्णतया संसद के हाथ में है। प्रारम्भ में संसद का काम विधि-निर्माण करना नहीं था। राजा ही विधि-निर्माण करता था। परन्तु जैसा कि पहले कह चुके हैं, संसद ने धीरे-धीरे राजा के अधिकार छीन लिए, और आजकल हम देखते हैं कि राजा सिर्फ हस्ताक्षर-मात्र करने का अधिकारी रह गया है, जिसे भी वह मना नहीं कर सकता। अब तो संसद ही पूर्ण

1 Law does not put the least restraint,
Upon our freedom, but maintained,
For wholesome laws preserve us full.
By stinting of our liberty."— *S. Butler.*

2 "The law of England, the greatest grievance of the nation, is very expensive and dilatory"— *Burnet.* [The opinion of the writer can't be accepted without qualification].

रूप से विधि-निर्माण-कर्त्री है। वहीं विधेयक प्रस्तुत किए जाते हैं, वहीं उनका पठन होता है, वहीं से उचित कमेटी में भेज दिए जाते हैं और वहीं पर पास होते हैं। संसद उन्हें पास करने के बाद राजा के पास भेज देती है। वह याचना व अर्जी (Petition) के रूप में नहीं होते, जैसे कि पहले होते थे, बल्कि अधिकार के प्रतीक होते हैं।

ब्रिटेन में विधेयकों के दो प्रकार किये जाते हैं। दोनों प्रकार के विधेयकों को पारित करने की प्रक्रिया भी भिन्न है। संयुक्त राज्य अमेरिका में इस प्रकार का कोई भेद नहीं किया जाता।

विधेयकों को दो भागों में बाँटा जाता है—(१) सार्वजनिक विधेयक (Public Bills), (२) और असार्वजनिक विधेयक (Private Bills)।

सार्वजनिक विधेयक—सार्वजनिक विधेयक वे हैं जिनका प्रभाव जनता पर पड़ता है और जिनका उससे सम्बन्ध होता है। उदाहरण के लिए मताधिकार सम्बन्धी विधेयक या करारोपण (Taxation) सम्बन्धी या मद्य-निषेध सम्बन्धी विधेयक। ये विधेयक भी दो प्रकार के होते हैं—(१) सरकारी विधेयक (Government Bills), और (२) गैर-सरकारी सदस्यों द्वारा प्रस्तुत विधेयक (Private Member's Bills)। जो विधेयक केबिनेट के मन्त्रियों द्वारा संसद में पेश किये जाते हैं, वे सरकारी विधेयक कहलाते हैं, और जो मन्त्रियों के अतिरिक्त किसी अन्य सदस्य के द्वारा प्रस्तुत किए जाते हैं, वे गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयक कहलाते हैं। कहने की आवश्यकता नहीं, ये विधेयक असार्वजनिक विधेयकों (Private Bills) से बिल्कुल भिन्न हैं।

असार्वजनिक विधेयक—असार्वजनिक विधेयक वे हैं जो मन्त्रियों के अतिरिक्त किसी अन्य सदस्य द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं, जो किसी स्थान-विशेष या समवाय (Company) या किसी संस्था-विशेष से सम्बन्ध रखते हैं, और जो जनता के साम्पत्तिक अधिकारों में हस्तक्षेप नहीं करते, जैसे किसी नगरपालिका को ट्रामवे या गैस-यन्त्र बनाने की अनुमति देना। इन विधेयकों पर शुक्रवार को विचार होता है। यह बात मानी हुई है कि ऐसे विधेयकों के पास होने की तब तक सम्भावना नहीं होती, जब तक कोई मन्त्री उसमें सहायता न करे।

यहाँ पर अस्थायी आदेशों को स्थायी बनाने के विधेयकों (Provisional Orders Confirmation Bill) का संकेत कर देना आवश्यक है। जैसा कि अभी कहा है कि किसी कम्पनी या स्थानीय संस्था की ओर से व्यक्तिगत हित के लिए जो विधेयक प्रस्तुत किए जाते हैं, वे असार्वजनिक विधेयक कहलाते हैं। इस प्रकार उनके कार्य की सिद्धि हो जाती है, परन्तु विधेयक पास कराने से पहले ही

सरकार से आज्ञा लेकर काम चालू कर दिया जाता है। जन-स्वास्थ्य, रेलवे, शिक्षा आदि विषय सम्बन्धी बहुत से कार्य सरकार से स्वीकृति लेकर पहले ही प्रारम्भ कर दिए जाते हैं। इस प्रकार के आदेश अस्थायी (Provisional) होते हैं। तदुपरान्त वे पार्लियामेण्ट में पास होने के लिए विधेयक के रूप में भेजे जाते हैं, जहाँ वे स्थायी (Confirm) कर दिये जाते हैं। स्थायी बनाने के हेतु पेश किया गया विधेयक "अस्थायी आदेशों को स्थायी बनाने का विधेयक" (Provisional Orders Confirmation Bill) कहलाता है, और पार्लियामेण्ट द्वारा उसे स्थायी बनाने वाला अधिनियम "अस्थायी आदेशों को स्थायी बनाने का अधिनियम" (Provisional Orders Confirmation Act) कहा जाता है।

विधि-निर्माण की समूची प्रक्रिया बड़ी लम्बी और टेढ़ी है। विधेयक को एक्ट बनने में कई सप्ताह और कभी-कभी महीने लग जाते हैं। कभी-कभी वर्ष भी बीत जाते हैं, यद्यपि ऐसी अवस्था में विधेयक एक या दो बार फिर पेश किया जाता है, जिससे वह तरोताजा बना रहे। विधेयकों के पास होने में जो भिन्न-भिन्न स्टेज (Stages) हैं, वे अत्यन्त उपयोगी हैं। प्रथम तो उनकी वजह से कार्य सुगमतापूर्वक होता है और दूसरे उनकी वजह से जल्दबाजी नहीं हो पाती और विधेयक के प्रत्येक पहलू पर पूर्ण रूप से विचार हो जाता है। परन्तु इतना अवश्य है कि विधि-निर्माण की कार्य-प्रक्रिया धीमी चाल से चलती है और काम का आधिक्य होने के कारण संसद का कार्य-भार बढ़ता ही जाता है।

विधि-निर्माण-प्रक्रिया में दो मुख्य कार्य होते हैं—(१) मसविदा तैयार करना, और (२) सदन में प्रस्तुत करने के उपरान्त उसे पास कराने हेतु किये जाने वाले कार्य। गैर-सरकारी विधेयक का मसविदा तो स्वयं सदस्य ही तैयार करता है, और सरकारी बिल के मसविदे को बड़े-बड़े दक्ष सरकारी लेखक (Draftsman) तैयार करते हैं। यह कार्य Parliamentary Counsel to the Treasury के कार्यालय में होता है। जिस मन्त्री से सम्बन्धित वह विधेयक होता है, वही मन्त्री उसकी एक कच्ची रूपरेखा बनाता है। फिर अन्य मन्त्रियों व सिविल सर्विस के सदस्यों से परामर्श करके उसकी विस्तृत रूपरेखा तैयार करके लेखक (Draftsman) के पास जाती है, जो उसे विधेयक के रूप में—धाराएँ व उपधाराएँ आदि ठीक ढंग से लिखकर—तैयार करके मन्त्री के पास भेज देता है। तदुपरान्त केबिनेट द्वारा उस पर विचार होते हैं और फिर वह किसी भी सदन में (यदि वह धन-विधेयक नहीं है) पेश किया जाता है। धन-विधेयक सिर्फ लोकसभा में ही पेश किए जाते हैं। अन्य विधेयक चाहे जिस सभा में पेश किये जा सकते हैं, हालाँकि आजकल समस्त महत्वपूर्ण विधेयक लोकसभा में ही पेश किये जाते हैं।

सार्वजनिक विधेयक (Public Bill) के पास होने की प्रक्रिया—

प्रथम स्टेज : प्रथम पठन—विधेयक के पास होने की छः स्टेज हैं। जब कोई मन्त्री विधेयक पेश करना चाहता है, तो वह उसकी सूचना भवन में भेजता है और उसके द्वारा विधेयक को पेश करने की इच्छा प्रकट करता है। यह सूचना 'उस दिन के आदेश' (Order of the day) में छप जाती है। जब अध्यक्ष प्रस्तुत करने वाले का नाम पुकारता है, तब प्रस्तुतकर्ता विधेयक को क्लर्क को दे देता है। क्लर्क उसका शीर्षक और उद्देश्य जोर-जोर से पढ़ता है। यह विधेयक का प्रथम पठन होता है। भवन प्रायः बिना किसी वाद-विवाद के विधेयक को स्वीकार कर लेता है और आदेश देता है कि उसे छाप दिया जाय और सूची में दर्ज कर दिया जाय। सरकारी विधेयकों में मन्त्री भाषण द्वारा उसका थोड़ा-सा परिचय भी करा देता है।

दूसरी स्टेज : दूसरा पठन—जैसा कि अभी कहा है, प्रथम वाचन के बाद जब विधेयक छप जाता है तब वह सूची (Calender) पर आ जाता है। विधेयक के दूसरे पठन हेतु एक तारीख निश्चित कर दी जाती है। निश्चित तारीख को विधेयक पेश करने वाला मन्त्री या सदस्य (यदि वह गैर-सरकारी सदस्य का विधेयक है) यह प्रस्ताव करता है कि विधेयक का दूसरा पठन हो। इस दूसरे पठन में विधेयक के शीर्षक, उद्देश्य, प्रयोजन, धाराओं आदि पर डट कर वाद-विवाद होता है। उसके समर्थक बड़े-बड़े भाषणों द्वारा उसका समर्थन करते हैं और विरोधी आलोचना व निन्दा करते हैं। इस अवस्था में कोई संशोधन नहीं हो सकता। भवन सम्पूर्ण विधेयक को स्वीकृत या अस्वीकृत कर देता है। यदि विधेयक किसी मन्त्री द्वारा पेश किया गया है और उसे अस्वीकार कर दिया गया है, तो इसका मतलब यह है कि सदन को केबिनेट में विश्वास नहीं और ऐसे अवसर पर केबिनेट को त्यागपत्र दे देना पड़ता है। किन्तु ऐसे अवसर कम आते हैं। हाँ, गैर-सरकारी सदस्य द्वारा पेश किया हुआ विधेयक यदि इस स्टेज पर संसद में अस्वीकृत किया गया तो वह मृत्यु को ही प्राप्त हो जाता है।

सरकारी विधेयकों में यदि विरोधी दल कोई रोड़ा अटकाना चाहे तो यह प्रस्ताव कर सकता है कि इस विधेयक का द्वितीय पठन छः महीने बाद हो, या ऐसी तारीख निश्चित करता है जिस दिन संसद का अधिवेशन न हो। ऐसी हालत में विधेयक अनिश्चित काल के लिए टल जाता है। यह कार्य वाद-विवाद होने से पहले हो सकता है।

तीसरी स्टेज : समिति-स्टेज—द्वितीय पठन के बाद विधेयक समिति में जाता है। यदि वह धन-विधेयक है तो उसे सम्पूर्ण संसद की समिति में भेजा जाता है, अन्यथा स्थायी समितियों में से किसी एक में अध्यक्ष द्वारा भेज दिया जाता है। कभी-कभी वह सिलेक्ट कमेटी (Select Committee) में भेज दिया जाता है और

वहाँ से लौटने पर या तो सम्पूर्ण संसद की समिति में या किसी स्थायी समिति में जाता है। समिति एक-एक करके विधेयक के समस्त अंगों पर विचार करती है और उसकी धाराओं व उप-धाराओं पर खूब बहस करती है। समिति द्वारा उसमें संशोधन जोड़ जा सकते हैं। विरोधी दल के सदस्य विधेयक में बहुत कुछ परिवर्तन करने की कोशिश करते हैं और उसके प्रभाव को कम करना चाहते हैं।

चौथी स्टेज : रिपोर्ट-स्टेज—समिति विधेयक पर विचार करके उसकी रिपोर्ट लोकसभा में भेज देती है और वह फिर उस पर विचार करती है। अन्तिम रूप में विधेयक लोकसभा के ऊपर ही निर्भर है, समिति के ऊपर नहीं। लोकसभा में इस बार विधेयक की धाराओं पर विचार के साथ-साथ संशोधन भी किये जा सकते हैं।

पाँचवीं स्टेज : तीसरा पठन—विधेयक पर लोकसभा में इस बार अन्तिम बहस होती है और विरोधी दल को उसे परास्त करने का मौका दिया जाता है। इस समय भी विधेयक को स्वीकृत या अस्वीकृत किया जा सकता है। परन्तु इस स्टेज पर विधेयक बहुधा स्वीकृत ही हो पाते हैं। इसके बाद अध्यक्ष द्वारा हस्ताक्षर होकर वह विधेयक दूसरी सभा को भेज दिया जाता है।

छठी स्टेज : लॉर्डसभा द्वारा विचार—तीसरे पठन के बाद विधेयक लॉर्डसभा में भेज दिया जाता है जहाँ पर फिर वही सब स्टेजें—प्रथम पठन, द्वितीय पठन, समिति-स्टेज, रिपोर्ट-स्टेज, तथा तृतीय पठन—दुहराई जाती हैं। लॉर्डसभा को अधिकार है कि वह उसे स्वीकार कर दे या अस्वीकार कर दे या उसमें संशोधन कर दे। यदि वह संशोधन करती है तो विधेयक पुनः विचारार्थ उसी सदन में भेज दिया जाता है जहाँ से उसकी उत्पत्ति हुई। यदि उसे अस्वीकृत कर दिया गया तो लोकसभा पुनः उस पर विचार करती है। इस प्रकार लोकसभा ने उसे लगातार दो बार पास कर दिया तो लॉर्डसभा के विरोध की कोई कीमत नहीं रहती और विधेयक को राजा के हस्ताक्षर के लिए भेज दिया जाता है। राजा के हस्ताक्षर के बाद वह कानून बन जाता है तथा कानून की पुस्तक (Statute Book) में रख दिया जाता है। इस प्रकार वह विधेयक देश की विधि बन जाता है और न्यायालय उस पर अमल करने लगते हैं।

कुछ सार्वजनिक विधेयक साधारण सदस्यों द्वारा प्रस्तुत किये जाते हैं। इन पर विचार शुक्रवार को ही होता है। ये सदस्य अपने पर्चे क्लर्क की सन्दूक में, जो मेज पर रक्खा रहता है, डाल देते हैं। क्लर्क उन पर्चों को एक-एक करके खींचता है। जिसका पर्चा पहले खिंच आया वही सदस्य अपना विधेयक सत्र के पहले शुक्रवार को पेश करता है, दूसरे पर्चे वाला दूसरे शुक्रवार को, आदि। इस प्रकार सब शुक्रवार गैर-सरकारी सदस्यों के विधेयकों के हेतु काम में आते हैं।

असार्वजनिक विधेयक (Private Bill) के पास होने की प्रक्रिया :

जैसा कि पहले कहा चुका है, असार्वजनिक विधेयकों को पारित करने की प्रक्रिया सार्वजनिक विधेयकों को पारित करने की प्रक्रिया से भिन्न है। लोकसभा में असार्वजनिक विधेयक की परिभाषा इस प्रकार की गई है—"असार्वजनिक विधेयक वह है जिसका उद्देश्य किसी स्थान-विशेष सम्बन्धी विधि को बदलना है, या किसी व्यक्ति-विशेष या वर्ग-विशेष को कोई अधिकार देना है, या उनका कोई उत्तरदायित्व हटाना है।" इसका उद्देश्य किसी व्यक्ति को कोई पेन्शन अथवा अधिकार देना हो सकता है, या किसी स्थानीय संस्था को कोई कार्य करने की स्वीकृति देना हो सकता है; बशर्ते कि वह किसी व्यक्ति के सार्वजनिक अथवा व्यक्तिगत अधिकारों में हस्तक्षेप न करे।

प्रत्येक असार्वजनिक विधेयक को भी दोनों सदनों की स्वीकृति लेनी होगी, जैसी कि सार्वजनिक बिल को प्राप्त करनी होती है। इसके पास होने का निम्नलिखित तरीका है:—

(१) प्रत्येक असार्वजनिक विधेयक किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है।

(२) प्रत्येक असार्वजनिक विधेयक के साथ एक अर्जी (Petition) होती है और उस अर्जी के पहले उन लोगों को नोटिस दे दिया जाता है जिनके हितों को उस बिल से बाधा पहुँच सकती है।

(३) उक्त अर्जी संसद के दोनों भवनों के एक-एक अफसर—जिन्हें असार्वजनिक विधेयकों के प्रार्थना-पत्र का परीक्षक (Examiners of Petition for Private Bills) कहते हैं–द्वारा देखी जाती है, और उस विधेयक की तत्सम्बन्धी आवश्यकताओं की पूर्ति पर उनके द्वारा विचार किया जाता है। जब विधेयक पेश करने वाले उन आवश्यकताओं की पूर्ति कर देते हैं तब परीक्षक प्रमाण-पत्र देते हैं और वह विधेयक संसद के किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है।

(४) इसके बाद विधेयक का प्रथम पठन होता है।

(५) इसके बाद द्वितीय पठन होता है। यदि इस समय विधेयक का विरोध नहीं हुआ तो वह Committee of Disinterested Members के पास भेज दिया जाता है जहाँ उस पर विचार होता है। यदि उसका विरोध हुआ तो वह असार्वजनिक विधेयक की किसी कमेटी के पास भेज दिया जाता है। वहाँ पर जिस प्रकार इन पर विचार होता है वह प्रणाली सार्वजनिक विधेयकों की विचार-प्रक्रिया से भिन्न है। असार्वजनिक विधेयक के सम्बन्ध में समिति की क्रिया अर्ध-न्यायिक होती है। समिति विधेयक के उद्देश्यों की छान-बीन करती है, और उसके बाद समर्थक तथा विरोधियों की युक्तियों को सुनती है। प्रत्येक पक्ष की ओर से वकील भाड़े पर किए जाते हैं। गवाह भी अपना-अपना बयान देते हैं। पूरी कार्यवाही

निष्पक्ष रूप से होती है। यदि कमेटी विधेयक सम्बन्धी बातों से सन्तुष्ट हो जाती है तो वह विधेयक आगे बढ़ता है अन्यथा वहीं खत्म हो जाता है। जिस विधेयक के पक्ष में समिति ने अपनी रिपोर्ट दे दी, वह लोकसभा में बिना वाद-विवाद के ही पास हो जाता है, और फिर दूसरे भवन में भेज दिया जाता है। जो समिति विधेयक पर विचार करती है वह उस विधेयक सम्बन्धी सरकारी विभाग से सम्पर्क रखती है, जिससे वह यह देख ले कि अमुक विधेयक किसी सरकारी नीति के विपरीत तो नहीं जा रहा है।

असार्वजनिक विधेयकों से लाभ और हानि—असार्वजनिक विधेयकों से लाभ और हानि दोनों हैं। इससे लाभ यह है कि प्रथम तो ऐसे विधेयकों पर निष्पक्ष रूप से छानबीन हो जाती है। दूसरी बात यह है कि यद्यपि विधेयक पेश करने वाले को तथा कमेटी को इसके सम्बन्ध में बहुत काम करना पड़ता है; परन्तु संसद का बहुत कुछ समय बच जाता है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा फ्रान्स वगैरह में विधेयकों में भेद नहीं किया जाता। इसका नतीजा यह होता है कि संसद को बहुत काम करना पड़ता है और कभी-कभी सरकारी विधेयकों के सम्बन्ध में काम देर से होता है। तीसरी बात यह है कि असार्वजनिक विधेयकों के विचार के समय दलबन्दी का कोई असर नहीं पड़ता। दोनों पक्षों की बहस सुनने के बाद ही निष्पक्ष रूप से समिति उस पर विचार करती है और फैसला देती है। समिति एक प्रकार से न्यायालय का कार्य करती है जहाँ समर्थक और विरोधी दोनों को अपने-अपने विचार स्पष्ट व स्वतन्त्र रूप से प्रकट करने का अधिकार है।

इस व्यवस्था में त्रुटि सिर्फ यही है कि खर्च बहुत होता है। वकीलों को बड़ी-बड़ी फीसें दी जाती हैं और गवाहों को बुलाने में बड़े-बड़े खर्च होते हैं। लेकिन लाभों को देखते हुए यह त्रुटि कुछ अर्थ नहीं रखती, इसीलिए यह व्यवस्था सफलतापूर्वक काम कर रही है।

धन-विधेयकों (Money Bills) के पास होने की प्रक्रिया—

जैसा कि पहले कहा है, धन सम्बन्धी विधेयक लोकसभा में ही पेश होते हैं। वित्तीय नीति पर नियन्त्रण करके ही लोकसभा इतना महत्व प्राप्त कर सकी है। वित्तीय नीति को बनाना और उसे लागू करना, धन उगाहना तथा खर्च करना—यह सब काम क्राउन का है। परन्तु बिना लोकसभा की स्वीकृति के कुछ भी नहीं हो सकता है। लोकसभा ही यह तय करती है कि कौन-कौन कर लगाये जायेंगे तथा आया हुआ धन किस प्रकार खर्च किया जायगा। धन के ऊपर लोकसभा का ही पूर्ण अधिकार है और इसके सम्बन्ध में लॉर्डसभा कुछ भी नहीं कह सकती। हमें अब यह देखना है कि धन-विधेयक किस प्रकार लोकसभा में पास होते हैं और उसकी क्या प्रक्रिया है।

धन-विधेयक के विषय में लोकसभा को कई मुख्य काम करने पड़ते हैं:—

(१) लोकसभा को उन स्त्रोतों और स्थितियों की जाँच करनी पड़ती है जिनसे और जिनमें राजस्व उगाहा जायगा।

(२) लोकसभा को सरकारी विभागों द्वारा तैयार किये हुए 'अनुमानों' (Estimates) की जाँच करनी पड़ती है और तै करना पड़ता है कि प्रत्येक विभाग पर कितना-कितना खर्च किया जाय।

(४) लोकसभा को यह देखना पड़ता है कि जो रुपया उसने मंजूर किया था वह किस प्रकार खर्च किया जा रहा है।

(५) लोकसभा को अन्त में यह भी देखना पड़ता है कि खर्च करने वाले विभागों के हिसाब की ठीक प्रकार जाँच हो।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोकसभा आय और व्यय के पूरे चिट्ठे की जाँच करती है और वित्तीय नीति पर पूरा-पूरा नियन्त्रण रखती है। पिछले एक परिच्छेद में हम बतला चुके हैं कि सभी सभ्य देशों में धन-सम्बन्धी मूल सिद्धान्त यह है कि जनता के प्रतिनिधियों द्वारा स्वीकृति पाए बिना न कोई कर लगाया जा सकता है और न एक पैसा खर्च किया जा सकता है। उपर्युक्त बातों से हम इस निष्कर्ष पर पहुँचते हैं कि ब्रिटेन में इस सिद्धान्त का अक्षरशः पालन होता है।

ब्रिटेन में राज्यकोष विभाग (The British Treasury) एक अत्यन्त शक्तिशाली संस्था है। एक ट्रेजरी बोर्ड (Treasury Board) होता है। प्रधान मन्त्री जो कि First Lord of the Treasury होता है, तथा चान्सलर ऑफ दी एक्सचेकर और अन्य अनेक जूनियर लॉर्ड इस बोर्ड के सदस्य होते हैं। परन्तु वास्तविक कार्यकर्त्ता चान्सलर ऑफ दी एक्सचेकर ही होता है। वही आय और व्यय को क्रम देता है, उनकी प्रत्येक मद पर नियन्त्रण रखता है।

विभिन्न विभागों के अधिकारियों की मदद से प्रति वर्ष खर्च का एक अनुमानित चिट्ठा तैयार किया जाता है। उसमें कुछ मदें—जैसे राष्ट्रीय ऋण, सिविल लिस्ट (राज-परिवार पर व्यय), न्यायाधीशों के वेतन और पेंशनें, संसदीय निर्वाचनों का व्यय, संचित-निधि सेवाओं (Consolidated Fund Services) का खर्च शामिल नहीं किए जाते। इनका अलग चिट्ठा तैयार किया जाता है। इसका मतलब यह नहीं है कि ऐसा व्यय लोकसभा के नियन्त्रण से परे है और वह उसमें कुछ परिवर्तन नहीं कर सकती। वह भी संसद के अधिनियमों से स्वीकृत है और इन व्ययों के मदों की वार्षिक मंजूरी की आवश्यकता नहीं पड़ती।

जब यह चिट्ठा तैयार कर लिया जाता है तब उसका पूर्व वर्ष के चिट्ठे से मिलान किया जाता है। चान्सलर तथा विविध विभागों के अध्यक्षों की अनेक

बैठकें होती हैं जिनमें खर्च की काफी काट-छाँट होती है। उसके बाद वह चिट्ठा केबिनेट के सामने रक्खा जाता है और केबिनेट की स्वीकृति के बाद चान्सलर ऑफ दी एक्सचैकर उसे लोकसभा के समक्ष प्रस्तुत करता है।

लोकसभा में प्रस्तुत होने के बाद सभा सम्पूर्ण सदन की समिति (Committee of the Whole House) के रूप में बैठती है। चान्सलर चिट्ठे के सम्बन्ध में भाषण देता है।

सम्पूर्ण सदन की समिति में अनुमानित आँकड़े अलग-अलग पेश किए जाते हैं, जिन पर बहस होती है और प्रत्येक विभाग के अध्यक्ष अपने-अपने अलग-अलग आँकड़े पेश करते हैं। इनमें सभा द्वारा कमी तो कर दी जाती है, परन्तु वृद्धि नहीं की जाती। विरोधी दल के सदस्य रोड़ा अटकाने की कोशिश करते हैं और उनके शक्तिशाली विरोध पर छोटे-छोटे खर्चों में कभी-कभी वृद्धि कर भी दी जाती है; परन्तु बड़े-बड़े मदों में मन्त्रिमण्डल बहुमत दल से अपील करता है और विजय प्राप्त कर लेता है। विरोधी दल का विरोध ज्यादा महत्व नहीं रखता।

लोकसभा चिट्ठे (Budget) के सम्बन्ध में दो प्रकार से कार्य करती है। यह तो कहा ही जा चुका है कि धन सम्बन्धी विधेयक लोकसभा की सम्पूर्ण समिति में ही रक्खे जाते हैं। जब यह सभा अनुमानित व्यय पर विचार करती है तब यह Committee of Supply कहलाती है, और जब यह आय के विभिन्न जरियों पर विचार करती है तब यह Committee of Ways and Means कहलाती है। सप्लाई की समिति द्वारा पास किए हुए प्रस्तावों के आधार पर विनियोग अधिनियम (Appropriation Act) तैयार किया जाता है, जिसमें यह विस्तृत उल्लेख होता है कि वित्तीय वर्ष में प्रत्येक विभाग द्वारा विभिन्न विषयों पर कितना-कितना खर्च किया जा सकता है। इसी प्रकार वेज़ और मीन्स की समिति द्वारा पास किए गये प्रस्तावों के आधार पर वित्त-विधेयक (Finance Bill) तैयार किया जाता है, जिसमें यह निश्चित होता है कि आगामी वर्ष में कौन-कौन से प्रत्यक्ष (Direct) व अप्रत्यक्ष (Indirect) कर लगाए जायँ और किस प्रकार उगाहे जायें। सब विनियोगों को प्रति वर्ष पास कराना आवश्यक नहीं और इसी तरह सब लागू करों को भी हर साल पास कराना आवश्यक नहीं। संसद चाहे तो इनमें परिवर्तन कर सकती है, नहीं तो बहुत से कर—जैसे मृत्यु-कर, स्टाम्प-कर, कस्टम्स ड्यूटीज (Customs Duties) आदि लागू रहते हैं और इनमें नए अधिनियम द्वारा ही परिवर्तन होते हैं।

इस प्रकार हम देखते हैं कि लोकसभा की दो महान् समितियों द्वारा वित्त के दो अधिनियम स्वीकृत होते हैं जिनके आधार पर आगामी वित्तीय वर्ष की आय और

व्यय की पूरी व्यवस्था निर्भर रहती है। लोकसभा में पास होने के बाद ये विधेयक (Finance Bill और Appropriation Bill) लॉर्डसभा में जाते हैं। लॉर्डसभा उन पर विचार तो कर सकती है परन्तु परिवर्तन या संशोधन नहीं कर सकती। वह चाहे उन्हें अस्वीकार करे या स्वीकार, वे राजा के पास भेज दिए जाते हैं और उसकी अनुमति मिलने पर विधि का रूप धारण कर लेते हैं।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि चान्सलर, विभिन्न विभागों के अध्यक्ष, केबिनेट तथा लोकसभा—सब मिलकर चिट्ठा तैयार करते हैं और स्वीकार करते हैं। इससे यह बात सिद्ध होती है कि जनता के ही प्रतिनिधि धन सम्बन्धी मामले की शक्ति अपने हाथ में लिये हुए हैं, और यह सिद्धान्त कि सभी सभ्य देशों में धन सम्बन्धी नीति जनता के प्रतिनिधियों द्वारा ही निर्धारित हो, ब्रिटेन में पूर्ण रूप से पालन किया जाता है।

वित्तीय व्यवस्था की विशेषताएँ :

ब्रिटिश वित्तीय व्यवस्था संसार में आदर्श मानी जाती है। इसकी कई **विशेषताएँ** हैं :

(१) पहली बात यह है कि वित्तीय कार्यक्रम एक इकाई के रूप में तैयार किया जाता है और उसकी पूरी जिम्मेदारी केबिनेट के ऊपर है। संयुक्त राज्य अमेरिका में हमें ऐसी व्यवस्था व उत्तरदायित्व की सीमा नज़र नहीं आती है।

(२) दूसरी बात यह है कि आय और व्यय दोनों का एक अधिकारी—लोकसभा—जिम्मेदार होता है और इसीलिए लोकसभा आय और व्यय का पूरा मिलान रखती है।

(३) जनता के प्रतिनिधियों के हाथ में पूर्ण रूप से वित्तीय नीति केन्द्रित है।

(४) वित्तीय नीति को अपने हाथ में रखकर लोकसभा मन्त्रियों पर नियन्त्रण रखती है।

ब्रिटेन की वित्तीय व्यवस्था में **दोष** भी हैं जो निम्नलिखित हैं :

(१) वित्तीय व्यवस्था में लोकसभा ने अपना बहुत कुछ अधिकार केबिनेट को सौंप दिया है। थैली (Purse) पर लोकसभा का नाममात्र को ही अधिकार है। वास्तविक अधिकार तो केबिनेट का है।

(२) दूसरी बात यह है कि पार्लियामेण्ट को वित्तीय मामलों में अपर्याप्त सूचना दी जाती है। बहुत से आय-व्यय के विस्तृत विवरण चिट्ठे में नहीं होते और इसीलिए लोकसभा के सदस्य देश की वास्तविक वित्तीय स्थिति को नहीं समझ पाते और उसे न समझने के कारण वे केबिनेट के ऊपर ही सब काम छोड़ देते हैं।

(३) तीसरी बात यह है कि बजट सम्बन्धी मामलों के विचारार्थ संसद में समय अपर्याप्त दिया जाता है। करोड़ों पौण्डों के लिये सिर्फ २० दिन ही दिए जाते हैं। परिणाम यह होता है कि समस्त धन-राशियों पर पूर्ण रूप से विचार नहीं हो पाता और अन्तिम दिन बिना विचार के ही मतदान हो जाता है।

(४) चौथी बात यह है कि बजट के विचार के लिए पूरी सभा बैठती है, और यह काबू के बाहर की बात है कि किसी विषय में इतने सदस्यों द्वारा ठीक-ठीक और एक समय पर विचार किया जा सके।

(५) पाँचवीं बात यह है कि वित्तीय नीति में केबिनेट का प्रभुत्व होने के कारण दलबन्दी काम करती है। विरोधी दल वाले आवाज उठाते हैं, परन्तु उनकी आवाज छोटे-छोटे मदों पर तो कुछ काम करती है, बड़े-बड़े मदों पर नहीं। इसीलिए निष्पक्ष, स्वतन्त्र और रचनात्मक आलोचना नहीं हो पाती।

इस पद्धति में काफी समय से सुधार की आवश्यकता समझी जा रही है और एक-दो बार विशिष्ट समितियां (Select Committees) भी इसमें सुधार करने के लिए नियुक्त की गई हैं, परन्तु अभी तक कोई सुधार-योजना सफल नहीं हुई है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the procedure of passing (*a*) a public bill other than a money bill, and (*b*) a money bill.

(*Agra, 1938*; *Punjab, 1936, 1938*; *Patna, 1940*; *Calcutta, 1934*)

दसवाँ परिच्छेद

राजनैतिक दल और उनकी व्यवस्था

विषय-प्रवेश :

समस्त जनतन्त्रीय राज्यों में अनेक प्रकार के समुदाय देखने में आते हैं, जिनका संगठन मनुष्यों के विशिष्ट उद्देश्यों को लेकर किया गया है। उदाहरण के लिये, व्यापार-मण्डल, मजदूर-संघ, शिक्षक-समुदाय, पोस्टल यूनियन, विश्वविद्यालय, धार्मिक समुदाय आदि। ये इसलिये बनाये जाते हैं कि मनुष्य अपने तत्सम्बन्धी हितों की रक्षा कर सकें। इन समुदायों के सदस्यों का क्षेत्र अपने-अपने विषय तक सीमित रहता है, परन्तु बहुत से सार्वजनिक मामलों में उनके विचार एक-दूसरे से बहुत कुछ मिलते हैं। उनमें से बहुत से मिलकर बड़े-बड़े दल बनाते हैं, जिससे वे राज्य की बागडोर अपने हाथ में ले सकें और इस प्रकार अपने हितों की रक्षा कर सकें। इसके लिये वे अपने उद्देश्यों का प्रचार करते हैं और अपने-अपने दलों के समर्थकों की अधिक से अधिक संख्या बढ़ाने का प्रयत्न करते हैं। इनका ध्येय राजनैतिक सत्ता को अपनाना होता है, जिससे उनके हितों की रक्षा हो सके। ये दल सरकार के अङ्ग नहीं होते। संविधान या विधि में उनका कोई उल्लेख नहीं होता। परन्तु मतदाताओं के द्वारा जिस दल को राजसत्ता सौंप दी जाती है, वह फिर शासन की बागडोर हाथ में रखता है, जब तक कि उससे वह छीन न ली जाय। ब्रिटेन में ऐसे दल बहुत ही शक्तिशाली हैं। इसका एक कारण तो यह है कि दलीय संगठन वहाँ बहुत दिनों से चला आ रहा है। दूसरे ब्रिटेन में एक समय में दो ही दलों का जोर रहा है, यद्यपि इस समय भी वहाँ तीन प्रमुख दल हैं और कई छोटे-छोटे दल हैं। परन्तु वर्तमान काल में शक्तिशाली दल दो ही हैं—अनुदार (Conservative) दल, और श्रम (Labour) दल। जब कोई दल विजय पाकर अपनी सरकार बनाता है तो वह शासन की नीति पूर्णतया अपने दलीय आदर्शों के अनुकूल ढालता है।

प्रत्येक दल के अलग-अलग सिद्धान्त और आदर्श हैं और शासन की नीति में उन का पूर्ण रूप से आचरण किया जाता है। इङ्गलैण्ड की जनता उनसे भली-भाँति परिचित है और जब वह एक दल को हटाकर दूसरे दल को शासन-कार्य सौंपती है तब वह इसलिये यह कार्य नहीं करती कि उसे उस दल से प्रेम है, बल्कि इसलिये कि वह उस दल की नीति को चाहती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि वह एक नीति के बजाय दूसरी नीति से अपना शासन-कार्य चलवाना चाहती है न कि एक दल के बजाय दूसरे दल से।

इस कथन से यह स्पष्ट है कि ब्रिटेन के संविधान को पढ़ते समय वहाँ की दलीय व्यवस्था का अध्ययन करना बहुत आवश्यक है। यद्यपि संविधान में उनके लिये कोई स्थान नहीं है, परन्तु वे बहुत कुछ अंश तक शासन-कार्य को अपने आदर्शों और सिद्धान्तों के आधार पर परिवर्तित करते हैं। इसीलिए एक आधुनिक लेखक ने कहा है कि "ब्रिटिश सरकार का वास्तविक अध्ययन दलों से ही प्रारम्भ हो और उन्हीं पर समाप्त हो। मध्य में उनका विस्तृत रूप से अध्ययन हो"।[1]

जनतन्त्र और दलबन्दी :

प्रत्येक जनतन्त्रीय राज्य में दलों का होना आवश्यक है। बिना उनके जनतन्त्र चल ही नहीं सकता, क्योंकि स्वतन्त्र रूप से अलग-अलग राजनैतिक विचार रखने वाले व्यक्ति सामूहिक रूप से शासन-कार्य नहीं चला सकते।[2] आज लोकसभा में ६०० से अधिक सदस्य हैं। यदि उन सब के अलग-अलग विचार हों, तो काम कैसे चले। वे किसी भी शासन-नीति पर एकमत सहज में नहीं हो सकते। दूसरी बात यह है कि बिना किसी दल का आश्रय लिये उनका निर्वाचित होना भी बहुत मुश्किल है। तीसरी बात यह है कि बिना दलीय संगठन के मन्त्रियों की नीति का समर्थन होना भी असम्भव है। "इङ्गलैण्ड की शासन-प्रणाली की मूलभूत विशेषता यह है कि वहाँ पर मन्त्री लोकसभा के प्रति अपने कार्यों के लिये उत्तरदायी हैं, परन्तु बिना दलीय आधार के ऐसा उत्तरदायित्व कभी सम्भव नहीं है।"[3] बिना दलीय संगठन के मन्त्रिमण्डल में संगठन नहीं होगा। कोई उनकी नीति का समर्थन नहीं करेगा, और यदि किसी मन्त्रिमण्डल ने त्यागपत्र दे दिया तो दूसरा मन्त्रिमण्डल भी किसी ठोस आधार पर खड़ा नहीं रह सकेगा और न उसकी कोई निश्चित नीति ही होगी जिसको शासन का आधारभूत मान कर लोकसभा एक मन्त्रिमण्डल को त्यागपत्र के लिये विवश कर दूसरे को शासन-कार्य सौंपे और उसकी नीति में विश्वास करे। रेम्ज़े म्योर के शब्दों में "दल का नेता होने के कारण ही प्रधान मन्त्री को इतनी शक्ति प्राप्त होती है, दल की समान सदस्यता के कारण ही केबिनेट में एकता तथा उद्देश्य की एकता होती है, लोकसभा में समर्थन करने वाली पार्टी के कारण ही केबिनेट अपना शासन-कार्य कर पाती है। दल ही (जब दल का बहुमत होता है) उसे (केबिनेट) शासन-कार्य में पूर्ण तानाशाही प्रदान करता है और इस तानाशाही पर एकमात्र नियन्त्रण रखने वाला

1 "Party government," says Bagehot, "is the vital principle of representative government" The alternative to party government is dictatorship. Government requires leaders, leaders require not an incoherent mob behind them but an organised following to canalise the issues.

2 Jennings : The British Constitution.

3 Ogg & Zink : op. cit., p. 296.

यह डर है कि कहीं ऐसा न हो कि किसी भयानक भूल के कारण उसका दल कमजोर जो जाय और दूसरे चुनाव में हार जाय।"[1]

द्वि-दल प्रणाली तथा ब्रिटेन—

उपर्युक्त कथन से एक बात यह स्पष्ट होती है कि केबिनेट-सरकार केवल दल ही के आधार पर नहीं बनती है, वरन् इसमें यह बात भी निश्चित है कि इसको सफल बनाने के लिये दो दलों का होना आवश्यक है। एक दल होने पर विरोध नहीं होगा और केबिनेट की तानाशाही उच्छृङ्खल तथा अनियन्त्रित होगी, क्योंकि उसे परास्त होने का भय नहीं होगा। दो से अधिक दल (यदि दोनों दल बराबर शक्तिशाली हैं) होने पर मिश्रित सरकार (Coalition Government) बनेगी और परिणाम यह होगा (जैसा कि फ्रान्स में है) कि केबिनेट को अपनी स्थिति के सम्बन्ध में हमेशा खतरा रहेगा। काम भी एकमत होकर सफलतापूर्वक नहीं होगा। मिश्रित सरकारें किसी विशेष परिस्थिति (जैसे युद्ध-काल) में ही सफल हो सकती हैं जब कि जनता घरेलू झगड़ों को उठा कर अलग रख देती है और उन सब का एक ही उद्देश्य (अर्थात् विजय प्राप्त करना) बन जाता है। परन्तु शान्ति के समय ऐसी सरकारें अस्थायी होने तथा उनमें संगठन न होने से सफल नहीं होतीं। 'अपनी-अपनी बाँसुरी और अपना-अपना राग' वाली कहावत चरितार्थ होती है।

द्वि-दल प्रणाली का सबसे बड़ा फायदा यह है कि इसके कारण किसी एक समय पर तथा एक मत और संगठित दल को शासन-भार सौंप दिया जाता है जो सामूहिक रूप में उत्तरदायित्व निभाते हुए शासन चलाता है। द्वि-दल प्रणाली से केबिनेट में स्थिरता तथा अविरलता का संचार होता है, इसलिए वह फुर्ती और सावधानी से कार्य करती है।[2]

अगर ऐतिहासिक दृष्टि से देखा जाय तो ब्रिटेन में दो दल ही रहे हैं। ब्रिटेन में दल कालान्तर से चले आ रहे हैं। मध्यकालीन युग में भी लंकास्ट्रियन (Lancastrian) तथा यॉर्किस्ट (Yorkist) थे। स्टुअर्ट वंश के जमाने में राउण्डहैड्स (Roundheads) और कैवेलियर्स (Cavaliers) थे। चार्ल्स द्वितीय के समय

---

1 "It is the leadership of the party that gives to the Prime Minister his enormous power ; it is common membership of a party that gives unity of character and aims to a Cabinet—endows it with a complete dictatorship over the whole range of government and the dictatorship is only limited or qualified by the fear of those who wield it (opposition)."
(*Ramsay Muir : How Britain is Governed, p. 296*)

2 'Ministerial responsibility and the two-party system when yoked together make for a firm, strong, and quick-acting government but the combination may readily be used to make good too strong, too quick-acting and lacking in spirit of compromise which is the essence of a truely representative govt." (*Munno : Government of Europe, p. 278*)

में संसद के दो दल—ह्विग (Whig) और टोरी (Tory)—बन गये, जिनके आधुनिक नाम उदार (Liborals) और अनुदार (Conservatives) हैं। गत महायुद्ध से एक दल और उत्पन्न हुआ जो आजकल काफी शक्तिशाली है। यह है श्रम दल (Labour party)। इस प्रकार आजकल तीन दल प्रमुख बन गये हैं, परन्तु इनमें उदार दल की शक्ति बहुत कम हो गई है। शक्तिशाली दल दो–अनुदार और श्रम—ही हैं। इन दलों के अतिरिक्त इङ्गलैण्ड में और भी दल हैं जैसे सोशलिस्ट दल, फासिस्ट दल आदि, परन्तु ये न तो शक्तिशाली हैं और न शासन-कार्य में उनका कोई हाथ रहा है।

ब्रिटेन में द्वि-दल प्रणाली को कायम रखने के लिए कई बातों ने सहयोग दिया है (हालाँकि हम जानते हैं कि तीसरा दल—उदार दल—भी भविष्य में कायम रहेगा; परन्तु इतना अवश्य है कि निकट भविष्य में शक्तिशाली न हो पावेगा और अनुदार तथा श्रम दल ही राष्ट्र के भार को अपना-अपना मौका आने पर सम्हालते रहेंगे)। परम्परा ने तथा आर्थिक हितों ने द्वि-दल प्रणाली को बहुत कुछ शक्ति प्रदान की है। उदार दल की ह्रास होती हुई शक्ति के देखने से विदित होगा कि ब्रिटेन में लोग दो दलों को नजर में रखते हुए ही वोट देते हैं। वे लोग अधिकांशत: तीसरी पार्टी पसन्द भी नहीं करते।[1] इसलिए अगर दो दल शक्तिशाली हैं और तीसरे दल की शक्ति क्षीण हो रही है तो उसके प्रति उनकी सहानुभूति भी नहीं होती। मतदाताओं को द्वि-दल प्रणाली की आदत पड़ गई है और मत देते समय वे सिर्फ यही ध्यान रखते हैं कि "सरकार" (Government) को वोट दें या "विरोध" (Opposition) को। संसद का संगठन भी द्वि-दल प्रणाली के आधार पर ही है। तीसरी बात यह भी है कि तीसरे या चौथे दल को बनाना, उनका संगठन करना है भी बड़ी टेढ़ी खीर। इतना रुपया कहाँ से प्राप्त हो और इसके लिये योग्य उम्मीदवार भी कहाँ से आवें, जब कि वह पार्टी उन्हें भविष्य में निश्चयपूर्वक कोई आशा (राजनैतिक) भी नहीं दिला सकती।

न के राजनैतिक दलों पर ऐतिहासिक दृष्टिपात—

आधुनिक ब्रिटिश दलों के बारे में, जिनसे हमें यहाँ सम्बन्ध है, थोड़ा सा ऐतिहासिक दृष्टिपात करना आवश्यक है। जैसा कि हम ऊपर बता चुके हैं, दलीय प्रणाली इङ्गलैण्ड में बहुत समय से चली आ रही है। परन्तु वर्तमान दलों की उत्पत्ति के

---

1 "Minority governments are weak because they cannot govern Coalition governments are generally weak because of internal discussion. In a world where strong and rapid government is necessary, only the two-party system works very well."

(*W. Ivor Jennings : The British Constitution, p. 63*)

अंकुर रानी एलिजबेथ के जमाने में शुरू हुए। उस समय प्यूरिटन दल वाले क्राउन की शक्ति के महान् विरोधी थे। जेम्स और चार्ल्स प्रथम के समय में उन्होंने राजा की शक्ति का महान् विरोध किया और सन् १६४२ में विद्रोह करके अपने विरोध का परिचय दिया। अन्त में सन् १६४९ ई० में चार्ल्स को फाँसी भी दे डाली। चार्ल्स प्रथम के समय में दो दल प्रधान थे। जो राजा के पक्ष में थे वे कैवेलियर कहलाते थे और जो उसके विरोधी थे वे राउण्डहैड कहलाते थे। चार्ल्स द्वितीय के समय में बहिष्कार-प्रस्ताव (Exclusion Bill) के पेश होने पर पार्लियामेण्ट में दो शक्तिशाली दल बन गए। इनका भी आधार वही था। जो लोग इस पक्ष में थे कि जेम्स द्वितीय को चार्ल्स द्वितीय के बाद गद्दी न मिले, अर्थात् उसे सिंहासन से बहिष्कृत कर दिया जाय, वे ह्विग (Whig) कहलाए, और जो उसके पक्ष में थे, वे टोरी (Tory) कहलाए। इस प्रकार चार्ल्स प्रथम के समय के राउण्डहैड तथा कैवेलियर क्रमशः ह्विग और टोरी नाम से प्रसिद्ध हुए। सन् १८३२ के सुधार-नियम के पश्चात् ह्विग दल वालों ने अपने दल का नाम उदार दल (Liberal party) रक्खा और टोरी दल वालों ने अनुदार दल या रूढ़िवादी दल (Conservative party) रक्खा। उदार दल वालों का समर्थक मध्यम वर्ग था। वे सरकार में परिवर्तन के पक्षपाती थे। वे स्वतन्त्र व्यापार और व्यक्तिवादी सिद्धान्तों को मानते थे और वयस्क मताधिकार के पक्ष में थे। अनुदार दल वाले परिवर्तन के पक्ष में न थे। वे राजा की शक्ति, लॉर्डसभा, स्थापित चर्च, जमींदारी, पूँजीवाद तथा ब्रिटिश साम्राज्यवाद के समर्थक थे। १९ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में दो महान् व्यक्तियों—ग्लैड्स्टन तथा डिज़रैले—ने क्रमशः उदार तथा अनुदार दलों का बड़े जोश के साथ संगठन किया, और कभी एक तो कभी दूसरा शासन की सत्ता को अपने दल के बूते पर काबू में किए रहा।

ग्लैड्स्टन के दल में आयरलैण्ड की समस्या पर सन् १८८६ में फूट पड़ गई। ग्लैड्स्टन आयरलैण्ड को होम रूल देने के पक्ष में था परन्तु उसके दल वाले विपक्ष में थे। परिणाम यह हुआ कि उदार दल में एक यूनियनिस्ट दल (Unionist party) बन गया, जो आयरलैण्ड को होम रूल देने के पक्ष में नहीं था। सन् १८८६ से १८९२ ई० तक इस दल की शक्ति बढ़ी रही। ग्लैड्स्टन आयरलैण्ड की समस्या को भी हल नहीं कर सका और उसके दल में फूट भी पड़ गई।

परन्तु सन् १८६८ से प्रथम महायुद्ध तक इङ्गलैण्ड में प्रधान दल दो ही रहे। एक के बाद दूसरे के हाथ में शक्ति का क्रम रहा। सन् १८६८-७४, १८८०-८६, १८९२-९५ और १९०५-१५ में उदार दल वालों के हाथ में शक्ति रही और सन् १८७४-८०, १८८६-९२, १८९५-१९०५ में अनुदार दल वाले शासन-शक्ति अपने पास रक्खे रहे।

सन् १९०५-१५ तक जो उदार दल वालों के हाथ शक्ति रही, उसमें एक

तृतीय दल का जन्म हुआ और वह है श्रम दल। इसके जन्म के कारण दो शक्तिशाली शक्तियाँ हैं, जिन्हें सन् १८७६ और सन् १८८४ के संसदीय सुधार-नियमों ने जन्म दिया था। वे शक्तियाँ हैं ट्रेड यूनियनिज्म (Trade Unionism) और समाजवाद (Socialism)। पहली शक्ति ने तो दलीय संगठन के लिए रुपया इकट्ठा किया और दूसरी ने नेतृत्व, जोश और शक्ति। प्रारम्भ में श्रम दल की शक्ति बहुत कम थी। सन् १९०६ में श्रम दल वाले सभा में सिर्फ २९ सीटें ही प्राप्त कर सके। प्रथम महायुद्ध के प्रारम्भ होने के समय भी यह दल उदार दल के ऊपर ही निर्भर था, और उसी को सामाजिक सुधार करने के लिए सहायता देता रहता था।

परन्तु युद्ध ने परिस्थिति को बदल दिया। मजदूरों के वर्ग में विशेष आन्तरिक जागृति हो गई। द्वि-दल प्रणाली के स्थान पर त्रि-दल प्रणाली शुरू हुई और महायुद्धकालीन मिश्रित मन्त्रिमण्डल में श्रम दल का भी एक सदस्य ले लिया गया। श्रम दल के नेता रैम्जे मैकडोनेल्ड तथा सिडनी वैब ने भारी संख्या में जनता का समर्थन प्राप्त किया और सन् १९१८ में यह दल स्वतन्त्र रूप में एक नवीन आदर्श लेकर उसे पूरा करने के लिए सन्नद्ध हुआ। इसने अपने संकुचित क्षेत्र को अलग फेंक कर एक नवीन राष्ट्रीय नीति अपनाई और अपने दल में केवल "हाथ से काम करने वाले" मजदूर ही नहीं, वरन् "दिमाग से काम करने वाले" मजदूर भी सम्मिलित किए।

इसके बाद श्रम दल की शक्ति बढ़ती गई। उसे लोकसभा में सन् १९२२ में १४३, सन् १९२३ में १९१ और सन् १९२४ में २५१ सीटें प्राप्त हुईं। सन् १९२३ में लोकसभा में तीन दल थे, परन्तु बहुमत किसी का नहीं था। देश को एक नया अनुभव हुआ और श्रम दल की सरकार बन गई, यद्यपि बहुमत उसका भी नहीं था। परन्तु यह तभी तक के लिए थी जब तक उदार दल वाले उसका समर्थन करते रहें। इस प्रकार द्वि-दल प्रणाली के समाप्त होने से अल्पमत सरकार बन गई। इसके बाद सन् १९२९ में भी वही स्थिति पुनः पैदा हो गई और किसी दल का पूर्ण बहुमत न होने के कारण श्रम दल की सरकार बन गई। इस समय उदार दल वालों के हाथ शक्ति-सन्तुलन था, और चूँकि वे श्रम दल का समर्थन करते थे, इस लिए उनकी सरकार बन गई थी। धीरे-धीरे उदार दल वालों की शक्ति घटती गई और श्रम दल की शक्ति बढ़ती गई। सन् १९४५ में श्रम दल की शक्ति बहुत बढ़ गई और उनका बहुमत हो गया। उदार दल बिल्कुल शक्तिहीन हो गया। श्रम दल की सरकार बन गई और अनुदार दल विरोधी दल बन गया। पिछले चुनावों में अनुदार दल की शक्ति बढ़ गई और उसकी सरकार बनी। आधुनिक मन्त्रिमण्डल अनुदार दल वालों का है।

इङ्गलैण्ड के विभिन्न दलों के राजनैतिक सिद्धान्तों का संक्षिप्त विवरण

अनुदार दल व उसके सिद्धान्त :

प्रारम्भ में यह दल 'टोरी' दल कहलाता था। आजकल इसे अनुदार या रूढ़िवादी दल कहते हैं। जैसा कि 'रूढ़िवादी' (Conservative) शब्द से विदित होता है यह दल परिवर्तन का विरोधी है और परम्परागत संस्थाओं, प्रथाओं व विचार-धाराओं की रक्षा करने के पक्ष में है। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं कि रूढ़िवादी दल परिवर्तन के बिलकुल विरुद्ध है। परिवर्तन तो जीवन का नियम है, उसे अलग नहीं किया जा सकता। अतः रूढ़िवादी दल भी परिवर्तन को बिल्कुल नहीं फेंक देता बल्कि इस बात पर जोर देता है कि परिवर्तन धीरे-धीरे और सावधानी से हो।

चूँकि रूढ़िवादी दल वाले शीघ्र परिवर्तन नहीं चाहते इसलिए हम उनके उद्देश्यों के विषय में कह सकते हैं कि वे प्राचीन सामाजिक ढाँचे को ज्यों का त्यों रखना चाहते हैं। अतः वे लोग पूँजीवाद के पक्ष में हैं और साथ ही ब्रिटिश साम्राज्यवाद की भी रक्षा करना चाहते हैं। जिन राजनैतिक संस्थाओं को वे बनाए रखना चाहते हैं, वे हैं क्राउन के विशेषाधिकार (Prerogatives), लॉर्डसभा की स्वतन्त्रता, इङ्गलैण्ड के चर्च की विशेष स्थिति, राष्ट्रीय एकता, शक्तिशाली नौकरशाही, गैर-सरकारी सम्पत्ति की राज्य के हस्तक्षेप से विमुक्ति, बड़े-बड़े जमींदारों तथा औद्योगिक स्वामियों के हितों की रक्षा।

रूढ़िवादी दल वाले अपने इन सिद्धान्तों व अपनी संस्थाओं के कट्टर पक्षपाती हैं। उन्होंने हमेशा ब्रिटिश साम्राज्यवाद की रक्षा की है। जब आयरलैण्ड को स्वतन्त्रता दी गई तो उन्होंने उसका बड़ा विरोध किया। चर्चिल महोदय अपने पिछले मन्त्रित्व-काल में भारत को स्वतन्त्रता देने के हमेशा विपक्ष में रहे। श्रम दल वालों की सरकार बनने पर भारत को स्वतन्त्रता प्रदान की गई। ये लोग प्रबल नौकरशाही के पक्ष में हैं और हमेशा लॉर्डसभा की शक्ति को पुनः वापस दिलाने की कोशिश में रहे हैं।

उपर्युक्त कथन से हम यह समझ सकते हैं कि रूढ़िवादी दल के समर्थक बड़े-बड़े लोग—धनिक, उपाधि-प्राप्त व्यक्ति, जमींदार, साहूकार, चर्च के सदस्य, विश्वविद्यालय के अधिकांश स्नातक, व्यापारी, व्यवसायी आदि हैं। रूढ़िवादी दल वालों का समाचार-पत्रों, पत्रिकाओं आदि पर विशेष नियन्त्रण है, इसलिए बहुत कुछ जनमत भी इनके पक्ष में है।

रूढ़िवादी दल वाले सुधारों का विरोध तो नहीं करते, परन्तु वे सुधार बहुत धीरे-धीरे करना चाहते हैं। कभी-कभी तो उन्होंने सुधारों में उदार दल वालों से भी अधिक दिलचस्पी दिखलाई है। सन् १८६७ का सुधार-नियम तथा सन् १८८८ का काउण्टी-शासन की पुनर्रचना करने तथा उन्हें लोकतन्त्रीय बनाने का एक्ट उन्हीं के

द्वारा पारित किया गया था। एक बात और ध्यान में रखनी है। रूढ़िवादियों में भी तीन पक्ष हैं—वाम, दक्षिण तथा मध्य। 'वामपक्षी' जो प्रायः "युवक रूढ़िवादी" कहलाते हैं, उदार दल वालों के समान बहुत उदार हैं। दक्षिणपक्षी प्रायः कट्टर (Die-hard) रूढ़िवादी हैं। अधिकांश रूढ़िवादी मध्य पक्ष के हैं जो समय के साथ प्रगतिशील बनते जा रहे हैं।

उदार और रूढ़िवादी दल के सिद्धान्तों की तुलना—इङ्गलैण्ड के राजनैतिक दलों के ऐतिहासिक दृष्टिपात से पता चलता है कि उदार दल वाले रूढ़िवादी दल वालों के सदा विरोधी रहे हैं। रूढ़िवादी दल वाले परम्परा तथा क्राउन के विशेषाधिकारों के पक्षपाती रहे, लेकिन उदार दल वालों ने हमेशा इनका विरोध किया। उदार दल का आरम्भ तब हुआ जब सुधारवादियों ने धार्मिक संघर्ष प्रारम्भ किया और यह निर्णय किया कि धार्मिक क्षेत्र में व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता है, चर्चाधिकारियों को मनमानी करने का कोई अधिकार नहीं है। अतः उदार दल वाले हमेशा मनमाने शासन के, चाहे वह राज्य में हो अथवा चर्च में, विरोधी रहे हैं। उनका विचार है कि परिवर्तन प्रकृति का नियम है और इसीलिए "नए अनुभव को स्वीकार किया जावे और स्वतन्त्र विकास का समर्थन किया जावे।" उदार दल वालों की दृष्टि में राज्य की अपेक्षा व्यक्ति का अधिक महत्व है और उनका यह विश्वास है कि राज्य का अन्तिम उद्देश्य पूर्ण मानव का सृजन करना है। इसीलिए ये लोग परम्परा के पक्ष में नहीं हैं, बदलती हुई स्थितियों के साथ-साथ सामाजिक तथा आर्थिक परिवर्तनों के पक्ष में हैं। वे स्थापित अधिकारों को छोड़ मानव के अधिकारों पर विशेष जोर देते हैं।

आर्थिक क्षेत्र में वे उद्योग-धन्धों को प्रोत्साहन देकर जन-साधारण का आर्थिक स्तर ऊँचा उठाना चाहते हैं। वे स्वतन्त्र व्यापार और स्वतन्त्र प्रतियोगिता के पक्ष में हैं।

वैदेशिक नीति के सम्बन्ध में उदार दल वालों की इच्छा है कि राष्ट्रों और देशों को साम्राज्य के अन्दर अधिकाधिक अधिकार प्रदान किये जायँ। उदार दल के मन्त्रि-मण्डल ने ही आयरलैण्ड को स्वशासन देने की प्रस्तावना की थी जिसका रूढ़िवादियों ने घोर विरोध किया था।

जहाँ तक पूँजीवाद और समाजवाद का सम्बन्ध है, रूढ़िवादी पूँजीवाद के पक्ष में हैं। ये समाजवाद को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के लिये खतरनाक समझते हैं, परन्तु पूँजी-वाद में सुधार करने के पक्ष में हैं। वे उद्योगों का राष्ट्रीयकरण करने के पक्ष में हैं और इस पक्ष में हैं कि जिन कार्यों में व्यक्ति असमर्थ हुए हैं वे सब कार्य राज्य अपने हाथ में ले ले। उनके सिद्धान्त इस क्षेत्र में समाजवाद से बहुत कुछ मिलते हैं। वे चाहते हैं कि कोयले की खानों का राष्ट्रीयकरण कर दिया जाय, उद्योगों के लिये सम्पूर्ण राष्ट्र में एक ही नीति का अनुसरण किया जाय, बेकारी

की समस्या को हल किया जाय और जन-साधारण की पेट-पूजा के लिये कम से कम वेतन तथा अन्य साधन निश्चित कर दिये जायँ, विदेशों से अच्छे व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित किये जायँ और राष्ट्र की बची हुई सम्पत्ति राष्ट्र के हित के लिये लगाई जाय।

उदारवादी आधुनिक भूमि-व्यवस्था के पक्ष में नहीं हैं। वे चाहते हैं कि जमीन उन लोगों से छीन ली जाय जो खेती स्वयं नहीं करते हैं और उन्हें दे दी जाय जो स्वयं करते हैं। वे यह भी चाहते हैं कि जिन लोगों को उत्तराधिकार में भारी सम्पत्ति प्राप्त होती है, उन पर भारी कर लगाया जाय।

जिस समय उदार दल अपनी उन्नति के शिखर पर था, उस समय उसमें कई प्रकार के सदस्य थे। उनमें वृत्ति वाले (Professional), व्यापारी, मध्यम वर्ग के नागरिक, छोटे-छोटे दूकानदार, कुछ धनिक कृपक और नगर के श्रमिक सम्मिलित थे।

आजकल इस दल की शक्ति का ह्रास हो रहा है। इसकी शक्ति के पतन का मुख्य कारण यह है कि इस दल के पास कोई स्पष्ट और सीधा कार्यक्रम नहीं है। यह पूँजीवाद और समाजवाद के बीच का रास्ता पकड़ना चाहता है। इसीलिये इसके पक्ष में न तो धनिक ही हैं और न मजदूर ही। इसके नेताओं में भी इसी कारण काफी मतभेद है, जिसके कारण इस दल का उचित संगठन भी नहीं हो पाता।

एक बात हमें ध्यान में और रखनी है। हालाँकि उदार और रूढ़िवादी दोनों एक दूसरे के ऐतिहासिक विरोधी रहे हैं, फिर भी इन दोनों में सिद्धान्तों के क्षेत्र में बहुत कुछ समानता थी। दोनों ने ही शासन के प्रस्तुत ढाँचे को स्वीकार कर लिया, और पूँजीवाद के आधार पर स्थित देश की आर्थिक प्रणाली को स्वीकार कर लिया, यद्यपि उदार दल वाले कुछ परिवर्तनों के पक्ष में थे। दोनों ने ही स्वतन्त्रता, वैयक्तिकता तथा प्रतियोगिता को आर्थिक क्षेत्र में स्थान दिया। दोनों ही ने मतदान, करारोपण की नीति, सामाजिक सुधार-नियम आदि मामलों का समर्थन किया। यद्यपि इनके बारे में दोनों के विचार भिन्न थे, परन्तु फिर भी दोनों यह चाहते थे कि इनका शान्तिपूर्ण तरीकों से हल हो जाय। दोनों ने ही इस बात को मान लिया कि दोनों में से प्रत्येक दल राजनीति का प्रमुख अंग है और शासन-कार्य को चला सकता है। आधुनिक काल के एक अँग्रेज लेखक का कथन है कि "जिन मनुष्यों ने दोनों दलों के भाग्य-चक्र को चलाया वे प्रायः एक ही सामाजिक वातावरण से आये, एक ही भाषा बोलते थे, प्रायः एक ही वातावरण में घूमते थे, एक ही विचार-भण्डार के ऊपर निर्भर थे। वे एक ही प्रकार सोचते थे, क्योंकि उनका एक-सा ही जीवन था। एक दल के सदस्य दूसरे दल में मिल जाते थे (जैसा कि बहुतों ने किया) और

साथ ही उन्हें अपने सिद्धान्तों में कोई मूल परिवर्तन भी नहीं करना पड़ता था।"[1] वही लेखक फिर कहता है कि "सन् १८६६ से हमारे राज्य में व्यावहारिक दृष्टिकोण से एक ही दल का राज्य रहा। यह बेशक दो भागों में विभक्त रहा है और इसमें आन्तरिक मतभेद भी अवश्य रहा है, परन्तु वह रहा है परिवर्तनों की रफ्तार के सम्बन्ध में, परिवर्तनों के मूल सिद्धान्तों के विषय में कभी गम्भीर मतभेद नहीं रहा।"[2]

श्रमिक दल और उसके सिद्धान्त :

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, श्रम दल का जन्म उन्नीसवीं शताब्दी में हुआ है और जब से इसका जन्म हुआ है तब से बराबर इसकी शक्ति बढ़ती जा रही है। आरम्भ में इसके केवल २६ सदस्य थे। सन् १६१० में इसे ४० सीटें मिल गई। सन् १६१८ में ५७, सन् १६२२ में १४३, सन् १६२३ में १६१, सन् १६२४ में २५१ और सन् १६२६ में इसे २८६ सीटें मिलीं। सन् १६३१ और सन् १६३५ के चुनावों में इसके नेताओं में मतभेद होने के कारण इसे कम सीटें मिलीं परन्तु सन् १६४५ में इसने सब दलों को परास्त कर मन्त्रिमण्डल बनाया। अभी पिछले चुनावों में रूढ़िवादी दल की विजय हुई और चर्चिल महोदय का मन्त्रिमण्डल बना।

श्रम दल एक नवीन सामाजिक ढाँचा बनाने के पक्ष में है। श्रम दल ने राजनैतिक क्षेत्र में "एक नई, विस्तृत, प्रत्यक्ष रूप में भयंकर तथा प्रभावशाली राजनैतिक शक्ति को अपनाया है, जो एक नवीन सामाजिक ढाँचा बनाने तथा सरकार द्वारा उस ढाँचे को बनाने में हाथ बँटाने के पक्ष में है।"[3] श्रम दल समाजवाद के आधार पर एक ऐसी सामाजिक व्यवस्था करना चाहता है जिसमें व्यक्तिगत सम्पत्ति के स्थान पर सम्पूर्ण राष्ट्र की सम्पत्ति जनता के हाथ में रहेगी। महत्वपूर्ण उद्योग-धन्धों में गैर-सरकारी स्वामित्व के स्थान पर सार्वजनिक स्वामित्व होगा। गरीबी और बेकारी को दूर करने का प्रयत्न करना इसका मुख्य उद्देश्य है। इङ्गलैण्ड को पूँजीवादी राज्य के स्थान पर समाजवादी राज्य बनाना, सामाजिक सेवाओं की वृद्धि करना, धन का न्यायपूर्ण वितरण करना, जन-साधारण के जीवन-स्तर को ऊँचा उठाना, आर्थिक तथा राजनैतिक दोनों ही दृष्टियों से समाज का पुनर्निर्माण, लॉर्डसभा तथा दोहरे मतदान का अन्त करना, वर्तमान लोकसभा के साथ-साथ एक सामाजिक संसद का निर्वाचन जिसका कार्य करारोपण, शिक्षा-प्रचार, निर्धन-सहायता आदि हो—ये सब श्रम दल वालों के उद्देश्य हैं।

1 Laski : Parliamentary Government in England, p. 72.
2 Ibid, p. 72.
3 Ogg & Zink : op. cit., p. 314.

वैदेशिक नीति में श्रम दल उन सब कारणों का अन्त कर देना चाहता है जो अन्तर्राष्ट्रीय संघर्ष और प्रतियोगिता का खतरा पैदा करने वाले हैं। उसका उद्देश्य शस्त्रास्त्रों को कम करना, उनके निर्माण का राष्ट्रीयकरण किया जाना और अन्तर्राष्ट्रीय भावना को प्रोत्साहन देना है। वह स्वशासन की नीति का पक्षपाती रहा है और हमेशा भारत को स्वशासन देने के पक्ष में रहा। अन्त में उसी के समय भारत स्वतन्त्र भी हुआ। उपनिवेशों के सम्बन्ध में वह ट्रस्टीशिप के सिद्धान्तों का पक्षपाती रहा है और उनमें स्वराज्य स्थापित करने के पक्ष में है। इस प्रकार हम देखते हैं कि वह आर्थिक तथा राजनैतिक दोनों प्रकार के शोषणों (Exploitation) का घोर विरोधी है।

श्रम दल में भी मतभेद और गुटबन्दी है। उसमें भी वाम और दक्षिण पक्ष हैं। वामपक्षी बड़े उतावले होते हैं और शीघ्रातिशीघ्र समाजवाद की स्थापना के पक्ष में हैं। वामपक्षी चाहते हैं कि "हमारे जीवन-काल में ही समाजवाद आ जाय"। दक्षिणपक्षी कहते हैं कि 'धीरे चलना अनिवार्य' है और वर्तमान व्यवस्था से नई व्यवस्था लाने का कार्य शनैः शनैः हो।

श्रम दल की समर्थक ट्रेड यूनियन थीं, परन्तु कालान्तर में इसका विस्तार बढ़ा और इसमें विभिन्न वर्गों के लोग शामिल हो गये। इसने सन् १९२८ में स्त्रियों को मताधिकार दिलाया और इसलिए वे इसकी बड़ी भारी समर्थक हैं। दूसरे इस दल के सिद्धान्त अत्यन्त लोकप्रिय हैं और विभिन्न सामाजिक व आर्थिक श्रेणियों के व्यक्ति इसके सदस्य हैं।

अन्य दल :

इन तीन दलों—उदार दल, अनुदार दल एवं श्रम दल—के अतिरिक्त इङ्गलैण्ड में कुछ छोटे-छोटे दल भी हैं। इनमें प्रमुख कम्युनिस्ट दल, फासिस्ट दल, तथा स्वतन्त्र श्रम दल हैं। कम्युनिस्ट दल की रूस से मित्रता होने के कारण जनता उसे पसन्द नहीं करती। फासिस्ट दल के नेता सर ओस्वाल्ड मोसले हैं। इस दल का भविष्य भी कुछ उज्ज्वल नहीं है। स्वतन्त्र श्रम दल श्रम दल से भी पुराना है। पहले तो यह श्रम दल से मिला-जुला रहता था; परन्तु सन् १९३१ से उससे अलग हो गया, क्योंकि उसकी दृष्टि में श्रम दल अधिक प्रगतिशील नहीं था।

दलीय संगठन :

उपर्युक्त राजनैतिक दलों में यद्यपि बहुत से पारस्परिक मतभेद हैं, फिर भी उनका संगठन करीब-करीब एक-सा ही है। संगठन की दृष्टि से प्रत्येक दल के दो भाग हैं—एक तो वह जो पार्लियामेण्ट के अन्दर काम करता है और दूसरा वह जो पार्लियामेण्ट के बाहर और देश के अन्दर कार्य करता है। पार्लियामेण्ट के अन्दर कार्य करने वाले

भाग को 'संसदीय दल' कहते हैं। यह दल अपना नेता, उप-नेता और दलीय सचेतक (Party Whip) चुनता है। संसद के बाहर दल के दो प्रकार के संगठन हैं— एक केन्द्रीय और दूसरा स्थानीय। समस्त स्थानीय संस्थाओं को मिलाकर केन्द्रीय संगठन बनाया जाता है।

संसदीय दल एक अलग इकाई के रूप में काम करता है और बाहर वाले दल के आधिपत्य में काम नहीं करता, यद्यपि उसके सहयोग से काम करता है। यह अपना नेता चुनता है, जो उस दल का बहुमत होने पर प्रधान मन्त्री बनता है। जब बहुमत नहीं होता तो विरोधी दल का नेता बनता है। प्रत्येक दल के कई उप-नेता होते हैं, और यदि उस दल का बहुमत है तो वे उप-नेता केबिनेट के सदस्य बनते हैं। प्रत्येक दल में इनके अतिरिक्त प्रत्येक सदन में कई सचेतक (Whips) होते हैं। ये लोग उस सदन के सदस्य होते हैं जिसमें ये कार्य करते हैं, यद्यपि वाद-विवाद वगैरह में ये भाग नहीं लेते। लोकसभा में सरकारी सचेतक प्राय: चार होते हैं—प्रधान सचेतक जो राजकोष का संसदीय सेक्रेटरी (Parliamentary Secretary to the Treasury) है, और अन्य तीन राजकोष (Treasury) के जूनियर लॉर्ड हैं। ये लोग मन्त्री हैं और वेतन पाते हैं। विरोधी दल के सचेतक भी हैं और प्रत्येक दल के तीन-तीन हैं। दोनों प्रकार के सचेतकों—सरकारी तथा विरोधी—का कार्य है कि ये मन्त्रियों और अपने दल के नेताओं को क्रमश: अपने दल के बारे में पूर्ण सूचना दें, और असावधान व विद्रोही सदस्यों को चैतन्य करें। ऑस्ट्रोगोर्स्की (Ostrogorski) उन्हें "स्टेज मैनेजर्स" (Stage Managers) कहता है। लॉवेल के कथनानुसार ये लोग संसद के नेता के संरक्षक हैं व उसके चतुराई विभाग के सदस्य हैं (Aide-de-camp, and Intelligence department of the Leader of the House)।

पार्लियामेण्ट के बाहर प्रत्येक दल के केन्द्रीय और स्थानीय संगठन हैं। उदार दल का केन्द्रीय संगठन "नेशनल लिबरल फैडरेशन" कहलाता है और अनुदार दल का 'नेशनल कंजरवेटिव यूनियन' कहलाता है। दोनों के ही लन्दन में कार्यालय हैं। श्रम दल की मुख्य संगठित संस्था 'नेशनल एक्जीक्यूटिव' (National Executive) कहलाती है। इसका भी मुख्य कार्यालय लन्दन में है।

केन्द्रीय कार्यालय निर्वाचन-क्षेत्रों के स्थानीय संगठनों से पूर्णतया सम्पर्क रखते हैं। इनमें परस्पर वही सम्बन्ध है जो हमारे देश में अखिल भारतीय काँग्रेस समिति (A. I. C. C.) तथा प्रान्तीय काँग्रेस कमेटियों (Provincial Congress Committees) में, तथा प्रान्तीय काँग्रेस कमेटियों और जिला, नगर व ग्राम काँग्रेस कमेटियों में है। जैसा कि हमारे यहाँ होता है, उसी प्रकार इङ्गलैण्ड में प्रत्येक निर्वाचन-क्षेत्र से कौंसिल के लिए प्रतिनिधि चुने जाते हैं और प्रत्येक कौंसिल से

काउण्टी व बरो के लिए प्रतिनिधि भेजे जाते हैं तथा वहाँ से केन्द्र के लिए प्रतिनिधि जाते हैं।

जिस प्रकार हमारे देश में प्रत्येक दल में कुछ वैतनिक और कुछ अवैतनिक कर्मचारी होते हैं, तथा कुछ पूरे समय के लिए (Whole-time) और कुछ आंशिक समय के लिए (Part-time) होते हैं, उसी प्रकार ब्रिटेन में भी हैं। प्रत्येक दल का एक कोष होता है और उसके सदस्य और समर्थक उसके लिए चन्दा इकट्ठा करते हैं।

प्रत्येक दल का प्रति वर्ष वार्षिक अधिवेशन होता है, और दल की नई नीति तथा कार्यालय निर्धारित किए जाते तथा अध्यक्ष बनाया जाता है। पूरे दल का केन्द्र, केन्द्रीय कार्यालय ही है। वहीं से स्थानीय संस्थाओं को आदेश दिए जाते हैं और विभिन्न संस्थाओं के कार्य को सम्बद्ध (Co-ordinate) किया जाता है। केन्द्रीय संस्था ही चुनाव लड़ती है तथा चुनाव व अन्य व्ययों के लिए चन्दा इकट्ठा करती है।

विभिन्न दलों को कुछ अन्य वर्ग भी सहायता पहुँचाते हैं। उदाहरण के लिए, प्रिमरोज लीग (Primrose League) रूढ़िवादी दल की सहायता करती है, वीमैन्स लिबरल फैडरेशन (Women's Liberal Federation) उदार दल की सहायता करती है, और फेबियन सोसाइटी (Fabian Society) तथा स्वतन्त्र मजदूर दल (Independent Labour party) श्रम दल की मदद करते हैं। इनके अलावा सैकड़ों ऐसे छोटे-छोटे गुट हैं जो चुनावों के समय किसी न किसी दल से मिल जाते हैं और उनकी सहायता करते हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the organisation, aims and methods of the parties in England. Discuss the part they play in the working of the Parliamentary Government.

   (*Agra, 1935, 1938, 1941; Punjab, 1941, 43*)

2. Ramsay Muir says that "by dividing Parliament into two serried and disciplined armies—a majority whose primary aim is to keep a party government in office and a minority whose primary aim is to discredit it in order to replace it." Discuss and illustrate.

   [More than two parties may lead to factions and instability; proportional representation may not give security and stability in administration. The prospects of coalition government may be dangerous.]

ग्यारहवाँ परिच्छेद

ब्रिटेन की न्यायिक व्यवस्था

न्यायपालिका के कार्य :

संसद के द्वारा पारित अधिनियम न्यायपालिका द्वारा प्रयोग में लाए जाते हैं। वे अपने आप ही प्रयुक्त नहीं होते, वरन् मनुष्यों द्वारा प्रयोग किए जाते हैं।[1] न्यायपालिका का कर्त्तव्य है कि वह विधि (Law) के संदिग्ध स्थलों की व्याख्या करे। उसका यह भी कर्त्तव्य है कि वह उन लोगों को दण्ड दे जो उस विधि का उल्लंघन करें। साथ ही साथ उसे नागरिकों के पारस्परिक झगड़ों को भी तै करना है, और यदि उन पर विधि का बहुत कठोरतापूर्ण प्रयोग किया जाता है तो उनकी उससे रक्षा करे। इन सब कार्यों के लिए बहुत से न्यायाधीशों, न्यायालयों और वैध प्रशासन की आवश्यकता होती है। ये सब मिलकर न्यायपालिका कहलाते हैं।

इङ्गलैण्ड में विधि-शासन (Rule of Law) और उसकी विशेषताएँ :

इङ्गलैण्ड की न्यायिक व्यवस्था को समझने के लिए यह आवश्यक है कि हम वहाँ के विधि-शासन (Rule of Law) और उसकी विशेषताओं को भली-भाँति समझ लें। विधि-शासन के अनुसार कानूनी सत्ता ही सर्वप्रधान है। राजा से रंक तक सभी उसके लिये बराबर हैं। विधि-शासन में निरंकुशता, विशेषाधिकार और सरकारी मनमानेपन के लिए कोई स्थान नहीं है।

विधि-शासन के अन्तर्गत क्राउन नहीं आता, क्योंकि "राजा कोई गलती नहीं करता" (The King can do no wrong)। यदि राजा कोई आपराधिक कार्य करता है, तो वह किसी न्यायालय के सामने नहीं लाया जा सकता। वह पागल घोषित किया जा सकता है और उसका इलाज हो सकता है; परन्तु किसी भी हालत में वह अपने ही न्यायालयों के समक्ष पेश नहीं किया जा सकता। यदि किसी व्यक्ति को राजा से क्षति पहुँची है तो राजा ही उसकी सुनवाई उसके अधिकार के रूप में नहीं वरन् अनुग्रह के रूप में कर सकता है।

सार्वजनिक अफसर (Public Officers), मन्त्री, उनके सहायक तथा

1 "Acts of Parliament are not self-operative; they have to be applied by men. And application involves interpretation by a court, since it is a principle of the British Constitution that only express and unambiguous words—perhaps not even those—can deprive the citizen of his title to have the meaning of legislative intention settled by a Court of Law."—Laski.

क्राउन के अन्य कर्मचारी भी यदि अपनी पदाधिकारी की हैसियत (Official duties) में कोई ऐसा कार्य करते हैं, जो विधि-शासन के विरुद्ध है, तो वे भी न्यायालय में पेश नहीं किये जा सकते। उनके कार्यों के लिए सरकार उत्तरदायी है, वे व्यक्तिगत रूप में उत्तरदायी नहीं हैं।

न्यायाधीश भी अपने कार्यों के लिए, जो वे पदाधिकारी की हैसियत से करेंगे, विधि-शासन के अन्तर्गत नहीं आते और अपनी भूल के लिए किसी न्यायालय में पेश नहीं किये जा सकते।

जस्टिसेज़ ऑफ पीस (Justices of Peace) भी अपनी पदाधिकारी की हैसियत में किये गए कार्यों के लिए, यदि उन्होंने द्वेष-भाव से प्रेरित होकर वे कार्य नहीं किये हैं, तो किसी न्यायालय के सम्मुख नहीं लाए जा सकते।

विधि-शासन के आधार पर इङ्गलैण्ड में नागरिकों को जो विशेष अधिकार प्राप्त हैं, वे निम्नलिखित हैं:—

(१) व्यक्ति को व्यक्तिगत स्वतन्त्रता प्राप्त है। बिना विधि के उल्लंघन किये हुए कोई व्यक्ति गिरफ्तार नहीं किया जा सकता। यह बात न्यायालय सिद्ध करेंगे कि उसने विधि का उल्लंघन किया है या नहीं। अगर कोई व्यक्ति गिरफ्तार कर लिया गया है, तो वह तुरन्त इस सम्बन्ध में अर्जी दे सकता है कि उसका दोष सिद्ध किया जाय। यह बात बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम (Habeas Corpus Act) द्वारा विधि का एक प्रधान अंग बन गई है।

(२) व्यक्ति को वाक् स्वतन्त्रता (Freedom of Speech) है।

(३) प्रत्येक व्यक्ति को किसी भी सार्वजनिक सभा या सोसाइटी में भाग लेने का अधिकार है।

विधि-शासन के कारण ही इङ्गलैण्ड में व्यक्ति अपने अधिकारों में सुरक्षित हैं। एक और विशेष बात यह है कि इङ्गलैण्ड में सर्व प्रकार के लोगों के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय हैं और एक ही प्रकार के कानून हैं। फ्रान्स में जैसे साधारण विधि (Ordinary Law) तथा प्रशासकीय विधि (Administrative Law) में भेद किया गया है, वैसा इङ्गलैण्ड में नहीं किया जाता। सभी नागरिकों पर उन्हीं न्यायालयों में मुकदमे चलते हैं; चाहे वे नागरिक ऊँचे हों या नीचे, चाहे वे सरकारी अफसर हों या गैर-सरकारी लोग। यह इङ्गलैण्ड के लिए अत्यन्त गौरव की बात है।

विधि-शासन के कारण ब्रिटिश न्याय-प्रणाली संसार भर में शुद्ध, पवित्र, कुशल, स्वतन्त्र, निष्पक्ष तथा सतर्क गिनी जाती है, और सब लोग इसकी मुक्तकण्ठ से प्रशंसा करते हैं।

सभी मुकदमे खुली अदालत में होते हैं और जनता को अपनी न्यायिक कार्यवाही देखने का पूरा अधिकार है। दोनों पक्ष के लोगों को वकीलों की सहायता से अपने-अपने पक्ष में प्रमाण देने की पूर्ण स्वतन्त्रता है। भारी अपराधों में निर्णय देने के लिए जूरी-प्रथा है। जूरी-प्रथा सिविल (Civil) तथा आपराधिक (Criminal) दोनों प्रकार के बड़े-बड़े मुकदमों में काम करती है। जूरी के १२ सदस्य होते हैं, और उनका कार्य है कि वे मुकदमे से सम्बन्ध रखने वाली बातों का पता लगाकर न्यायालय को अपनी राय दें।

न्यायाधीश अपनी ईमानदारी, स्वतन्त्रता तथा न्याय के ऊँचे स्तर के द्वारा ही उस पद पर स्थिति हैं और उनकी प्रशंसा संसार भर में हो रही है। ब्रिटिश न्याय-प्रणाली के प्रति प्रत्येक देश में श्रद्धा तथा भक्ति है।

विधि के प्रकार : (In England)

ब्रिटेन की विधि-व्यवस्था रोमन तथा मुस्लिम व्यवस्थाओं के समान अत्यन्त प्राचीन है, परन्तु यह इतनी सुसंगठित तथा नियमित नहीं है जितनी कि वे हैं। इसीलिए इसे चीन, जापान, टर्की आदि राष्ट्रों ने पसन्द नहीं किया। दूसरी बात यह है कि जिस प्रकार ब्रिटिश संविधान का विकास हुआ है, उसी प्रकार ब्रिटिश विधि-व्यवस्था का भी विकास हुआ है। इसमें भी कुछ अलिखित भाग मौजूद है जिसका आधार परम्परा है। इङ्गलैण्ड की विधि-व्यवस्था इङ्गलैण्ड तथा आयरलैण्ड की विधि-व्यवस्था से बहुत कुछ भिन्नता रखती है। इङ्गलैण्ड में तीन प्रकार की विधि हैं:—

(१) कॉमन लॉ (Common Law)।
(२) स्टैच्यूट लॉ (Statute Law)।
(३) ईक्विटी (Equity)।

(१) **कॉमन लॉ**—नॉर्मन तथा प्लाण्टेजेनेट राजाओं के शासन-काल में लोग न्यायाधीशों से यह आशा करते थे कि उनके मुकदमों का न्याय उनकी स्थानीय परम्पराओं तथा रस्म-रिवाजों को ध्यान में रखकर किया जाय। चूंकि भिन्न-भिन्न परम्पराएँ तथा रस्म-रिवाजें थीं इसीलिए न्यायाधीशों का यह काम हो गया कि वे उनके आधार पर एक ऐसी नियमावली बनायें जो सब जगह लागू हो (जो Common हो)। इस प्रकार कॉमन लॉ की उत्पत्ति हुई। ये कॉमन लॉ कालान्तर में बढ़ते गये, परन्तु उन्हें कोई लिखित रूप नहीं दिया गया। समय-समय पर उन्हें संहिताबद्ध (codify) करने का प्रयत्न किया गया, परन्तु ऐसी संहिता उनकी व्याख्या तो करती है, उन्हें बतलाती नहीं है। कॉमन लॉ का निर्माण न तो राजाओं ने किया और न संसद ने बल्कि न्यायाधीशों ने किया है, और ब्रिटिश जनता बड़े गौरव के साथ इसकी रक्षा करती है। इसकी महानता को व्यक्त करते हुए कानून

के प्रकाण्ड पण्डित ब्लैकस्टोन (Blackstone) ने कहा है, "यह सर्वश्रेष्ठ जन्माधिकार और मानव का सर्वोत्तम उत्तराधिकार है।"

(२) **स्टैट्यूट लॉ**—स्टैट्यूट लॉ भी बहुत प्राचीन है, परन्तु यह अधिनियमित हुआ है। कॉमन लॉ के समान इसका विकास नहीं हुआ है। प्रारम्भ में स्टैट्यूट लॉ राजाओं के द्वारा ही बनाया गया परन्तु जैसे-जैसे राजा की शक्ति कम होती गई वैसे-वैसे उसकी यह शक्ति भी कम होती गई और संसद के हाथ में पहुँच गई। अब विधि-निर्माता 'संसद-सहित-राजा' (King-in-Parliament) है। स्टैट्यूट लॉ ही एक प्रकार से पक्की विधि है। जहाँ इसमें और कॉमन लॉ में विरोध होता है वहाँ स्टैट्यूट लॉ को ही माना जाता है।

(३) **ईक्विटी**—इङ्गलैण्ड में तीसरी प्रकार की विधि ईक्विटी (Equity) कही जाती है। प्राचीन काल में जब राजा वास्तव में 'न्याय का स्रोत' था तब लोग, यदि वे न्यायाधीशों के न्याय से असन्तुष्ट हुए हों, राजा के पास प्रार्थना भेजते थे कि 'हे राजन् ! हमारे साथ हुए अन्याय को दूर करो।' चूँकि राजा उन सब को निबटाने में समर्थ नहीं था इसलिए उसने इस कार्य के लिए चान्सलर की नियुक्ति की। कालान्तर में चान्सलर का काम बढ़ता गया और उसके लिए सहायक नियुक्त करने की जरूरत पड़ी। इस प्रकार धीरे-धीरे एक न्यायालय ही बन गया जो 'चान्सरी का न्यायालय' कहलाया और उस न्यायालय की आधारभूति विधि 'ईक्विटी-विधि' बन गई। इसे न्यायाधीशों ने लोगों की परम्परा तथा रीति-रिवाजों के आधार पर बनाया और इसका उद्देश्य कॉमन लॉ की त्रुटियों को दूर कर जनता को वास्तविक एवं सच्चा न्याय प्रदान करना था। इस समय ईक्विटी अत्यन्त उलझी हुई है और वह अपराधों के बारे में प्रयुक्त नहीं होती, बल्कि उसका सम्बन्ध कुछ सिविल वादों (Civil cases) से ही रह गया है। इस विधि के लिये कोई अलग न्यायालय भी नहीं है। आजकल तीनों प्रकार की विधियों के लिए एक ही प्रकार के न्यायालय हैं।

उपर्युक्त समस्त न्याय-संस्थाओं को एक सूत्र में बाँधने के लिये व इनके संगठन और कार्य-पद्धति में समानता लाने के लिये पार्लियामेण्ट ने जूडीकेचर एक्ट्स (Judicature Acts) द्वारा सन् १८७३ और १८७६ के मध्य न्यायपालिका का पुनर्सङ्गठन किया।

इङ्गलैण्ड के विधि-न्यायालय :

यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि समस्त ग्रेट ब्रिटेन में एक-से न्यायालय नहीं हैं। इङ्गलैण्ड और वेल्स में एक-से हैं, स्कॉटलैण्ड में भिन्न प्रकार के हैं तथा उत्तरी आयरलैण्ड में भी भिन्न प्रकार के हैं। हम यहाँ इङ्गलैण्ड और वेल्स के न्यायालयों की व्यवस्था का वर्णन करेंगे।

इङ्गलैण्ड में तीन प्रकार के न्यायालय हैं :—

(१) **सिविल (दीवानी) न्यायालय** (Civil Courts)—नागरिकों के आपसी मामलों का निबटारा करते हैं; जैसे किसी के द्वारा किसी को साम्पत्तिक क्षति, या अनाधिकार प्रवेश व मान-हानि, आदि।

(२) **आपराधिक (फौजदारी) न्यायालय** (Criminal Courts)—इनमें क्राउन की ओर से सार्वजनिक विधि के उल्लंघन पर दण्ड दिया जाता है; जैसे हत्या, चोरी, डकैती, फौजदारी, नकली पत्र-लेखन, आदि।

(३) **प्रीवी परिषद् की न्यायिक समिति** (Judicial Committee of the Privy Council)—यह समिति ब्रिटिश उपनिवेशों तथा ब्रिटेन के अधीनस्थ राज्यों से आने वाली अपीलें सुनती थी। इसमें इङ्गलैण्ड के धार्मिक न्यायालयों से आने वाली अपीलें भी सुनी जाती हैं। इसके सदस्य करीब-करीब वही होते हैं जो न्याय के उच्चतम न्यायालय (Supreme Court of Judicature) के रूप में बैठते समय लॉर्डसभा के सदस्य होते हैं।

उपरोक्त प्रथम न्यायालय दो श्रेणियों में विभक्त किए जा सकते हैं:—

(१) केन्द्रीय अथवा उच्चतर न्यायालय जो अधिकांशतः लन्दन में हैं।

(२) स्थानीय तथा छोटे न्यायालय जो देश भर में बिखरे हुए हैं।

वर्तमान न्यायपालिका का संगठन निम्नलिखित रेखा-चित्र से भली प्रकार समझ में आ जायगा।

(१) **फौजदारी न्यायालय** (Criminal Courts) :

लॉर्डसभा (House of Lords)
(राज्य का सर्वोच्च न्यायालय)
|
आपराधिक मामलों में अपील का न्यायालय
(Court of Criminal Appeal)
|
- क्वार्टर सैशन्स (Quarter Sessions)
  - पैटी सैशन्स (Petty Sessions)
  - कोरोनर्स कोर्ट (Coroners Court)
- हाईकोर्ट के ऐसाइजेज (Assizes of High Court) (सिर्फ बड़े-बड़े अपराधों के लिये)

(२) **दीवानी न्यायालय** (Civil Courts) :

- लॉर्डसभा (House of Lords) (राज्य का सर्वोच्च न्यायालय)
  - अपील का न्यायालय (Court of Appeal)
    - न्याय का उच्च न्यायालय (High Court of Justice)
      - हाईकोर्ट के ऐसाइज़ेज़ (Assizes of High Court)
      - सम्राट की न्याय-मण्डली (King's Bench Division)
        - क्वार्टर सैशन्स (Quarter Sessions)
        - काउण्टी न्यायालय (County Courts)
      - चान्सरी डिवीजन (Chancery Division)
      - प्रोबेट, तलाक तथा एडमिरलटी डिवीजन (Probates, Divorce & Admiralty Division)

(३) **विशेष मुकदमों के न्यायालय :**

- प्रीवी कौंसिल की न्यायिक समिति (Judicial Committee of Privy Council)
  - प्राइज कोर्ट (Prize Courts) (सिर्फ युद्ध-काल के लिए
  - धार्मिक न्यायालय (Ecclesiastical Courts)
  - उपनिवेशों तथा अधीन राज्यों का उच्चतम न्यायालय (Supreme Court for the Dominions and Colonies)

उपर्युक्त रेखा-चित्रों से विदित होगा कि इङ्गलैण्ड में दीवानी (Civil) और फौजदारी (Criminal) दोनों ही प्रकार के मामलों में लॉर्डसभा अपील का सर्वोच्च न्यायालय है। जब लॉर्डसभा इस हैसियत में बैठती है तब लॉर्ड चान्सलर उसका अध्यक्ष होता है। परन्तु इस प्रयोजन के लिए सम्पूर्ण लॉर्डसभा नहीं बैठती

है (हालाँकि सैद्धान्तिक रूप में सब बैठ सकते हैं और वोट दे सकते हैं), वरन् लॉर्ड चान्सलर, अपील लॉर्ड या विधि-लॉर्ड (Lords of Appeal or Law Lords) तथा अन्य ऐसे पीयर जो पहले किसी उच्च न्यायालय में रह चुके हैं, बैठते हैं। इसी प्रकार उपनिवेशों तथा अधीनस्थ राज्यों से आई हुई अपीलें सुनने के लिए प्रीवी परिषद् की न्याय-समिति बैठती है और उसमें भी लगभग वही सदस्य होते हैं जो उच्चतम न्यायालय के रूप में लॉर्डसभा के सदस्य होते हैं। इसमें कम से कम एक न्यायाधीश किसी उपनिवेश से आता है या उस राज्य से आता है जहाँ से अपील भेजी गई है।

(अ) फौजदारी न्यायालयों की सारिणी को देखने से विदित होता है कि इन मामलों में सबसे छोटी अदालत 'पैटी सैशन्स' की है, उसके बाद 'क्वार्टर सैशन्स' का न्यायालय है, उसके बाद न्याय का उच्च न्यायालय (High Court of Justice) और अन्त में फौजदारी की अपील का उच्चतम न्यायालय तथा लॉर्डसभा है।

(ब) दीवानी मामलों में सबसे छोटी अदालत 'काउण्टी अदालत' है, फिर न्याय का उच्च न्यायालय, फिर अपील का न्यायालय, तथा अन्त में लॉर्डसभा है।

(स) उच्च न्यायालय (High Court of Justice) के तीन अंग हैं:—

(१) **सम्राट् की न्याय-मण्डली** (King's Bench Division)—इसका सभापति लॉर्ड मुख्य न्यायाधीश (Lord Chief Justice) होता है और इसमें १६ अन्य न्यायाधीश होते हैं। इनके न्यायालय एसाइजेज (Assizes) कहलाते हैं और ये दीवानी तथा फौजदारी दोनों प्रकार के मुकदमों को सुनते हैं।

(२) **चान्सरी डिवीजन** (Chancery Division)—इसमें ५ न्यायाधीश होते हैं और छठा लॉर्ड चान्सलर होता है जो इसका अध्यक्ष होता है। यह अदालत जहाँ यह देखती है कि कॉमन लॉ का कठोर प्रयोग हुआ है, ईक्विटी के नियमों का पालन करती है।

(३) **प्रोबेट, तलाक तथा एडमिरलटी डिवीजन** (Probates, Divorce and Admiralty Division)–इसमें एक सभापति और अन्य न्यायाधीश होते हैं। जैसा कि इसके नाम से विदित है, यह मृत पुरुषों की जायदाद, तलाक तथा सामुद्रिक क्षेत्र में हक, दावा सम्बन्धी मामलों को तै करता है।

(द) अपील का न्यायालय (Court of Appeal) और उच्च न्यायालय (High Court of Justice) मिलकर 'न्याय का उच्चतम न्यायालय' (Supreme Court of Judicature) कहलाता है।

इन न्यायालयों के बारे में अब हम संक्षिप्त परिचय दगे।

फ़ौजदारी अदालतें (Criminal Courts) :

(१) **पैटी सैशन्स या कोर्ट ऑफ समरी जूरिस्डिक्शन** (Petty Sessions: Court of Summary Jurisdiction)—ये अदालतें सबसे छोटी अदालतें हैं और इनमें स्थानीय मजिस्ट्रेट जो 'जस्टिसेज ऑफ़ पीस' (Justices of Peace) कहलाते हैं, न्याय करते हैं। इसमें औरतें और मर्द दोनों न्यायाधीश होते हैं और वे लॉर्ड चान्सलर द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। ये अवैतनिक (Honorary) होते हैं। लन्दन तथा अन्य बड़े-बड़े शहरों में ये वैतनिक (Stipendiary) भी होते हैं।

प्रत्येक काउण्टी कई जिलों में विभक्त है और प्रत्येक जिले में एक-एक पैंटी सैशन्स की अदालत होती है। पैटी सैशन्स की अदालत में (अ) एक न्यायाधीश भी मुकदमे सुनता है, और (ब) दो या अधिक मिलकर भी मुकदमे सुनते हैं। एक न्यायाधीश मामूली फौजदारी के मुकदमे सुनता है। उसे अधिक से अधिक १ पौण्ड तक जुर्माना तथा १४ दिन की जेल करने का अधिकार है। जब दो या अधिक न्यायाधीश मुकदमे सुनते हैं तब उनकी अदालत 'कोर्ट ऑफ समरी जूरिस्डिक्शन' (Court of Summary Jurisdiction) कहलाती है और वह ६ महीने का कारावास तथा ५० शिलिंग तक जुर्माना कर सकते हैं। छोटी-छोटी चोरियाँ, हमले, जानवरों के प्रति निर्दयता, आवारागर्दी आदि मामले यहाँ पेश होते हैं।

(२) **क्वार्टर सैशन्स** (Quarter Sessions)—कार्टर सैशन्स के न्यायालय में काउण्टी के सभी जस्टिसेज ऑफ़ पीस मिलकर न्याय करते हैं। परन्तु इसमें सब का आना जरूरी नहीं है, केवल दो से ही गणपूर्ति हो जाती है। इसका सत्र (Session) साल में चार बार होता है। इसका क्षेत्राधिकार निम्नलिखित है:—

(अ) गम्भीर मामलों को सुनना; परन्तु हत्या, देश-द्रोह, कपट-लेखन आदि मामले इसके क्षेत्र में नहीं आते।

(ब) पैंटी सैशन्स की अपीलें सुनना।

यह अदालत जूरी की सहायता से न्याय करती है।

(३) **एसाइजेज** (Assizes)—इन न्यायालयों में उच्च न्यायालय की सम्राट् की बेंच मण्डली वाली शाखा के न्यायाधीश होते हैं और ये साल में अपने-अपने क्षेत्र में दो या तीन चक्कर लगाते हैं और स्थान-स्थान पर अदालत करते हैं। इस कार्य के लिए सारा देश आठ जिलों या 'सर्किटों' (Circuits) में विभक्त है। अधिकतर फौजदारी मामलों के ही मुकदमे ये सुनते हैं। लन्दन में सेण्ट्रल क्रिमिनल कोर्ट (Central Criminal Court) की बैठक तो साल में दस बार होती है। इन न्यायालयों के निम्नलिखित अधिकार हैं:—

(अ) पैटी या क्वार्टर सैशन्स की अदालत द्वारा भेजे भीषण अपराधों को सुनना; जैसे हत्या, डकैती, कत्ल, धोखा, कपट-लेखन आदि।

(ब) कुछ दीवानी मामले भी सुनना; जैसे पृष्ठ-निन्दा (Slander), बदचलन (Corruption), किसी की बदनामी करना, आदि।

इनमें भी अभियुक्त को जूरी द्वारा सुनवाई कराने का अधिकार है।

(४) **अपील का न्यायालय** (Court of Criminal Appeal)—इस न्यायालय में लॉर्ड प्रधान न्यायाधीश (Lord Chief Justice) और उच्च न्यायालय (High Court of Justice) की सम्राट् बेंच मण्डली के कम से कम ३ न्यायाधीश होते हैं। यह न्यायालय सन् १९०७ के आपराधिक अपील अधिनियम (Criminal Appeal Act) द्वारा स्थापित हुआ था। इसमें पहले आपराधिक मुकदमों की अपीलें नहीं होती थीं। यह अदालत दण्ड घटा-बढ़ा सकती है। इसका न्याय अन्तिम होता है। परन्तु विशेष मामलों में एटोर्नी जनरल (Attorney General) की अनुमति से लॉर्डसभा में भी अपील की जा सकती है।

(५) **कोरोनर्स कोर्ट** (Coroners Court)—यह न्यायालय वास्तव में न्यायालय नहीं है। इसमें एक कोरोनर होता है जो प्रायः डॉक्टर या वकील होता है और वह काउण्टी अथवा बरो परिषद् द्वारा नियुक्त किया जाता है। वह जूरी की सहायता से अथवा उसके बिना भी कार्य करता है और इसका काम किसी व्यक्ति की रहस्यमय, आकस्मिक अथवा अप्राकृतिक मृत्यु के कारणों का पता लगाना है। यह जीवन भर के लिये नियुक्त किया जाता है। इसका काम बड़ा संगीन है परन्तु कोरोनर के काम करने के तरीकों की आलोचना काफी बढ़ती जा रही है।

दीवानी अदालतें (Civil Courts)—

(१) **काउन्टी कोर्ट** (County Courts)—इस प्रकार के न्यायालयों की स्थापना सन् १७४३ ई० में हुई। इस प्रकार के न्यायालयों की स्थापना के लिए समस्त इङ्गलैण्ड और वेल्स को लगभग ५०० जिलों (Counties) में बाँट दिया गया है (यह विभाजन एसाइज़ेज कोर्ट वाले विभाजन से अलग है जहाँ केवल ८ भागों में ही समस्त देश बाँटा गया है)। प्रत्येक न्यायालय में एक न्यायाधीश होता है जिसकी मदद के लिए दो स्थायी अफसर होते हैं—(१) अदालत का रजिस्टार, तथा (२) 'बेलिफ' (Bailiff)। बेलिफ का काम यह है कि वह देखे कि अदालत का हुक्म तामील किया जाता है या नहीं। रजिस्टार क्लर्क का काम करता है। काउण्टी न्यायालय भी निश्चित स्थान पर नहीं रहता है वरन् भ्रमण करता रहता है।

इस अदालत का क्षेत्राधिकार बहुत बढ़ गया है। यह निम्नलिखित मामले सुनती है :—

(अ) सौ पौण्ड तक के मुकदमे सुनना या २० पौण्ड सालाना मूल्य वाली जायदादों के मुकदमे सुनना, मजदूरों के क्षतिपूर्ति सम्बन्धी मामले सुनना, चाहे वे कितने ही पौण्ड के हों।

(ब) कुछ मामलों में दिवालिया सम्बन्धी मुकदमे सुनना, जहाँ कम्पनी की पूंजी १०,००० पौण्ड से ज्यादा नहीं है।

५०० जिलों को ५५ सर्किटों में बाँट दिया गया है। प्रत्येक सर्किट में एक जज होता है जो लॉर्ड चान्सलर द्वारा नियुक्त किया जाता है और वह प्रत्येक काउण्टी में बारी-बारी से जाता है और न्याय करता है।

(२) **न्याय का उच्च न्यायालय** (High Court of Justice)—यह न्याय के सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court of Judicature) का एक अङ्ग है। इसकी स्थापना सन् १८७३ में जुडीकेचर एक्ट (Judicature Act) द्वारा हुई और सन् १८७५ के एक्ट द्वारा संशोधन हुआ और प्राचीन आठ अदालतों को मिलाकर यह न्यायालय बनाया गया। यह न्यायालय उन सब दीवानी मामलों को सुनता है जो काउण्टी कोर्ट के क्षेत्राधिकार से बाहर हैं तथा फौजदारी मामले भी सुनता है। सुविधा के लिये इसके तीन विभाग कर दिये गये हैं :—

(अ) **राजा की बेंच मण्डली** (King's Bench Division)—इसमें १६ न्यायाधीश तथा एक लॉर्ड प्रधान न्यायाधीश होता है। इन्हीं में से एसाइज़ेज के न्यायाधीश—जो भ्रमण करते रहते हैं—चुने जाते हैं और जहाँ उनकी अदालत होती है वह हाईकोर्ट की अदालत मानी जाती है। (इनके कार्य-क्षेत्र का वर्णन हो चुका है)।

(ब) **चान्सरी डिवीजन** (Chancery Division)—इसमें ५ न्यायाधीश होते हैं और लॉर्ड चान्सलर उसका अध्यक्ष होता है। इसमें ईक्विटी की विधि द्वारा कॉमन लॉ की कठोरता को कम किया जाता है।

(स) **प्रोबेट, तलाक तथा ऐडमिरलटी डिवीजन** (Probates, Divorce and Admiralty Division—इसमें मृत व्यक्तियों के जायदाद सम्बन्धी झगड़े, तलाक तथा सामुद्रिक क्षेत्र सम्बन्धी हक, दावों आदि के मुकदमे होते हैं।

यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि यद्यपि विभिन्न विभागों के विभिन्न कार्य-क्षेत्र हैं, तथापि कोई भी न्यायाधीश किसी भी विभाग में काम कर सकता है तथा एक विभाग से दूसरे विभाग में मुकदमे भी जा सकते हैं।

(३) **अपील का न्यायालय** (Court of Appeal)—अपील का न्यायालय काउण्टी कोर्ट और हाईकोर्ट की अपीलें सुनता है। इसमें मास्टर ऑफ रोल्स (Master of Rolls), ५ लॉर्ड न्यायाधिपति (Lord Justice) तथा हाईकोर्ट के तीन विभागों के तीन अध्यक्ष कार्य करते हैं। पिछले तीनों अध्यक्ष इसके सदस्य होते हैं, परन्तु इसमें कभी बैठते नहीं। मास्टर ऑफ रोल्स इसका अध्यक्ष होता है। तीन या चार सदस्य ही अपील सुन सकते हैं। इसमें अपीलें केवल विधि तथा तथ्य (Fact) के प्रश्न पर ही होती हैं।

लॉर्डसभा (House of Lords)—लॉर्डसभा इङ्गलैण्ड में अपील का सर्वोच्च न्यायालय है। सिद्धान्त में तो कोई भी सदस्य निर्णय में भाग ले सकता है, परन्तु सन् १८७६ के एक अधिनियम के अनुसार किसी भी अपील का निर्णय तब तक नहीं हो सकता जब तक कम से कम तीन विधि-लॉर्ड (Law Lords) उपस्थित न हों। इसमें लॉर्ड चान्सलर, सामान्य लॉ लॉर्ड तथा लॉर्डसभा के वे सदस्य जिन्हें न्यायिक क्षेत्र में उच्च पद प्राप्त है या उस पर रहे हैं, होते हैं। लॉर्डसभा के अन्य सदस्यों का वोट देने का अधिकार भी अप्रयोग के कारण समाप्त ही हो गया है।

न्यायपालिका का अन्य विभागों से सम्बन्ध :

एक समय था जब न्यायाधीश राजा के द्वारा नियुक्त किये जाते थे और उसी के द्वारा पदच्युत किये जाते थे। वे कार्यकारिणी के हाथ की कठपुतली थे। परन्तु आजकल स्थिति बदल गई है। स्वतन्त्र तथा निष्पक्ष न्याय के लिये यह आवश्यक है कि न्यायाधीश किसी के इशारे पर न चलें। इङ्गलैण्ड में क्राउन न्यायाधीशों को नियुक्त तो कर सकता है, परन्तु अलग नहीं कर सकता। वे अलग तभी किये जा सकते हैं जब संसद के दोनों भवन उन्हें अलग करने की सिफारिश करें। अतः न्याय निष्पक्ष होता है, क्योंकि न्यायाधीशों को कोई डर नहीं है।

संसद का न्याय-विभाग पर सिर्फ यह नियन्त्रण है कि वह भारी अपराध में किसी न्यायाधीश को अलग करने के लिये क्राउन से सिफारिश कर सकती है, और किसी न्यायालय के निर्णय को रद्द करने के लिये कानून में संशोधन करने के लिये कोई तत्सम्बन्धी अधिनियम पास कर सकती है। इङ्गलैण्ड में न्यायालय पार्लियामेण्ट द्वारा बनाये गये कानून को अवैध घोषित नहीं कर सकते जैसा कि अमेरिका में कर सकते हैं। वे कानून की व्याख्या ही कर सकते हैं, विधान की व्याख्या या रक्षा करने का अधिकार नहीं रखते। अमेरिका में तो न्यायालय विधान की रक्षा करते हैं और यदि धारासभा ने विधान का उल्लङ्घन कर कोई कानून बनाया तो वे उसे अवैध घोषित कर सकते हैं, परन्तु इङ्गलैण्ड में पार्लियामेण्ट सर्वेसर्वा है। वह विधान में भी चाहे जब और चाहे जैसा संशोधन कर सकती है। उसकी न्यायालयों द्वारा रक्षा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता।

न्याय का स्तर :

जैसा कि पहले कहा जा चुका है, इङ्गलैण्ड का न्याय-स्तर बहुत ऊँचा है। अपनी ईमानदारी, निष्पक्षता तथा बुद्धिमता के लिये इङ्गलैण्ड के न्यायाधीश सारे संसार में प्रसिद्ध हैं। व्यक्ति को अपनी सफाई पेश करने का पूर्ण अधिकार है और उसे अपने मामलों में जूरी द्वारा निर्णय कराने का भी पूर्ण अधिकार है। मुकद्दमे सदा खुली अदालत में होते हैं और वहाँ जनता की पहुँच हो सकती है। दोष सिद्ध करने का भार हमेशा अभियोजक (accuser) पर होता है। प्रत्येक मामले की अपील हो सकती है। वकील भी बड़े दक्ष होते हैं। न्यायालय के न्यायाधीश विशेष समिति द्वारा बनाये जाते हैं जो केवल योग्यता का ही पक्ष करती है। इन्हीं सब बातों के कारण इङ्गलैण्ड का न्याय-स्तर बहुत ऊँचा है।

UNIVERSITY QUESTIONS

29th Oct. '52.
1st March '58.

1. Describe the organisation of courts in England.
2. Discuss the powers of the Judiciary in relation to the acts of the Legislature in England.

बारहवाँ परिच्छेद

इङ्गलैण्ड में स्थानीय शासन और प्रशासन

स्थानीय शासन का महत्व :

"स्थानीय शासन प्रत्येक व्यक्ति के स्वतन्त्र विकास तथा सामाजिक नियन्त्रण के बीच का रास्ता है। यह शान्ति और विकास का मध्यम मार्ग है।"[1] स्थानीय संस्थाओं के द्वारा ही मनुष्य अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा उत्तरदायित्व को समझता है। उनके द्वारा ही उसमें नागरिकता की भावना जागृत होती है और उन्हीं में रह कर वह राजनीति की शिक्षा प्राप्त करता है। स्थानीय संस्थाओं की उपस्थिति ही उसे एक स्थान व केन्द्र द्वारा किये गए शासन की कठोरता से बचाती है,[2] और वे ही उसके देश को एक सुन्दर रहने योग्य स्थान बनाती हैं। कोई भी राष्ट्र, चाहे वह स्वतन्त्र ही हो, तब तक स्वतन्त्रता का सच्चा प्रतीक नहीं कहा जा सकता जब तक उसने स्थानीय संस्थाओं द्वारा अपने शासन व कार्य का विकेन्द्रियकरण (Decentralisation) नहीं किया है।[3]

स्थानीय शासन की आवश्यकता :

आधुनिक राज्यों में प्रत्येक स्थान की परिस्थितियाँ भिन्न-भिन्न हैं। नगर-नगर व जिले-जिले की अलग-अलग समस्याएँ हैं। एक स्थान के रीति-रिवाज, प्रथाएँ, जलवायु तथा बोलचाल की भाषाएँ दूसरे स्थान की इन सब बातों से भिन्न हैं। यदि इन सब को ध्यान में रख कर केन्द्रीय सरकार ही एक स्थान से सब का नियन्त्रण करे और वहाँ की स्थानीय जनता को कुछ कार्य-भार न सौंपे, तो सरकार के लिए बहुत कार्य बढ़ जायगा और साथ ही साथ वह राज्य के अन्य आवश्यक कार्य सफलतापूर्वक

1 "Local Government is a compromise between free progress of each individual and social control, and between peace and government."
(*B. M. Sharma: Modern Governments, p. 199*)

2 It "falls into the same category as sush devices as Federalism and Proportional Representation, they are safeguards against the tyranny of the wholesale herd, levelling, standardizing, and conventional hating and destroying original individuals and groups."
(*Herman Finer : English Local Government, (1933), p. 4*)

3 "Local assemblies of citizens constitute the strength of free nations. Town meetings are to liberty what primary schools are to science; they bring it within the people's reach; they teach men how to use and how to enjoy it. A nation may establish a system of free government, but without the spirit of municipal institutions it cannot have the spirit of liberty."– *De Tocqueville.*

नहीं कर पायेगी। उस राज्य की जनता भी स्वावलम्बन, नागरिकता का बोध, सफल उत्तरदायित्व आदि जैसे गुणों से वंचित रह जायगी और राष्ट्र शक्तिहीन हो जायगा। इसके अलावा एक बात और भी है—किसी स्थान के हित को वहाँ के निवासी अधिक आसानी से समझते हैं और वे ही अपने हितों की देख-भाल, पूर्ति और रक्षा अधिक आसानी और रुचि से कर सकते हैं, एक स्थान पर दूर बैठी हुई सरकार नहीं कर सकती। अतः यह बात निश्चित है कि शासन-कार्य सफल बनाने के लिए स्थानीय शासन की अत्यन्त आवश्यकता है।

ब्रिटिश स्थानीय शासन की प्रमुख बातें :

आधुनिक ब्रिटिश स्थानीय शासन-प्रणाली का अध्ययन करते समय हमें तीन प्रमुख बातें स्पष्ट दिखाई पड़ती हैं—

(१) पहली बात यह है कि यह प्रथा अधिकांशतः अतीत की आभारी है।

(२) दूसरी बात यह है कि ब्रिटिश व्यवस्था समयानुकूल परिवर्तित होकर विकास की ओर अग्रसर होती रही है। प्रधानतः आधुनिक काल में तो इसमें बहुत-से परिवर्तन हो गये हैं।[1]

(३) तीसरी बात यह है कि यद्यपि स्थानीय संस्थाएँ अपने अधिकारों की बहुत कुछ रक्षा करती हैं और अधिक स्वतन्त्र होने का प्रयत्न करती हैं परन्तु उनके ऊपर केन्द्र का नियन्त्रण बढ़ता ही जा रहा है और गत ७५ वर्षों से विरोध पर ध्यान न देते हुए पार्लियामेण्ट ने उनके ऊपर अधिक नियन्त्रण कर रक्खा है, और द्वितीय महायुद्ध के बाद से तो वहाँ बहुत ही महत्वपूर्ण परिवर्तन हो गए हैं।

ब्रिटिश स्थानीय शासन का संक्षिप्त ऐतिहासिक सिंहावलोकन :

सर सिडनी वेब (Sir Sydney Webb) के कथनानुसार "स्थानीय शासन का इतिहास इतना पुराना है जितने कि पहाड़ हैं" (as old as the hill) और यह बात ब्रिटिश स्थानीय शासन के सम्बन्ध में सिद्ध भी होती है। ब्रिटिश स्थानीय शासन-व्यवस्था अत्यन्त प्राचीन है (और चूँकि इसमें परिवर्तन होते-होते इसे नया रूप मिल गया है, इसलिये नवीन भी है)। जिस प्रकार ब्रिटिश संसद संसदों की जननी कही जाती है, उसी प्रकार ब्रिटिश स्थानीय शासन-व्यवस्था समस्त स्थानीय शासन-व्यवस्थाओं की जननी कही जाती है। दूसरी बात जो हम बतला चुके हैं वह यह है कि "इङ्गलैण्ड की स्थानीय शासन-व्यवस्था दीर्घ ऐतिहासिक विकास का परिणाम है, जो

1 Historic counties and boroughs survive, but with altered organisation and functions; older units like the Parish have lost earlier functions; new jurisdictions have been laid out, new bodies called into being, new administrative affairs created, new methods introduced"
(*Ogg & Zink: op. cit., p. 357*)

बहुत कुछ हद तक पूर्व-निर्दिष्ट और योजित नहीं रहा है।[1] सैक्सन राजाओं के समय में शाइर (Shires), हण्ड्रेड्स (Hundreds) तथा बरो (Boroughs) थे और वे नॉर्मन-विजय के बाद के काउण्टी (County), मैनर (Manor) तथा म्यूनिसिपैलटियों (Municipalities) में परिवर्तित हो गए। इसी बीच में पैरिशों (Parishes) की भी स्थापना हो गई और उन्होंने Townships का स्थान ले लिया। अठारहवीं शताब्दी तक काउण्टी, बरो तथा पैरिश चले आते रहे। ट्यूडर और स्टुअर्ट वंश के राजाओं ने भी, जो बड़े निरंकुश थे, इनकी सत्ता पर प्रहार नहीं किया। परन्तु १८ वीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा १९ वीं शताब्दी के पूर्वार्द्ध में व्यावसायिक क्रान्ति (Industrial Revolution) ने सारी परिस्थिति बदल दी। लोग गाँव छोड़-छोड़ कर शहरों में जाने लगे और शहरों में सफाई, शिक्षा, स्वास्थ्य, निर्धन-सहायता तथा नगर-सुधार-योजना आदि समस्याएँ उपस्थित हो गईं। पालियामेण्ट ने पुरानी संस्थाओं को हटाना उचित नहीं समझा, बल्कि और नई-नई संस्थाएँ स्थापित कीं, जिनसे उन समस्याओं का हल हो। परिणाम यह हुआ कि नई और पुरानी संस्थाओं का कार्य-क्षेत्र झमेले में पड़ गया और उसका ठीक-ठीक विभाजन न हो पाया। स्थानीय संस्थाओं की संख्या बहुत बढ़ गई (सन् १८८३ में २७,००० तक पहुँच गई) अतः उनकी संख्या घटाकर उनमें सुधार करने की आवश्यकता प्रतीत हुई। इसके परिणामस्वरूप सन् १८८८, १८९४, १९२९ तथा १९३३ में पालियामेण्ट ने स्थानीय शासन-सम्बन्धी विभिन्न अधिनियम पारित किये, जिनसे स्थानीय संस्थाओं को कम करके उन्हें आधुनिक रूप दिया गया।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इङ्गलैण्ड में स्थानीय शासन बहुत प्राचीन भी है, और नया भी है। यह भी ब्रिटिश संविधान के समान विकास का परिणाम है और इसके विकास की गति में कभी भी बाधा नहीं आई। इसकी एक विशेषता यह भी है कि "इसका आधार विधि है, विशेषाधिकार नहीं है। कोई भी निकाय (body), कोई भी स्थानीय कर्मचारी बिना वैध अधिकार प्राप्त किये कोई कार्य नहीं कर सकता। इङ्गलैण्ड का स्थानीय शासन स्वतन्त्र है, आधिपात्यिक (hierarchical) नहीं है। प्रत्येक अंग सामान्यतः अपने क्षेत्राधिकार में स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य कर सकता है, बशर्ते कि वह बोनाफाइड (bonafide) की हैसियत से कार्य करता है।"[2]

---

1 "The English system of Local Government is the result of a long historical evolution, for the most part unguided and unplanned."
(*Munro: Governments of Europe*, p. 289)

2 "The English Local Government is legal, not prerogative. No local body, no local official can act without definite legal authority......Further English Local Government is independent, not hierarchical. Generally speaking, each organ is free to act as it pleases within its authority, provided that it acts *bonafide*."
(*Edward Jenks: Outline of English Local Government*, (1947), p. 14)

इङ्गलैण्ड में स्थानीय शासन का क्षेत्र :

शासन की सुविधा के लिए स्थानीय शासन के पाँच प्रमुख क्षेत्र हैं—

(१) काउण्टी (County), (२) बरो (Borough), (३) नगर जिला (Urban district), (४) ग्राम जिला (Rural district), और (५) पैरिश (Parish)। शासन की दृष्टि से सम्पूर्ण देश को ६३ काउण्टियों में विभाजित किया गया है जिनमें लन्दन की काउण्टी भी सम्मिलित है। इनमें से प्रत्येक काउण्टी को ग्राम और नगर जिलों में विभक्त किया गया है और ग्राम तथा नगर जिलों को ग्राम तथा नगर पैरिशों में बाँटा गया है। इस प्रकार स्थानीय शासन की सब से छोटी इकाई पैरिश है और सबसे बड़ी काउण्टी है। किसी काउण्टी के अन्दर यदि किसी क्षेत्र को अलग चार्टर मिल गया है तो वह बरो कहलाता है। इन सब की हम अलग-अलग व्याख्या करेंगे—

(१) **काउण्टी** (County)—काउण्टी दो प्रकार की हैं—(१) ऐतिहासिक काउण्टी (Historic County), और (२) प्रशासकीय काउण्टी (Administrative County)।

ऐतिहासिक काउण्टी—ऐतिहासिक काउण्टियाँ इङ्गलैण्ड और वेल्स में कुल मिला कर ५२ हैं। ये प्रशासकीय कार्य नहीं करती हैं, परन्तु न्यायिक प्रशासन की क्षेत्र हैं। इनमें एक-एक जस्टिस ऑफ पीस रहता है। ये लोकसभा की सदस्यता के लिए निर्वाचन-क्षेत्र भी हैं। इनका प्रशासन कार्य में कुछ भी भाग नहीं है और न इनमें कोई परिषद् या स्थानीय निकाय (Local Body) ही है।

प्रशासकीय काउण्टी—इनकी कुल संख्या लन्दन की काउण्टी को मिलाकर ६३ है। प्रत्येक काउण्टी में एक काउण्टी परिषद् (County Council) होती है जिसके सदस्य वहाँ के मतदाता चुनते हैं। जनसंख्या के आधार पर इन सदस्यों की संख्या घटती-बढ़ती रहती है। काउण्टी परिषद् के सदस्य अपने में से अथवा अन्य योग्य मतदाताओं में से अपनी संख्या के एक-तिहाई ऐल्डरमैन (Aldermen) चुनते हैं। काउन्सिल के सदस्य की कार्यावधि ३ साल और ऐल्डरमैन की ६ साल है। यदि कोई काउन्सिलर ऐल्डरमैन चुन लिया जाता है तो उसके रिक्त स्थान की साधारण चुनाव द्वारा पूर्ति कर दी जाती है। ऐल्डरमैनों में से आधे प्रत्येक तीसरे वर्ष अवकाश प्राप्त करने जाते हैं। ऐल्डरमैन योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति ही चुने जाते हैं। काउन्सिलर तथा ऐल्डरमैन मिलकर एक अध्यक्ष (Chairman) चुनते हैं। इसका चुनाव सिर्फ एक साल के लिए होता है। वह जस्टिस ऑफ पीस का कार्य करता है।

काउन्सिलर के चुनाव प्रति तीन साल बाद होते हैं। मतदान का आधार वयस्क मताधिकार नहीं है, बल्कि वही मतदाता हो सकता है जो निश्चित कर देता है या जिसके पास निश्चित भूमि है।

काउण्टी कौंसिल के कार्य—कौंसिल की वर्ष भर में कम से कम चार बार बैठक होती हैं। उसकी बहुत शक्तियाँ हैं तथा अनेक कार्य हैं :

(अ) छोटी स्थानीय संस्थाओं की देखभाल और उन पर नियन्त्रण।
(ब) बजट बनाना तथा कुछ कर लगाना।
(स) सड़कें, पुल, मजदूरों के लिए मकान आदि बनवाना।
(द) अनाथालय, पागलखाने, औद्योगिक शिक्षालय आदि का प्रबन्ध करना।
(य) जानवरों की बीमारी को रोकने तथा नाप-तोल के बाँटों के बारे में कानून बनाना।
(र) कृषि के विकास व कृषि की उच्च शिक्षा का प्रबन्ध करना।
(ल) अपने कर्मचारी जैसे काउण्टी कोषाध्यक्ष, काउण्टी कोरोनर, स्वास्थ्य अधिकारी, माप (Surveyor) आदि की नियुक्ति करना।
(व) पूजागृह तथा वैज्ञानिक समितियों के नियमों को रजिस्टर करना।

उपर्युक्त कार्यों के अतिरिक्त इसके कुछ अन्य कार्य भी हैं। इसकी आमदनी का स्रोत मकानों, जमीन तथा अन्य उद्योगों पर कर है। सरकार से विभिन्न प्रयोजनों के लिए इसे आर्थिक सहायता भी मिलती है।

कार्य की सुविधा के लिये काउन्सिल को कम से कम नौ कमेटियों में विभक्त कर दिया गया है—(१) वित्त-समिति, (२) शिक्षा-समिति, (३) निर्धनता-निवारण समिति, (४) जन-स्वास्थ्य समिति, (५) गृह-निर्माण समिति, (६) कृषि-समिति, (७) प्रसूता तथा शिशु-कल्याण समिति (Child and Welfare Committee), (८) स्थानीय पेन्शन समिति, (९) कर-विधायक समिति (१०) मानसिक विकृति वालों की देखभाल करने वाली समिति, और (११) दुकान अधिनियम समिति (Shop Act Committee)।

प्रत्येक काउण्टी में छोटी-छोटी पुलिस की इकाइयों के रहने की सम्भावना नहीं है, इसलिए क्वार्टर सैशन्स व काउण्टी कौंसिल की संयुक्त समिति बनती है, जिसे पुलिस की शक्तियाँ प्राप्त हैं।

(२) **ग्राम जिले** (Rural Districts)—सन् १८९४ के स्थानीय शासन अधिनियम (Local Govt. Act) के अनुसार प्रशासकीय काउण्टी को दो भागों में विभक्त किया गया—(१) ग्राम जिला (Rural Districts), और (२) नगर जिला (Urban Districts)। ग्राम जिले कई पैरिशों (Parishes) को मिलाकर बनाए जाते हैं। इङ्गलैण्ड और वेल्स में ऐसे कुल मिलाकर ६६३ जिले हैं। चूँकि काउण्टी स्वास्थ्य, सफाई, रोशनी आदि का कुशलतापूर्वक प्रबन्ध नहीं कर सकती, इसलिये उसको आगे विभाजित कर दिया गया है। प्रत्येक ग्राम जिले में एक जिले की कौंसिल (District Council) होती है। ३०० या अधिक जनसंख्या

वाला प्रत्येक पैरिश इस कौंसिल के लिए सदस्य भेजता है। इस कौंसिल का कार्य जल, प्रकाश, स्वास्थ्य, सफाई, पगडन्डियों की मरम्मत आदि है।

(३) **नगर जिले** (Urban Districts)—उद्योग के विकास के कारण जहाँ कोई भाग घनी आबादी वाला हो गया है वहाँ काउण्टी कौंसिल उसे नगर जिला (Urban District) बना देती है। इनके भी वही कार्य हैं जो ग्राम जिलों के हैं। यदि किसी नगर जिले की जनसंख्या बीस हजार से अधिक हो जाय तो उसे प्रारम्भिक शिक्षा के ऊपर नियन्त्रण का अधिकार भी मिल जाता है। पच्चीस हजार की आबादी पर वहाँ एक अवैतनिक मजिस्ट्रेट नियुक्त कर दिया जाता है। ये कौंसिलें अपना अध्यक्ष चुन लेती हैं और कार्य की सुविधा के लिये अपनी कमेटी बना लेती हैं। इङ्गलैण्ड और वेल्स में ऐसी ७० कौंसिलें हैं।

(४) **पैरिश** (Parish)—देहाती क्षेत्रों की यह सबसे छोटी इकाई है। ३०० से अधिक आबादी होने पर उस क्षेत्र में एक कौंसिल बना दी जाती है जिसके ५ से १५ तक सदस्य होते हैं। ये तीन वर्ष के लिये चुने जाते हैं। चुनाव हाथ उठाकर होता है। ३०० से कम आबादी वाले पैरिशों का प्रबन्ध करदाताओं की एक समिति द्वारा होता है। इनका काम जल-प्रबन्ध, बाग-बगीचे लगवाना, पुस्तकालय बनाना, पगडण्डियों की मरम्मत आदि है। एक साल में कम से कम दो बार इन कौंसिलों की बैठक होती हैं।

(५) **बरो** (Borough)—जब किसी नगर जिला (Urban District) को अलग म्युनिसिपल चार्टर मिल जाता है तब वह बरो कहलाता है। बरो तीन प्रकार के हैं—(१) पार्लियामेण्टरी बरो, (२) म्यूनिसिपल बरो, और (३) काउण्टी बरो।

पार्लियामेण्टरी बरो—लोकसभा के सदस्यों के लिए निर्वाचन की इकाइयाँ हैं। इनका ऐतिहासिक काउण्टियों के समान स्थानीय शासन से कोई सम्बन्ध नहीं है।

म्यूनिसिपल बरो—प्रशासकीय काउण्टी का ही एक भाग है परन्तु अलग चार्टर मिल जाने से इसे काउण्टी की सब शक्तियाँ प्राप्त होती हैं और यह काउण्टी के नियन्त्रण से बाहर होता है। जब इसकी जनसंख्या ७५,००० से अधिक हो जाती है तब यह स्वास्थ्य-मन्त्रालय को अर्जी देकर काउण्टी बरो का पद प्राप्त कर लेता है।

काउण्टी बरो—जैसा अभी बतलाया है, किसी बरो की आबादी ७५,००० से अधिक होने पर वह काउण्टी बरो बना दिया जाता है।

म्युनिसिपल बरो और काउण्टी बरो दोनों के समान कार्य हैं और समान ही शक्तियाँ हैं। इस समय इङ्गलैण्ड में ३०० से अधिक बरो हैं।

बरो कौंसिल—बरो कौंसिल में ६ से ४२ तक सदस्य होते हैं। सदस्य तीन वर्ष के लिए जनता द्वारा चुने जाते हैं, परन्तु उनमें से एक-तिहाई प्रति वर्ष अवकाश ग्रहण करते जाते हैं। कौंसिल के सदस्य अपने में से तथा बाहर से ऐल्डरमैन चुनते हैं। ये छः

साल के लिए चुने जाते हैं। इनकी संख्या कौंसिल के सदस्यों की एक-तिहाई होती है और इनमें से आधे प्रत्येक तीसरे वर्ष निवृत होते जाते हैं। चुनाव प्रति वर्ष १ नवम्बर को होता है।

कौंसिल के सदस्य तथा ऐल्डरमैन मिलकर एक मेयर (Mayor) चुनते हैं। वह बरो में अत्यन्त प्रतिष्ठित व्यक्ति होता है। वह एक साल के लिए चुना जाता है, परन्तु दुबारा भी चुना जा सकता है। वह कौंसिल की बैठकों में सभापति बनता है और बरों के सब जलसों व सम्मेलनों में बुलाया जाता है। उसका पद वैतनिक नहीं होता, परन्तु कई बरों में उसे वेतन दिया जाता है। मेयर की पत्नी मेयरैस कहलाती है और उससे समस्त सामाजिक जीवन में भाग लेने की आशा की जाती है। यदि मेयर क्वारा या विधुर है तो उसकी रिश्तेदार मेयरैस का काम करती है। इसके विपरीत यदि कोई स्त्री ही मेयर बन गई है तो कोई दूसरी स्त्री मेयरैस का कार्य करती है।

बरो कौंसिल के कार्य—बरो कौंसिल वैधायिक (Legislative) तथा कार्यपालिका (Executive) सम्बन्धी दोनों प्रकार के कार्य करती है। वह अपने कर्मचारी नियुक्त करती है और अपने विभिन्न विभागों में सफाई, जल का प्रबन्ध, सड़कें, शिक्षा, पुलिस, स्वास्थ्य आदि की देखभाल करती है। कार्य की सुविधा के लिए प्रत्येक बरो में समितियाँ होती हैं; जैसे वित्त-समिति, शिक्षा-समिति, निर्धनता-निवारण समिति, वृद्धावस्था पेन्शन समिति, अग्नि-रक्षा समिति, पुलिस सम्बन्धी देखभाल समिति, आदि।

कौंसिल का वैधानिक कार्य यह है कि वह अपने उपनियम (Bye-laws) बनाती है, परन्तु इनके लिये स्वास्थ्य विभाग से मंजूरी लेनी पड़ती है।

कोषाध्यक्ष, इञ्जीनियर, पब्लिक एनेलिस्ट, चीफ कान्स्टेबिल, हैल्थ ऑफीसर इसके वैतनिक कर्मचारी हैं। उनकी सहायता के लिए अन्य कर्मचारी भी होते हैं।

बरो कौंसिल की बैठकें टाउन हॉल में मासिक, अर्ध-मासिक तथा साप्ताहिक होती हैं।

स्थानीय शासन पर केन्द्र का नियन्त्रण :

ब्रिटेन में स्थानीय शासन का यह मतलब नहीं है कि स्थानीय संस्थाओं को स्थानीय मामलों के प्रबन्ध करने में पूर्ण स्वतन्त्रता है। जैसा कि पिछले एक परिच्छेद में कहा जा चुका है, ब्रिटेन में शासन सम्बन्धी सर्वोच्च शक्ति पार्लियामेण्ट में निहित है। इसलिए स्थानीय संस्थाएँ केन्द्र से नियन्त्रित होती हैं और केन्द्र के ही द्वारा उनकी स्वतन्त्रता की सीमा निश्चित की जाती है। यह नियन्त्रण आजकल बहुत बढ़ गया है।

एक बात ध्यान में रखने की यह है कि इङ्गलैण्ड में स्थानीय संस्थाओं पर

केन्द्रीय नियन्त्रण कई विभागों द्वारा लागू किया जाता है, फ्रान्स के समान एक विभाग द्वारा नहीं रक्खा जाता। निम्नलिखित स्थानीय संस्थाओं के कार्यों पर, जो उनके सामने लिखे हुए हैं, नियन्त्रण रखते हैं:—

(१) स्वास्थ्य विभाग—निर्धन-सहायता, जल-व्यवस्था, सफाई, स्वास्थ्य।

(२) गृह-विभाग—पुलिस, कारखानों तथा खानों का निरीक्षण।

(३) शिक्षा-विभाग—प्रारम्भिक, माध्यमिक तथा टेकनिकल शिक्षा।

(४) यातायात विभाग—ट्रामवे, सड़कें तथा बन्दरगाह।

(५) कृषि-विभाग—पशु-चिकित्सा, औषधि तथा खाद्य-पदार्थ आदि।

केन्द्रीय सरकार स्थानीय सरकार पर निम्नलिखित तरीकों से नियन्त्रण रखती है:—

(१) ऐसे नियम पास करना जिनसे पुराने क्षेत्र समाप्त हों और नए बनें।

(२) केन्द्रीय कोष से सहायता बन्द करने की धमकी देना, यदि किसी स्थानीय संस्था का काम खराब है।

(३) कार्य-क्षेत्र बढ़ाने का अधिकार न देना और तभी देना जब पूर्व कार्य कुशलतापूर्वक कर लिया गया है।

(४) इन्सपैक्टरों द्वारा स्थानीय संस्थाओं के कार्यों की जाँच करवाना और खराब रिपोर्ट होने पर सहायता बन्द कर देना।

(५) सन् १६२६ से पूर्व विभिन्न कामों के लिए अलग-अलग सरकारी मदद मिलती थी, परन्तु अब यह प्रथा बन्द कर दी गई है और सरकारी मदद तभी मिलती है जब सब काम ठीक हो रहा है।

(६) प्रत्येक स्थान के लिए स्थानीय संस्था के प्रकार निश्चित करना कि किस क्षेत्र में कैसी संस्था बने।

लन्दन का शासन :

प्राचीन काल से ही लन्दन देश के शेष भाग से अलग समझा जाता रहा है। सन् १८३५ में भी जब स्थानीय-शासन शासन का प्रमुख आधार बनाया गया तब भी लन्दन को छोड़ दिया गया। उसके लिए सन् १८५५ और १८६६ में अलग विधान बनाये गये। लन्दन के लिए अलग ही नियम तथा अधिनियम बनाये जाते हैं।

स्थानीय-शासन के अभिप्राय से लन्दन को तीन भागों में विभाजित किया गया है—(१) लन्दन शहर, (२) लन्दन काउण्टी, और (३) लन्दन मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट।

(१) **लन्दन शहर**—यह क्षेत्र वर्तमान राजधानी का एक छोटा अङ्ग है और इसका क्षेत्रफल सिर्फ एक वर्गमील है (पूरे लन्दन का क्षेत्रफल लगभग ७०० वर्गमील

है)। इसकी सीमा और सड़कों के नाम पुराने ही चले आ रहे हैं। इसका शासन एक मेयर और तीन परिषदों द्वारा होता है। वे परिषदें निम्नलिखित हैं :—

(अ) **कोर्ट ऑफ ऐल्डरमैन** (Court of Aldermen)—इसमें एक मेयर और २६ ऐल्डरमैन होते हैं। ये जीवन भर के लिये चुने जाते हैं। इनका कार्य दलालों को लाइसैन्स देना और शहर के अभिलेखों (Records) को सुरक्षित रखना है।

(ब) **कोर्ट ऑफ कॉमन कौंसिल** (Court of Common Council)-यह नगर की वास्तविक प्रशासकीय संस्था है। इसमें कोर्ट ऑफ ऐल्डरमैन के २६ सदस्य तथा २०० अन्य कौंसिलर होते हैं जो प्रति वर्ष चुने जाते हैं। इसका काम शहर के लिए उप-विधियाँ बनाना, पुलों की देखभाल करना और पुलिस, सिविल कोर्ट, फौजदारी अदालतों का निरीक्षण है। यह अपनी सुविधा के लिए कई समितियाँ बना लेती है।

(स) **कोर्ट ऑफ कॉमन हॉल** (Court of Common Hall)—इसमें कोर्ट ऑफ ऐल्डरमैन के सदस्य तथा सिटी कम्पनियों के लिवरीमैन (Liverymen) होते हैं। यह प्रति वर्ष एक शैरिफ (Sheriff) और दो ऐल्डरमैनों को चुनता है जिनमें से कोर्ट ऑफ ऐल्डरमैन एक लॉर्ड मेयर चुनता है।

शहर का मेयर बड़ी शान-शौकत का व्यक्ति होता है। वह उपर्यक्त तीनों परिषदों का सभापति होता है और उसे १०,००० पौण्ड वार्षिक वेतन मिलता है।

(२) **लन्दन काउण्टी**—यह प्रशासकीय काउण्टी है। सन् १८५५ के काउण्टी कौंसिल एक्ट के अनुसार वहाँ एक कौंसिल की स्थापना हुई। इस काउण्टी का क्षेत्रफल ११७ वर्गमील है। कौंसिल में १२४ सदस्य तथा अपने में से या बाहर से चुने हुए २० ऐल्डरमैन होते हैं। कौंसिलर तीन साल के लिए और ऐल्डरमैन ६ साल के लिए होते हैं। आधे ऐल्डरमैन तीन वर्ष बाद बदल जाते हैं। सदस्य और ऐल्डरमैन मिलकर अध्यक्ष चुनते हैं। इस काउण्टी के प्रायः वही कार्य हैं जो अन्य काउण्टी कौंसिलों के होते हैं तथा इसकी आमदनी के साधन भी वही हैं; जैसे सरकारी सहायता, कर, किराया व स्कूलों की फीस, स्थानीय टैक्स आदि।

लन्दन की प्रशासकीय काउण्टी में २८ बरो हैं, जिनमें प्रत्येक में कौंसिल है और उसमें पूर्ववत् सदस्य, ऐल्डरमैन तथा अध्यक्ष हैं। सड़कों की सफाई, स्वास्थ्य, पुस्तकालय, श्मशान, गोदाम, रोशनी, मजदूरों के मकान आदि सम्बन्धी कार्य इसके कार्य-क्षेत्र में आते हैं।

(३) **लन्दन मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट**—लन्दन शहर के चारों ओर मेट्रोपोलिटन पुलिस डिस्ट्रिक्ट है, जिसका क्षेत्रफल करीब ७०० वर्गमील है। लन्दन

शहर की पुलिस अलग है। पुलिस लन्दन की समस्त काउण्टियों की देखभाल करती है और इसका प्रधान एक पुलिस कमिश्नर है। पुलिस के जवानों की संख्या करीब २०,००० है।

उपसंहार :

इङ्गलैण्ड के स्थानीय शासन पर दृष्टिपात करने से विदित होता है कि यहाँ की स्थानीय शासन-व्यवस्था अत्यन्त प्राचीन है, परन्तु विकसित होते-होते एक नया रूप धारण कर गई है। यद्यपि अँग्रेज हमारे देश के मुकाबिले अपने अधिकारों को भली-भाँति समझते हैं और उनकी रक्षा करते हैं, तथापि हमें उनकी स्थानीय शासन-व्यवस्था सुसंगठित एवं सुव्यवस्थित नजर नहीं आती है। हमें इसी बात में चक्कर पड़ जाता है कि केन्द्र का उन पर कितना नियन्त्रण है। वास्तव में न तो यह नियन्त्रण कठोर है और न लचकदार है बल्कि इन दोनों के बीच में है। लन्दन की व्यवस्था अजीब ही है, बहुत कुछ हद तक यह दुनिया में अनोखी है। आधुनिक काल में समाजवादियों ने तथा श्रम दल वालों ने स्थानीय शासन-व्यवस्था को सुधारने के बहुत से प्रयत्न किए हैं, परन्तु विशेष सफलता प्राप्त नहीं हुई है।

UNIVERSITY QUESTIONS

30th oct. '57.

1. Give an account of the system of Local Government in England. What is the nature of the Central control over the local administration ?

(*Agra, 1937*; *Punjab, 1937, 1939*)

2. In what ways is the Central control exercised on local administration in England ? Do you think that the growth of the Central control threatens the efficiency of English Local Government ?

(*Delhi, 1953*; *Rajputana, 1954*)

— —— —

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान

प्रथम परिच्छेद

संविधान का इतिहास, उसका आधार तथा महत्त्व

संयुक्त राज्य अमेरिका का शासन-विधान संसार में सबसे महान् विधान माना जाता है।[1] इसका कारण यह है कि इसकी उत्पत्ति के पश्चात् इसमें बहुत कम परिवर्तन हुए हैं। हम देखते हैं कि पिछले सौ वर्षों में ब्रिटेन के शासन-विधान में अनेक परिवर्तन हुए हैं। सन् १८३२, १८६४, १८८५, १९१८ और १९२८ के सुधार-नियमों तथा १९११ के संसदीय अधिनियम द्वारा इङ्गलैण्ड के संविधान का रूप ही बिलकुल बदल गया। एक शक्तिशाली राजतन्त्र की निरंकुशता को समाप्त करके धीरे-धीरे ब्रिटेन की जनता ने एक प्रजातान्त्रिक वैधानिक राजसत्ता की स्थापना की। इङ्गलैण्ड के संविधान में पिछले सौ वर्षों में महान् परिवर्तन हुए हैं और इन परिवर्तनों का मूलभूत कारण इङ्गलैण्ड की तथा बाह्य जगत की बदलती हुई परिस्थितियाँ हैं, परन्तु इन परिस्थितियों का संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान पर बहुत कम असर पड़ा है और वह ज्यों का त्यों चला आ रहा है। संसार के विभिन्न देशों में—जर्मनी इटली, तुर्की, चीन आदि में—महान् सांविधानिक परिवर्तन हुए परन्तु अमेरिका में नहीं हुए। अपनी सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक स्थिति में परिवर्तन देखते हुए भी संयुक्त राज्य अमेरिका ने अपने विधान को ज्यों का त्यों अटल रक्खा है। यही इसकी प्रमुख विशेषता है।[2]

शासन विधान का इतिहास :

अमेरिका के संविधान की उत्पत्ति ढूंढ़ते हुए हमें आज से करीब १७५ वर्ष पूर्व की घटनाओं को देखना होगा, जब कि अटलाण्टिक महासागर के तट पर अँग्रेजों द्वारा बसाये गये १३ उपनिवेशों ने अपनी मातृभूमि इङ्गलैण्ड के विरुद्ध विद्रोह का झण्डा ऊंचा करके उससे युद्ध किया और सन् १७७६ में स्वातन्त्र्य-युद्ध प्रारम्भ करके सन् १७८३ में स्वतन्त्रता प्राप्त की।

प्रारम्भ में (अर्थात् स्वातन्त्र्य-संग्राम से पूर्व) अमेरिका में केवल १३ उपनिवेश थे, जिन्हें अँग्रेजों ने वहाँ जाकर बसाया था। अँग्रेजों के अलावा कुछ दूसरी

1 "The oldest unchanged system" in the world.

2 "The constitution which established this governmental system is one of the most remarkable political documents ever written. Devised though it was for a handful of people, its principles have stood the test of timo ; it remains to-day the governing charter of a nation."
(*Virginia Cowles : How America is Governed, p. 2*)

जातियों के लोग भी वहाँ जाकर बस गये थे परन्तु उनकी संख्या अधिक न थी। इन उपनिवेशों में कुछ सम्राट् के उपनिवेश (Crown Colonies) भी थे जिनमें इङ्गलैण्ड के राजा की ओर से गवर्नर रहता था, जो उसकी शक्ति का प्रतीक था, और उसकी सहायता के लिये एक कौंसिल होती थी। इन उपनिवेशों में न्यूयॉर्क, न्यू हैम्पशायर, जॉर्जिया, उत्तरी व दक्षिणी कैरोलिना तथा न्यूजर्सी शामिल थे। कुछ उपनिवेश ऐसे थे जो इङ्गलैण्ड के राजा से चार्टर प्राप्त कर लेने के बाद स्थापित हुए थे। इनका शासन वहाँ के नागरिक सीधे सम्राट् की आज्ञा से करते थे। इनमें रोडद्वीप तथा कनैक्टीकट शामिल थे। तीसरे प्रकार के उपनिवेश वे थे जिनमें शासन का कार्य ऐसे व्यक्तियों के आधीन था जिन्होंने शासन करने का अधिकार प्राप्त कर लिया था। ये उपनिवेश प्रोप्राइटरी उपनिवेश (Proprietory Colonies) कहलाते थे।

उपनिवेशों का शासन :

सत्रहवीं शताब्दी के अन्त तक इन उपनिवेशों में संघ शासन की व्यवस्था हो चुकी थी। इनके शासन-संगठन में विभिन्नताएँ कम थीं और समानताएँ अधिक। परन्तु सब उपनिवेश प्रायः एक दूसरे से बिल्कुल स्वतन्त्र थे और उनमें राष्ट्रीय एकता की भावना बिलकुल न थी। वे ब्रिटिश सम्राट् को अपना स्वामी मानते थे और ब्रिटिश पार्लियामेण्ट द्वारा निर्मित नियम उन सब में लागू होते थे।

गवर्नरों से झगड़ा :

उपनिवेशों की राजनैतिक दशा अच्छी नहीं थी। समस्त उपनिवेशों में गवर्नरों और उनकी कौंसिलों तथा प्रजा द्वारा निर्वाचित असेम्बलियों के बीच झगड़ा चलता रहता था। गवर्नरों को ऊपर से जो हुक्म मिलते थे वे बहुधा उपनिवेशों के निवासियों के विचारों या हितों के अनुकूल नहीं थे। इसमें सन्देह नहीं कि उपनिवेश-निवासी सम्राट् के प्रतिनिधियों को तंग करते थे और उन्हें नाराज करते थे, परन्तु साथ ही साथ यह बात भी सत्य है कि जो अफसर वहाँ भेजे जाते थे वे प्रायः विवेकहीन होते थे। इसका परिणाम यह होता था कि वे अमेरिकन भावनाओं को कुचल डालना चाहते थे।[1] इसका परिणाम यह हुआ कि गवर्नर और उसकी कौंसिल अप्रिय हो गई और धारासभा जो प्रजा द्वारा निर्वाचित थी, अप्रिय बन गई।

स्वतन्त्र होने की आतुरता :

सन् १७६३ तक तो उपनिवेशों को फ्रांस और स्पेन के आक्रमण का डर बना रहा। परन्तु जब सन् १७६३ में सप्तवार्षिक युद्ध समाप्त हो गया और पेरिस की

1 T. H. Reed : Forms and Functions of American Government, pp. 17-18.

सन्धि हो गई तब इन आक्रमणों का भय जाता रहा और उपनिवेश-निवासी अपनी स्वतन्त्रता व अपनी संस्थाओं की रक्षा के लिये उत्सुक हो उठे। वे अपने अधिकारों की रक्षा के लिये आतुर हो गये। इधर अँग्रेजी सरकार ने सन् १७६५-७५ के बीच पार्लियामेण्ट द्वारा कई नियम पास करा कर उनके अधिकारों को कुचलने की चेष्टा की और उनके ऊपर कई प्रकार के नये कर लगाए। उपनिवेश-निवासियों ने एक मत हो कर करों को देना अस्वीकार किया और नारा लगाया कि "बिना प्रतिनिधित्व के कोई कर नहीं" (No taxation without representation) अर्थात् इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट को, जिसमें हमें प्रतिनिधि भेजने का अधिकार नहीं है, हमारे ऊपर कर लगाने का भी अधिकार नहीं है।

युद्ध-घोषणा :

अन्त में ४ जुलाई सन् १७७६ को इन उपनिवेशों ने एक मत होकर इङ्गलैण्ड के विरुद्ध युद्ध-घोषणा कर दी और अपने को स्वतन्त्र घोषित कर दिया। इस घोषणा के बाद तुरन्त ही उपनिवेश-निवासियों ने एक परिषद् (Convention) बुलाई और संघ-शासन की व्यवस्था तैयार की ताकि समस्त उपनिवेश-निवासी संगठित होकर युद्ध की ओर ध्यान दें। १५ नवम्बर सन् १७७७ को समस्त राज्यों ने उस परिषद् द्वारा रचित व्यवस्था को स्वीकार कर लिया और यद्यपि उस व्यवस्था का पक्का अनुमोदन (ratification) सन् १७८१ से पूर्व न हो पाया फिर भी उसे सन् १७७७ में तुरन्त लागू कर दिया गया जिससे युद्ध में बाधा न पड़े।

सन् १७७६ की संघीय व्यवस्था :

सन् १७७६ के संघीय विधान की प्रस्तावना बहुत महत्वपूर्ण है क्योंकि इसके अन्तर्गत उपनिवेशों ने अपनी उन समस्त आशाओं व आकांक्षाओं की अभिव्यक्ति की है जिनसे प्रेरित होकर उन्होंने अपने को राजनैतिक दृष्टि से एक सूत्र में बाँधकर अपने भविष्य को दृढ़ बनाने का प्रयत्न किया और उस भावना को जन्म किया जिसने कुछ समय के बाद ही उन्हें राजनैतिक एकता में बाँधकर एक प्रबल राष्ट्र होने के लिए अवसर प्रदान किया।[1]

[1] The preamble of the declaration preceding the confederation is of great historical significance and it eloquently bears out the aspirations of the colonies and the objectives which led them to unite together to evolve a new confederation.

"When, in the course of human events, it becomes necessary for one people to dissolve the political bonds which have connected them with another, and to assume among the powers of the earth the separate and equal station to which the laws of nature and of nature's God entitle them, a decent respect to the opinions of mankind requires that they should declare the causes which impel them to the separation.

Continued on next page

इस व्यवस्था की प्रथम धारा के अनुसार संघ का नाम "संयुक्त राज्य अमेरिका" रक्खा गया, जो अब तक चला आ रहा है। इसकी एक धारा के अनुसार प्रत्येक राज्य की स्वतन्त्रता व सत्ता की रक्षा स्वीकृत की गई और स्पष्ट कर दिया गया कि प्रत्येक राज्य संघ की शक्ति के अतिरिक्त अन्य क्षेत्रों में पूर्ण रूप से अपना स्वामी है। संघीय शक्तियों को कार्यान्वित करने के लिये एक काँग्रेस की स्थापना की गई, जिसमें प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधि थे। इस काँग्रेस में प्रत्येक राज्य के कम से कम दो और अधिक से अधिक सात प्रतिनिधि थे। प्रत्येक राज्य को सिर्फ एक ही वोट देने का अधिकार था। काँग्रेस को अन्तर्राष्ट्रीय समझौते, सेना, सम्मिलित खर्च के लिए कर एवं ऋण लेना आदि कई अधिकार प्राप्त थे, परन्तु काँग्रेस को कार्यपालिका सम्बन्धी कोई अधिकार प्राप्त नहीं थे। काँग्रेस अपना प्रेसीडेण्ट चुनती थी परन्तु प्रेसीडेण्ट को कार्य-संचालन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त न थे।

इस प्रकार सन् १७७६ ई० में उपनिवेशों ने संघ शासन की व्यवस्था की परन्तु जैसा कि नीचे लिखा जाता है, इस संघ शासन में बड़ी दुर्बलता थी। काँग्रेस अपना प्रेसीडेण्ट चुनती अवश्य थी परन्तु प्रेसीडेण्ट की कोई वास्तविक कार्यपालिका शक्ति न थी। काँग्रेस यह न चाहती थी कि "कोई अन्य प्रकार का राजा प्रेसीडेण्ट का वेश धारण कर उन पर शासन करे"।[1]

In continuation to the last page

"We hold these truths to be self-evident: That all men are created equal; that they are endowed by their Creator with certain unalienable rights, that among these are life, liberty and the pursuit of happiness; that, to secure these rights, governments are instituted among men, deriving their just powers from the consent of the governed; that whenever any form of government becomes destructive of these ends, it is the right of the people to alter or to abolish it and to institute new government, laying its foundation on such principles, and organizing its powers in such form, as to them shall seem most likely to effect their safety and happiness. Prudence, indeed, will indicate that government long established should not be changed for light and transient causes, and, accordingly, all experience hath shown that mankind are more disposed to suffer while evils are sufferable, than to right themselves by abolishing the forms to which they are accustomed. But when a long train of abuses and usurpations, pursuing invariably the same object, evinces a design to reduce them under absolute despotism, it is their right, it is their duty, to throw off such government and to provide new guards for their future security. Such has been the patient sufferance of these colonies, and such is now the necessity which constrains them to alter their former systems of government."

1 "There was no intention of permitting another kind of king to be smuggled in upon them in the guise of a president."

(*Reed : Forms and Functions of American Government, p. 39*)

संघ-शासन की दुर्बलता :

इस संघ-व्यवस्था ने उपनिवेशों को कोई वास्तविक एकता प्रदान नहीं की। "विधान की जो नियमावली बनाई गई उससे राज्यों को वास्तविक रूप में सम्बद्ध नहीं किया गया। प्रारम्भ से ही वह बालू की रस्सी के समान थी जो किसी को बाँध सकने में असमर्थ थी।" कांग्रेस को शक्ति अवश्य मिली हुई थी, परन्तु वह वास्तविक न थी। बात-बात में उसे राज्यों का मुँह देखना पड़ता था; यहाँ तक कि युद्ध-काल में भी कांग्रेस सफलतापूर्वक कार्य न कर सकती थी और सन् १७८३ में इङ्गलैण्ड से स्वतन्त्रता मिल जाने पर तो उसका ढाँचा और भी ढीला पड़ गया। प्राय: सभी राज्य उसके प्रति विमुख हो गये और कभी-कभी तो सप्ताहों तक प्रतिनिधि काँग्रेस की मीटिंगों में शामिल होने के लिए नहीं आते थे और चूँकि काँग्रेस कम से कम ९ राज्यों की सम्मति के बिना कोई कार्य नहीं कर सकती थी इसलिए उसका काम करीब-करीब ठप हो गया। "काँग्रेस राज्यों से धन माँग सकती थी परन्तु उन्हें देने के लिए विवश नहीं कर सकती थी। यह उनसे सेना माँग सकती थी परन्तु माँग की पूर्ति के लिए उन्हें विवश नहीं कर सकती थी। यह सन्धि कर सकती थी परन्तु उनको पूरा करने के लिए इसे राज्यों पर ही निर्भर रहना पड़ता था। यह ऋण ले सकती थी परन्तु उसे चुकाने के लिए इसे राज्यों पर ही भरोसा करना पड़ता था। यह एक ऐसी निकाय (body) थी जिसके पास अधिकार बहुत थे परन्तु शक्ति बहुत कम थी। काँग्रेस केवल एक परामर्श देने वाली संस्था मात्र थी।"[1]

काँग्रेस की दुर्बलता का प्रभाव यह हुआ कि लोगों की उसके प्रति श्रद्धा बहुत कम हो गई। जिन लोगों ने युद्ध-संचालन के लिये काँग्रेस को धन दिया था वे उसकी दशा देखकर व्याकुल हो उठे और उन्हें स्पष्ट हो गया कि उनका धन डूब गया। राज्यों में अशान्ति फैल गई और कई जगह विद्रोह भी हुए। इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १७८७ में काँग्रेस ने एक परिषद् बुलाने का प्रस्ताव पास किया जिसका "एकमात्र अभिप्राय संघ की नियमावली को संशोधित करके काँग्रेस तथा राज्यों की धारासभाओं को नवीन नियमावली से परिचित किया जाय और जब काँग्रेस तथा राज्यों द्वारा वह मान ली जाय तब उसे लागू कराया जाय, जिससे संघ शासन प्रशासकीय कार्यों को सफलतापूर्वक करता रहे और संघ भी दृढ़ बना रहे"।[2]

सन् १७८७ का फिलाडेल्फिया सम्मेलन :

परिणामस्वरूप मई सन् १७८७ में फिलाडेल्फिया में महान् सम्मेलन

1 Wilson : The State.

2 "It was the fatal executive impotency of the confederation which led to the formation of the present stronger and mere complete Government." (*Wilson : The State (1900 Ed.), pp. 459-60*)

हुआ जिसमें कानून, अर्थशास्त्र, प्रशासन-कार्य, राजनीति आदि के बड़े-बड़े विद्वान् एकत्रित हुए। उनका उद्देश्य "एक मजबूत केन्द्रीय सरकार स्थापित करना था जिसके साथ-साथ राज्यों की भी अधिकाधिक व्यक्तिगत स्वतन्त्रता स्थापित रहे।" कई दिनों के उपरान्त विधान तैयार किया गया और उसे राज्यों के पास स्वीकृति के लिए भेज दिया गया।

नवीन विधान का आरम्भ :

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, कांग्रेस को अपने प्रत्येक कार्य के लिए कम से कम ९ राज्यों की स्वीकृति लेनी पड़ती थी। जून २१, १७८८ ई० को नये राज्य (न्यू हैम्पशायर) द्वारा जब स्वीकृति दे दी गई तो उसे तुरन्त ही ९ राज्यों में लागू कर दिया गया। इस नए विधान के अन्तर्गत कांग्रेस का प्रथम अधिवेशन ४ मार्च सन् १७८९ को हुआ।

विधान के मूल सिद्धान्तों का उल्लेख हम दूसरे अध्याय में करेंगे। यहाँ पर यही कह देना पर्याप्त होगा कि इस विधान में अमेरिका निवासियों ने दो प्रमुख बातों का ध्यान रक्खा है—(१) लोकसत्ता, और (२) राज्यों की समानता। इसकी अन्य विशेषताओं के बारे में हम आगे पढ़ेंगे। यह विधान अत्यन्त कठोर है और इसमें अब तक केवल २२ ही संशोधन हुए हैं, परन्तु अमरीका निवासियों ने इस विधान को बड़ी श्रद्धा से अपनाया है और दुनिया के परिवर्तनों के झकोरों ने भी उन्हें उसमें परिवर्तन करने के लिए बाध्य नहीं कर पाया है।

सन् १७८७ के संविधान का महत्व :

संयुक्त राज्य अमेरिका के शासन-विधान का अध्ययन करने के अनेक कारण हैं। आधुनिक विश्व में अन्तर्राष्ट्रीय राजनैतिक क्षेत्र में अमेरिका का जो हाथ है वह किसी से छिपा नहीं है। अमेरिका के संविधान ने ही उसे इतना महत्वपूर्ण स्थान दे दिया है कि वह संयुक्त राष्ट्र संघ (U. N. O.) का नेता बन कर संसार में अन्तर्राष्ट्रीयता की भावना का प्रचार कर रहा है। अपनी संघीय व्यवस्था के आधार पर ही अमेरिका विश्व का सर्वशक्तिमान राष्ट्र बना बैठा है और राजनैतिक क्षेत्र में प्रमुख शक्ति गिना जाता है। अपने विधान के कारण ही वह अपनी एकता को अभेद्य तथा अविच्छिन्न बनाए हुए है और आधुनिक राजनैतिक झंझावातों के सम्मुख अटल खड़ा हुआ है। यह एक सर्वमान्य सत्य है कि अमेरिका का विधान राजनीति के ही छात्रों ने लिए नहीं वरन् सब के लिए एक महत्वपूर्ण एवं ज्ञानप्रद अध्ययन है।[1]

1 "It has fostered a sense of superior patriotism. People are united and actuated by some common impulse of passion or interest, jealous of the aggregate interests of the community."—*President Wilson.*
"It may clog the administration, it may convulse the society, but it will be unable to execute and mask its violence under the forms of constitution."

विधान की अपरिवर्तनशीलता :

जैसा कि पहले कहा जा चुका है अमेरिका का विधान संसार में सबसे पुराना लिखित विधान है। जेम्स बैक ने इसे "सब से पुरानी अपरिवर्तित शासन-व्यवस्था" बतलाया है।[1] सन् १७८७ का शासन-विधान ही सन् १९५६ का शासन-विधान है। संसार में कोई भी ऐसा संविधान नहीं है जिसने उस उथल-पुथल के युग में परिवर्तनों का दृढ़तापूर्वक सामना किया हो और जिसमें परिवर्तन न हुए हों। केवल संयुक्त राज्य अमेरिका का ही संविधान इस उथल-पुथल से परे है। इङ्गलैण्ड में सन् १८३२, १८६४, १८८५, १९१८ और १९२८ के अधिनियमों तथा सन् १९११ के संसदीय अधिनियम के अनुसार महान् परिवर्तन हुए। एक बहुत ही शक्तिशाली निरंकुश शासन अत्यन्त सुन्दर नियमानुमोदित राजतन्त्र के रूप में बदल गया। फ्रांस में भी राज्य-क्रान्ति के पश्चात् गणतन्त्रीय, राजतन्त्रीय तथा साम्राज्यशाही संविधानों की बारी-बारी से स्थापना हुई। अभी हाल ही में फ्रान्सीसी विधान फिर बदल गया है। अन्य देशों जैसे जर्मनी, रूस, चीन, तुर्की आदि के विधानों में भी परिस्थितियों के चक्कर में पड़ कर समय-समय पर अनेक परिवर्तन हुए हैं। परन्तु अमेरिका का ही संविधान एक ऐसा उदाहरण है जिसमें परिवर्तन नहीं घुस पाये हैं और जिसने बाह्य परिवर्तनों का सफलतापूर्वक सामना किया है। इसी कारण इस विधान का अध्ययन एक विशेष महत्त्व और रोचकता रखता है।

अमेरिका का विगत एवं आधुनिक सामाजिक व आर्थिक जीवन :

अमेरिका के संविधान की एक अत्यन्त चित्तग्राही विशेषता यह है कि यह विधान विभिन्न प्रकार की आर्थिक व सामाजिक परिस्थितियों की आवश्यकताओं की पूर्ति करता रहा है। यह बात हमें पिछले १५० वर्षों के इतिहास के अध्ययन से स्पष्ट हो जाती है। जब सन् १७८७ में विधान की रचना हुई उस समय अमेरिका एक कृषि-प्रधान देश था और व्यावसायिक क्रान्ति जिसने गत शताब्दी के अन्तर्गत सामाजिक और आर्थिक ढांचे को ही बदल दिया, उस समय आरम्भ हो रही थी। उस समय अमेरिका-निवासी रूढ़िवादी थे। वे दुनिया से अलग थे और अलग रहना पसन्द करते थे। जनसंख्या अधिकतर गाँवों में रहती थी और आवागमन के साधन बहुत कम थे। अमेरिका सभ्यता के निम्न स्तर पर था और शिक्षा की बहुत कमी थी। आज का अमेरिका उस अमेरिका से बिलकुल भिन्न है। आज अमेरिका व्यवसाय, सभ्यता और विचारधारा में संसार में अग्रगण्य है। राजनैतिक क्षेत्र में सब का अगुआ है। उसकी सरकार में किसान-मजदूर ही शामिल नहीं हैं वरन् विभिन्न समुदायों के लोग भी सम्मिलित हैं। वहाँ की जनता

1 James Beck : The Constitution of the United States, pp. 200-201.

अब अधिकतर शहरों में आलीशान मकानों में रहती है। संक्षेप में, सन् १७८९ के और आज के अमेरिका में जमीन आसमान का अन्तर है और यह भी बात सच है कि यह अन्तर इन्हीं १५० वर्षों में हुआ है। परन्तु फिर भी अमेरिका के संविधान में कोई मूलभूत परिवर्तन नहीं हुआ है। सन् १७८९ के अमेरिका की कृषि-प्रधान सभ्यता तथा आधुनिक अमेरिका की व्यवसाय-प्रधान सभ्यता की तुलना जेम्स बैक ने अत्यन्त सुन्दर ढङ्ग से की है।[1]

यहाँ हम मैकडोनल्ड, वैब, ल्यूइस तथा स्टॉस द्वारा लिखित Outside Readings in American Government के उद्धरण को ज्यों का त्यों प्रस्तुत करते हैं। इससे अधिक विशद व्याख्या अन्यत्र नहीं मिल सकती। यह अमेरिका के राजनैतिक, सामाजिक तथा आर्थिक जीवन की अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तथा आधुनिक की स्पष्ट तुलना है। 'Then' का अर्थ है अठारहवीं शताब्दी का उत्तरार्द्ध और 'now' से तात्पर्य है आधुनिक काल—

["*Then* a small area, with a small and sparse population, mainly agricultural and poor. *Now* one of the world's great nations in both area and population, largely urban and highly industrial, with tremendous national wealth.

Then largely a debtor people and an exporter of raw materials. *Now* a great creditor nation and large exporter of manufactures as well as agricultural goods.

Then meager and slow transportation facilities and even poorer provisions for communication. *Now* an equipment of rail-roads, steamship lines, highways, trucks and buses, air transport, and communications of all kinds unexcelled by any other nation and undreamed of in the past.

Then state citizenship, state and local loyalties, inter-state suspicions and tariffs, localised business, and considerable internal disunity. *Now* a nation with national citizenship, primarily national loyalities, a nation-wide full market and nationally organised business, agriculture, labour, professions, press, and political parties.

Then an upstart and divided people, an international weakling, threatened from north and south, with very poor defence arrangements, and looking over the Atlantic at an essentially hostile world.

1 Measured in terms of the mechanical power, men when the constitution was formed were Lilliputians as compared with the Brodignagians, of our day when man outflies the eagle, outswims the fish, and by his conquest and utilization of the forces of nature has become the superman and yet the constitution of 1787 is, in most of its essential principles, still the constitution of 1924......This can be ascribed to the fact that the people had always sufficient political sagacity to prefer the stability of a tried system, even if not perfect, to the mad spirit of innovation. (*James Beck : op. cit., pp. 200-201*)

Now a great world power, an international leader with a powerful army and navy and with strong friends and interests (as well as enemies) across both the Atlantic and Pacific.

Growth of Federal Activity

Then, inactive, negative, laissez-faire government with very few functions, and with only business leaders favouring a national government, and they desiring only to give it enough vigour to protect commerce, provide a nation-wide full home market, and a sound currency and banking system. *Now*, active, positive, collectivist government, especially at the national level, rendering many services with the support of powerful labour and agricultural elements, while many business leaders have reversed their position.

Then local law enforcement with state protection of the liberties guaranteed in bills of rights. *Now* increasing national law enforcement and national protection of civil liberties even against state and local action.

Then practically no employees of the National Government and very few state and local employees. *Now* a national Civil Service of normally over a million persons reaching into every county of the country, plus extensive state and local Civil Services.

Then small public budgets at all levels. *Now* public budgets and expenditures especially for the National Government, that reach astronomical figures.

Then (before 1789) no national taxes at all and for decades after 1789 only customs and excise taxes on a very limited scale, with state and local governments relying almost entirely on direct property taxes. *Now* tremendously increased and diversified taxes at both national and state levels, with the National Government rising swiftly to a dominating position with respect to all taxes except those directly on property.

Then (before 1789) state grants to the Congress of the United States for defence and debt purposes. *Now*, grants-in-aid by the National Government to the States in increasing amounts and with steadily tightening national controls over state action."]

अमेरिका के संविधान को दृढ़ता और उसका अपरिवर्तित रूप ही उसकी विशेषता नहीं हैं और केवल उन्हीं के कारण हमारे लिए उसका अध्ययन विशेष दिलचस्पी नहीं रखता। एक बात जो विशेष ध्यान देने की है और जो प्रधानतया भारतीय विद्यार्थियों के लिए अधिक रुचिकर है, यह है कि संसार के बड़े-बड़े देशों से अधिक क्षेत्रफल तथा जाति, जलवायु, जमीन और आर्थिक परिस्थितियों की विभिन्नता होते हुए भी अमेरिका मौलिक तथा आध्यात्मिक एकता प्राप्त कर सका

है।[1] यह अमेरिका के लिए तो गर्व की बात है ही परन्तु समस्त संसार के लिए भी एक शिक्षाप्रद उदाहरण है। संयुक्त राज्य अमेरिका का क्षेत्रफल जो संसार में सबसे बड़ी राजनैतिक इकाई है, ३६,८५,३८२ वर्गमील है और इसकी जनसंख्या १३,७०,०८,४३५ है। संघ में ४८ राज्य सम्मिलित हैं जिनमें प्रत्येक की अपनी-अपनी अलग-अलग शासन-व्यवस्था है। भौगोलिक परिस्थितियाँ भी भिन्न-भिन्न हैं। जनसंख्या में भी विभिन्न जातियों के लोग शामिल हैं, जैसे अँग्रेज, फ्रान्सीसी, जर्मन, इटालियन, पोल, यहूदी, हब्शी आदि। परन्तु सब प्रदेश राज्य-भाषा तथा सरकार द्वारा एक सूत्र में बँधे हुए हैं और अपने को एक ही राष्ट्र के सदस्य समझते हैं। इतने बड़े क्षेत्र को जो करीब-करीब यूरोप के बराबर है, मौलिक तथा आध्यात्मिक रूप में एक सूत्र में बाँध देना एक बहुत ही विशेष बात है और इसमें अमेरिका-निवासियों को गर्व रखने का वास्तव में अधिकार है।

अमेरिका का संघ-शासन जनतन्त्रीय संघ-व्यवस्था का एक अनूठा उदाहरण है :

अमेरिका का संविधान संसार के सबसे पुराने, विस्तृत तथा सफल संविधानों में से एक है जो केन्द्रीय शासन को स्थानीय स्वशासन से बाँधता है।[2] एक समय वह था जब यह माना जाता था कि जनतन्त्रीय सरकार उन्हीं देशों में सफल हो सकती है जिनका क्षेत्रफल कम है और बड़े-बड़े देशों में केवल राजतन्त्र ही सफल हो सकता है। अठारहवीं शताब्दी के अन्त तक लोगों का यह विचार था कि मनुष्यों की जान व स्वतन्त्रता की रक्षा के लिए यह आवश्यक है कि शासन का कार्य थोड़े से ही लोगों के हाथ में रहे। परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका ने इस विश्वास को झूठा करके दिखला दिया है। उन्नीसवीं शताब्दी में अमेरिका ने यह दिखला दिया कि संघीय शासन दुर्बलता का सूचक नहीं है वरन् एक शक्तिशाली राष्ट्रीय प्रशासन का द्योतक है।[3] उसने यह भी दिखला दिया कि किस प्रकार मनुष्यों को बहुमत शासन स्वीकार करने के लिए अपने ऊपर स्वयं प्रतिबन्ध लगाने के हेतु प्रेरित किया जा सकता है।[4] अमेरिका की सरकार ने यह भी सिद्ध कर दिया है कि एक गणतन्त्रीय शासन-व्यवस्था जो संघीय व्यवस्था के आधार पर निर्मित है, एक वृहत् जन-समूह की जो आधे महाद्वीप में निवास करता है, समस्त आवश्यकताओं की पूर्ति कर सकती है और प्रशासन की प्रत्येक क्रिया को भली-भाँति हल कर सकती है।[5] मिस्टर ब्रोगन

---

1 Bryce: The American Commonwealth, Vol. I, Chap. I.

2 Munro: The Government of the United States, p. 13.

3 "America, during the nineteenth century, demonstrated to the world that Federalism did not necessarily mean weak government, but was quite reconcilable with a strong national administration."
(*Munro : Ibid, p. 13*)

4 James Bock : op. cit., p. 204.

5 Munro : The Government of the United States, p. 14.

के कथनानुसार "अमेरिकन शासन-व्यवस्था न तो आततायी (tyrannical) और न अराजक (anarchical) हुई; इसके विपरीत इस व्यवस्था ने लोगों को शक्तिशाली और समृद्धशाली बना दिया जिसके फलस्वरूप उन्होंने अपनी स्वतन्त्रता की रक्षा की है और संसार के इतिहास पर महत्त्वपूर्ण प्रभाव डाला है।[1]

अमेरिका का संविधान राजनैतिक अनुभवों की निरीक्षणशाला है :

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के बारे में कहा गया है कि यह परीक्षा, भूल तथा भूल-सुधार (trial, error and correction) के आधार पर विकसित हुआ है।[2] इसी कारण यह अत्यन्त महत्त्वशाली है। यह अधिकतर गृह-निर्मित व्यवस्था है। इसका निर्माण किसी विशेष विचारधारा को ध्यान में रखते हुए नहीं किया गया, जैसा कि तानाशाही राज्यों में होता है; बल्कि यह दीर्घ अनुभव का सन्तान है जो अब वयस्कावस्था को प्राप्त हो चुकी है।

यहाँ यह कहना अनुपयुक्त न होगा कि संयुक्त राज्य अमेरिका की क्रान्ति एक प्रकार से क्रान्ति नहीं कही जा सकती क्योंकि इसने फ्रान्सीसी राज्य-क्रान्ति अथवा रूस की राज्य-क्रान्ति की भाँति अमेरिका में वहाँ की मूल संस्थाओं को नष्ट नहीं किया और न नए प्रकार की राजनैतिक विचारधाराओं को ही जन्म दिया। संस्थाएँ ज्यों की त्यों रहीं।[3] राजसत्ता जो ब्रिटेन के हाथ में थी अब उपनिवेशों के हाथ में आ गई। अमेरिका की क्रान्ति के परिणाम भीषण न थे। इसका कार्य रचनात्मक अधिक था और विध्वन्सात्मक कम। हाँ एक कार्य इसने अवश्य तेजी से किया और वह यह कि इसने अमेरिका में प्रजातन्त्र की शीघ्र गति के लिए रास्ता साफ कर दिया।

अमेरिका की संघीय व्यवस्था एक आदर्श व्यवस्था है :

शासन-क्रिया अपनी सफलता के लिए जिन बातों पर निर्भर है वह उसे अमेरिकन संविधान से बहुत कुछ मिलती हैं। वस्तुतः शासन-क्रिया दो बातों पर निर्भर है— प्रथम तो वह सर्वाङ्गीण रूप में वैज्ञानिक ढंग से निर्मित की गई हो और दूसरे वह ऐसी हो जो सफलतापूर्वक कार्य-रूप में परिणित की जा सके। अमेरिका की शासन-व्यवस्था जो आदर्श संघीय व्यवस्था है, जैसा कि दूसरे परिच्छेद में बतलाया जायेगा, इस कसौटी पर खरी उतरी है। संयुक्त राज्य अमेरिका ने ही सब से पहले संघीय

---

1 Brogan: The American Political System, p. 6.

2 Munro: The Government of the United States, p. 14.

3 As America became English, English institutions in the colonies became American. They adapted themselves to the new conditions and new conveniences of political life in separate colonies, colonies struggling at first, then expanding, at last triumphing, and without losing their English character gained an American form and flavour."—*Wilson.*

शासन की व्यवस्था की और उस पर अमल किया। इसके बाद अन्य कई देशों ने उसका अनुसरण किया। यद्यपि संघ-व्यवस्था की उत्पत्ति प्राचीन यूनान में हुई और मध्यकालीन युग में भी इसको राजनीतिज्ञों ने बहुत कुछ अपनाया परन्तु आधुनिक संघीय शासन-प्रणाली अमेरिका की ही देन है। "यदि ग्रेट ब्रिटेन संसदीय शासन की जननी कहा जा सकता है, जहाँ से अन्य देशों में वह शासन-प्रणाली फैली, तो संयुक्त राज्य संघीय शासन के सिद्धान्तों का निर्माता तथा उनको सफलतापूर्वक स्वीकार करने वाला माना जा सकता है।" अपने संविधान के निर्माण में उसने न्यायिक निरीक्षण (Judicial Review) के सिद्धान्त को विकसित किया जिसकी तुलना हम इङ्गलैण्ड के विधि-शासन (Rule of Law) और फ्रान्स की प्रशासकीय विधि (Administrative Law) से कर सकते हैं।

उपर्युक्त कारणों की वजह से संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान हमारे लिए एक विशेष महत्त्व और रोचकता रखता है और उसे ध्यानपूर्वक पढ़ने की आवश्यकता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Trace the constitutional development in America.
2. What is it in American Constitution which makes its study very significant for the readers ?

8th Nov '57.

द्वितीय परिच्छेद

संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की विशेषताएँ

अमेरिका का विधान राष्ट्रीय एकता और स्थानीय संविधान के समन्वय का आश्चर्यजनक स्वरूप है। प्रथम परिच्छेद में कहा जा चुका है कि जिस प्रकार इङ्गलैण्ड का विधान संसदीय सरकार का जन्मदाता (जननी) माना जाता है उसी प्रकार संसार के प्राय: सभी देशों ने संघीय विधान की प्रणाली को अमेरिका से अपनाया है। यह एक सर्वमान्य सत्य है कि इस विधान ने संसार में एक नई परिपाटी को जन्म दिया है। जनतन्त्रीय शासन में अमेरिका का संविधान एक अनोखा उदाहरण है। अब्राहम लिन्कन (Abraham Liocoln) ने जनतन्त्र को जनता का, जनता के लिए, व जनता के द्वारा शासन (Government of the people, for the people, and by the people) बतलाया है और अमेरिका के विधान ने उसके कथन को प्रारम्भ से ही ध्यान में रक्खा। तभी तो यह निर्माण होने के बाद अटल बना रहा है जबकि यूरोप के कई देशों की राजनैतिक व्यवस्था में काफी उथल-पुथल रही। उदाहरणार्थ फ्रान्स। अमेरिका के विधान में संशोधन कम हुए। इसका कारण यह नहीं कि संशोधन सम्बन्धी प्रक्रिया वहाँ पर बहुत टेढ़ी है परन्तु प्रमुख कारण यह है कि संशोधनों की वहाँ आवश्यकता कम पड़ी। तथापि समय-समय पर आवश्यकतानुसार संशोधन अवश्य हुए।

जनतन्त्रीय शासन की प्रमुख आवश्यकता यह है कि जनता की आवाज व उसके निर्णय का आदर किया जाय। अमेरिका के विधान ने इस प्रकार की को निर्मित करना अपना ध्येय रक्खा जिनमें इस उद्देश्य की पूर्ति हो सके।[1] विधान ने जनता के अधिकारों व कर्त्तव्यों की व्याख्या की और जनता को स्वतन्त्र विचार के लिए प्रेरणा दी।[2] उसने जनता को परिपक्व विचार करने के लिए स्फूर्ति व क्षमता प्रदान की। यदि इस क्षेत्र में विधान में कठोरता है तो साथ ही साथ

1 Democracy requires that the judgment of the people must prevail. American institutions are designed to assure that in matters fundamental, the popular judgment is matured. There is continuity of administration coupled with the autonomy of the units."
(*Munro : Constitution of U. S. A., p. 39*)

2 "The constitution of the United States and the Fundamental law of each statement guarantee the freedom of enquiry and discussion. If it has rigidness, at the same time it has flexibility."
(*Functions of Education in American Democracy, p. 92*)

उसमें लचक भी है। संयुक्त राज्य अमेरिका के विधान की कुछ मुख्य विशेषताएं निम्नलिखित हैं :—

(१) संविधान का संघीय रूप—संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान संघीय व्यवस्था का सबसे अनूठा व अनुपम उदाहरण है। मुनरो के कथनानुसार अमेरिका का संविधान संघीय जनतन्त्र का एक अनूठा अनुभव है जिसने गृह-युद्धों के झकोरे सफलतापूर्वक सहन किये हैं, जो १३ राज्यों से प्रारम्भ होकर ४८ राज्यों में फैल गया है और जिसने जनतन्त्रीय भावना तथा स्वरूप का हृदय से सर्वदा स्वागत किया है। अमेरिका का संविधान संघीय व्यवस्था का एक सर्वोत्तम नमूना पेश करता है। स्विट्-जरलैण्ड, आस्ट्रेलिया, कनाडा, रूस, दक्षिणी अफ्रीका आदि देशों के संघीय संविधान इस आदर्श से बहुत नीचे हैं।

संघ शासन एक ऐसी व्यवस्था है जिसके अनुसार कई स्वतन्त्र तथा राजसत्तात्मक राज्य एक इकाई में बाँधे जा सकते हैं और साथ ही वे अपनी व्यक्तिगत स्वतन्त्रता तथा व्यक्तित्व भी स्थित रख सकते हैं। इसके अनुसार अनेक स्वाधीन राज्य अपनी इच्छानुसार एक संघ बना सकते हैं और सब मिल कर एक राष्ट्रीय सरकार स्थापित कर सकते हैं। यह राष्ट्रीय सरकार इस प्रकार की होती है कि इसमें प्रत्येक राज्य के अधिकार सुरक्षित रहते हैं और संघ सरकार के अधिकार-क्षेत्र को छोड़ कर अन्य सब मामलों में प्रत्येक राज्य स्वतन्त्र होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका के विभिन्न राज्य अपने-अपने क्षेत्र में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हैं। अमेरिका आधुनिक जगत में एक ऐसा प्रदेश है जहाँ संघ व्यवस्था सुचारु रूप से चल रही है। जैसा कि हम पहले बतला चुके हैं, नवम्बर सन् १७७५ में १३ उपनिवेशों ने मिल कर एक संघ स्थापित किया था। उस संघ की नियमावली बहुत दोषपूर्ण थी और वह एक बालू की रस्सी के समान थी जो उपनिवेशों को एक सूत्र में बाँधने में पूर्णतया असमर्थ थी। परन्तु सन् १७८७ का संविधान वास्तव में संघीय व्यवस्था के आधार पर निर्मित हुआ और इसके द्वारा वास्तविक संघ शासन की स्थापना हुई। इस विधान के अनुसार विभिन्न राज्यों ने एक केन्द्रीय शासन की स्थापना की और परस्पर राजी होकर प्रशासन के बहुत से कार्य संघ सरकार को दे दिये जिन्हें वे उस समय तक स्वयं करते चले आ रहे थे।

संघीय शासन-व्यवस्था के अनुसार प्रशासन के कुछ अधिकार संघीय सरकार को दे दिए जाते हैं और बचे हुए सब कार्यों की जिम्मेदारी संघ के अन्तर्गत राज्यों पर अपने-अपने क्षेत्र में होती है। दूसरी प्रणाली के अनुसार राज्यों के अधिकार निश्चित कर दिये जाते हैं और बचे हुए कार्यों पर केन्द्रीय सरकार का अधिकार होता है। संयुक्त राज्य अमेरिका में केन्द्रीय सरकार के अधिकार निश्चित कर दिए गए हैं और

शेष शक्तियाँ विभिन्न राज्यों को प्राप्त हैं। शक्ति-वितरण सम्बन्धी सूची में विधान में निम्नलिखित शक्तियों की सूची हैं—

(अ) संघीय सरकार की शक्तियाँ जिनका वह प्रयोग कर सकती है।

(ब) वे शक्तियाँ जो संघ सरकार के अधिकार में नहीं हैं।

(स) वे शक्तियाँ जो विभिन्न राज्यों से परे हैं।

संविधान में संघीय सरकार के अधिकारों को निश्चित रूप से निर्धारित कर दिया गया है। उनका क्षेत्र सीमित है और उनकी पूर्ण रूप से व्याख्या भी हो रही है। संघीय सरकार उसी क्षेत्र में अपने अधिकारों का प्रयोग कर सकती है।

संघीय सरकार को निम्नलिखित शक्तियाँ प्राप्त हैं:—

(१) संयुक्त राज्य की सम्पत्ति के आधार पर ऋण लेना।

(२) विदेशों से व्यापारिक सम्बन्ध स्थापित करना।

(३) युद्ध व सन्धि की घोषणा करना।

(४) मुद्रा बनाना, उसका मूल्य स्थिर करना तथा विदेशी मुद्रा का मूल्य स्थिर करना।

(५) डाकघर स्थापित करना।

(६) सेना इकट्ठी करना तथा उसे शिक्षित करना।

(७) अप्रत्यक्ष कर लगाना।

(८) आवागमन के साधनों की ओर ध्यान देना।

(९) समुद्री लूटपाट, अन्तर्राष्ट्रीय समझौते, वैज्ञानिक आविष्कार सम्बन्धी अनेक नियम बनाना, आदि।

राज्यों की सरकारों की शक्तियाँ व अधिकार मौलिक और परम्परागत हैं और उनकी अधिकांश में व्याख्या नहीं की गई है। जिन शक्तियों का संविधान में लेखा नहीं है वे सब राज्यों की सरकारों को प्राप्त हैं। जब संविधान की रचना हुई थी तब संविधान के निर्माताओं ने संघीय सरकार को वे ही अधिकार दिए जो एक दृढ़ केन्द्रीय सरकार बनाने के लिए अत्यन्त आवश्यक थे। उन लोगों ने राज्यों में स्वायत्त शासन कायम रखने के हेतु केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ निश्चित कर दीं और बची हुई शक्तियाँ राज्यों के लिए छोड़ दीं। इसका परिणाम अच्छा तो हुआ परन्तु साथ ही साथ कुछ खराब भी हुआ क्योंकि बहुत से ऐसे विषय हैं जिनमें सर्वत्र एकरूपता की आवश्यकता है जैसे शादी, तलाक आदि और ये विषय राज्यों के ऊपर छोड़ देने से परिणाम अच्छा नहीं हुआ है।

यद्यपि राज्यों की शक्तियाँ अधिकांशतः निश्चित नहीं की गई हैं फिर भी राज्यों की सरकारें मनमानी नहीं कर सकती हैं। कोई भी नियम व अधिनियम जो उनकी शक्ति से परे है, या जो संविधान द्वारा उनके ऊपर लागू किये हुए बन्धनों को

तोड़ता है, उच्च न्यायालय के द्वारा अवैध घोषित किया जा सकता है। जो शक्तियाँ संघ सरकार को प्राप्त नहीं हैं और जिन्हें राज्यों की सरकारों को भी कार्यान्वित करने का अधिकार नहीं है, वे जनता के हाथों में हैं। कुछ ऐसे विषय भी हैं जिनके सम्बन्ध में संघीय तथा राज्यों की सरकारों को सम्मिलित अधिकार हैं, जैसे दिवालियापन निश्चित करना तथा वाणिज्य सम्बन्धी कुछ नियम बनाना। आधुनिक काल में संघीय सरकार के कार्य-क्षेत्र को बढ़ाने की प्रवृत्ति हो रही है और यह कार्य सांविधानिक संशोधनों तथा न्यायिक विनिश्चयों द्वारा हो रहा है। सन् १९१३ में १६ वें संशोधन के अनुसार संघीय सरकार को आय-कर लगाने का अधिकार प्राप्त हो गया यद्यपि संघीय सरकार को इससे पूर्व कोई भी प्रत्यक्ष कर लगाने का अधिकार नहीं था। सर्वोच्च न्यायालय ने भी 'निहित अधिकार' (Implied Powers) के सिद्धान्त पर आचरण करते हुए संघीय सरकार को बहुत से अधिकार दे दिये हैं। निहित अधिकार के सिद्धान्त का आशय यह है कि जब संविधान ने कोई अधिकार संघीय शासन को दे दिया तो उस अधिकार को सफलतापूर्वक कार्यान्वित करने के लिए जितने अन्य अधिकारों की आवश्यकता है वे सब संघ सरकार को प्राप्त होने चाहिये। उदाहरण के लिए, संघ सरकार को ऋण लेने का अधिकार संविधान द्वारा दिया गया है, अतः संघ सरकार को नोट छापने का, व्यापार व वाणिज्य पर नियन्त्रण रखने का तथा हवाई जहाज, भाप के जहाज, रेलें आदि सब पर अधिकार है।

उपर्युक्त कथन से यह बात स्पष्ट है कि अमेरिका में राज्यों की सरकारें अपने-अपने क्षेत्र में पूर्ण रूप से स्वतन्त्र हैं और वे किसी प्रकार केन्द्रीय सरकार के ऊपर अपने क्षेत्राधिकार में निर्भर नहीं हैं और न उसके आधीन ही हैं।

यहाँ यह बात कह देना उचित होगा कि यदि हम इस मापदण्ड से देखें तो सन् १९३५ की जो शासन-व्यवस्था अँग्रेजों द्वारा भारत के लिए निर्मित की गई और जिसके द्वारा भारत में संघ शासन की योजना की गई वह बिल्कुल भी संघीय शासन व्यवस्था के आधार पर नहीं थी। भारत का वर्तमान संविधान भी वास्तविक संघीय संविधान नहीं है। यह बाह्य रूप में तो संघात्मक है परन्तु वास्तव में एकात्मक है। विभिन्न राज्यों की शक्तियाँ निश्चित कर दी गई हैं, ये उन्हें अधिकार रूप से प्राप्त नहीं हैं। इसी प्रकार सोवियत रूस का संविधान भी पूर्ण रूप से संघात्मक नहीं है। संघीय सरकार वहाँ चाहे जब शक्ति-विभाजन कर सकती है और संघ के अन्तर्गत इकाइयों से अधिकार ले-दे सकती है। साथ ही साथ केन्द्रीय सरकार ऐसे नियम भी बना सकती है जो विभिन्न सोवियटों (Soviets) को मानने होंगे और उन पर उन्हें आचरण करना होगा।

अवशिष्ट शक्तियाँ (The Residuary Powers)—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, संघीय सरकार की शक्तियों को छोड़कर बाकी सब शक्तियाँ राज्यों की

सरकारों को प्राप्त हैं। संघीय सरकार को केवल वही शक्तियाँ प्राप्त हैं जो संघ की इकाइयों ने उसे दे रक्खी हैं। संघ को केवल वही शक्तियाँ प्राप्त हैं जो शासन के कार्य को सुचारु रूप से चलाने के लिए पूर्णतया आवश्यक हैं। उनके अलावा अन्य विषयों में विभिन्न राज्यों को स्वतन्त्रतापूर्वक कार्य करने का अधिकार है और वे संघीय सरकार के हस्तक्षेप से परे हैं। राज्यों की शक्तियाँ निश्चित नहीं की गई हैं और संघ सरकार की शक्तियाँ निश्चित कर दी गई हैं।

(२) **अमेरिका का संविधान पूर्णतया लिखित है**—लॉर्ड ब्राइस का कथन है कि "अमेरिका का विधान सब कुछ काट-छाँट के बाद भी संसार के समस्त विधानों से श्रेष्ठ है, क्योंकि इसकी योजना अति सुन्दर है, यह जनता की आवश्यकताओं के अनुकूल है, यह सरल और संक्षिप्त है, इसकी भाषा शुद्ध है और इसमें सिद्धान्तों की निश्चितता के साथ-साथ विस्तृत विवरणों के लिए लचीलापन है।"[1] इस विधान की रचना एक परिषद् द्वारा हुई थी जो इसी कार्य के लिए निश्चित रूप से बुलाई गई थी। यद्यपि विधान में कुछ संशोधन हुए हैं परन्तु फिर भी सम्पूर्ण विधान लेख्य के रूप में है जो सिर्फ आधे घण्टे में पढ़ा जा सकता है। लेकिन इसका यह अर्थ नहीं है कि विधान में अलिखित अंश बिलकुल नहीं है। वास्तव में देखा जाय तो इस विधान में बहुत-सी परम्पराएँ तथा अभिसमय प्रवेश कर गये हैं जिन्होंने इसमें काफी परिवर्तन कर दिए हैं।

(३) **अमेरिका का संविधान अपरिवर्तनशील है**—संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में संशोधन साधारण विधि-निर्माण करने की प्रक्रिया द्वारा नहीं हो सकते हैं, जैसे कि इङ्गलैण्ड में हो सकते हैं। विधि-निर्माण करने वाली निकाय में और विधान में संशोधन करने वाली निकाय में बहुत कुछ अन्तर है। इङ्गलैण्ड में विधि-निर्माण करने की शक्ति तथा विधान में संशोधन करने की शक्ति एक ही निकाय में निहित है। अमेरिका में सांविधानिक संशोधनों का एक विशेष तरीका है। अन्य प्रकार की विधियाँ (Laws) तो प्रायः कांग्रेस तथा विभिन्न राज्यों के व्यवस्थापक मण्डलों द्वारा बनाई जाती हैं, परन्तु सांविधानिक संशोधन उनके द्वारा उस क्रिया से नहीं किये जा सकते। यही कारण है कि पिछले १५० वर्षों से भी अधिक समय में विधान में सिर्फ २२ ही संशोधन हुए हैं और वे भी गृह-युद्ध के कारण हुए हैं।

(४) **शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त**—अमेरिका के संविधान की एक विशेषता यह है कि इसने फ्रान्सीसी दार्शनिक मॉन्टेस्क्यू (Montesquieu) द्वारा प्रतिपादित शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त (Doctrine of Separation of Powers)

1 Bryce : The American Commonwealth, Vol. I, p. 28.

को अपनाया है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका में सरकार के तीनों अङ्ग—व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्याय-विभाग—एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं और एक दूसरे के प्रति बन्धन (check) का काम करते हैं। संविधान के निर्माताओं का अटल विश्वास था कि लोकप्रिय शासन भी जनता की जान, माल व स्वतन्त्रता के लिये उतना ही खतरनाक साबित हो सकता है जितना राजतन्त्र। ऐतिहासिक घटनाओं के अध्ययन से उन्होंने यह समझ लिया था कि निर्बन्ध-शासन अत्याचार व अन्याय का कारण बन सकता है और इसीलिये उन्होंने शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को जो अठारहवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में राजनैतिक क्षेत्रों में काफी सम्मान पा चुका था, अपनाया। यह सिद्धान्त भी उस समय स्वतन्त्रता का स्तम्भ माना जाता था।[1] अमेरिका के निवासियों को यह भय था कि यदि व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति एक ही निकाय (body) के हाथ में आ गई तो मानव स्वतन्त्रता खतरे में पड़ जायगी और इसी प्रकार न्याय-विभाग के उनसे मिल जाने पर स्वतन्त्रता को अत्यधिक खतरा पैदा हो जायगा।[2]

संविधान संघ की दी हुई शक्तियों को तीन भागों में बाँटता है—व्यवस्थापिका सम्बन्धी, कार्यपालिका सम्बन्धी, तथा न्यायिक। कार्यपालिका व्यवस्थापिका के कार्य में भाग नहीं ले सकती और न व्यवस्थापिका ही कार्यपालिका के कार्य कर सकती है। न्याय-विभाग व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका दोनों से ही स्वतन्त्र है। परन्तु यह बात ध्यान में रखनी चाहिये कि शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त का अमरीका में अक्षरशः पालन नहीं होता है और संविधान के निर्माताओं ने भी यह समझ लिया है कि इस सिद्धान्त को अक्षरशः कार्यरूप में परिणत नहीं किया जा सकता हालांकि यह अपवाद ही हो सकता है।

शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त का वास्तविक प्रयोग—उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट होता है कि शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त का अमरीका में पूर्णतया अक्षरशः पालन नहीं किया जाता है, और न ऐसा सम्भव ही है। सार्वजनिक विधि से ही व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका एक दूसरे से बहुत कुछ मिलकर कार्य करती हैं। संविधान के निर्माताओं ने भी यह बात नहीं सोची थी कि सरकार के तीनों अंगों को एक

1 "In all tyrannical governments the right of making and enforcing the laws is vested in one and the same man, or in the same body of men, and wherever these two powers are united together, there can be no public liberty........where the judicial power is joined with the legislative, the life, liberty, and porperty of the subject would be in the hands of the arbitrary judges...... where it is joined with the executive, the union might soon be an overbalance for the legislature."
(*Blackstone : Commentaries*)

2 The Spirit of Laws, Book XI, Chapters 4-6.

दूसरे से बिलकुल पृथक करके रक्खा जाय। वे इस बात को भली-भाँति जानते थे कि किसी हद तक उनका एक दूसरे पर निर्भर रहना अत्यन्त आवश्यक है। इस प्रकार हम देखते हैं कि प्रेसीडेण्ट सीनेट की ही सलाह से बड़ी-बड़ी नियुक्तियाँ करता है। सन्धि-वार्ता भी कार्यपालिका और व्यवस्थापिका दोनों ही मिल कर करती हैं। प्रेसीडेण्ट को कुछ व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं और वह व्यवस्थापिका द्वारा पारित विधेयक को पुनर्विचार के हेतु वापिस भेज सकता है। वह अपनी ओर से व्यवस्थापिका को सन्देश भेज सकता है। एक बहुत बड़े राजनैतिक दल का सदस्य होने के नाते वह बहुत कुछ हद तक काँग्रेस के सम्पर्क में रहता है और विधि-निर्माण में अपना प्रभाव डाल सकता है। न्याय-विभाग भी कुछ हद तक काँग्रेस के आधीन है क्योंकि काँग्रेस ही न्यायाधीशों की संख्या निश्चित करती है, उनका वेतन निश्चित करती है और न्यायालयों का कार्य-क्षेत्र निर्धारित करती है। वास्तव में देखा जाय तो यही प्रतीत होता है कि शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त का अमेरिका में कठोरतापूर्वक पालन नहीं किया जाता है।

(५) **अमेरिका में संविधान राज्य की सर्वोच्च सत्ता है**—अमेरिका में संविधान देश की सर्वोच्च तथा मूलभूत विधि है। शेक्सपीअर ने कहा था कि "जब दो व्यक्ति घोड़े पर बैठते हैं तो उनमें से एक पीछे बैठता है"। अमेरिका में संविधान आगे वाला सवार है। यह संघ तथा राज्यों की सरकारों के सब अंगों से ऊँचा है। इसकी धाराओं में राज्य का ऊँचे से ऊँचा अधिकारी तथा नीचे से नीचा नागरिक बँधे हुए हैं। सर्व प्रकार की विधियाँ उसी को ध्यान में रखते हुए बनाई जाती हैं और कोई विधि उनका उल्लङ्घन नहीं कर सकती। संविधान अत्यन्त सम्मान की दृष्टि से देखा जाता है और कोई भी विधि जो उसका खण्डन करती है स्वयं ही खत्म हो जाती है। इङ्गलैण्ड में पार्लियामेण्ट सर्वोच्च शक्ति है परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका में संविधान है। विभिन्न व्यवस्थापक-मण्डल तथा सरकारें उसी के अधीन रहकर कार्य करती हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान और इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट—इङ्गलैण्ड में सर्वोच्च राजसत्ता पार्लियामेण्ट के हाथ में है परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका में विधान ही सबसे बड़ी सत्ता है। इङ्गलैण्ड में सांविधानिक विकास के इतिहास को देखने से ज्ञात होता है कि वहाँ पर राजकीय शक्ति तथा पार्लियामेण्ट में राजसत्ता को अपनाने के लिए झगड़ा होता आया है और अन्त में इस झगड़े में पार्लियामेण्ट ने ही विजय पाई है। धीरे-धीरे राजा की समस्त शक्तियाँ पार्लियामेण्ट के हाथों में आ गईं और इस प्रकार जनता के प्रतिनिधियों ने शासन की बागडोर को अपने हाथों में लिया। आज हम देखते हैं कि पार्लियामेण्ट सबसे बड़ी शक्ति है। वह विधि से भी ऊँची है और समयानुकूल चाहे जो कर सकती है। उसकी शक्ति पर कोई बन्धन

Imp 4th question.

नहीं है। वह विधान तक को बदल सकती है। उसके कार्यों तथा निश्चयों का कोई उल्लङ्घन नहीं कर सकता। उसके बनाये हुए नियमों और पारित की हुई विधियों का न्याय-विभाग भी खण्डन नहीं कर सकता। अमेरिका में बात उल्टी है। वहाँ प्रतिनिधियों ने विधान बनाया और बहुत सोच-विचार कर उसे एक पवित्र लेख्य के रूप में रक्खा। उनकी हार्दिक इच्छा थी कि वह विधान पवित्र माना जाय और उसकी धाराओं का किसी प्रकार खण्डन न हो। विधान बनाते समय निःसन्देह लोकप्रिय सत्ता उनके हाथों में थी परन्तु उन्होंने एक कदम और आगे रख दिया और उसके द्वारा यह निश्चित कर दिया कि भविष्य में सत्ता किसी व्यक्ति विशेष या व्यक्तियों की किसी निकाय में निहित नहीं रहेगी, वरन् संविधान में ही निहित रहेगी। परिणाम स्पष्ट हुआ। आज विधान सर्वमान्य सर्वोच्च शक्ति है और वही शक्ति का स्रोत भी है। उसकी विधि का खण्डन नहीं हो सकता और न उसके द्वारा दिये हुए अधिकारों को छीना जा सकता है। संविधान ही विभिन्न राज्यों के पारस्परिक सम्बन्धों की व्याख्या करता है और उन्हें एक सूत्र में बाँधता है। क्या काँग्रेस और क्या राज्य—सभी के कार्य विधियुक्त तभी माने जा सकते हैं जब वे संविधान के अनुकूल हों। संविधान की शक्ति की रक्षा करने के लिये न्याय-विभाग को स्वतन्त्र कर दिया गया है।[1] इस प्रकार हम देखते हैं कि अमेरिका में संविधान सब से बड़ी शक्ति है, और यह उसकी एक बहुत बड़ी विशेषता है।

(६) **बन्धन व सन्तुलन की पद्धति**—अमेरिका के संविधान की एक विशेषता यह है कि इसमें बन्धन और सन्तुलन (Checks and Balances) की पद्धति को अपनाया गया है। इसका अभिप्राय यह है कि सरकार के तीनों अङ्ग एक दूसरे से स्वतन्त्र होते हुए (जैसा कि शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त द्वारा स्पष्ट है) भी एक दूसरे पर बन्धन व सन्तुलन का कार्य करते हैं।

जनतन्त्रीय शासन बहुमत का शासन होता है, और इस बहुमत के शासन की इसलिए आलोचना की जाती है कि इसमें जनता का पूर्ण प्रतिनिधित्व नहीं होता और अगर होता भी है तो अल्पसंख्यकों के प्रतिनिधियों की चलती नहीं है। अतः बहुमत दल के आधार पर बनी हुई सरकार अत्याचार और अन्याय का कारण भी बन सकती है क्योंकि वह ऐसे नियम पास कर सकती है जो अल्पसंख्यकों की भावनाओं के बिलकुल प्रतिकूल हों। शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त द्वारा (यदि इस

[1] This constitution and the laws of the United States which shall be made in pursuance thereof; and all treaties made, or which shall be made under the authority of the United States, shall be the supreme law of the land; and the judges in the State shall be bound thereby, anything in the Constitution or laws of any State to the contrary notwithstanding.

(*The Constitution of the United States, Article VI, Para 2*)

सिद्धान्त का कठोरतापूर्वक पालन किया जाय) तो यह कार्य और भी मुश्किल हो जाता है। जिस सरकार के तीनों अङ्ग एक दूसरे से बिल्कुल स्वतन्त्र होंगे वह सरकार अत्याचार और अन्याय ही करेगी क्योंकि उसका आधार बहुमत दल होगा और शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त के द्वारा उसके ऊपर कोई नियन्त्रण नहीं होगा। इसलिए संविधान के रचयिताओं ने तीनों विभागों को पूर्णतया एक दूसरे से स्वतन्त्र रखने का कोई प्रयास नहीं किया बल्कि उनके कार्यों एवं अधिकार-क्षेत्रों का इस प्रकार वितरण किया कि वे एक दूसरे पर बन्धन तथा प्रतिबन्ध का काम करें जिससे कि वे अत्याचार और अन्याय का कारण न बन जायँ।[1]

ये बन्धन दो प्रकार से कार्य में लाये जा सकते हैं—(अ) ये प्रतिबन्धों के रूप में हो सकते हैं जिन्हें बहुमत दल एकमत होने पर भी नहीं तोड़ सकता और यदि वह उन्हें तोड़ता है तो वह कार्य असांविधानिक हो जाता है; (ब) इसके अधिकार व शक्ति सरकार के विभिन्न अङ्गों में इस प्रकार बाँटे जाते हैं कि वे अपने-अपने कार्य-क्षेत्र में कार्य करते हुए एक दूसरे की अनियन्त्रित शक्ति पर रोक लगावें। पहली प्रकार की प्रथा 'बन्धन की पद्धति' और दूसरी प्रकार की प्रथा 'सन्तुलन की पद्धति' कहलाती है। अमेरिका के संविधान में इन दोनों पद्धतियों को अपनाया गया है।[2]

इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए संविधान में संघीय व्यवस्थापिका और कार्यपालिका के अधिकारों की व्याख्या कर दी गई है। वे एक दूसरे के कार्य-क्षेत्र में हस्तक्षेप नहीं कर सकते। कुछ कार्य ऐसे हैं जिनके बारे में व्यवस्थापिका विधि-निर्माण नहीं कर सकती और इसी प्रकार कुछ ऐसे हैं जिन्हें कार्यपालिका स्वतन्त्रतापूर्वक नहीं कर सकती। एक का अधिकार दूसरे के लिए प्रतिबन्ध है। उदाहरणार्थ, विधान ने प्रेसीडेण्ट को काँग्रेस द्वारा पास किये हुए नियमों के प्रति प्रतिषेधात्मक अधिकार (Veto Power) दिया है; परन्तु काँग्रेस अपने दो-तिहाई बहुमत से उस नियम के प्रति उस अधिकार को समाप्त कर सकती है। काँग्रेस को अधिकार है कि वह प्रेसीडेण्ट पर अभियोग चलाकर उसे पदच्युत कर दे। प्रेसीडेण्ट को यह अधिकार है कि वह काँग्रेस को सन्देश भेजकर किसी नियम को रोके व संशोधन कराये; परन्तु काँग्रेस को यह अधिकार है कि वह धन-राशि की मंजूरी न देकर शासन के कार्य को रोक दे। इनके अलावा सीनेट को कुछ कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं। यह संधि-

[1] "Circumscribing government with constitutional restraints aad underpinning everything with popular sovereignty are but two of the means by which arbitrary actions and despotic control are fended off in our system." (*Ogg & Ray : Essentials of American Government, p. 37*)

[2] "The absolute independence of the three great departments of government would inevitably produce a deadlock and bring governmental activities to a standstill." (*Munro : The Government of the United States, p. 59*)

वार्ताओं का उपोद्बलन (ratification) करती है और बड़ी-बड़ी नियुक्तियों पर मंजूरी देती है। सर्वोच्च न्यायालय व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका दोनों पर ही बन्धन का कार्य करता है। यद्यपि न्यायाधीश सीनेट की मंजूरी मिलने पर प्रेसीडेण्ट द्वारा नियुक्त किये जाते हैं परन्तु फिर भी उन्हें यह अधिकार है कि वे व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका के कार्यों की वैधानिकता स्पष्ट करें। इन सब बातों से यह स्पष्ट है कि "शक्ति-विभाजन तथा बन्धन और सन्तुलन दोनों सिद्धान्त अमेरिका की राजनैतिक व्यवस्था में सिर से पैर तक घुस गए हैं।"[1]

बन्धन व सन्तुलन के सिद्धान्त की स्थापना करते हुए भी संविधान के रचयिताओं ने उसे कठोर नहीं बनाया। "उन्होंने शक्ति-विभाजन किया परन्तु साथ ही साथ सम्बन्ध भी स्थापित किए।"[2] यह उन्होंने ठीक भी किया क्योंकि संकटावस्थाओं में तीनों अंगों का सम्मिलित होकर कार्य करना ही राष्ट्र के लिए अधिक हितकर होता है। उदाहरणार्थ, प्रथम महायुद्ध के समय जब सन् १९१७–१८ में अमेरिका ने युद्ध में भाग लिया तब कार्यपालिका ने काँग्रेस की शक्ति को पूर्णतया अपने हाथ में ले लिया परन्तु जब वह संकटावस्था व्यतीत हो गई तब काँग्रेस ने अपनी शक्ति पुनः वापिस ले ली और संधि-वार्ता में सीनेट ने सिर्फ प्रेसीडेण्ट के कार्यों में मंजूरी ही नहीं दी बल्कि पूर्ण रूप से अपनी बुलन्द आवाज उठाई। इसी प्रकार सन् १९३३ में प्रेसीडेण्ट फ्रैन्कलिन डी० रूजवेल्ट ने विधायिनी शक्ति ही अपने हाथ में नहीं ली बल्कि ह्वाइट हाउस से काँग्रेस को यह प्रोग्राम भेज दिया कि "अमुक विधि पारित की जायँ" और इस प्रोग्राम का शीघ्रतापूर्वक पालन किया गया। लेकिन प्रेसीडेण्ट, काँग्रेस तथा न्याय-विभाग का इस प्रकार एक दूसरे के कार्य-क्षेत्र में हस्तक्षेप करना कभी-कभी हानिकारक भी हो सकता है और शासन-कार्य खतरे में भी पड़ सकता है। उदाहरण के लिए, व्यवस्थापिका (यदि वह शक्तिशाली है) ऐसे नियम भी बना सकती है कि प्रेसीडेण्ट की शक्ति बिल्कुल कम हो जाय अर्थात् उसे अपनी शक्ति का प्रयोग करने के लिए पग-पग पर रुकावटों का सामना करना पड़े। इसी प्रकार यदि प्रतिनिधि-आगार (House of Representatives) उसके विरुद्ध है तो वह उसके सन्देशों की बिल्कुल भी परवाह न करे। इस प्रकार हम देखते हैं कि शासन के दो विभागों—व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका—को अलग-अलग कर देने में कोई बुद्धिमानी नजर नहीं आती क्योंकि ये दोनों विभाग प्रकृति से ही एक दूसरे से मिले हुए हैं। सच पूछा जाय तो यह प्रथा इसलिए सफल हो रही है कि उसका आधार बहुमत दल है। जो बहुमत दल कार्यपालिका में है प्रायः वही काँग्रेस में है और इसी कारण बहुत-सी कठिनाइयाँ बच जाती हैं और आपस में मतभेद नहीं

1 Beard: op. cit., p. 35.
2 Munro: op. cit., p. 59.

हो पाता। यदि प्रेसीडेण्ट दूसरे दल का हो और कांग्रेस में किसी दूसरे दल का बहुमत हो तो कांग्रेस और उसके बीच सदैव गम्भीर तनातनी रहे।

(७) न्याय विभाग की अन्य विभागों के ऊपर प्रभुता—अमेरिका के संविधान की एक अन्य विशेषता यह है कि इसके द्वारा न्याय-विभाग को अन्य दोनों विभागों के ऊपर माना गया है। न्याय-विभाग के विनिश्चय तथा फैसले अन्तिम माने जाते हैं और उनका खण्डन नहीं हो सकता। न्याय-विभाग की महत्ता इतनी अधिक है कि जेम्स बैब के द्वारा संघीय न्यायालय "संविधान का सन्तुलन-चक्र (balance-wheel of the constitution) कहा गया है। पोलैण्ड को छोड़कर यूरोप के किसी भी देश में न्याय-विभाग को इतना महत्त्व नहीं दिया गया है। इसके बिना यह सोचा भी नहीं जा सकता था कि सरकार के अन्य दो भाग साथ-साथ कार्य कर सकें। इसका प्रमुख कारण यह है कि कांग्रेस के न्यायिक मामलों में अन्तिम फैसला देने के अधिकार को संघ के अन्तर्गत राज्य कभी सहन नहीं कर सकते थे। दूसरी बात यह भी है कि न्यायिक कार्य व्यवस्थापिका कर भी नहीं सकती है। राज्यों की व्यवस्थापिकाओं को भी यह कार्य नहीं दिया जा सकता था क्योंकि उस हालत में राज्य न्यायिक मामलों में भिन्न-भिन्न व्याख्या करते और उसकी वजह से बड़े झमेले उठ खड़े होते। यद्यपि संविधान सर्वोच्च न्यायालय को अपना संरक्षक नहीं बनाता है परन्तु फिर भी उसकी महत्ता सब से अधिक निर्विरोध रूप में स्वीकार की जाती है। प्रोफेसर बीअर्ड ने विधान का काफी अध्ययन करने के बाद यह निष्कर्ष निकाला कि सन् १७८७ की विधान परिषद् के बहुत से सदस्य इस बात का विश्वास करते थे कि विधि की वैधानिकता निश्चित करने का अधिकार और कर्त्तव्य न्यायालय का है।[1] अलेक्जैण्डर हैमिल्टन ने भी इसी बात की पुष्टि की है।[2] यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि बिना न्याय-विभाग की प्रभुता के अमेरिका का संविधान इतने दिनों तक कायम नहीं रह सकता था और भविष्य में भी बिना इसके कायम नहीं रह सकता। विधान की रक्षा के लिए नैतिक बल ही प्रमुख शक्ति है, और नये राज्यों की सरकारों के संविधान का इतिहास इस बात का साक्षी है कि विधान की रक्षा के लिये नैतिक बल और सम्मान की अत्यधिक आवश्यकता है।[3]

(८) व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की रक्षा—अमेरिका में प्रत्येक व्यक्ति को कुछ अधिकार प्राप्त हैं जिनको उससे छीना नहीं जा सकता। इनमें बोलने की स्वतन्त्रता,

1 A. Beard : The Supreme Court and the Constitution.

2 "The constitution intended the judicial power to serve as an intermediary between the people and the legislature in order to keep the latter within the limits assigned to their authority. A constitution is, in fact, and must be regarded by the judges as fundamental law and the interpretation of law is the proper and peculiar function of the courts."

3 Munro : The Government of the United States, p. 62.

प्रेस की स्वतन्त्रता, धर्मानुचरण की स्वतन्त्रता, शान्तिपूर्वक सभा या समिति करने व उनमें शामिल होने की स्वतन्त्रता तथा अपनी शिकायतें सरकार के पास भेजने के अधिकार सम्बन्धी स्वतन्त्रता आदि हैं। ये स्वतन्त्रताएँ भारत के विधान द्वारा स्वीकृत नागरिक के मूलभूत अधिकारों (Fundamental Rights) के समान हैं। सन् १७९१ के वैधानिक संशोधन के अनुसार यह निश्चित कर दिया गया कि कांग्रेस किसी धर्म की स्थापना सम्बन्धी कोई कानून नहीं बना सकती और यह व्यक्ति की धार्मिक स्वतन्त्रता में हस्तक्षेप नहीं कर सकती। इसी प्रकार उसी संशोधन से यह भी निश्चित कर दिया गया कि प्रत्येक व्यक्ति को अधिकार है कि उस पर कोई अभियोग लगाया जाने पर वह शीघ्र निष्पक्ष जूरी द्वारा सार्वजनिक न्यायालय में अपना मुकदमा चलवाए। इस प्रकार के उदाहरणों की कमी नहीं है जब कि समय-समय पर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की संविधान द्वारा रक्षा की गई है। बहुत से ऐसे कार्य हैं जिन्हें न तो केन्द्रीय सरकार ही कर सकती है और न राज्यों की सरकार ही क्योंकि वे व्यक्ति की स्वतन्त्रता से सम्बन्ध रखते हैं, जैसे बिल ऑफ एटेण्डर (Bill of Attainder) पास करना अथवा उपाधियाँ देना। संयुक्त राज्य के विधान ने जन-सेवकों पर अनेक अंकुश लगाकर सीमित सरकार (Limited Government) की स्थापना की है।

(९) **विधान में कुछ बातों का उल्लेख नहीं है**—अमेरिका का संविधान इसी बात के लिये विशेषता नहीं रखता है कि इसमें क्या-क्या है परन्तु इस बात के लिये भी विशेषता रखता है कि इसमें क्या-क्या नहीं है।[1] इसमें कुछ साधारण बातों का तो विस्तृत वर्णन है, जैसे कांग्रेस की बैठकों में "हाँ और न" (Yeas and Nays), पक्ष व विरोध मालूम करना, तथा प्रेसीडेण्ट को शपथ दिलाने के लिये शब्दावली का प्रयोग करना। परन्तु कुछ महत्त्वपूर्ण बातें बिल्कुल छूट गई हैं। उदाहरणार्थ, विधान इस बात को बतलाता है कि प्रतिनिधि-आगार अपना अध्यक्ष स्वयं चुने, परन्तु यह नहीं बतलाता कि उसकी क्या शक्ति होगी। इसी प्रकार विधान में यह बात भी लिखी हुई है कि किसी विधि के पास होने के लिए दोनों सदनों को स्वीकृति आवश्यक है, परन्तु यह नहीं बतलाता कि दोनों सदनों में मतभेद होने पर उसका फैसला कैसे किया जाय। परन्तु इन सब बातों पर विधान की चुप्पी उसे दोष का पात्र नहीं बनाती क्योंकि संविधान के निर्माता भविष्य में आने वाली सामाजिक और आर्थिक समस्याओं को उस समय नहीं सोच सकते थे। उन्होंने विधान को ऐसा बनाया कि वह समयानुकूल परिस्थितियों के हेर-फेर में सफल हो सके। यह राजनीति में कोई नवीन धारा नहीं थी परन्तु समय के देखते हुए एक नवीन कदम था जो उस समय तक किसी ने नहीं उठाया था।

1 Munro : op. cit., p. 63.

अमेरिका और इङ्गलैण्ड के संविधानों की तुलना :

ग्रेट ब्रिटेन और संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधानों का अध्ययन करते समय हमें कई रोचक असमानताएँ नजर आती हैं, जो निम्नलिखित हैं :—

(१) इङ्गलैण्ड का संविधान अधिकांश में अलिखित है और उसमें रूढ़ियों, परम्पराओं, अभिसमयों तथा परिपाटियों का बहुत हाथ है। यद्यपि उसमें लिखित भाग भी बहुत है, परन्तु वह बहुत कम महत्त्व रखता है और वह अमेरिका के संविधान की भाँति व्यवस्थित ढंग से नहीं लिखा गया है।

(२) इङ्गलैण्ड के विधान का विकास हुआ है और कई शताब्दियों में समयानूकूल परिस्थितियों के साथ-साथ बदलते-बदलते वर्तमान रूप को प्राप्त कर पाया है। यह परिवर्तनशील है और इसमें संशोधन हो सकते हैं। इसे बैठ कर कभी लोगों ने विधान तैयार करने के इरादे से निर्मित नहीं किया। अमेरिका में विधान अपरिवर्तनशील है और इसे बनाने के लिए जनता ने जान-बूझ कर प्रयत्न किया।

(३) इङ्गलैण्ड के विधान में संशोधन सफलतापूर्वक हो सकते हैं। जिस प्रक्रिया से पार्लियामेण्ट विधि बनाती है उसी प्रक्रिया से वह संशोधन भी कर सकती है। विधि-निर्माण-कर्त्री तथा संशोधन-कर्त्री निकाय अलग-अलग नहीं हैं। परन्तु अमेरिका में संशोधन बड़ी मुश्किल से हो सकता है और वह भी एक विशेष प्रक्रिया द्वारा एक विशेष निकाय ही कर सकती है।

(४) इङ्गलैण्ड में पार्लियामेण्ट ही सर्वोच्च शक्ति है और वह चाहे जो कर सकती है, परन्तु अमेरिका में सर्वोच्च शक्ति विधान में निहित है।

(५) अमेरिका में शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को अपनाया गया है। सरकार के तीनों अंगों के अलग-अलग कार्य-क्षेत्र हैं और वे प्रायः एक दूसरे के कार्य में हस्तक्षेप नहीं करते। व्यवस्थापिका कार्यपालिका के कार्यों में हस्तक्षेप नहीं करती और कार्यकारिणी के सदस्य व्यवस्थापिका के सदन में नहीं बैठ सकते। इङ्गलैण्ड में ऐसी बात नहीं है। इस आधार पर संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान इङ्गलैण्ड और फ्रान्स दोनों देशों के संविधानों से भिन्नता रखता है। इन दोनों देशों में शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है। अमेरिका में सर्वोच्च व्यवस्थापिका शक्ति कांग्रेस (प्रतिनिधि-आगार तथा सीनेट) के हाथ में, सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति प्रेसीडेण्ट के हाथ में और सर्वोच्च न्यायिक शक्ति संघीय न्यायालय के हाथ में है। प्रत्येक का कार्य-क्षेत्र अलग-अलग है और प्रायः एक दूसरे के कार्यों में बाधा नहीं डालता। इङ्गलैण्ड की भाँति कार्यकारिणी अपने कार्यों के लिए व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं है। इसकी अवधि निश्चित है और व्यवस्थापिका के विरोधी होने पर भी प्रेसीडेण्ट अपनी निश्चित अवधि से पूर्व नहीं हटाया जा सकता। इङ्गलैण्ड में व्यवस्थापिका कार्यपालिका के हाथों में है और वह इस सम्बन्ध में है

कि केबिनेट राजा को पार्लियामेण्ट बुलाने तथा विघटित करने आदि की सलाह देती है। परन्तु अमेरिका में व्यवस्थापिका इस प्रकार कार्यपालिका की दासी नहीं है। वह स्वयं अपने आप मिलती है और विघटित होती है। प्रेसीडेण्ट या उसके विभिन्न सेक्रेटरी व्यवस्थापिका पर कोई प्रभाव नहीं डाल सकते। इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री तथा अन्य मन्त्री पार्लियामेण्ट के ही सदस्य होते हैं परन्तु अमेरिका में कार्यकारिणी के अधिकारियों को कांग्रेस में बैठने का कोई अधिकार नहीं है।

अमेरिका में न्याय-विभाग भी व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका से पूर्ण स्वतन्त्र है और उस पर इनका किसी प्रकार का कोई प्रभाव या दबाव नहीं पड़ सकता है। यद्यपि न्यायाधीशों की नियुक्ति प्रेसीडेण्ट सीनेट द्वारा मान्यता देने पर करता है परन्तु फिर भी न्यायाधीश अपने पद पर प्रेसीडेण्ट की मर्जी पर ही कायम नहीं रहते हैं। कोई भयंकर राजद्रोह का अभियोग सिद्ध न होने तक वे अपने पद पर सुरक्षित रहते हैं। इङ्गलैण्ड या फ्रान्स में इस प्रकार की स्वतन्त्रता न्याय-विभाग को प्राप्त नहीं है।

ब्रिटिश सांविधानिक संस्थाओं व प्रथाओं का अमरीका की संस्थाओं पर प्रभाव :

ब्रिटिश संस्थाओं का अमेरिका की प्रशासकीय मशीनरी पर बहुत प्रभाव पड़ा है। अमेरिका के संविधान की मूलभूत विशेषताओं पर ध्यान देने से प्रतीत होता है कि वहाँ पर व्यक्तिगत स्वतन्त्रता को मूल्य दिया है जिसके अंकुर इङ्गलैण्ड के बन्दी प्रत्यक्षीकरण अधिनियम (Habeas Corpus Act), मैगना कार्टा (Magna Charta) तथा अधिकार पत्र (Bill of Rights) में मौजूद थे। इसी प्रकार निर्वाचन प्रणाली, व्यवस्थापिका की प्रधानता, सामान्य विधि, स्थानीय शासन, न्याय-विभाग की स्वतन्त्रता आदि समस्त बातों में अमेरिका इङ्गलैण्ड का आभारी है। इङ्गलैण्ड की कार्यपालिका के उत्तरदायित्व को अमेरिका में दूसरी प्रकार रक्खा गया और शक्ति विभाजन के सिद्धान्त को अपनाकर तथा बन्धन व सन्तुलन की पद्धतियों को स्वीकार करके अमेरिका निवासियों ने कार्यपालिका की अनियन्त्रित शक्ति को रोका। यद्यपि हम देखते हैं कि इङ्गलैण्ड की केबिनेट व्यवस्था अमेरिका में स्थान नहीं पा सकी और वहाँ की केबिनेट इङ्गलैण्ड के मुकाबिले अत्यन्त तुच्छ रह गई परन्तु इसका कारण यह नहीं है कि अमेरिका निवासियों ने भिन्न प्रथा को जन्म दिया बल्कि इसका कारण वहाँ की व इङ्गलैण्ड की सांविधानिक व्यवस्था व इतिहास है।[1]

---

1 "The influence of the English experience on the development of government in the United States is shown by the elements of the former which have become a part of our own governmental system. In the first place, the concept of the natural rights of the individual—as found in Magna Charta, the Habeas Corpus Act and the Bill of Rights—influenced the formulation of the bills of rights included in our federal

Continued on next page

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the characteristics and distinctive features of the constitution of U. S. A. *(Cal., 1934; Agra, 1946)*
2. What are the striking features of contrast of the constitutions of Great Britain and U.S.A. *(Punj., '37; Agra, '34; Cal., '41)*
3. "In their effort to establish a balance of power, the framers of the U. S. A. constitution so far succeeded, that neither has subjected the other. But they underrated the inconveniences which arise from the distinction of the two chief organs of government." (*Bryce*) Examine this statement. *(Agra, 1937, 1944, 1947; Cal., 1934; Patna, 1938)*
4. "In England the legislature is supreme; in the United States the constitution is supreme." Examine. *(Punjab, 1951)*
5. What, in your opinion, are the chief distinctive features of the Constitution of the United States? What procedure does the constitution lay down for its own amendment ? *(Agra, 1952)*
6. "If any principle of the American constitutional system has become axiomatic from the very beginning, it is that the people are sovereign." Discuss and amplify this. *(Punjab, 1955)*

In continuation to the last page

and state constitutions. With regard to popular government, we took from England a system of regular elections, and our emphasis on the legislature as the central organ of government. In the field of law we adopted much of the English common law together with the principle of the independence of the courts. Next, we imitated the English system of political parties, with emphasis on two major groupings. With regard to the executive, we took over the theory of limited powers; here, however, there was this difference—England developed the cabinet system in which the legislative and executive branches are linked through party leadership, while we have kept these two branches divided. Finally, our system of municipal government, under an elective council and a mayor, and our county and local governments generally are much like the English models from which they were copied.

It is worth noting that we did not take over from England her form of responsible government through the cabinet system, unitary government (which is the opposite of federal government), the unlimited power of the national legislature, or the dual type of executive resulting from the retention of a king. Moreover, English experience does not explain the so-called great principles of American government; federalism, the separation of powers, the written constitution, and judicial review of legislation, in some ways are the most distinctive features of our constitutional system." (*Dimock, Marshall Edward & Dimock Ogden Gladys : American Government in Action, pp. 43-44*)

तीसरा परिच्छेद

राष्ट्रीय संविधान का विकास

संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान संसार में शासन-क्रिया की एक महान् अनुभूति माना जाता है।[1] पिछले अध्याय में हम देख चुके हैं कि यद्यपि अमेरिका का संविधान लिखित है, फिर भी उसमें समयानुकूल परिस्थितियों-वश परिवर्तन होते रहे हैं। वास्तव में यह एक अत्यन्त रोचक बात है कि एक ओर तो अमेरिका-निवासियों की सामाजिक और आर्थिक परिस्थितियों में इतने गम्भीर परिवर्तन हुए हैं और दूसरी ओर अमेरिका की राजनैतिक परिस्थितियों ने अदृष्ट परिस्थितियों तथा घटनाओं का सफलतापूर्वक सामना किया है और वे ज्यों की त्यों बनी रही हैं। हाँ यह बात सर्वमान्य है कि यद्यपि अमेरिका के संविधान का रूप नहीं बदला है परन्तु फिर भी सन् १७८७ के बाद से इसमें समयानुकूल परिवर्तन होते रहे हैं और यह विकास की ओर अग्रसर होता रहा है।[2]

अतः यह बात सदैव ध्यान में रखनी है कि अमेरिका के वर्तमान संविधान का ढाँचा बिल्कुल वैसा ही नहीं है जैसा कि आरम्भ में निर्माण किया गया था। उसमें जैसे-जैसे परिवर्तन व संशोधन हुए हैं और ज्यों-ज्यों आधुनिकता आती गई है वह स्पष्ट रूप से दिखाई पड़ती है। हमें यही नहीं समझ लेना चाहिये कि अमेरिका का संविधान एक ऐसा कठोर संविधान है जिसमें अठारहवीं शताब्दी में लिखे हुए शासन-सिद्धान्तों के अलावा कुछ नहीं है। यह कहना कोई अत्युक्ति नहीं होगी कि संविधान के निर्माण के पश्चात् प्रति वर्ष उसकी व्यवस्था करने में किसी न किसी नियम व अधिनियम के अर्थ में कोई न कोई परिवर्तन अवश्य हुआ है।

अतएव यह स्पष्ट है कि अमेरिका का संविधान न तो संक्षिप्त है, और न सरल है, और साथ ही साथ न इतना कठोर है कि वह समयानुकूल अपने में परिवर्तन न होने दे।

1 "The greatest experiment in government that the world has ever known."

2 "That the original seven articles of the constitution are hardly more than series of guide-posts making points of departure from which the development of the broader constitution has developed."

(*Ogg & Ray : Introduction to American Government*)

संविधान में परिवर्तन :

अमेरिका का वर्तमान संविधान निम्नलिखित श्रोतों से उत्पन्न हुआ है :

(अ) प्रारम्भिक मूल लेख्य।

(ब) २२ संशोधन।

(स) सैकड़ों स्टैट्यूट जिनके द्वारा संविधान की धाराओं की विस्तृत व्याख्या की गई है।

(द) हजारों न्यायिक विनिश्चय जिन्होंने उपर्युक्त स्टैट्यूट तथा संविधान की अनेक धाराओं की व्याख्या की है।

(य) अगणित रीतियाँ, परिपाटियाँ, उदाहरण, रूढ़ियाँ तथा प्रशासकीय सम्मतियाँ जिन्होंने संविधान के साथ-साथ स्वयं भी परम्परा के कारण अपने को दृढ़ बना कर संविधान की शक्ति प्राप्त कर ली है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि इङ्गलैण्ड के संविधान की भाँति अमेरिका के संविधान का भी विकास हुआ है। परिवर्तन तथा संशोधनों के विषय में यहाँ कुछ कहना अनुपयुक्त न होगा।

संशोधन की विधि :

संविधान के निर्माताओं ने यह बात भली-भाँति समझ ली थी कि भविष्य में संविधान में समयानुकूल परिवर्तन अवश्य होंगे; अतएव उन्होंने संशोधन का तरीका भी सरल बनाया। Article V में संशोधन का निम्नलिखित तरीका दिया हुआ है :

"जब कभी कांग्रेस के दोनों सदनों के दो-तिहाई सदस्य संशोधन आवश्यक समझेंगे, या विभिन्न राज्यों में से राज्यों की धारासभाएँ संशोधन का प्रस्ताव करेंगीं, तब कांग्रेस संशोधनों के प्रस्ताव पर विचार करने हेतु परिषद् आमन्त्रित करेगी और दोनों ही अवस्थाओं में वे संशोधन संविधान के अंग बन जायेंगे; यदि विभिन्न राज्यों में तीन-चौथाई राज्यों की धारासभाएँ उनका अनुमोदन करती हैं, और स्वीकार करती हैं, या उन राज्यों द्वारा निर्मित परिषदें उनका दृढ़ीकरण करती हैं। इन दोनों में से कोई भी तरीका जो कांग्रेस द्वारा प्रस्तावित किया गया होगा, मान्य होगा।"

उपर्युक्त उद्धरण से यह स्पष्ट है कि संविधान में परिवर्तन या संशोधन दो प्रकार से किये जा सकते हैं। उस हालत में दो तरफ से कदम उठाये जा सकते हैं—या तो कांग्रेस की तरफ से और या विभिन्न राज्यों की धारासभाओं की तरफ से। यह बात सत्य है कि यद्यपि कई बार राज्यों की धारासभाओं ने विधान में संशोधन करने के लिये कदम उठाने का प्रयत्न किया है परन्तु उसमें उन्हें सफलता प्राप्त नहीं हुई है। यह बात संविधान के निर्माताओं ने नहीं सोची थी कि कांग्रेस के आकार में वृद्धि होने पर अथवा राज्यों की संख्या बढ़ने पर संविधान में संशोधन करने का तरीका भी जटिल बन जायेगा। इसके अतिरिक्त यह शब्दावली—"दोनों सदनों के दो-तिहाई

सदस्य"—भी दोषपूर्ण है। इसका सही अर्थ क्या है यह निश्चित नहीं। क्या दो-तिहाई सदस्यों का अभिप्राय उन सदस्यों से है जो उस अवसर पर उपस्थित हैं या उससे मतलब है कि दोनों सदनों की कुल संख्या के दो-तिहाई हों? वास्तव में प्रथम अर्थ का अभी तक प्रयोग होता आया है। इसके अलावा सुप्रीम कोर्ट (राज्य का सर्वोच्च न्यायालय) ने यह बात निश्चित कर दी है कि काँग्रेस द्वारा विधान के संशोधन के प्रस्ताव के लिए प्रेसीडेण्ट की सम्मति आवश्यक नहीं है।

संविधान में संशोधन प्रायः इस प्रकार होता आया है: "सीनेट तथा प्रतिनिधि-आगार द्वारा प्रस्तावित तथा जिसको दोनों सदनों के सदस्य स्वीकृति दे चुके हैं, ऐसा संशोधन का प्रस्ताव विभिन्न राज्यों की धारासभाओं में प्रस्तुत किया जाय और उनमें से तीन-चौथाई धारासभाओं की स्वीकृति पाने पर संविधान का अंग मान लिया जाय।" इसके लिए काँग्रेस यह भी निश्चित करती है कि संशोधन का प्रस्ताव किस प्रकार स्वीकृत कराया जाय—विभिन्न राज्यों की धारासभाओं द्वारा या उसके हेतु बुलाई गई परिषद् द्वारा। दोनों ही दशाओं में स्वीकृति पाने पर प्रस्ताव संविधान का अंग बन जाता है। एक के अतिरिक्त अन्य सभी संशोधनों में काँग्रेस ने राज्यों की धारासभाओं द्वारा ही संशोधन-प्रस्ताव को स्वीकार करना ठीक समझा है। यद्यपि इस प्रणाली में देर लगती है, परन्तु इसमें धन व्यय नहीं होता है। केवल २१ वाँ संशोधन ही पास कराने हेतु काँग्रेस ने परिषद् बुलाई थी।

दृढ़ीकरण सम्बन्धी समय की सीमा—काँग्रेस संशोधन के प्रस्ताव को प्रस्तुत करते वक्त समय की सीमा भी निश्चित कर सकती है कि अमुक अवधि तक यह पूर्ण हो जाय। काँग्रेस ने १८वें, २०वें और २१वें संशोधनों के सम्बन्ध में कालावधि निश्चित कर दी थी। प्रत्येक दशा में ७ साल की अवधि निश्चित कर दी गई थी। सर्वोच्च न्यायालय ने भी इस को मान लिया है।[1] इसके अलावा एक बात और भी है कि संशोधन का प्रस्ताव राज्य की धारासभा में प्रस्तावित होने पर वह धारासभा लोक-निर्णय (Referendum) के हेतु जनता के सामने भी उस प्रस्ताव को रख सकती है, परन्तु जनता की राय लेने के उपरान्त उक्त राज्य की धारासभा अन्तिम निर्णय अपने हाथ में ही रखती है और ऐसा नहीं होता है कि वह जनता द्वारा ही अन्तिम फैसला करवाले और इस प्रकार अपनी शक्ति को छोड़ बैठे।[2]

संशोधनों की सीमा—संविधान में इस बात का निश्चित रूप से उल्लेख है कि दो विषयों में संविधान में संशोधन नहीं होंगे। एक तो यह है कि कोई भी राज्य अपनी इच्छा के विरुद्ध अपने समान प्रतिनिधित्व के अधिकार से वंचित नहीं किया जा सकेगा, और दूसरे कोई भी राज्य किसी भी विषय पर न तो विरोधी राय देगा

1 Dillons *vs.* Miller, 307 U. S. 433 (1939).
2 Howke *vs.* Smith, 253 U. S. 221 (1920).

और न दो राज्य मिल कर ही कोई बात तय करेंगे; जब तक कि उन राज्यों की धारासभाएँ उसके सम्बन्ध में स्वीकृति न दे दें।

उपर्युक्त समस्त बातों से स्पष्ट है कि अमेरिका के संविधान में संशोधन की विधि अत्यन्त टेढ़ी और लम्बी है इसीलिए गत १५० वर्षों में केवल २२ संशोधन ही हो पाये हैं। यह संख्या वास्तव में बहुत छोटी है क्योंकि प्रथम दस संशोधन तो एक साथ प्रस्तावित किये गये थे, और वे सब मिल कर एक ही संशोधन के रूप में हो गये। ग्यारहवें और बारहवें संशोधन द्वारा मूल विधान में जो त्रुटियाँ थीं उन्हें दूर करने का आयोजन किया गया था। इसी कारण इन संशोधनों को विधान को पूर्णता प्रदान करने वाले संशोधनों के नाम से पुकारा जाता है। ग्यारहवें संशोधन द्वारा सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) से व्यक्तिगत नागरिक द्वारा किसी राज्य के विरुद्ध अभियोग चलाने का अधिकार ले लिया गया। बारहवें संशोधन की आवश्यकता राजनैतिक दलों के झमेलों के कारण पड़ गई और इसके द्वारा प्रेसीडेण्ट तथा उपाध्यक्ष (Vice-President) के चुनाव के लिये अलग-अलग बैलट की व्यवस्था की गई। इसके बाद ६१ साल तक फिर किसी संशोधन की आवश्यकता नहीं हुई। तदुपरान्त तीन संशोधन हुए जिनका कारण अमेरिका का गृह-युद्ध था। तेरहवें संशोधन के द्वारा दास प्रथा का अन्त कर दिया गया और चौदहवें द्वारा 'नागरिकता' की परिभाषा करके विभिन्न राज्यों को यह अधिकार दे दिया गया कि वे विद्रोह तथा अन्य भीषण अपराध के अभियोग में अपने राज्यान्तर्गत निवासी या निवासियों को नागरिकता से वंचित रख सकते हैं अन्यथा नहीं। पन्द्रहवें संशोधन द्वारा जाति, वर्ण तथा दासत्व के आधार पर किसी को नागरिकता से वंचित न रखने की व्यवस्था की गई। इसके बाद फिर कई वर्षों तक कोई संशोधन नहीं हुआ। कई बार काँग्रेस में संशोधन के प्रस्ताव रक्खे गए परन्तु उन्हें दो-तिहाई वोट प्राप्त नहीं हुए। इस बीच जनता में कर-सम्बन्धी सुधारों के सम्बन्ध में तथा सीनेट के सदस्यों के प्रत्यक्ष रूप से निर्वाचित होने के सम्बन्ध में काफी जोश पैदा हुआ। इसका परिणाम यह हुआ कि सन् १९१३ से १९३३ तक बीस वर्ष में कुल छः संशोधन हुए। सोलहवें संशोधन द्वारा काँग्रेस को आय के ऊपर कर लगाने का अधिकार प्राप्त हुआ परन्तु यह अधिकार राज्यों को नहीं दिया गया। सत्रहवें संशोधन द्वारा यह निश्चित कर दिया गया कि सीनेट के सदस्यों का चुनाव प्रत्यक्ष मतदान प्रणाली से हो। अठारहवें संशोधन ने राष्ट्रीय निषेध (National Prohibition) को जन्म दिया; यद्यपि यह बहुत दिनों तक न चल सका। उन्नीसवें संशोधन द्वारा स्त्रियों को मतदान का अधिकार प्राप्त हुआ। बीसवें संशोधन द्वारा अध्यक्ष के पद-ग्रहण की तिथि बदल दी गई और काँगेस के 'लेम डक' (Lame duck) अधिवेशन

को समाप्त कर दिया गया तथा इक्कीसवें संशोधन द्वारा अठारहवें संशोधन की केवल पुनरावृत्ति हुई। सन् १९४७ के २२वें संशोधन द्वारा प्रेसीडेण्ट के दुबारा चुनाव के सम्बन्ध में यह निश्चित कर दिया गया कि प्रेसीडेण्ट पुनः चुनाव लड़ सकता है परन्तु उसका कुल कार्य-काल १० वर्ष से अधिक न होना चाहिए। भविष्य में यह प्रथा रहेगी या नहीं, यह निश्चित तौर पर नहीं कहा जा सकता।

इन संशोधनों का अध्ययन करने से विदित होता है कि यद्यपि गत शताब्दी में अमेरिका में अनेक परिवर्तन हुए हैं परन्तु वे वास्तव में मूलभूत नहीं हैं। मुश्किल से ही कोई ऐसे संशोधन इनमें मिलेंगे जिन्होंने संघ सरकार की शक्ति को मजबूत बनाया हो। वास्तव में अधिकतर ऐसे ही हैं जिन्होंने अमेरिका के राजनैतिक जीवन की विशेषताओं को लेशमात्र भी स्पर्श नहीं किया है।

उनमें अधिकतर तो निषेधात्मक हैं। वे राष्ट्रीय तथा विभिन्न राज्यों की सरकारों के ऊपर प्रतिबन्ध लगाते हैं। इससे हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि अमेरिका के संविधान के विस्तार तथा परिवर्तन को समझने के लिये हमें इन संशोधनों के अलावा अन्यत्र भी दृष्टिपात करना पड़ेगा। वास्तव में देखा जाय तो अमेरिका के संविधान के विकास तथा उसके विस्तार में संशोधनों का इतना महत्त्व नहीं है जितना कि स्टैच्यूटों की व्याख्याओं, न्यायिक विनिश्चयों तथा रीति-रिवाजों और परिपाटियों का है।

स्टैट्यूटों की व्याख्या (Statutory Elaborations) :

स्टैच्यूटों की व्याख्याओं में जितना संविधान के विकास में वास्तविक रूप में हाथ बँटाया है उतना २२ संशोधनों ने नहीं। इसका एकमात्र कारण यह है कि संविधान के निर्माताओं ने तो केवल कड़ी रूपरेखा के रूप में संविधान का निर्माण किया। उस रूपरेखा को विस्तृत करना और विस्तारपूर्वक उसकी व्याख्या करना सरकार के लिए छोड़ दिया। इसका परिणाम यह हुआ कि गत वर्षों में इन व्याख्याओं ने अत्यन्त बृहत् रूप धारण कर लिया और विधान को कुछ का कुछ बना दिया।[1] अतः आजकल की शासन-प्रणाली को पूर्ण रूप से समझने के लिये केवल मूल विधान को पढ़ लेना ही काफी नहीं होगा। उन कतिपय पृष्ठों में जो हम जानना चाहेंगे वह नहीं मिलेगा। असली बात तो स्टैच्यूटों की पुस्तकों और प्रशासकीय नियमावलियों के बड़े-बड़े पोथों में मिलेगी।[2]

1 To use Woodrow Wilson's metaphor, the constitution is "only the sap centre of a system of government vastly larger than the stock from which it has branched."

2 Munro : The Government of the United States, Chap. "How the Constitution has Changed", p. 69.

उदाहरणार्थ, प्रथम धारा के दूसरे और तीसरे भागों में कांग्रेस के दोनों आगारों के सङ्गठन की व्याख्या का उल्लेख है, परन्तु उनके सदस्यों के चुनाव, तिथि, स्थान सम्बन्धी बातों का वहाँ कोई उल्लेख नहीं है। यह सब राज्यों की धारासभाओं के विचारार्थ तथा उन्हीं के निर्णयार्थ छोड़ दिया गया है। इसके अलावा विधान के द्वारा न्यायिक शक्ति सर्वोच्च न्यायालय को तथा कांग्रेस द्वारा समयानुसार स्थापित अन्य छोटे-छोटे न्यायालयों को प्रदान की गई है। अब एक स्टैट्यूट जो राष्ट्रीय न्याय-विभाग में छोटे-छोटे संघीय न्यायालय स्थापित कर उन्हें उसका अंग निश्चित करता है, विधान का ही अंग बन जाता है और साथ ही साथ वह विधान को विकसित भी करता है। इसी प्रकार यह भी देखने में आता है कि विधि-निर्माण-प्रणाली की विस्तृत व्याख्या विधान में नहीं की गई बल्कि यह भी स्टैट्यूटों द्वारा ही पूर्ण रूप से निश्चित की गई है। इसके अलावा विधान कांग्रेस की समितियों के बारे में एक शब्द भी नहीं कहता कि किसके द्वारा और किस प्रकार ये नियुक्त होंगी। आधुनिक विधि-निर्माण-प्रक्रिया सम्बन्धी विभिन्न बातों, जैसे समय-अवधि (time-limits), क्लोजर (closure), फिलीबस्टर्स (filibusters) आदि के सम्बन्ध में भी संविधान मौन है। यही नहीं बल्कि सन् १७८७ का संविधान तो प्रशासकीय विभागों के सङ्गठन, उनकी संख्या, कार्य आदि के बारे में भी बिल्कुल चुप है यद्यपि वह इनकी स्थिति को स्वीकार करता है।

विधान में यह स्पष्टतः लिखित है कि "समस्त व्यवस्थापिका सम्बन्धी शक्ति कांग्रेस में निहित है।" इस शब्दावली का महत्त्व अत्यधिक है और वह इसलिये कि इतनी शक्ति प्राप्त होने पर भी "कांग्रेस ने कभी इसका प्रयोग प्रत्यक्षतः नहीं किया बल्कि सर्वदा उसने सरकारी अफसरों तथा प्रशासकीय बोर्डों को यह शक्ति प्रदान की है कि वे अपने आदेशों द्वारा स्टैट्यूटों की कमी को पूरा करें।"[1]

न्यायिक व्याख्याएं (Judicial Interpretations) :

मिस्टर जस्टिस होम्स (Mr. Justice Holmes) ने एक बार अमेरिका के संविधान के बारे में कहा था कि "वास्तव में यहाँ पर न्यायाधीश ही कानून बनाते हैं और उन्हें ही बनाने चाहिये" (Judges do and must legislate)। उनका कहने का तात्पर्य यह था कि सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों के निर्णय तथा व्याख्याएँ संविधान में महत्त्वपूर्ण स्थान रखती हैं। वास्तव में इन निर्णयों और व्याख्याओं का अमेरिका के सांविधानिक विकास में इतना महत्त्व है कि संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान की व्याख्या करने वालों ने यहां तक कहा है कि "सर्वोच्च

1 Austin F. MacDonald : American State Government and Administration.

न्यायालय अविरल गति से चलने वाली एक सांविधानिक परिषद् (Continuous Constitutional Convention) है"। सर्वोच्च न्यायालय ने अमेरिका के संविधान में इतनी महत्त्वपूर्ण बातों को प्रविष्ट कर दिया है कि वे आसानी से दृष्टि-पथ में नहीं आतीं। कांग्रेस को संविधान द्वारा लिखित रूप में दी गई शक्तियों के अलावा जितनी भी अन्य शक्तियाँ प्राप्त हुई हैं वे सब सर्वोच्च न्यायालय द्वारा दी गई हैं। यह वास्तव में अमेरिका की शासन-पद्धति के विकास में हाथ बँटाने वाली प्रमुख मशीन है और इसका राष्ट्र की सामाजिक तथा आर्थिक उन्नति में विशेष हाथ है।[1]

सर्वोच्च न्यायालय ने यह सब कुछ मूल लेखों की स्वतन्त्र रूप में व्याख्या करके तथा उस व्याख्या को अपनी शब्दावली में प्रयुक्त करके किया है। उदाहरणार्थ, संविधान में लिखा है कि "कांग्रेस को वाणिज्य-व्यवसाय का नियन्त्रण करने का अधिकार है"। परन्तु वाणिज्य (Commerce) का क्या अर्थ है? सर्वोच्च न्यायालय ने सिर्फ इसी एक शब्द पर लगभग सौ निर्णयात्मक व्याख्याएँ दी हैं और उनके द्वारा कांग्रेस को रेल, तार, टेलीफून, रेडियो, भाप के जहाज, वायुयान आदि तक पर अपने वाणिज्य के अधिकार को प्रयोग में लाने का अधिकार दिया है; यहाँ तक कि मामूली व्यावसायिक मण्डल भी जो कई राज्यों में व्यवसाय करते हैं, उनके द्वारा नियन्त्रित होते हैं।[2] अतः यह स्पष्ट है कि यदि कोई राज्य-विज्ञान का विद्यार्थी कांग्रेस की वास्तविक शक्ति को जानना चाहता है तो उसके लिये केवल संविधान की उन अठारह धाराओं का पढ़ना ही काफी नहीं होगा जिनसे कांग्रेस की शक्ति नियत की गई है, वरन् उसे उन धाराओं रूपी वृक्ष की विशाल शाखाओं तथा छोटी-छोटी डालियों को ध्यानपूर्वक देखना होगा जिन्हें सर्वोच्च न्यायालय ने प्रस्फुटित किया है। यद्यपि सर्वोच्च न्यायालय "संविधान में कोई नूतन बात प्रविष्ट नहीं करता है परन्तु यह उसमें नूतन बातें दिखाता अवश्य है", और ये बातें दूसरे व्यक्ति को आसानी से नहीं दिखाई देती हैं।

सर्वोच्च न्यायालय को ही यह श्रेय नहीं है कि उसने विधान की व्याख्या करके उसे इतना विस्तृत रूप दिया है बल्कि शासन के विभिन्न विभागों के अध्यक्षों तथा अन्य प्रशासकीय अधिकारियों द्वारा भी संविधान की धाराओं के आधार पर स्वतन्त्र निर्णय किये जाते हैं। यद्यपि उनके निर्णय न्याय-विभाग द्वारा स्वीकृत होने पर ही मान्य होते हैं परन्तु बहुधा वे न्याय-विभाग द्वारा स्वीकृत कर ही लिये जाते हैं। अगर किसी पदाधिकारी ने कोई नियम चालू कर दिया और बहुत दिनों तक उसका कोई विरोध नहीं हुआ तो उसे कानून मान लिया जाता है। आधुनिक काल में तो इस प्रकार के निर्णयों की संख्या बहुत बढ़ गई है।

1 Dimock & Dimock : American Government in Action, p. 53.
2 Schechter Poultry Corporation *vs.* United States, 295 U. S. 295.

रीति-रिवाज अथवा परिपाटी (Usages or Customs) :

स्टैट्यूटों के समान रीति-रिवाज़ तथा परिपाटियों ने भी अमेरिका के सांविधानिक विकास में सहयोग दिया है। बीअर्ड (Beard) जो अमेरिका के संविधान के एक विशेषज्ञ हैं, कहते हैं कि "हमारी राजनैतिक व्यवस्था में संशोधनों तथा स्टैट्यूटों ने इतना हाथ नहीं बटाया है जितना कि परिपाटियों ने बटाया है जिनके द्वारा राजनैतिक दल शासन की मशीन को चला रहे हैं।"[1] मुनरो भी इस कथन की पुष्टि करते हुए कहते हैं कि मनुष्य के लिये जो बात आदत बन जाती है वही बात राज्य के लिये परिपाटी का रूप धारण कर लेती है।[2] ये परिपाटियाँ लिखित संविधान के ऊपर स्थित एक पिरामिड के समान हैं और अमेरिका में राजनैतिक परिपाटियाँ इतनी अधिक संख्या में हैं कि उनका आधार न तो कानून में दिखाई पड़ता है और न न्यायिक विनिश्चयों में बल्कि वे तो दीर्घकाल से प्रचलित होने के कारण स्वयं ही दृढ़ता को प्राप्त हो गई हैं।[3]

जिन परिपाटियों ने अमेरिका के सांविधानिक विकास में इतना अधिक योग दिया है उनमें से कुछ का यहाँ उल्लेख करना आवश्यक है। सब से महत्त्वपूर्ण परिपाटी का सम्बन्ध प्रेसीडेण्ट के चुनाव से है। इस सम्बन्ध में हमें संविधान में लिखी हुई व्यवस्था में बहुत अन्तर नजर आता है। संविधान में लिखा है कि प्रेसीडेण्ट के चुनाव के लिये मतदाता विभिन्न राज्यों में एकत्रित होंगे और मतदान से पूर्व पूरी परिस्थिति से अपने को परिचित करा लेंगे। उसमें इस सम्बन्ध में एक शब्द भी नहीं लिखा है कि प्रेसीडेण्ट के पद के उम्मीदवार पहले से चुन लिये जायँ और वे मतदाताओं को अपनी ओर खींचने के लिये वायदे करते फिरें। यह सब देन दलीय संगठन की है। विभिन्न दल वाले ही अपने-अपने उम्मीदवार खड़े करते हैं और वे मतदाताओं को स्वतन्त्रतापूर्वक निर्णय करने का अवसर ही नहीं देते हैं। प्रायः शासन के तीनों विभागों में—व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्याय-विभाग—इस प्रकार की परिपाटियाँ नजर आती हैं जो अमेरिका की विभिन्न संस्थाओं को एकता तथा प्रयोगशीलता प्रदान करती हैं।[4] इसी प्रकार संविधान में लिखा है कि प्रतिनिधि-आगार का स्पीकर आगार के सदस्यों द्वारा चुना जाय, परन्तु वह वास्तव में बहुमत-दल

1 A. Beard : op. cit., p. 26.

2 "And yet even American Constitution relies on much that is custom or usage. Perhaps the principal case in point is the influence and recognition of political parties, which are not mentioned in the Federal Constitution but which are central in its operation today."

3 Munro : op. cit., p. 72.

4 Dimock & Dimock : American Covernment in Action, Chap. "The Framework of the Federal Government", p. 77.

के द्वारा उसके प्रमुख नेताओं में से मनोनीत होता है। स्पीकर को जो इतनी अधिक शक्ति प्राप्त है उसका आधार भी दीर्घकालीन परिपाटी ही है।

यह भी एक परिपाटी ही है कि अमेरिका में एक व्यक्ति तीन बार लगातार प्रेसीडेण्ट नहीं चुना जा सकता। इसी प्रकार यह भी एक परिपाटी ही बन गई है कि सीनेट के सदस्य उच्च पदों के लिये प्रेसीडेण्ट के पास अफसरों के नाम भेजते हैं और प्रेसीडेण्ट उन्हें स्वीकार कर लेता है। वैसे संविधान के निर्देशानुसार प्रेसीडेण्ट उच्च पदों पर अधिकारी नियुक्त करे और सीनेट द्वारा उन नियुक्तियों की स्वीकृति प्राप्त करे। कांग्रेस की दिनचर्या के विषय में भी अनेक परिपाटियाँ प्रचलित हैं। प्रेसीडेण्ट के चुनाव के सम्बन्ध में भी दीर्घकाल से प्रचलित कई परिपाटियाँ हैं।

संक्षेप में हम यह कह सकते हैं कि अमेरिका में परिपाटियों और अभिसमयों का सांविधानिक विकास में काफी हाथ है यद्यपि इस सम्बन्ध में हम उसका इङ्गलैण्ड से मुकाबिला नहीं कर सकते, जहाँ परिपाटियाँ तथा अभिसमय और भी अधिक महत्व-पूर्ण हाथ रखते हैं।

अतः यह बात स्पष्ट है कि यद्यपि संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान पूर्णतया लिखित है परन्तु फिर भी उसमें सांविधानिक परिपाटियों तथा अभिसमयों द्वारा अनेक परिवर्तन कर दिये गए हैं। इस प्रकार की परिपाटियाँ प्रत्येक संविधान में नजर आवेंगी और इसीलिये यह कहा जाता है कि कोई संविधान पूर्णतया लिखित नहीं हो सकता। कितना ही कठोर और अपरिवर्तनशील कोई संविधान क्यों न हो कालान्तर में उसे समयानुकूल परिवर्तनों को अपने में समाविष्ट होने ही देना पड़ता है और उसे नई-नई परिस्थितियों के अनुकूल अपने को बनाना पड़ता है। कोई भी भविष्य की घटनाओं को नहीं सोच सकता। वे तो समय-समय पर उपस्थित होकर ही सामाजिक संस्थाओं, नियमावलियों, विचारधाराओं और उद्देश्यों में परिवर्तन कराती रहती हैं। यही बात हमें अमेरिका के विधान में भी नजर आती है। उसमें परिपाटियों, रूढ़ियों तथा अभिसमयों द्वारा जितने भी परिवर्तन हुए हैं वे सब उसे समय के अनुकूल बनाने के लिए ही हुए हैं और उस रूप में अपने को परिवर्तित करते हुए अमेरिका के संविधान ने अपनी पूर्ण कठोरता को उठाकर रख दिया है।

अमेरिका के संविधान की उत्पादन-शक्ति :

अमेरिका के संविधान के सम्बन्ध में प्रेसीडेण्ट वुड्रो विल्सन (Woodrow Wilson) ने कहा था कि यह ब्रिटिश संविधान की भाँति एक जीवित तथा उत्पादक व्यवस्था है (It is scarcely less than the British, a living and fecund system)। ब्रिटिश संविधान के बारे में कहा जा चुका है कि यह अत्यन्त परिवर्तनशील है, इसके विकास में परिपाटियों, रूढ़ियों तथा

अभिसमयों का बहुत हाथ रहा है, यह सर्वदा जीवित है और इसमें हमेशा परिवर्तन होते आए हैं और होते रहेंगे। परन्तु अमेरिका के सम्बन्ध में हम यह कह सकते हैं कि वहाँ का संविधान परिवर्तनशील नहीं है। बल्कि इसकी कठोरता की आलोचना करते हुए बहुत से विद्वानों ने एक ओर ब्रिटिश संविधान की प्रशंसा की है तो दूसरी ओर अमेरिका ने संविधान की कटु आलोचना की है। वे लोग ब्रिटिश संविधान को तो "सदा परिवर्तनशील जीवित वस्तु" (ever-changing and living organism) कह कर उसकी प्रशंसा करते हैं और संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के विषय में कहते हैं कि यह तो "नष्ट हुई आशाओं, विगत आदर्शों, प्राचीन भयों तथा प्राचीन काल की आर्थिक और सामाजिक व्यवस्थाओं का समूह" (It is an embodiment of outworn ideals, faded hopes, old fears, primitive economic and social facts)। परन्तु वास्तव में बात ऐसी नहीं है। अमेरिका का संविधान पूर्णतया अपरिवर्तनशील नहीं है। दूसरे, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, अमेरिका के संविधान में संशोधन भी हुए हैं और रूढ़ियों, परिपाटियों, न्यायिक विनिश्चयों, स्टैट्यूटों आदि का भी इसमें बहुत बड़ा हाथ रहा है।[1] यह कह देना सरासर भूल होगी कि संयुक्त राज्य अमेरिका का संविधान पूर्णतया कठोर तथा अपरिवर्तनशील है। सन् १७८७ के विधान-निर्माताओं ने तो केवल एक रूपरेखा ही तैयार की थी, उस रूपरेखा को विस्तारपूर्वक लिखना और समयानुकूल परिवर्तित करना या मोड़ना पिछले १५० वर्षों में ही हुआ है। आज हमें अमेरिका के संविधान को समझने के लिए केवल २० पृष्ठों को ही पढ़ने से जानकारी प्राप्त नहीं होगी वरन् उन तमाम नियमावलियों, स्टैट्यूटों, न्यायिक निर्णयों आदि के संकलित पोथों को देखना पड़ेगा जिन्होंने शासन की मशीन के एक-एक पुर्जे में अपनी छाप डाल रक्खी है और डाल रहे हैं। यदि अमेरिका का संविधान पूर्ण रूप से कठोर बना रहता तो यह अमेरिका की जनता के अनुकूल कभी भी नहीं हो सकता था क्योंकि गत १५० वर्षों में वहाँ का सामाजिक तथा आर्थिक जीवन अत्यधिक बदल गया है। यह अमेरिका के संविधान से लिए अत्यन्त गौरव की बात है कि इसमें भी ब्रिटेन की भाँति अनेक परिवर्तन तथा संशोधन होते रहे हैं। इसीलिये प्रेसीडेण्ट विल्सन ने अमेरिका के संविधान की ब्रिटेन के संविधान से जो तुलना की, वह बहुत कुछ अंशों तक सत्य है हालाँकि ब्रिटेन के संविधान में जो परिवर्तनशीलता है वह अमेरिका के संविधान से नहीं है। परन्तु इस बात का मूल कारण दोनों देशों का

1 "So the government of the United States ought to be studied, not as a static mechanism but as a living organism; not as a moribund heritage from the past but as a growing concern."

(*Munro : op. cit., p. 79*)

इतिहास है। जैसा कि इङ्गलैण्ड के सांविधानिक विकास के सम्बन्ध में कहा जा चुका है, वहाँ का संविधान सैकड़ों वर्षों में शनैः-शनैः परिवर्तित होता हुआ आधुनिक रूप को प्राप्त कर पाया है। उसका कोई एक श्रोत नहीं है, परन्तु कई श्रोत हैं। उसके विकास में चार्टरों, अभिसमयों, रूढ़ियों, परिपाटियों, विशेषाज्ञाओं, उदाहरणों आदि ने अत्यन्त महत्वपूर्ण हाथ बँटाया है, और उसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वहाँ पर कानून बनाने वाली तथा विधान में संशोधन करने वाली संस्था में तथा प्रणाली में कोई अन्तर नहीं है। इसीलिये वहाँ संविधान अत्यधिक परिवर्तनशील है। वहाँ पर चाहे जब बिना किसी विरोधी प्रक्रिया का सहारा लिए ही संशोधन हो सकते हैं।

अमेरिका के संविधान के बारे में हम उपर्युक्त बातों को स्थान नहीं दे सकते। जिन परिस्थितियों में अमेरिका में सांविधानिक विकास हुआ है वे इङ्गलैण्ड से पूर्णतया भिन्न हैं; और सबसे पहली बात तो यही है कि अमेरिका के संविधान में संशोधन करने की प्रक्रिया ही बड़ी टेढ़ी है जिसके कारण वहाँ अधिक संशोधन नहीं हो पाए हैं। हाँ, अमेरिका के निवासियों ने एक दूसरी प्रणाली को अवश्य बड़े पैमाने पर अपनाया है और वह है न्याय-विभाग द्वारा संविधान की व्याख्या। ये व्याख्याएँ सन् १७८७ के बाद से ही होती आ रही हैं और अब भी चल रही हैं। कई बार सर्वोच्च न्यायालय ने अपने निर्णयों तथा व्याख्याओं द्वारा संविधान को विस्तृत रूप दिया है। मुनरो तो यहाँ तक कहते हैं कि "प्रत्येक सोमवार के सुबह जब सर्वोच्च न्यायालय अपने फैसले देता है तो उनमें कुछ न कुछ संविधान सम्बन्धी परिवर्तन अवश्य निहित होता है।" न्यायिक व्याख्याओं ने वास्तव में अमेरिका के संविधान में बहुत कुछ परिवर्तन किए हैं यद्यपि औपचारिक रूप में संशोधन द्वारा परिवर्तन करना वहाँ इतना सहज नहीं है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What are the sources of American constitution? How has it developed through ages?
2. There are almost as many conventions in the constitution of the the U. S. A. as in that of Great Britain. Discuss. *(Agra, 1935, 1940, 1946)*
3. "The American constituion", wrote Wilson, "is scarcely less than the British a living and fecund system." Discuss. *(Agra, 1942)*
4. Describe the procedure by which the constitution of U. S. A. can be amended *(Agra, 1935, 1940)*

चौथा परिच्छेद

संयुक्त राज्य अमेरिका का प्रेसीडेण्ट (राष्ट्रपति)

ब्राइस (Bryce) ने ठीक ही कहा था कि संसार में कोई पद इतना पेचीदा और मनोवैज्ञानिक दृष्टि से अपरिचित नहीं है जितना अमेरिका के राष्ट्रपति का। उसके कार्यों व शक्तियों का निरीक्षण करने से प्रतीत होता है कि अपने कुछ अधिकारों में वह इङ्गलैण्ड के क्राउन से समानता रखता है और कुछ में इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री से। अतएव हम में यह उत्सुकता ही नहीं बल्कि एक लोलुपता भी उत्पन्न हो जाती है कि हम अमेरिका के राष्ट्रपति को उसी दृष्टि से देखें जिससे कि इङ्गलैण्ड के क्राउन व प्रधान मन्त्री को देखते हैं।[1] परन्तु यथार्थतः बात यह है कि इनकी पारस्परिक समानताएँ अधिक गम्भीर नहीं हैं और यदि सूक्ष्म दृष्टि से समीक्षा की जाय तो प्रतीत होगा कि उनकी समानताएँ इतनी अधिक नहीं हैं जितनी उनकी असमानताएँ हैं।[2] अमेरिका के राष्ट्रपति के पद की स्थिति व उसके अधिकार एवं शक्ति का यथार्थ ज्ञान प्राप्त करने के लिये इस बात को सर्वदा ध्यान में रखना है कि यह एक अमेरिका की संस्था है, कि यह अमरीका के वातावरण में कार्य करता है, कि इसके ऊपर अमेरिका के इतिहास का प्रभाव पड़ा है और इसकी समीक्षा अमेरिका-निवासियों की आवश्यकताओं की पूर्ति को ही मापदण्ड मान कर की जा सकती है। अमेरिका के राष्ट्रपति के पद की स्थिति और उसके अधिकार व शक्तियों की निष्पक्ष व्याख्या व जाँच हम अमेरिका की संस्कृति, इतिहास, भूगोल व परम्परा को छोड़ कर नहीं कर सकते। उसके लिये वह अत्यावश्यक है कि हम उसे अमेरिका के वातावरण को ही पृष्ठभूमि मानकर देखें और उसकी स्थिति, उसके अधिकारों व उसकी शक्तियों की पहले निष्पक्ष विवेचना करें और बाद में अन्य संस्थाओं के साथ तुलना करें। कोई भी स्वच्छन्द विचार जो इसे ध्यान में न रख कर उसकी विवेचना करेगा, निःसन्देह भ्रमोत्पादक होगा।

यहाँ एक प्रश्न का उत्तर देना आवश्यक होगा और वह यह कि अमेरिका-निवासियों द्वारा प्रेसीडेन्सी स्वीकार करने का कारण क्या था? वास्तव में स्वतन्त्रता-

1 "The President of the United States is both more and less than a king; he is also both more and less than a prime minister The more carefully his office is studied, the more does its unique character appear."—*Laski*.

2 H. J. Laski : The American Presidency, p. 19.

संग्राम ने उन्हें यह सिखा दिया था कि एक समृद्ध राष्ट्र के लिए यह आवश्यक है कि उसका नेता एक हो। एक नेता होने पर ही वह सेना का सेनापति हो सकता है तथा देश में विभिन्न राज्यों के बीच ठीक सम्बन्ध स्थापित रख सकता है। संविधान के निर्माताओं का यह अटल विश्वास था कि संघीय सरकार की सफलता अध्यक्षात्मक प्रणाली द्वारा ही निश्चित की जा सकती है। हाँ, उसकी शक्ति, अवधि व अधिकार क्या हों —यह बात आसानी से तय नहीं हुई। परन्तु अध्यक्षात्मक प्रणाली की सरकार की स्वीकृति आसानी से हो गई।

जैसा कि पिछले एक परिच्छेद में कहा जा चुका है, अमेरिका-निवासी शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को मानते थे। इसलिये अमेरिका के संविधान-निर्माताओं ने राष्ट्रपति को व्यवस्थापिका की अधीनता से अलग कर दिया अर्थात् वह न तो उसके द्वारा नियुक्त ही हो और न उसकी इच्छा-पर्यन्त ही अपने पद पर स्थित रहे। हम देखते हैं कि सैद्धान्तिक दृष्टि से इङ्गलैण्ड में राजा प्रधान मन्त्री की नियुक्ति करता है यद्यपि वह लोकसभा में बहुमत दल का नेता होने के आधार पर चुना जाता है। फ्रान्स में भी ऐसा ही होता है। परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका में काँग्रेस को राष्ट्रपति के चुनाव में हस्तक्षेप करने की कोई आवश्यकता नहीं पड़ती।[1] केवल उस समय उसके हस्तक्षेप की आवश्यकता पड़ती है जब राष्ट्रपति के निर्वाचन में किसी भी उम्मीदवार को पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो। परन्तु ऐसे अवसर बहुत कम आते हैं।

राष्ट्रपति का निर्वाचन व उसका कार्य-काल :

संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति चार वर्ष के लिये निर्वाचित किया जाता है, यह बात विधान ने स्पष्ट रूप से निश्चित कर दी है। लेकिन यह दूसरी व तीसरी बार भी चुना जा सकता है। वैधानिक दृष्टि से उसके पुनः निर्वाचित किये जाने पर कोई भी प्रतिबन्ध नहीं है। परन्तु वहाँ यह एक परम्परा-सी बन गई है कि एक व्यक्ति राष्ट्रपति-पद के लिए दो बार से अधिक न चुना जाय। वाशिङ्गटन (Washington) और जैफरसन (Jefferson) दोनों को तीसरी बार चुनने का मौका आया परन्तु दोनों ने स्पष्ट मना कर दिया। इस परम्परा को केवल फ्रेन्कलिन रूजवेल्ट (Franklin Roosevelt) ने ही तोड़ा जब कि वह तीसरी व चौथी बार चुना गया क्योंकि द्वितीय महायुद्ध के कारण कुछ ऐसी ही परिस्थितियाँ उत्पन्न हो गई थीं। समय-समय पर यह प्रश्न वहाँ उठता रहा है कि

1 "A presidency limited by the will of Congress is always a sailor on an unchartered sea; he can never proceed with certainty upon his course." (*H. J Laski : op. cit., p. 30*)
"America needs strong government; it needs strong leadership to attain strong government; only the President, granted its characteristics, can provide it." (*Ibid, p. 35*)

राष्ट्रपति के निर्वाचन सम्बन्धी प्रश्न को निश्चित कर दिया जाय। सन् १९४७ के २२वें संशोधन के अनुसार यह निश्चित किया गया कि प्रेसीडेण्ट पुन: निर्वाचित भी किया जा सकता है परन्तु उसका कुल कार्य-काल १० वर्ष से अधिक न हो। मालूम ऐसा पड़ता है कि इस सम्बन्ध में कोई परिवर्तन होने नहीं जा रहा है और अतीत की परम्परा ही जारी रहेगी।

राष्ट्रपति बनने की योग्यताएँ :

राष्ट्रपति बनने के लिये कुछ योग्यताओं की आवश्यकता है। वे संविधान के ५ वें परिच्छेद के प्रथम खण्ड की द्वितीय धारा (Para 5, Section 1 and Article II) में दी हुई हैं। उनमें लिखा है कि "कोई भी व्यक्ति जिसे संयुक्त राज्य की प्राकृतिक नागरिकता प्राप्त नहीं है अथवा जो विधान के लागू होने के समय संयुक्त राज्य का नागरिक नहीं है, राष्ट्रपति नहीं हो सकता है। कोई भी व्यक्ति जिसकी अवस्था ३५ वर्ष की नहीं है और १४ साल से संयुक्त राज्य अमेरिका में नहीं रह रहा है, राष्ट्रपति बनने की योग्यता नहीं रखता।" इसके अलावा एक बात यह है कि राजनैतिक दल वाले किसी भी ऐसे व्यक्ति को राष्ट्रपति-पद के लिए खड़ा नहीं करते हैं जिसको अत्यधिक संख्या में लोग न जानते हों और जिसे काफी संख्या में वोट न प्राप्त हो सकें। अत: राष्ट्रपति बनने के लिए "वही व्यक्ति योग्यता रखता है जिसने सार्वजनिक जीवन में काफी काम किया है—वह चाहे कांग्रेस में रह कर किया हो, चाहे वह किसी राज्य का गवर्नर रहा हो, चाहे किसी बड़े शहर का मेयर रहा हो, या केबिनेट का सदस्य रहा हो, या कोई राजदूत, न्यायाधीश या प्रसिद्ध लेखक रहा हो।"[1]

राष्ट्रपति के निर्वाचन की प्रणाली :

संविधान के निर्माण के समय यह प्रश्न अत्यन्त विकट हो गया कि राष्ट्रपति का निर्वाचन कैसे हो। इस प्रश्न पर काफी मतभेद भी रहा। बहुत से राज्यों के प्रतिनिधियों का यह मत था कि कांग्रेस को ही राष्ट्रपति चुनने का अधिकार दे दिया जाय, और यह व्यवस्था कुछ समय के लिए स्वीकार भी कर ली गई। परन्तु शीघ्र ही विधान-परिषद् के सदस्यों के मस्तिष्क में यह बात आई कि ऐसी व्यवस्था होने से प्रतिबन्ध और सन्तुलन का सिद्धान्त पूर्णत: नष्ट हो जायगा। कुछ लोगों का यह विचार था कि राष्ट्रपति प्रत्यक्ष निर्वाचन पद्धति के अनुसार निर्वाचित किया जाय परन्तु इसका विरोध बहुमत ने किया क्योंकि वे लोग समझते थे कि "ऐसा होने पर बहुसंख्यक दल का नेता ही राष्ट्रपति बन जायेगा और उसकी वक्तृता तथा अन्य

1 Modern Democracies, Vol. II, p. 73.

प्रकार की ऐसी ही शक्ति उसे उस पद पर पहुँचा देगी,"[1] वास्तविक राजनैतिक अनुभव व योग्यता कुछ भी फायदा न पहुँचा सकेगी और न इस प्रकार योग्य व्यक्ति ही चुना जा सकेगा। इन बातों का परिणाम यह हुआ कि प्रत्यक्ष निर्वाचन पद्धति की व्यवस्था अपनाई गई। जो व्यवस्था विधान में लिखी हुई है वह यह है कि "प्रत्येक राज्य अपनी व्यवस्थापिका के आदेशानुसार कुछ 'निर्वाचक' चुने और उन निर्वाचकों की संख्या उस राज्य की सीनेट और प्रतिनिधि-सभा के प्रतिनिधियों (Representatives) के बराबर होती थी। समय आने पर यह निर्वाचक अपने-अपने राज्य में एक स्थान पर इकट्ठे हों और लिखित रूप में अपने वोट दो व्यक्तियों को दें, जिनमें से कम से कम एक उस राज्य का निवासी न हो जिस राज्य की ओर से वे नियुक्त हुए हैं। उसके बाद उनके वोटों को सन्दूक में सील लगा कर सीनेट के प्रेसीडेण्ट के पास भेज दिया जाय जो कांग्रेस के दोनों सदनों की उपस्थिति में उनको गिने और परिणाम की घोषणा करे। जिस व्यक्ति को सबसे अधिक वोट प्राप्त हुए हों वही राष्ट्रपति बने; बशर्ते वह सब व्यक्तियों में से पूर्ण बहुमत से निर्वाचित हो। उससे कम वोट पाने वाला व्यक्ति उसी प्रकार बहुमत पाने पर उप-राष्ट्रपति बने।" प्रारम्भ में इस प्रकार का भय था कि शायद पूर्ण बहुमत (अर्थात् कुल वोटों की संख्या का आधे से ज्यादा) किसी को प्राप्त न हो। अत: विधान में यह बात भी लिख दी गई कि यदि किसी व्यक्ति को इस प्रकार पूर्ण बहुमत प्राप्त न हो तो प्रतिनिधि-सभा अधिक वोट पाने वालों में से एक को चुन ले। परन्तु यह भी वोट-प्रथा से ही हो और इस प्रकार से चुनने में प्रत्येक राज्य की प्रतिनिधि-सभा के सदस्यों का सब का मिला कर एक ही वोट गिना जाये। इस प्रकार के चुनाव के समय गणपूर्ति (quorum) करने के लिये राज्यों में कम से कम दो-तिहाई राज्यों के प्रतिनिधियों की उपस्थिति अनिवार्य है। पुरानी पद्धति के अनुसार राष्ट्रपति ४ मार्च तक अपना पद ग्रहण नहीं करता था अर्थात् अपने चुनाव के ४ महीने तक वह अपना पद नहीं सम्हालता था। यह प्रथा ठीक नहीं थी और इसकी वजह से कभी-कभी गड़बड़ी भी होती थी क्योंकि नवीन निर्वाचित राष्ट्रपति और पूर्व-राष्ट्रपति (जो प्राय: दो विपक्षी दलों के होते थे) शासन-कार्य में कुछ गड़बड़ कर सकते थे। इसलिये २० वें संशोधन के अनुसार यह निश्चित कर दिया गया कि नवीन निर्वाचित राष्ट्रपति २० जनवरी के दोपहर को अपना पद सम्हाले। यदि संयोगवश उस समय तक राष्ट्रपति का चुनाव नहीं हो पाया हो अथवा कोई राष्ट्रपति अपने को पद के योग्य नहीं बना पाया है तो उप-राष्ट्रपति कार्य-भार को सम्हाल लेगा और तब तक काम करता रहेगा जब तक निर्वाचित राष्ट्रपति राष्ट्रपति-पद की शर्तें पूरी करके उससे कार्य-भार न ले ले। यदि

1 Munro : The Government of the United States, p. 148.

राष्ट्रपति व उप-राष्ट्रपति दोनों में से कोई भी इस योग्य नहीं है कि कार्य-भार ले सकें तो उसकी व्यवस्था कांग्रेस करे। राष्ट्रपति के त्यागपत्र दे देने पर या उसकी मृत्यु होने पर या अन्य किसी कारण से अपने पद से हटने पर उप-राष्ट्रपति कार्य-भार सम्हालेगा।

यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि संयुक्त राज्य की वैधानिक व्यवस्था में राष्ट्रपति की निर्वाचन सम्बन्धी समस्याओं ने जितनी उथल-पुथल की है उतनी किसी अन्य समस्या ने नहीं की है। विधान-निर्माताओं का विचार था कि राष्ट्रपति के निर्वाचन की पद्धति ऐसी हो जिसमें दलबन्दी, या जन-उत्तेजना, या अचैतन्य सामूहिक मस्तिष्क (unenlightened mob mentality) का कोई हाथ न हो। परन्तु वह ऐसी कोई भी प्रणाली न निकाल सके और न शायद निकाली ही जा सके। जन-साधारण की कल्पना व उसकी भावनाओं को उत्तेजित करने वाली चीजों में आज राष्ट्रपति का चुनाव भी एक है।[1] इसमें प्रत्येक व्यक्ति भाग लेता है।[2]

संविधान के निर्माताओं की प्रबल इच्छा थी कि संयुक्त राज्य अमेरिका का राष्ट्रपति अपनी योग्यता के आधार पर ही चुना जाय और निर्वाचन में जनता निष्पक्षता, न्याय तथा स्वतन्त्र विचार-शक्ति से काम ले। परन्तु यह इच्छा पूरी नहीं हो पाई है। राष्ट्रपति के चुनाव में दलबन्दी पूर्णतया काम करती है और कोई भी व्यक्ति दलबन्दी को त्याग कर राष्ट्रपति होने की आशा नहीं रख सकता। दलबन्दी राष्ट्रीय मशीन के अन्दर तक घुस गई है, व्यक्तिगत योग्यता अब कोई अर्थ नहीं रखती है। राष्ट्रपति दलबन्दी के आधार पर ही चुना जाता है और उसे बजाय अपनी योग्यता का गर्व होने के और उसे प्रदर्शित करने के जनता की इच्छा को प्रकट करना पड़ता है। कहने का तात्पर्य यह है कि राष्ट्रपति को जनता अपनी ओर नहीं खींचती है, अपितु राष्ट्रपति को जनता को अपनी ओर खींचना पड़ता है। उसकी शक्ति इसमें नहीं लगती कि वह अपनी योग्यता से जनता का पूर्ण हित करे परन्तु उसकी सारी शक्ति अधिक से अधिक जनता को अपने गुट में मिला रखने में लगी रहती है। संविधान के निर्माताओं ने यह कभी नहीं सोचा था कि दलबन्दी इस प्रकार शासन की मशीन में प्रविष्ट हो जायगी। उन्होंने कभी भी यह ख्याल नहीं किया था कि राष्ट्रपति का चुनाव जनता की इच्छा पर निर्भर नहीं रहेगा, कि राष्ट्रपति निर्वाचक कॉलिज द्वारा नहीं चुना जायगा बल्कि शक्तिशाली राजनैतिक दल द्वारा

1 **Presidential electors have become "automata", mere registrants of their party's choice of Presidential candidates.**
(*Laski : Parliamentary Affairs, Vol. III, Ch. I, p. 22*)

2 **The process is in the language of Beard, "perhaps the most arresting pageant in the long course of evolution."**

चुना जायगा। इसमें यह भी सम्भव हो सकता है कि राष्ट्रपति कभी-कभी अल्पमतों के आधार पर भी चुना जा सके क्योंकि यदि किसी दल की किसी राज्य में थोड़े बहुमत से भी विजय हो जाती है तो भी उस दल को उस राज्य के कुल वोट मिल जाते हैं जो उस राज्य को प्राप्त हुए हैं और इस हालत में प्रत्येक राज्य में या अधिक से अधिक राज्यों में थोड़े-थोड़े बहुमत से विजय प्राप्त करने पर भी किसी दल को उन राज्यों के सब वोट मिल जाते हैं।

इसीलिए लास्की ने अपनी पुस्तक "दी अमेरिकन प्रेसीडेन्सी (The American Presidency) में लिखा है कि "यह कहना अत्युक्तिपूर्ण न होगा कि राष्ट्रपति के पद को प्राप्त करने वालों में योग्यता और गुण का आधार देखने की सम्भावना तो कम ही रहेगी"। योग्यता और व्यक्तिवाद गुण तो अलग उठा कर रख दिये जाते हैं। जो ज्यादा महत्वपूर्ण योग्यताएँ हैं उनमें सर्वप्रथम यह है कि राष्ट्रपति पद के लिए पहले व्यक्ति ही मिल जाय। प्रायः यह देखने में आता है कि जो व्यक्ति एक साल प्रिय रहता है वह दूसरी साल लोगों की नजरों में गिर जाता है। अतः ऐसा व्यक्ति मिलना बड़ा मुश्किल पड़ जाता है जो काफी समय तक जनता का प्रिय बना रहे। बहुधा लोकप्रियता (जैसी आज हम समझते हैं) व योग्यता साथ-साथ नहीं मिलतीं क्योंकि वास्तव में जो योग्य व्यक्ति हैं उन्हें सस्ती लोकप्रियता प्राप्त करने की आकांक्षा ही नहीं होती। आधुनिक युग में तो वह जल्दी ही लोकप्रिय बन जाता है जो किसी दल का नेता हो और नेता होने के नाते किसी पद पर पहुँच कर खुद भी माल उड़ाये और अपने साथियों को भी खूब माल दे। अतः राष्ट्रपति के पद के लिए कभी-कमी व्यक्ति पाना भी एक समस्या बन जाती है। इसका अभिप्राय यह नहीं कि व्यक्तियों की कमी है परन्तु आशय यह है कि यदि व्यक्ति है तो दल उसके साथ नहीं है, और दल है तो उसमें व्यक्ति नहीं है।

दूसरी बात जो इस सम्बन्ध में अत्यन्त रोचक प्रतीत होती है वह यह है कि जिस व्यक्ति को दीर्घकाल तक राजनैतिक क्षेत्र का अनुभव रहा है उस व्यक्ति के लिए वह अनुभव एक गुण होने के बजाय उसकी सर्वप्रियता में एक रोड़ा अटकाने वाला पत्थर है। दीर्घकाल तक राजनैतिक क्षेत्र में रहने से उसके बहुत से दुश्मन हो जाते हैं और वे उसे बदनाम कर देते हैं।[1] लोग व्यक्ति के दीर्घ अनुभव का लाभ नहीं उठाना चाहते बल्कि उसके दीर्घ अनुभव को खत्म करना चाहते हैं।

राजनैतिक दृष्टि से संयुक्त राज्य अमेरिका में यह उचित समझा जाता है कि राष्ट्रपति के पद के लिए जो व्यक्ति उम्मीदवार हों वे संयुक्त राज्य के प्रमुख राज्यों

1 "It is an axiom in politics that most people vote their resentment rather their appreciation.'

(*Munro : The Government of United States, p. 162*)

के निवासी हों। इसका अभिप्राय यह है कि राष्ट्रपति का निर्वाचन समस्त जनता के वोटों के आंधार पर नहीं वरन् जनता द्वारा चुने हुए निर्वाचकों के बहुमत के आधार पर होता है।

अमेरिका में यह कहने का रिवाज-सा पड़ गया है कि राष्ट्रपति के पद के लिए प्राय: तीन प्रकार के उम्मीदवार होते हैं—(१) लॉजीकल उम्मीदवार (logical candidates), (२) सर्वप्रिय पुत्र (favourite sons), और (३) अन्धकार में छिपे हुए या काले घोड़े (dark horses)। जो राष्ट्रपति किसी भी समय राष्ट्र के राष्ट्रपति-पद पर काम कर चुका है या उस पद पर आसीन है और यदि वह पुनर्निर्वाचन के लिए प्रयत्न करता है तो वह प्रथम श्रेणी में आता है। दूसरी श्रेणी (यानी favourite sons) में वे उम्मीदवार हैं जिनको राज्यों ने अपने-अपने यहाँ से खड़ा किया है और जो अपने-अपने राज्यों में बहुत प्रिय हैं परन्तु अपने राज्यों के बाहर जिनकी कोई पूछ नहीं है। तीसरी श्रेणी (यानी dark horses) में वे लोग आते हैं जिनके अचानक ही राष्ट्रपति पद के लिए नाम प्रस्तुत किये जाते हैं; जबकि कोई भी उम्मीदवार पूर्ण बहुमत प्राप्त नहीं कर पाता है (यह ऊपर बताया जा चुका है कि पूर्ण बहुमत न होने पर कांग्रेस उन व्यक्तियों में से जिनके अधिक वोट हैं कुछ छाँटती है और फिर कम से कम दो-तिहाई राज्यों के प्रतिनिधियों की उपस्थिति में अपने वोटों से राष्ट्रपति चुनती है; हालाँकि ऐसे अवसर कम आते हैं)।

इस बात के कहने में कोई भी अत्युक्ति नहीं है कि यह आवश्यक नहीं है कि योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति ही राष्ट्रपति बनाए जायें। राष्ट्रपति के निर्वाचन के समय जो बात अधिक महत्त्वपूर्ण समझी जाती है वह अपने-अपने दल की विजय है न कि सब दलों के व्यक्तियों में से सबसे अधिक योग्य व्यक्ति का चुना जाना। परन्तु फिर भी यह कहा जा सकता है कि अमेरिका में अधिकतर योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति ही चुने गए हैं। कभी-कभी ऐसा अवश्य हुआ है कि अयोग्य व्यक्ति भी चुने गए हों। अमेरिका में राष्ट्रपति का पद कभी कैसा रहा है और कभी कैसा। इसकी स्थिति तथा इसका महत्त्व व्यक्ति तथा परिस्थितियों के आधार पर बदलता रहा है।[1]

राष्ट्रपति का पद :

प्रो० हैरोल्ड लास्की का कथन है कि अमेरिका का राष्ट्रपति थोड़े बहुत अंश तक राजा है, वह थोड़े बहुत अंश तक प्रधान मन्त्री है। जितना अधिक ध्यानपूर्वक इस पद की स्थिति का अध्ययन किया जाता है, उतनी ही अधिक अनोखी इस पद की स्थिति नजर आती है। लॉर्ड ब्राइस ने कहा है कि अमेरिका के राष्ट्रपति का

[1] Woodrow Wilson : Constitutional Government in the United States, p. 57.

पद संसार में सबसे ऊँचा पद है जिसे व्यक्ति अपने प्रयत्नों से प्राप्त कर सकता है। ऑग (Ogg) और रे (Ray) भी कहते हैं कि यूरोप के तानाशाहों को छोड़कर अमेरिका के राष्ट्रपति के मुकाबले संसार में किसी के पास शक्ति नहीं है और यह भी तब है जब विधान ने उसके ऊपर काफी प्रतिबन्ध लगा दिये हैं। "उसकी शक्ति व अधिकारों एवं स्थिति को देखते हुए यह स्पष्ट हो जाता है कि वह एक राज्य का सर्वेसर्वा है तथा स्वयं अपना ही प्रधान मन्त्री है। उसकी स्थिति वास्तव में अनोखी है।"

राष्ट्रपति के अधिकार व शक्ति :

अमेरिका का राष्ट्रपति वास्तव में वहाँ के राष्ट्र का पति है। वह यथार्थ में राज्य की सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति है। उसके पास इतनी शक्ति है जितनी संसार के किसी भी निर्वाचित अधिकारी के पास नहीं है। इसीलिए तो यह कहा जाता है कि वास्तव में वह राज्य ही नहीं करता बल्कि शासन भी करता है। उसकी शक्ति को तीन भागों में बाँटा जा सकता है—(१) कार्यपालिका शक्ति, (२) व्यवस्थापिका सम्बन्धी शक्ति, तथा (३) न्यायिक शक्ति।

कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति व अधिकार—अमेरिका का राष्ट्रपति कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी है। वह राष्ट्रीय प्रशासकीय विभाग का सर्वोच्च अधिकारी है और उसका यह कर्त्तव्य है कि वह यह देखे कि सारे देश में विधान व कानून का नियमपूर्वक पालन होता है। संयुक्त राज्य के समस्त बड़े-बड़े पदाधिकारी जिनकी संख्या करीब ६,५०,००० है, उसी के द्वारा या नियुक्ति की हुई किसी अधिकृत समिति के द्वारा नियुक्त किए जाते हैं। यद्यपि विधान के अन्तर्गत यह बात निहित है कि उसकी समस्त नियुक्तियों की स्वीकृति सीनेट देगी परन्तु वास्तव में सीनेट कभी भी उसकी नियुक्तियों को अस्वीकार नहीं करती है। राष्ट्रपति स्थल-सेना व जल-सेना का सेनापति है। कोई भी सिविल अफसर जो उसके द्वारा सीनेट की मंजूरी से नियुक्त किया गया था उसके द्वारा पदच्युत भी किया जा सकता है। इसमें उसे सीनेट की मंजूरी की भी आवश्यकता नहीं है।

राष्ट्रपति ही राजदूतों को नियुक्त करता है, वही दूसरे देशों के राजदूतों के प्रमाण-पत्र लेता है और वही युद्ध व सन्धि की घोषणा करता है। राष्ट्रपति संयुक्त राज्य की वैदेशिक नीति का प्रमुख संचालक है हालांकि इस सम्बन्ध में यह बात ध्यान योग्य है कि वह बिना कांग्रेस की स्वीकृति के युद्ध-घोषणा नहीं कर सकता। यद्यपि राष्ट्रपति बिना सीनेट के दो-तिहाई बहुमत के सन्धि-वार्ता भी नहीं कर सकता परन्तु वह बिना सीनेट की स्वीकृति के कुछ हद तक विदेशों से समझौते कर सकता है। युद्ध-काल में तो राष्ट्रपति की शक्ति बहुत बढ़ जाती है

और वह अपने ऊपर समस्त जिम्मेदारियाँ लेकर सारी शक्ति अपना लेता है। राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह संकटकालीन अवस्था में सारे राष्ट्रीय जीवन का विधाता बन जाय। प्रेसीडेण्ट विल्सन ने ऐसा किया भी था। राष्ट्रपति को क्षमा प्रदान करने का भी अधिकार है परन्तु वह उन अपराधियों को क्षमा प्रदान नहीं कर सकता जिन पर सीनेट द्वारा अभियोग चलाया गया है।

व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकार—यह सुन कर आश्चर्य होता है कि कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी विधि-निर्माण में भी हाथ रक्खे। वैसे तो संविधान के निर्माताओं ने शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को अपना कर यह प्रयत्न किया था कि कार्यपालिका व व्यवस्थापिका अलग-अलग रहें और कार्यपालिका के अधिकारी का विधि-निर्माण में कोई हाथ न रहे, परन्तु बात ऐसी नहीं है और हमें यह देखकर विस्मय होता है कि अमेरिका के राष्ट्रपति का विधि-निर्माण में भी बहुत बड़ा हाथ है।

शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त के आधार पर संयुक्त राज्य में शासन के तीनों भाग—व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका—अलग-अलग हैं और एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं। अतः वैधानिक दृष्टि से राष्ट्रपति को व्यवस्थापिका सम्बन्धी कोई अधिकार नहीं होना चाहिए। सैद्धान्तिक रूप में यह बहुत कुछ सत्य भी है क्योंकि राष्ट्रपति न तो व्यवस्थापिका का सदस्य है और न वह उसका आमन्त्रण, विलयन या विघटन कर सकता है, परन्तु व्यावहारिक रूप में यह देखा जाता है कि वह विधि-निर्माण में अत्यन्त महत्वपूर्ण स्थान रखता है। राष्ट्रपति को यह अधिकार है कि वह कांग्रेस के दोनों सदनों को अपने सन्देश भेजे। सन्देश लिखित रूप में भेजे जा सकते हैं और मौखिक रूप में भी पहुँचाए जा सकते हैं। कभी-कभी राष्ट्रपति कांग्रेस से कोई नया कानून बनाने के लिए प्रार्थना भी कर सकता है ताकि उसके कार्य में बाधा न पड़े और उसका प्रशासन-कार्य सुचारु रूप से चलता रहे। बहुधा यह देखा जाता है कि व्यवस्थापिका कोई कानून पास कर देती है परन्तु वह पूर्ण रूप से यह नहीं सोच पाती है कि उसके पालन करवाने में किन कठिनाइयों का सामना करना पड़ेगा और वे किस प्रकार दूर की जा सकेंगी। यह कार्य कार्यपालिका के अधिकारियों का है। वे ही उन कठिनाइयों को भली प्रकार समझ सकते हैं और उनका हल भी निकाल सकते हैं। अतः राष्ट्रपति ऐसी अवस्था में कांग्रेस के पास अपने विचार भेजता है और उससे उनका समर्थन करने की प्रार्थना करता है। प्रायः कांग्रेस भी उसका अनुमोदन ही करती है।

राष्ट्रपति को कांग्रेस द्वारा पारित अधिनियमों के सम्बन्ध में निषेधात्मक अधिकार (Veto power) भी है। कोई भी अधिनियम या विधेयक तब तक पारित हुआ नहीं माना जा सकता है जब तक राष्ट्रपति उस पर अपने हस्ताक्षर न कर

दे। यदि किसी विधेयक पर वह अपनी स्वीकृति नहीं देता है तो वह विधेयक उसी सदन को पुनर्विचार के हेतु लौटा दिया जाता है जिसमें वह प्रस्तावित हुआ था। परन्तु यदि कांग्रेस के दो-तिहाई बहुमत से वह विधेयक पुनः पास हो गया तो राष्ट्रपति को भी उसे अवश्य मानना पड़ेगा। इसलिए राष्ट्रपति का निषेधात्मक अधिकार सीमित है। परन्तु यदि विधेयक के पास करने के दस दिन के अन्दर कांग्रेस का विघटन (adjournment) हो गया तो फिर वह उसके ऊपर विचार नहीं कर सकती है और राष्ट्रपति का निषेधात्मक अधिकार ही लागू रहता है।

न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकार—राष्ट्रपति को न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं। वह सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीशों को नियुक्त करता है परन्तु वह उन्हें पदच्युत नहीं कर सकता। न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में भी उसे सीनेट की अनुमति लेनी पड़ती है। राष्ट्रपति कुछ कार्यपालिका सम्बन्धी आदेश भी प्रचलित कर सकता है और उन आदेशों का भी वही महत्व है जो न्याय-क्षेत्र में कानून का है। राष्ट्रपति के ऊपर किसी भी न्यायालय में अभियोग नहीं चलाया जा सकता है।

राष्ट्रपति का संयुक्त राज्य अमेरिका में बड़ा महत्व है। राष्ट्रीय जीवन की वह धुरी है। सम्पूर्ण राष्ट्र की आँखें उसी पर लगी रहती हैं। वही उसका भाग्य-विधाता व रक्षक है। वास्तव में वह एक राजा है यद्यपि वह राजवंश का नहीं है।[1] चार साल तक उसकी शक्ति राजा की शक्ति से किसी भी प्रकार से कम नहीं है।

राष्ट्रपति के अपने दल का नेता होने की हैसियत से अधिकार—राष्ट्र का सर्वेसर्वा होने की हैसियत से राष्ट्रपति के अनेक अधिकार हैं और उनका हम संक्षेप में ऊपर उल्लेख भी कर चुके हैं, परन्तु इनके अतिरिक्त उसके और भी अधिकार हैं जो उसे एक राजनैतिक दल का नेता होने की हैसियत से मिले हुए हैं। ये अधिकार सांविधानिक नहीं हैं परन्तु इनका आधार परम्परा व दलबन्दी व्यवस्था का संगठन ही है। राष्ट्रीय नीति तथा जीवन का कोई भी पहलू ऐसा नहीं है जिस पर उसका प्रभाव न हो। प्रेसीडेण्ट टाफ्ट (Taft) ने एक बार कहा था कि "राष्ट्रपति एक दल का नेता है और उसके लिए यह सम्भव नहीं है कि वह किसी समय अपने दल की नीति को छोड़ दे, चाहे वह कार्यपालिका सम्बन्धी हो अथवा विधि-निर्माण सम्बन्धी।" प्रत्येक राजनैतिक दल के कुछ आदर्श होते हैं, उसका कुछ कार्यक्रम व प्रोग्राम होता है। उस दल के नेता का राष्ट्रपति का पद प्राप्त करने पर यह कर्त्तव्य हो जाता है कि वह उसके उद्देश्यों को पूरा करे और अपने दल द्वारा निर्धारित की हुई नीति का

1 "He is the nearest and dearest substitute for a royal idol which the Americans possess and much of the fateless snobbery which in Europe has so long invested royal actions with a blinding halo has in U. S. A. affixed itself to the Presidency."

अनुसरण ही न करे बल्कि कांग्रेस के दोनों सदनों में उसी का पक्ष ले। कांग्रेस के भीतर और बाहर जहाँ कहीं भी उसके दल-सम्बन्धी नीति पर कोई प्रश्न खड़ा होगा, वहीं पर राष्ट्रपति अपने दल का नेता होने की हैसियत से उसका प्रमुख वक्ता (Spokesman) माना जायगा।

राष्ट्रपति के विशेषाधिकार—उपर्युक्त अधिकारों के अतिरिक्त संयुक्त राज्य अमेरिका के राष्ट्रपति के कुछ अन्य विशेषाधिकार भी हैं। इङ्गलैण्ड के राजा की भाँति अमेरिका का राष्ट्रपति भी जब तक अपने उच्च पद पर है तब तक वह कानून के ऊपर है। उसको गिरफ्तार नहीं किया जा सकता और न न्यायालय में उसके ऊपर मुकदमा ही चलाया जा सकता है। हाँ सीनेट में अवश्य उसके ऊपर राजद्रोह, रिश्वत या अन्य ऐसे किसी महान् अपराध में अभियोग चलाया जा सकता है। अभियोग चलाया जाता है प्रतिनिधि-आगार द्वारा और चलता है सीनेट में।

राष्ट्रपति की शक्तियों का श्रोत :

राष्ट्रपति को अपनी शक्तियाँ व अधिकार कई श्रोतों से प्राप्त हैं। उसकी प्रमुख शक्तियों का आधार व श्रोत तो संविधान ही है। संविधान ही उसे उच्च पदाधिकारी नियुक्त करने का, कांग्रेस के अधिनियमों के प्रति निषेधात्मक अधिकार प्रयोग करने का, सीनेट की मंजूरी पर युद्ध-घोषणा व सन्धि-वार्ता करने का, अपराधियों को क्षमा प्रदान करने का, स्थल-सेना व जल-सेना का सेनापतित्व ग्रहण करने का, काँग्रेस के विशिष्ट अधिवेशन बुलाने का, विभिन्न विभागों के अधिकारियों को आदेश देने का, संविधान की रक्षा करने व कानूनों का पालन करवाने का अधिकार देता है।

राष्ट्रपति की शक्तियों का दूसरा श्रोत निहित शक्ति का सिद्धान्त (Doctrine of Implied Powers) है। उसे यह अधिकार है कि वह व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानूनों को विस्तार दे व उनमें जो कुछ यत्र-तत्र कमी रह गई हो उसकी पूर्ति करे। वास्तव में काँग्रेस तो किसी भी विषय पर एक रूपरेखा ही बना सकती है। राष्ट्रपति को ही यह अधिकार है कि वह उस रूपरेखा की विस्तृत व्याख्या करे और उसकी कमी की पूर्ति करे।

राष्ट्रपति को बहुत से अधिकार स्टैट्यूटों द्वारा दिये गये हैं। जब भी काँग्रेस कोई नया विभाग खोलती है, या कोई कमीशन नियुक्त करती है, या कोई नया पद स्थापित करती है तभी वह राष्ट्रपति के अधिकारों में कुछ न कुछ वृद्धि कर देती है। यह वृद्धि अपने आप ही हो जाती है क्योंकि यह स्वाभाविक है कि यदि कोई भी नया विभाग खुला या कोई भी नया पद स्थापित किया गया तो राष्ट्रपति का कार्य-क्षेत्र बढ़ ही जायेगा। उदाहरणार्थ, व्यापार-नियम पास करके काँग्रेस ने राष्ट्रपति को यह अधिकार दे दिया है कि वह कमीशन द्वारा निर्धारित दर के प्रति अपनी स्वीकृति अथवा

अस्वीकृति दे सकता है। इस प्रकार राष्ट्रपति का विदेशी व्यापार में बहुत कुछ हाथ हो गया है।

(४) राष्ट्रपति ने न्यायिक विनिश्चयों से भी कुछ शक्ति प्राप्त की है। जहाँ कहीं भी कोई बात संविधान में नहीं मिलती वहाँ उसकी व्याख्या न्याय-विभाग ही करता है और वह बहुत से ऐसे मामलों को स्पष्ट करता है जिन पर संविधान बिल्कुल मौन है। उदाहरणार्थ, संविधान ने राष्ट्रपति को यह अधिकार दे रक्खा है कि वह अपराधियों को क्षमा प्रदान कर सकता है; परन्तु उसमें यह कहीं नहीं लिखा है कि क्या वह अभियोग सिद्ध होने से पहले भी क्षमा प्रदान कर सकता है? न्याय-विभाग ने अपने निर्णयानुसार यह निश्चित कर दिया है कि वह ऐसा कर सकता है।[1]

(५) अन्त में, हम यह भी देखते हैं कि राष्ट्रपति को कुछ शक्ति परम्परा व व्यवहार के आधार पर भी प्राप्त है। उदाहरणार्थ, राष्ट्रपति अपने दल का नेता होता है और काँग्रेस के अन्दर तथा बाहर उस दल से सम्बन्ध रखने वाले सभी मामलों पर उससे परामर्श लिया जाता है। वह अपने दल के हेतु अध्यक्ष चुनता है और उस अध्यक्ष के द्वारा दल की समस्त कार्यवाही पर नियन्त्रण रखता है। परन्तु व्यवहार ने कहीं-कहीं उसकी शक्ति की सीमा भी निश्चित कर दी है। उदाहरण के लिए, संविधान में यह लिखा है कि राष्ट्रपति सीनेट की स्वीकृति से समस्त उच्च पदाधिकारियों की नियुक्ति करे परन्तु व्यवहार में बात यह है कि राष्ट्रपति नियुक्तियाँ करने से पूर्व सीनेट के सदस्यों से एक-एक करके परामर्श करता है और साथ ही अपने दल के प्रमुख नेताओं से भी परामर्श करता है।

अमेरिका का राष्ट्रपति क्या है?

वास्तव में अमेरिका का राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित राज्य का सर्वोच्च अधिकारी है परन्तु उसकी शक्तियों की सीमा भी है। अमेरिका में जो उसकी स्थिति है वह संसार में और किसी उस प्रकार के पद पर स्थित व्यक्ति की नहीं है। उसे जनता निर्वाचित करती है अतः जितना उसका जनता के ऊपर प्रभाव रहता है और जितना उसे जनता का नेतृत्व प्राप्त है उतना किसी को नहीं है। भारत व फ्रान्स में राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित न होकर संसद के सम्मिलित अधिवेशन में निर्वाचित होते हैं और जनता का उनके निर्वाचन में प्रत्यक्ष हाथ नहीं होता, अतः वह राष्ट्रपति में विशेष दिलचस्पी नहीं रखती। परन्तु अमेरिका का राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित होता है और इसलिये जनता की उसमें और उसकी जनता में विशेष दिलचस्पी होती है। दूसरी बात यह भी है कि यद्यपि जनता राष्ट्रपति के निर्वाचन में स्वतन्त्र

1 Ex-parte Garland *vs.* Wallace, U. S. 333 (1866).

विचार से काम नहीं लेती है अधिकतर लोग दलबन्दी के चक्कर में पड़ जाते हैं फिर भी इतना अवश्य है कि अधिकांशतः योग्य व्यक्ति ही चुना जाता है। इसीलिए जनता को अपने राष्ट्रपति में विश्वास होता है, वह उसे प्रिय होता है, वह उसकी आज्ञा का पालन करती है और उसे अपना नेता मानती है। वास्तव में जितने सम्मान और गौरव का पद अमेरिका के राष्ट्रपति का है उतना अन्य किसी देश के सर्वोच्च अधिकारी का नहीं है।

साथ ही साथ यह बात भी ध्यान देने योग्य है कि वह तानाशाह नहीं है। उसके पास बहुत शक्ति है और अधिकार हैं परन्तु सब की सीमा है। वह उसका उल्लंघन नहीं कर सकता। संयुक्त राष्ट्रीय शासन का ढाँचा संघात्मक है और केन्द्र तथा घटक राज्यों के बीच विषय बँटे हुए हैं। राष्ट्रपति किसी राज्य के विषय में हस्तक्षेप नहीं कर सकता। उसकी शक्ति पर शक्ति-विभाजन सिद्धान्त की सीमा लगी हुई है अतः यह भी उसके ऊपर नियन्त्रण है और वह अपनी शक्ति का दुरुपयोग नहीं कर सकता और न व्यवस्थापिका या न्यायपालिका के कार्य-क्षेत्र में अनाधिकृत रूप से प्रवेश कर सकता है। अमेरिका के विधान में प्रतिबन्ध और सन्तुलन के सिद्धान्त को भी खूब अपनाया गया है। राष्ट्रपति की शक्ति बहुत है परन्तु उस पर प्रतिबन्ध भी लगे हुए हैं। साथ ही साथ राष्ट्रपति के पीछे उसका दल इस प्रकार नहीं लगा हुआ है जिस प्रकार इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री के पीछे उसका दल। इङ्गलैण्ड में तो दलीय प्रणाली विकट है। वहाँ चाहे प्रधान मन्त्री गलत करे या सही उसका दल उस की पीठ ही ठोकता है। परन्तु अमेरिका में ऐसा नहीं है। वहाँ राष्ट्रपति की इस प्रकार पीठ ठोकने वाला कोई नहीं है, अतः राष्ट्रपति को हमेशा सावधान और चौकन्ना रहना पड़ता है।

परन्तु फिर भी अमेरिका के राष्ट्रपति के पास बहुत शक्ति है। संकटकालीन अवस्थाओं में तो उसकी शक्ति अत्यधिक बढ़ जाती है, और वह एक प्रकार का तानाशाह बन जाता है। वर्तमान काल में राष्ट्रपति के अधिकार अत्यधिक बढ़ गए हैं और दिन प्रति दिन बढ़ते ही जा रहे हैं।[1]

अमेरिका का राष्ट्रपति और इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री :

इङ्गलैण्ड और अमेरिका के संविधान में जमीन-आसमान का अन्तर है। यदि इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री और अमेरिका के राष्ट्रपति के अधिकारों व शक्तियों में

1 It is said that "The emergence of the United States as a world power, with the President as its chief spokesman, the changing character of the American society calling for executive leadership and expert administration instead of legislative direction, the growth in the functions of the government and the fact that he represents the people and is expected to look after their welfare, have contributed to this growth (*i. e.*, growth in the powers of President)."

अन्तर हो तो कोई आश्चर्य की बात नहीं है। दोनों में निम्नलिखित असमानताएँ पाई जाती हैं :—

(१) इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री मन्त्रिमण्डल का नेता होता है। वह लोकसभा का सदस्य होता है और अपने कार्यों के लिए पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी है। इङ्गलैण्ड में शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को नहीं माना गया है, परन्तु अमेरिका में उस सिद्धान्त को माना गया है। राष्ट्रपति न तो व्यवस्थापिका के किसी सदन का सदस्य होता है और न वह उसके प्रति उत्तरदायी है। वह जनता द्वारा निर्वाचित किया जाता है न कि किसी दल का नेता होने के नाते राष्ट्रपति बनाया जाता है।

(२) प्रधान मन्त्री का कार्य-काल निश्चित नहीं है। वैसे तो पार्लियामेण्ट की अवधि ५ साल की है लेकिन वह पहले भी भंग हो सकती है और यदि भंग न भी हो तो मन्त्रिमण्डल पहले खत्म हो सकता है। राष्ट्रपति का कार्य-काल ४ साल है। वह उससे पहले नहीं हटाया जा सकता और चार साल के बाद दुबारा भी चुना जा सकता है।

(३) ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री की पार्लियामेण्ट के प्रति बहुत जिम्मेदारी है और उस की स्थिति अत्यन्त नाजुक है। उसे जेब में ही त्यागपत्र रक्खे रहना पड़ता है। अमेरिका के राष्ट्रपति का इस प्रकार का कोई उत्तरदायित्व नहीं है अतः वह अपने क्षेत्र में अधिक गैर-जिम्मेदार है।

(४) विधि-निर्माण में प्रधान मन्त्री का बहुत हाथ है। वास्तव में देखा जाय तो मन्त्रिमण्डल ही इङ्गलैण्ड में व्यवस्थापिका का कार्य करता है और वही कार्यपालिका का परन्तु राष्ट्रपति का अमेरिका में इतना हाथ नहीं है। इस क्षेत्र में उसकी शक्तियाँ बहुत सीमित हैं। राष्ट्रपति अपनी ओर से विधि-निर्माण में कोई कदम नहीं उठाता परन्तु प्रधान मन्त्री तो सब कुछ करता है। प्रत्येक विधेयक पार्लियामेण्ट में जाने से पूर्व प्रधान मन्त्री के घर जाता है। कहने का तात्पर्य यह है कि पहले सब मन्त्री इकट्ठे बैठ कर उस विधेयक पर मशविरा करते हैं, उसकी रिपोर्ट तैयार करते हैं और तब वह पार्लियामेण्ट में पेश होता है। प्रधान मन्त्री और उसके साथियों की यह भी जिम्मेदारी होती है कि वे उसे पास करायें। अमेरिका के राष्ट्रपति के ऐसे कोई कार्य नहीं हैं।

(५) बजट वगैरह के बनाने में भी राष्ट्रपति का कोई ऐसा हाथ नहीं है जैसा कि इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री का है। प्रधान मन्त्री चान्सलर ऑफ दी एक्सचेकर के द्वारा आय-व्यय सम्बन्धी सारा कार्य अपने हाथ में रखता है। राष्ट्रपति को इस क्षेत्र में विशेष अधिकार नहीं है।

(६) शासन-कार्य में राष्ट्रपति की जिम्मेदारियाँ अधिक हैं और इसका कारण

यह है कि वह राष्ट्र का सर्वोच्च अधिकारी है और "वह संसार में वास्तव में एक बड़ा शासक है" (ऑग)। संकटकालीन अवस्था में उसकी जिम्मेदारियाँ अत्यधिक बढ़ जाती हैं। मन्त्रिमण्डल तो बदल भी जाएँ (और विषम परिस्थिति होने पर यदि वे अयोग्य सिद्ध हुए और पार्लियामेण्ट ने अविश्वास का प्रस्ताव पास कर दिया तो वे अवश्य बदल जायेंगे) परन्तु राष्ट्रपति की शक्ति और भी अधिक बढ़ जायगी। परन्तु इतनी बात अवश्य है कि शान्ति के समय तो प्रधान मन्त्री की ही शक्ति अधिक होती है और रैम्जे म्योर के अनुसार तो उसकी इतनी शक्ति होती है जितनी अमेरिका के राष्ट्रपति की भी नहीं होती।[1]

(७) अमेरिका के राष्ट्रपति को शासन के समस्त उच्चाधिकारियों को नियुक्त करने का अधिकार है। इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री को ऐसा अधिकार नहीं है और उसे मन्त्रिमण्डल के सदस्यों को चुनने में भी बहुत-सी बातें सोचनी पड़ती हैं।

आधुनिक काल में अमेरिका के राष्ट्रपति और इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री दोनों का ही कार्य-क्षेत्र बहुत बढ़ गया है। अपने-अपने क्षेत्र में अपने-अपने विधान की सीमाओं व व्यवहारों की पद्धति में बँधे हुए दोनों ही अत्यधिक शक्ति रखते हैं। उनकी अलग-अलग परिस्थितियाँ हैं, अलग-अलग संविधान के ढाँचे हैं, अलग-अलग प्रणालियाँ हैं। एक राज्य एकात्मक है तो दूसरा संघात्मक है; एक में राजा है तो दूसरे में प्रेसीडेण्ट। यदि दोनों में हम विभिन्नताएँ पाएँ तो कोई विस्मय की बात नहीं।[2]

राष्ट्रपति तथा कॉंग्रेस :

अमेरिका का राष्ट्रपति एक मामले में तो इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री का मुकाबिला नहीं कर सकता—इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री पार्लियामेण्ट का स्वामी है परन्तु अमेरिका के राष्ट्रपति का कॉंग्रेस के ऊपर कोई जोर नहीं है। प्रधान मन्त्री पार्लियामेण्ट को धमकी भी दे सकता है परन्तु राष्ट्रपति अमेरिका में ऐसा नहीं कर सकता। पौक (Pock) और रूज़वेल्ट (Roosevelt) भी इस बात को मान गये कि वे कॉंग्रेस से अपनी नीति का जबरदस्ती अनुमोदन नहीं करवा सकते, चाहे भले ही कॉंग्रेस में उनके दल का बहुमत था। राष्ट्रपति कॉंग्रेस को भंग भी नहीं करा सकता और सिवाय सङ्कटकालीन परिस्थितियों के सामान्य अवस्थाओं में राष्ट्रपति का न

1 Ramsay Muir : How Britain is Governed.

2 "The development of the Presidency has taken place in an almost unpredictable manner; it has occurred despite the legal limitation and restriction upon the powers of the President, as set in the constitution. No such restraints hamper the British Prime-minister in his work. He is the centre of the political life of Great Britain in a way that American President was never designed to be and is the leader of parliament in a way unknown to the American system."

तो काँग्रेस पर कोई प्रभाव रहता है और न वह उसके कार्य-क्षेत्र में कोई हस्तक्षेप करता है। विधि-निर्माण का कार्य काँग्रेस का है, और राष्ट्रपति उसमें हस्तक्षेप नहीं कर सकता।

परन्तु यह कहना कि राष्ट्रपति का विधि-निर्माण में कोई हाथ नहीं है, सरासर भूल है। यदि हम ध्यानपूर्वक देखें तो ज्ञात हो जायेगा कि राष्ट्रपति व्यावहारिक रूप से इस मामले में बहुत हाथ रखता है। इसीलिये तो यह कहना कि राष्ट्रपति का विधि-निर्माण में कोई हाथ नहीं है "सिद्धान्त को बतलाना है, व्यवहार को नहीं"।[1] इस बात को हम ऊपर बतला चुके हैं कि राष्ट्रपति किस प्रकार काँग्रेस को अपने आदेश भेजता है, किस प्रकार वह निषेधात्मक अधिकार का प्रयोग करता है और किस प्रकार वह कभी-कभी स्वयं ऐसे आदेशों को प्रचलित करता है जो किसी कानून के अन्तर्गत नहीं आते हैं परन्तु उनके पालन करवाने के लिए आवश्यक होते हैं। यद्यपि उसको इस क्षेत्र में इतना अधिकार प्राप्त नहीं है जितना इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री को है परन्तु फिर भी वह विधि-निर्माण में अत्यन्त महत्वपूर्ण हाथ रखता है।

राष्ट्रपति काँग्रेस को देश की समस्त बातों से सूचित करता है और तत्सम्बन्धी सलाह देता है। काँग्रेस भी उसके परामर्श से ही कार्य करती है। यद्यपि अमेरिका में शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त माना गया है परन्तु वह अक्षरशः लागू नहीं किया गया है। दोनों शासन के विभागों का कार्य-क्षेत्र अलग-अलग है परन्तु दोनों एक दूसरे के सहयोग से कार्य करते हैं। समय-समय पर राष्ट्रपति काँग्रेस को सन्देश भेजता है (आजकल तो ये सन्देश बहुत संख्या में भेजे जाते हैं) और काँग्रेस उन पर विचार करती है। प्रसिद्ध "मुनरो सिद्धान्त" (Munro Doctrine) भी सन्देश के रूप में उत्पन्न हुआ था। आधुनिक काल में यह स्पष्ट नजर आता है कि जैसे-जैसे राजनैतिक व आर्थिक क्षेत्र की समस्याएँ बढ़ती जा रही हैं वैसे-वैसे राष्ट्रपति का प्रभुत्व भी बढ़ता जा रहा है। काँग्रेस भी समय की विकटता से भली-भाँति परिचित है और वह प्रायः राष्ट्रपति के साथ संघर्ष में नहीं आती है। इसीलिए तो 'सीनेट की उदारता' (senatorial courtesy) आज एक बहुत आम बात हो गई है। सीनेट राष्ट्रपति की बात को स्वीकार कर अपनी उदारता का परिचय देती है।

उपसंहार :

राष्ट्रपति का पद, जैसा कि अमेरिका में है, वास्तव में एक अनूठी स्थिति रखता है और वह अमेरिका के सांस्थिक जीवन का सच्चा प्रतिनिधित्व ग्रहण करता है। कोई भी व्यक्ति, जो अमेरिका के संविधान का अध्ययन करता है, इस बात को नहीं

1 To say that the President has no hand in legislation is "to talk philosophy not fact".

भूल सकता कि विधान के निर्माताओं ने राष्ट्रपति के पद को बनाने में अपनी बुद्धि का ही परिचय नहीं दिया है बल्कि अमेरिका के चरित्र, उसकी संस्थाओं और उसकी परम्पराओं की झलक का भी आभास दे दिया है। कितने विस्मय और रोचकता की बात है कि राष्ट्रपति काँग्रेस को हुक्म दे सकता है, उससे बहस कर सकता है, उसकी आरज़ू व मिन्नत भी कर सकता है, उसे मजबूर भी कर सकता है; परन्तु है उससे बिल्कुल अलग। एक अजीब बात यह है कि उसका काँग्रेस में कोई स्थान नहीं है, वह काँग्रेस में अपनी पार्टी का नेता भी नहीं है और यदि उसे अपने दल का काँग्रेस में सहयोग लेना है तो वह उस दल को अपनी ओर खींचेगा, दल उसकी ओर उसे अपना नेता समझ कर नहीं भागेगा।[1] इसीलिए तो यह कहा जाता है कि राष्ट्रपति के पद का महत्व व उसकी शक्ति व्यक्ति विशेष के समय में परिस्थितियों के वशीभूत व व्यक्ति विशेष के व्यक्तित्व के आधार पर बदलती रही है।[2]

ऐसा भी समय आया है जब काँग्रेस ने राष्ट्रपतियों की हर मामले में हाँ में हाँ मिलाई है जैसा कि जेक्सन, लिङ्कन, विल्सन व रूज़वेल्ट के समय में हुआ ; और ऐसा भी हुआ है कि काँग्रेस ने विधि-निर्माण किया है और राष्ट्रपति ने चुप्पी साध ली है जैसा कि सन् १८३६ से १८६१ तक तथा १८६५ से १८८९ तक हुआ। कहने का तात्पर्य यह है कि शक्ति को हथियाना और उसका प्रयोग करना दोनों बातें भिन्न हैं और इसी में व्यक्ति की स्वयं की शक्ति का भी परिचय मिल जाता है।

आधुनिक युग में अमेरिका में शक्तिशाली राष्ट्रपतियों की अधिक भरमार रही और इसका एकमात्र कारण यही है कि वर्तमान युग में अमेरिका में पूँजीवादी जनतंत्र ने वही समस्याएँ उत्पन्न कर दी हैं जो उसने पश्चिमी योरुप में खड़ी कर दी हैं। आधुनिक समय में यह भी नजर आ रहा है कि एक ही व्यक्ति के दुबारा चुने जाने की सम्भावना भी कम रहती है। इसका कारण यह प्रतीत होता है कि प्रथम तो उनकी एक बार के कार्य-काल में ही सारी शक्ति क्षीण हो जाती है और दूसरे उस अवधि में उसे तमाम राजनैतिक बुराइयों का केन्द्र बनना पड़ता है, आलोचनाओं का शिकार बनना पड़ता है, और विपक्षी दल के द्वारा की गई बदनामी की बौछारें

---

1 H. J. Laski : op. cit., p 24.

2 The presidency has been one thing at one time, another at another, varying with the man who occupied the office and with the circumstances that surrounded him.
(*Woodrow Wilson : Constitutional Government in the United States, p. 57*)
"The office of the President is as elastic as a rubber glove contracting or expanding in accordance with the size of the hand that fills it. If he wishes, of course, he can keep within the narrow limitations of constitutional definition; but if his inclination lies in other directions, he can make it one of the most powerful positions in the world." (*Virginia Cowles: How America is Governed, p. 36*)

सहनी पड़ती हैं। परन्तु अमेरिका अपने में से योग्यतम व्यक्ति ही छाँटता है और यह पक्षपात की बात नहीं है कि अमेरिका-निवासी इन मामलों में बुद्धि और न्याय का परिचय देते हैं।

आज के युग में अमेरिका की शक्ति प्रमुख शक्तियों में गिनी जाती है। अमेरिका का रौब आज सम्पूर्ण विश्व मानता है, उसको सब इज्जत की नजर से देखते हैं। ऐसे राष्ट्र का राष्ट्रपति कितनी बड़ी हस्ती होगी, इसको हम स्वयं विचार सकते हैं। आज राष्ट्रपति का पद केवल एक पद ही नहीं रहा है वरन् एक संस्था बन गया है।[1] "आज विश्व में किसी पद की इतनी जिम्मेदारी नहीं है जितनी राष्ट्रपति के पद की। इस पद को प्राप्त करने वाले को उन सब का विश्वासपात्र बन कर रहना पड़ता है जिन्होंने उसे चुना है। शक्ति वास्तव में एक खतरनाक वस्तु है और इसका दुरुपयोग करने की भी मानव को बड़ी लोलुपता होती है और खतरे का विश्वास के साथ सामना करने पर ही मनुष्य उस शक्ति की कीमत चुका सकता है जो उसे प्राप्त ।'[2]

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Explain the process of Presidential election in the U.S.A. (*Agra, 1948*)
2. Describe the position of the President of the U. S. A. in theory and in practice. Compare his responsibilities with those of the Prime Minister of England as an executive head. (*Cal., 1935, 1939, 1944; Punjab, 1938, 1940; Patna, 1938, 1939; Agra, 1938, 1939, 1942*)
3. "The American President is a plebiscitary executive with limited powers and large potentialities." Discuss. (*Punjab, 1947; Agra, 1950*)
4. Discuss the relation between the President and the Congress. How can the President influence legislation ? (*Punjab, 1940, 1943*)
5. "To say that the American President does not make laws is to talk philosophy not fact." Elucidate.
6. "American Presidency is a unique institution. The Presidency is what the President makes of it." (*Amin Chand*) Discuss.
7. "This great office, the greatest in the world to which any man can rise by his merits." (*Munro*)

1 Patterson : American Government, p. 245.
2 H. J. Laski : op. cit., pp. 276-277.

Describe the powers, functions, and duties of the American President and clearly bring out the unique character of this great office.

(*Delhi, 1951, 1954; Punjab Supplementary, 1955*)

8. 'No office in the world carries with it greater responsibilities than the Presidency of the United States.........Great power alone makes great leadership possible, it provides unique powers and responsibilities." (*Laski*)

   Discuss the position and powers of the American President in the light of the statement.

(*Delhi, 1953, 1954*)

9. Laski remarked that 'the President of the United States is both more or less than a king; he is also both more or less than a Prime Minister.' Examine the position and powers of the American President and compare him with the British Prime Minister and the British monarch. (*Agra, 1953*)

पांचवाँ परिच्छेद

केबिनेट और उसका शासन-विधान में स्थान

केबिनेट तथा उसके सदस्यों के चुनाव का सैद्धान्तिक आधार :

संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान के अनुसार अमेरिका में संघ सरकार का सर्वोच्च अधिकारी राष्ट्रपति है। संविधान में केबिनेट के लिए कोई व्यवस्था नहीं है। इसी कारण अमेरिका की कार्यपालिका शक्ति 'एक' (Single) में ही निहित कही जाती है। परन्तु केबिनेट की उत्पत्ति भी प्रारम्भ में ही बहुत दिन पहले हो गई थी। इसका सांविधानिक आधार भी है और वह यह है, जैसा कि संविधान की एक धारा में लिखा हुआ है, कि राष्ट्रपति प्रशासन के विभिन्न भागों के मुख्य अधिकारियों से अपने-अपने विभाग सम्बन्धी मामलों में परामर्श करे।[1] इस धारा के अनुसार सन् १७९१ में ही यह प्रथा शुरू हो गई कि राष्ट्रपति विभिन्न विभागों के प्रमुख अधिकारियों से परामर्श लेने के लिए कॉन्फ्रेन्स करने लगा। सबसे पहले प्रेसीडेण्ट वाशिङ्गटन ने शासन के चार विभागों के अध्यक्षों (कोषाध्यक्ष, युद्ध-सचिव, पोस्टमास्टर जनरल तथा एटोर्नी जनरल) से केवल लिखित परामर्श ही नहीं माँगा वरन् उनसे मौखिक रूप में भी समय-समय पर परामर्श किया। इस प्रकार शासन-विभाग के अध्यक्षों से परामर्श करने की प्रथा चल गई और केबिनेट प्रणाली का जन्म हुआ। अतः अमेरिका की कैबिनेट प्रणाली का वास्तविक आधार व्यवहार तथा पद्धति ही है, संविधान नहीं है। आजकल अमेरिका की केबिनेट में समस्त विभागों के अध्यक्ष सम्मिलित हैं। वे सब राष्ट्रपति के द्वारा सीनेट की स्वीकृति से नियुक्त किए जाते हैं और सीनेट प्रायः स्वीकृति दे ही देती है। नया राष्ट्रपति शपथ लेने के बाद ही अपनी केबिनेट के सदस्यों के नाम घोषित कर देता है और वे लोग तब तक उस पद पर काम करते हैं जब तक राष्ट्रपति अपने पद पर रहता है। राष्ट्रपति चाहे जब उन्हें पदच्युत भी कर सकता है। अपनी केबिनेट के सदस्यों को चुनने में राष्ट्रपति को इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता है। यद्यपि वह इस सम्बन्ध में अपने दल का ख्याल रखता है और यथासम्भव अपने दल के व्यक्तियों को चुनता है, परन्तु फिर भी यदि वह चाहे तो अन्य व्यक्तियों को भी चुन सकता है। उसके लिए यह आवश्यक नहीं कि वह अपने दल के प्रमुख नेताओं को ही चुने, बल्कि वह ऐसे लोगों को भी चुन सकता है जो उसके अधिक समीप रहे हैं, या जो अपनी

1 Constitution of United States of America, Article II, Section 2.

विद्वता के लिए प्रसिद्ध हैं, या जिन्होंने काफी समय तक सार्वजनिक जीवन में कार्य किया है। वह ऐसे व्यक्तियों को भी चुन सकता है जो किसी दल के सदस्य नहीं हैं बल्कि उसके मित्र हैं और जिन्होंने चुनाव में उसकी काफी सहायता की है तथा जिनके ऊपर वह भरोसा कर सकता है। परन्तु उसे यह ध्यान अवश्य रखना पड़ता है कि जो लोग उसने चुने हैं वे विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के हैं और जिनमें लोगों का विश्वास है तथा जो अपने-अपने क्षेत्रों की समस्याओं को समझते हैं व जिनका अपने-अपने क्षेत्र में काफी प्रभाव है। चुने हुए व्यक्ति राष्ट्रपति के प्रति अपने कार्यों के लिये उत्तरदायी होते हैं। वह चाहे जब उन्हें पृथक भी कर सकता है, वैसे ऐसा बहुत कम हुआ है।

यह बात स्पष्ट है कि केबिनेट का कोई सदस्य राष्ट्रपति से विमुख नहीं हो सकता और यदि वह ऐसा करता है तो उसके लिए सिवाय त्यागपत्र देने के दूसरा कोई रास्ता नहीं रह जाता है। इसका यह अर्थ नहीं कि केबिनेट के सदस्यों व राष्ट्रपति के बीच कोई बहस या मतभेद हो ही न और वे लोग हमेशा राष्ट्रपति की हाँ में हाँ मिलाते रहें। केबिनेट के सदस्य अपनी बैठक में खूब बहस कर सकते हैं परन्तु जब राष्ट्रपति ने कोई बात निश्चयात्मक रूप से कह दी तब सब को उसे स्वीकार करना ही होगा। कम से कम सार्वजनिक मामलों में तो कोई विरोधात्मक आवाज सुनी ही नहीं जा सकती। आन्तरिक मतभेद भले ही हो परन्तु बाहर से तो केबिनेट को हमेशा यही दिखाना पड़ता है कि वह एक है और उसमें कोई मत-भेद नहीं है।[1] केबिनेट के किसी सदस्य के त्यागपत्र का राष्ट्रपति की स्थिति पर कोई असर नहीं पड़ता है और यह सर्वविदित है कि प्रत्येक राष्ट्रपति के कार्य-काल में कोई न कोई सदस्य अवश्य ही त्यागपत्र देंगे। इङ्गलैण्ड में या फ्रान्स में जब कोई केबिनेट का सदस्य त्यागपत्र देता है तो प्रधान मन्त्री का सिर चक्कर खा जाता है। (सन् १८५१ में पामर्स्टन को पदच्युत करके तत्कालीन प्रधान मन्त्री लॉर्ड जॉन रसैल अधिक दिनों तक प्रधान मन्त्री नहीं रहे) लेकिन अमेरिका में राष्ट्रपति को कभी कोई ऐसी परेशानी नहीं होती, क्योंकि वह जानता है कि कोई भी केबिनेट का सदस्य, जिसे वह पदच्युत करता है, इतना शक्तिशाली नहीं होता कि वह राष्ट्रपति की स्थिति को खतरे में डाल दे।[२] अमेरिका की केबिनेट तो राष्ट्रपति की

1 Munro : The Government of the United States, p. 201.

२ यहाँ एक बात ध्यान देने की यह है कि अमेरिका में केबिनेट के सदस्य कांग्रेस के किसी सदन के सदस्य नहीं होते और न उनकी केबिनेट से बाहर कोई आवाज ही है। परन्तु इङ्गलैण्ड में वे पार्लियामेण्ट के सदस्य होते हैं और उनके पीछे साथी भी होते हैं। केबिनेट से अलग होने पर वे प्रधान मन्त्री की नीति की आलोचना करके उसके हर कार्य में रोड़ा अटका सकते हैं।

एक प्रकार की दासी है। यदि राष्ट्रपति चाहे तो उसकी शक्ति को बढ़ा सकता है और चाहे तो घटा सकता है। कहने का तात्पर्य यह है कि अमेरिका की केबिनेट की स्थिति राष्ट्रपति के ऊपर है, वह चाहे जैसी उसे बना सकता है।[1]

वास्तव में जिन लोगों को यूरोप की केबिनेटों का पूर्ण ज्ञान है उनके लिए अमेरिका की केबिनेट एक विचित्र-सी वस्तु है, हालाँकि केबिनेट का जो अर्थ समझा जाता है और जिस प्रकार वह यूरोप की प्रतिनिधि-सरकारों में काम कर रही है, उस दृष्टि से अमेरिका की केबिनेट वास्तविक केबिनेट के समीप मुश्किल से ही पहुँच पाती है।[2]

मन्त्रिमण्डलीय उत्तरदायित्व (Ministerial Responsibility) :

केबिनेट राष्ट्रपति को परामर्श देने वाली एक निकाय (body) है। यह ऐसे सदस्यों की निकाय नहीं है जिनके साथ उसे काम करना पड़ता हो और जिनके ऊपर ही वह निर्भर रहता हो। वैसे तो प्रति सप्ताह केबिनेट की बैठकें होती हैं और उन विषयों पर विचार-विनिमय होता है जिन्हें राष्ट्रपति प्रस्तुत करता है, लेकिन इस प्रकार की बैठकों में जो निर्णय होते हैं उनमें कोई सामूहिक जिम्मेदारी का प्रश्न नहीं होता और न बड़े-बड़े विषय केबिनेट की बैठकों में रक्खे ही जाते हैं। फ्रेंकलिन रूजवेल्ट ने अपने कोर्ट प्लान (Court Plan) को बिना केबिनेट के सदस्यों की जानकारी के ही तैयार कर दिया था। यदि केबिनेट के सब सदस्य एक हो जायें तो भी वे राष्ट्रपति की इच्छा का विरोध नहीं कर सकते हैं। किसी भी विभाग में, यदि राष्ट्रपति चाहे तो, अपनी ही चला सकता है। उसकी ही बात सब को मान्य होती है और वही अन्तिम निर्णायक होता है। केबिनेट का यदि कोई भी सदस्य राष्ट्रपति के विरुद्ध जाता है तो वह अपने को ही खतरे में डालता है। ब्राइन (Bryan) जैसा प्रसिद्ध राजनैतिक दल का नेता भी अपने को त्याग-पत्र देने के बाद न सम्हाल सका।[1] अमेरिका की केबिनेट के सदस्य वास्तव में प्रेसीडेण्ट की कृपा के पात्र हैं।

1 "The American Cabinet is one of the least successful of American Federal institutions. It can never be more than the President makes it, and the President is rarely likely to make it an outstanding body." (*Laski : American Presidency*).

2 Laski ; The President and his Cabinet, p. 79.

3 They make collectively an impact upon Congress or the nation as he does; their relation is one of departmental interestitiality. No doubt, some of them are in a position to influence the decisions, they are never in a position to control them. (*Laski : The American Presidency, p. 82*) "The cabinet minister in the United States embarks upon a gamble when he accepts office, and it is not until he has left out his President that he can hope for awareness of what he may advise." —*Laski.*
'A cabinet officer must assume that he will live his term in the Presidential shadow." (*Ogg : Governments of Europe, p. 342*)

इङ्गलैण्ड या फ्रान्स में प्रधान मन्त्री को केबिनेट के सदस्य चुनते समय जिन बातों को ध्यान में रखना पड़ता है उन बातों को अमेरिका में राष्ट्रपति को नहीं रखना होता। इङ्गलैण्ड या फ्रान्स में तो केबिनेट की एकता का ध्यान रक्खा जाता है परन्तु अमेरिका में इसका कोई महत्व नहीं है। वहाँ राष्ट्रपति को कोई टीम नहीं बनानी है जैसी इङ्गलैण्ड में या फ्रान्स में प्रधान मन्त्री को बनानी होती है। अमेरिका में यह आवश्यक नहीं है कि राष्ट्रपति केबिनेट के सदस्य चुनने के समय सब से भली-भाँति परिचित ही हो या केबिनेट के सदस्य एक दूसरे से भली-भाँति परिचित हों। यह बात तो इङ्गलैण्ड में ही है जहाँ सब मन्त्री एक गुट के होते हैं, सब एक दूसरे से भली-भाँति परिचित होते हैं और सब से पार्लियामेण्ट खूब परिचित होती है।

केबिनेट के सदस्यों की नियुक्ति :

शासन के विभिन्न विभागों के अध्यक्षों को चुनने में राष्ट्रपति के ऊपर कोई सांविधानिक प्रतिबन्ध नहीं है। वह चाहे जिसे चुन सकता है, परन्तु यदि वह सीनेट या प्रतिनिधि-आगार के किसी सदस्य को चुनता है तो उस सदस्य को काँग्रेस की सदस्यता से त्यागपत्र दे देना पड़ता है। केबिनेट के सदस्यों की नियुक्ति की स्वीकृति सीनेट देती है। यहाँ पर यह बात कह देना उपयुक्त होगा कि राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किए गए केबिनेट के सदस्यों की सीनेट स्वीकृति दे ही देती है। ये लोग राष्ट्रपति के ही सहायक व उसके ही व्यक्ति होते हैं और सीनेट द्वारा उन्हें अस्वीकृत करना शासन के लिए जबर्दस्त रोड़ा बन जावेगा।[1] यह एक प्रथा सी बन गई है यद्यपि आधुनिक काल में ही एक बार इस प्रथा के विरुद्ध भी कार्य हो गया है। यद्यपि यह स्वीकृति केवल नाममात्र को ही है, तथापि राष्ट्रपति को अपनी केबिनेट के सदस्यों को चुनने में कुछ विचार-शक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। पहली बात तो यह है कि वह अपने दल में से ही केबिनेट के सदस्य चुनता है (प्रेसीडेण्ट वाशिङ्गटन ने जरूर दूसरे दलों से सदस्य चुने थे और उसने जैफर्सन (Jefferson) को राज्य-सचिव (Secretary of State) तथा अलेक्जेण्डर हैमिल्टन (Alexander Hamilton) को कोषाध्यक्ष (Secretary of Treasury) बनाया था। दोनों ही अपने-अपने पद के लिए अत्यन्त योग्य व्यक्ति थे। लेकिन उन दोनों के राजनैतिक सिद्धान्त बिल्कुल विपरीत थे और कभी-कभी वाशिङ्गटन को बड़ी परेशानी का मुकाबिला करना पड़ता था।) अतः यह एक प्रथा सी बन गई कि केबिनेट के सदस्य राष्ट्रपति के दल के व्यक्ति हों

[1] "These men are so obviously the personal assistants of the President that it would not merely be a deplorably ungraceful action of the Senate to refuse a man of his own choice in such matter, but it would lead, if the matter concerned sufficient members, to a break-bown of government."

(*Finer : Theory & Practice of Modern Government, Vol. II, p. 1044*)

जिससे उनमें आपस में मतभेद न हो। आजकल यही प्रथा प्रचलित है; कभी-कभी भले ही कोई नियुक्ति इसके विरुद्ध हो जाय।

(2) जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, केबिनेट के सदस्यों को चुनते समय राष्ट्रपति को भौगोलिक परिस्थितियों का भी विचार रखना पड़ता है। सामान्य परिस्थितियों में कोई भी राष्ट्रपति अपनी केबिनेट में एक ही क्षेत्र के सदस्य नहीं रक्खेगा; हालाँकि इस विषय में कोई कड़ा नियम नहीं है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि केबिनेट जनता की प्रतिनिधि नहीं है और यदि राष्ट्रपति विभिन्न भौगोलिक क्षेत्रों के प्रतिनिधि उसमें रखता है तो वह इसलिये नहीं कि विभिन्न क्षेत्रों के प्रतिनिधि उसमें हों बल्कि इसलिए रखता है कि वह जानता है कि राजनैतिक दृष्टिकोण से यह उसी के हित में रहेगा।[1]

(3) इसके अलावा राष्ट्रपति अपने कुछ मित्रों को भी केबिनेट में लाने की कोशिश करता है। पिछले ५० वर्षों में प्रत्येक केबिनेट में कम से कम एक सदस्य अवश्य ऐसा रहा है जिसकी राष्ट्रपति से गहरी मित्रता रही है। केबिनेट के सदस्यों में दो बातों का होना आवश्यक है—एक तो वे राष्ट्रपति के विश्वासपात्र हों और ठीक परामर्श दें, तथा दूसरे उस विभाग के, जो उन्हें सौंपा जाय, विशेषज्ञ हों। परन्तु आधुनिक काल में यह देखा गया है कि केबिनेट के सदस्यों का परामर्श देने का काम अधिक महत्व नहीं रखता है। बहुत से ऐसे व्यक्ति, जो केबिनेट के सदस्य नहीं हैं, राष्ट्रपति पर इस क्षेत्र में, अर्थात् परामर्श देने के क्षेत्र में, केबिनेट के सदस्यों की अपेक्षा अधिक प्रभाव रखते हैं।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट है कि संयुक्त राज्य अमेरिका की केबिनेट एक ऐसी निकाय है जिसमें विभिन्न विचारों के व्यक्ति सदस्य हो सकते हैं और उनकी नियुक्ति के सम्बन्ध में मित्रता, दलबन्दी, भौगोलिक स्थिति आदि कई बातें काम करती हैं।

केबिनेट के सदस्यों की संख्या :

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है केबिनेट के सदस्य काँग्रेस के किसी सदन में नहीं बैठ सकते। वे तो राष्ट्रपति के प्राणी (creatures) हैं और मन्त्री न कहलाकर सेक्रेटरी कहलाते हैं। वे लोग विभिन्न विभागों के अध्यक्ष होते हैं। उनकी संख्या इस समय दस है। वे इस प्रकार हैं :

(१) सेक्रेटरी ऑफ स्टेट (Secretary of State)
(२) कोष का सेक्रेटरी (Secretary of Treasury)
(३) युद्ध का सचिव (Secretary of War)
(४) नौ-सेना सचिव (Secretary of Navy)

1 Munro : The Government of the United States, p. 206.

(५) पोस्ट मास्टर जनरल (Post-Master General)
(६) एटोर्नी जनरल (Attorney General)
(७) श्रम सचिव (Secretary of Labour)
(८) वाणिज्य सचिव (Secretary of Commerce)
(९) कृषि सचिव (Secretary of Agriculture)
(१०) आन्तरिक सचिव (Secretary of the Interior)

ये विभाग कांग्रेस के अधिनियमों द्वारा बनाए गये हैं, वे प्रारम्भ से ही नहीं हैं। युद्ध-काल में या अन्य प्रकार के संकट-काल में राष्ट्रपति की शक्ति इन पर बहुत हो जाती है। शान्ति के समय ये विभाग अपना-अपना कार्य करते रहते हैं और राष्ट्रपति की उन पर सामान्य निगरानी रहती है। सचिव लोग अर्थात् सेक्रेटरी राष्ट्रपति के निर्देशानुसार ही कार्य करते हैं। प्रत्येक सेक्रेटरी यानी विभागीय अध्यक्ष को १५००० डॉलर वार्षिक वेतन मिलता है।

केबिनेट के कार्य :

केबिनेट के कार्यों का निरीक्षण करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि इसका कार्य प्रधानतया परामर्श देने का है और वह परामर्श उसके सदस्य अपने विभिन्न विभागीय मामलों में व्यक्तिगत रूप में देते हैं। यह कार्य केबिनेट के सदस्य परम्परा के आधार पर करते हैं। साधारणतः राष्ट्रपति प्रत्येक शुक्रवार के दिन जब काँग्रेस की बैठक हो रही होती है केबिनेट के सब सदस्यों को बुलाता है। केबिनेट के सदस्य उन बातों पर विचार करते हैं जो राष्ट्रपति प्रस्तुत करता है। इन बैठकों का कोई सांविधानिक आधार नहीं है। ये बैठकें अनौपचारिक रूप में होती हैं। सदस्यगण एक मेज के चारों ओर बैठ जाते हैं। कभी-कभी राष्ट्रपति पहले से ही अपना निर्णय बना लेता है और सदस्यों को केवल उसकी सूचना मात्र दे देता है, या उसकी विस्तृत योजना उन की सहायता से तैयार करता है। केबिनेट के किसी सदस्य को यह नहीं समझना होता है कि उसके विभाग सम्बन्धी विषय पर उससे परामर्श लिया ही जायगा और यदि लिया भी गया तो वह मान ही लिया जायगा। कभी-कभी तो उसे यही सोच लेना पड़ता है कि उसको वहाँ पर उसी प्रकार सूचित किया जाता है जिस प्रकार किसी साधारण व्यक्ति को तत्सम्बन्धी कोई सूचना दी जाये।

केबिनेट की बैठकें :

साप्ताहिक बैठकों के अलावा केबिनेट की विशेष बैठकें भी बुलाई जा सकती हैं। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, यह आवश्यक नहीं है कि केबिनेट के किसी सदस्य का निर्णय स्वीकार ही कर लिया जाय। राष्ट्रपति सर्वेसर्वा है। उसकी चलती है। यदि केबिनेट के सदस्य मिलकर उसका विरोध भी करें तो कुछ फल नहीं निकल

सकता। (एक बार राष्ट्रपति अब्राहम लिन्कन (Abraham Lincoln) ने अपनी केबिनेट के सात सदस्यों के समक्ष एक प्रस्ताव रक्खा जिसका सब ने विरोध किया। इस पर लिन्कन ने शान्तिपूर्वक कहा कि 'The vote is 7 noes and 1 aye. Therefore the aye has it.' इससे यही निष्कर्ष निकलता है कि राष्ट्रपति अपनी केबिनेट के सदस्यों की व्यक्तिगत तथा सामूहिक बात व राय को चाहे जब ठुकरा सकता है।) केबिनेट की बैठकें राष्ट्रपति की हाँ में हाँ मिलाने को होती हैं। हाँ, योग्य राष्ट्रपति उचित सलाह को न ठुकरावेंगे। परन्तु यह बन्धन नैतिक है राजनैतिक नहीं है।

केबिनेट की बैठकों की कार्यवाही गुप्त रखी जाती है और वह राष्ट्रपति की आज्ञा के बिना प्रकाशित नहीं की जा सकती। राष्ट्रपति उसे अपना निर्णय बताकर प्रकाशित करता है न कि केबिनेट का निर्णय बताकर। केबिनेट की बैठकों का प्रमुख उद्देश्य विभिन्न विभागों के पारस्परिक सहयोग को बढ़ाना है और अगर उनमें आपस में कोई मतभेद हो तो उसे दूर करना है।[1] योग्य और अनुभवी व्यक्तियों की केबिनेट निस्सन्देह दुर्बल राष्ट्रपति को बहुत मदद पहुँचा सकती है; परन्तु शक्तिशाली राष्ट्रपति के लिए भी उसकी सहायता अवांछनीय नहीं है।

केबिनेट के सदस्यों की सामूहिक कार्यवाही के अतिरिक्त उनकी व्यक्तिगत कार्यवाही अत्यन्त महत्वपूर्ण है। वैसे तो प्रत्येक विभाग का अध्यक्ष अपने कार्य के लिए हर समय राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी है परन्तु व्यावहारिकत: उसे अपने विभाग में काफी स्वतन्त्रता है। प्रत्येक विभाग में एक प्रधान और अनेक उप-प्रधान होते हैं। प्रत्येक विभाग कई ब्यूरो (Bureaus) में विभाजित होता है और ब्यूरो कमिश्नरों के अधीन होते हैं। इन ब्यूरो तथा उनके छोटे-छोटे विभागों पर अत्यधिक काम होता है। प्रत्येक विभाग के अध्यक्ष का यह काम है कि वह अपने विभाग के समस्त उपविभागों के कार्य का एकीकरण करके उसको राष्ट्रपति के समक्ष प्रस्तुत करे।

केबिनेट के सदस्य तथा कांग्रेस :

संविधान के अनुसार केबिनेट के सदस्य काँग्रेस के सदस्य नहीं रह सकते। यह बात परम्परा में भी आ गई है और इसने उस समय से अत्यधिक जोर पकड़ लिया है जब से कि जैफर्सन को हैमिल्टन का डर लग गया। अब केबिनेट का कोई भी सदस्य काँग्रेस के किसी भी सदन का सदस्य नहीं हो सकता (शायद वह वहाँ रहने पर राष्ट्रपति के विरुद्ध लोगों को भड़कावे)। वे काँग्रेस को सूचना या कोई खबर, जो काँग्रेस माँगे, भेज सकते हैं। यदि काँग्रेस की कोई समिति उनको किसी सम्बन्ध में

1 "They provide a clearing house which helps the administration to put unity to its programme."
(*Munro : The Government of the United States, p. 209*)

बुलावे तो वे उसके समक्ष अपने द्वारा प्रस्तावित नीति के सम्बन्ध में बोल सकते हैं; परन्तु उसका किसी भी अंश में वह कार्य नहीं है जो इङ्गलैण्ड के केबिनेट के सदस्यों का है। वे न तो कांग्रेस की बैठकों में किसी प्रश्न पर बोल सकते हैं, न किसी बात का पक्ष ले सकते हैं, और न सरकार की नीति का समर्थन ही कर सकते हैं।

इङ्गलैण्ड और अमेरिका की केबिनेटों की तुलना :

ब्रिटिश और अमेरिकन केबिनेटों की तुलना करते हुए हम उनमें निम्नलिखित भेद पाते हैं:—

(१) ब्रिटिश केबिनेट संसदीय (Parliamentary) है अर्थात् ब्रिटेन में केबिनेट के सदस्य पार्लियामेण्ट में से चुने जाते हैं और वे पार्लियामेण्ट के प्रति उत्तरदायी होते हैं; परन्तु अमेरिका की केबिनेट अध्यक्षात्मक है अर्थात् अमेरिका का राष्ट्रपति उसके सदस्यों को चुनता है और वे उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं। संसदीय उत्तरदायित्व को अमेरिका की केबिनेट ने नहीं अपनाया है। इसका प्रमुख कारण यही है कि अमेरिका में केबिनेट के सदस्य कांग्रेस में से नहीं चुने जाते और न कांग्रेस का उनके ऊपर किसी प्रकार का दायित्व थोपा जाता है।

(२) इङ्गलैण्ड में अगर कोई केबिनेट का सदस्य बनाया जाता है और यदि वह संसद के किसी भवन का सदस्य नहीं होता है तो उसे केबिनेट का सदस्य बनने के ६ महीने के अन्दर किसी भी निर्वाचन-क्षेत्र से पार्लियामेण्ट की सदस्यता प्राप्त कर लेनी होती है और प्रधान मन्त्री इस प्रकार की स्थिति बनाता है कि वह सदस्य किसी निर्वाचन-क्षेत्र से चुन लिया जाय। इसके विपरीत अमेरिका में केबिनेट के सदस्य कांग्रेस के किसी सदन के सदस्य नहीं होते और यदि होते भी हैं तो केबिनेट में जाने पर उन्हें उसकी सदस्यता से त्यागपत्र देना पड़ता है।

(३) अमेरिका की केबिनेट राष्ट्रपति को केवल एक परामर्श देने वाली निकाय है। उसके साथ मिलकर उसे कार्य करने की आवश्यकता नहीं।[1] इसलिए अमेरिका की कार्यपालिका 'एक' (single) कही जाती है। कार्यपालिका का सर्वेसर्वा एक है और वह है राष्ट्रपति। केबिनेट के सदस्य उसके बराबर के नहीं हैं। परन्तु इङ्गलैण्ड में केबिनेट के सदस्य प्रधान मन्त्री के बराबर के हैं और प्रधान मन्त्री बराबर वालों में प्रथम (First among equals) है हालाँकि वस्तुत: प्रधान मन्त्री के केबिनेट के सदस्यों से कहीं ज्यादा अधिकार हैं। अत: अमेरिका की केबिनेट के सदस्यों के पास उतनी शक्ति व अधिकार नहीं हैं जितने इङ्गलैण्ड की केबिनेट के सदस्यों के पास हैं।[2]

1 It is a body of advisers to the President and 'not a council of colleagues with whom he has to work and upon whose approval he depends.'

2 The constitution authorises the President to "require the opinion, in writing of the principal officer in each of the executive departments, upon any subject relating to the duties of their respective departments." (*The Constitution of the U. S. A., Article II, Section 2, para 1*)

(४) इङ्गलैण्ड की केबिनेट के सदस्यों को चुनने में प्रधान मन्त्री को बहुत बातों का ध्यान रखना पड़ता है, परन्तु अमेरिका में राष्ट्रपति को ऐसा कुछ नहीं करना पड़ता।

(५) राष्ट्रपति का केबिनेट के सदस्यों के प्रति जो सम्बन्ध है वह इङ्गलैण्ड में नहीं है। राष्ट्रपति चाहे जब केबिनेट के किसी भी सदस्य को पदच्युत कर सकता है। वह अपनी इच्छानुसार किसी से परामर्श लिए बिना ही चाहे जो कार्य कर सकता है, केबिनेट के बाहर के व्यक्ति का परामर्श मान सकता है और केबिनेट के सदस्य की राय को ठुकरा सकता है। अब्राहम लिङ्कन तो बहुधा ऐसा ही करता था। उसने "दास उद्धार नियम" (Emancipation Bill) पर अपनी केबिनेट के किसी भी सदस्य से परामर्श नहीं किया था। एण्ड्र्यू जैक्सन ने दो वर्ष तक केबिनेट की बैठक ही नहीं बुलाई परन्तु इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री ऐसा नहीं कर सकता है। वह अपने सहयोगी वर्ग के परामर्श को ठुकरा नहीं सकता है और न उन्हें नाराज करने की सोचता है। हालाँकि प्रधान मन्त्री से मतभेद होने पर मन्त्री को स्तीफा ही देना पड़ता है परन्तु किसी मन्त्री का इस प्रकार नाराज हो जाना प्रधान मन्त्री की स्थिति को बड़ा नाजुक बना देता है, और (जैसा कि हम पहले बता चुके हैं, लॉर्ड जॉन रसैल पामर्स्टन को सन् १८५१ में पदच्युत करके अधिक दिनों तक प्रधान मन्त्री नहीं रह पाये)। ब्रिटेन में प्रधान मन्त्री कभी अपनी केबिनेट का पूर्ण स्वामी नहीं होता है, परन्तु अमेरिका में राष्ट्रपति हमेशा अपनी केबिनेट का स्वामी होता है।

(६) इङ्गलैण्ड में केबिनेट के सदस्यों की व्यक्तिगत जिम्मेदारी भी है और सामूहिक जिम्मेदारी भी। पार्लियामेण्ट में सब को एक दूसरे का समर्थन करना पड़ता है और यदि कहीं अविश्वास का प्रस्ताव पास हो गया या केबिनेट की किसी बिल पर हार हो गई तो या तो पार्लियामेण्ट भंग की जाती है या केबिनेट के सदस्य त्यागपत्र दे देते हैं। अमेरिका में इस प्रकार की कोई सामूहिक जिम्मेदारी नहीं है। केबिनेट के सदस्य व्यक्तिगत रूप में राष्ट्रपति के प्रति उत्तरदायी हैं। वही उनका भाग्य-विधाता है। उसकी इच्छा के विरुद्ध उन्हें कोई केबिनेट से अलग नहीं कर सकता।

(७) इङ्गलैण्ड में केबिनेट के सदस्य प्रधान मन्त्री द्वारा चुने जाते हैं परन्तु उनकी नियुक्ति राजा करता है। लेकिन राजा तो नाममात्र का मालिक है, वास्तविक शक्ति केबिनेट के हाथ में होती है। राजा उसके हाथ की कठपुतली है। अमेरिका की केबिनेट उसी के इशारे पर चलती है।

(८) इङ्गलैण्ड की केबिनेट के सदस्य एक ही राजनैतिक दल के व्यक्ति होते हैं और अपने दल के प्रमुख नेता होते हैं। अमेरिका में केबिनेट के सदस्यों का एक ही दल का होना आवश्यक नहीं और न यही आवश्यक है कि वे दल के नेताओं में से

ही हों। राजनैतिक क्षेत्र में इङ्गलैण्ड में केबिनेट के सदस्य अत्यन्त महत्त्वपूर्ण हाथ रखते हैं। अमेरिका में यह जरूरी नहीं है।

(९) अमेरिका में केबिनेट के सदस्यों की शक्ति इस बात पर नहीं लगी रहती कि वे कांग्रेस की नब्ज को पकड़े रहें और उसका रुख देखते रहें। उन्हें अपने काम से काम है और राष्ट्रपति के आदेशों पर चलना है। इङ्गलैण्ड में केबिनेट के सदस्यों को हर समय पार्लियामेण्ट की नब्ज पकड़े रहना पड़ता है। दलबन्दी का चक्कर हर समय उनको चक्कर खिलाता रहता है। उन्हें प्रत्येक समय यह ध्यान रखना पड़ता है कि कहीं पार्लियामेण्ट के भीतर अथवा बाहर उनके दल की शक्ति क्षीण न हो जाय। अतः वे विभिन्न प्रकार की कार्यवाहियों में फँसे रहते हैं; परन्तु अमेरिका में यह बात नहीं है।

(१०) इङ्गलैण्ड और फ्रान्स में केबिनेट की सदस्यता प्राप्त कर लेना पार्लियामेण्ट के प्रत्येक सदस्य का उद्देश्य रहता है। उसे प्राप्त करना उनके लिए राजनैतिक जीवन की सबसे ऊँची सीढ़ी प्राप्त कर लेना है; लेकिन अमेरिका में यह बात नहीं है। केबिनेट के बहुत से सदस्य उससे हट कर राजनीति से बिल्कुल पृथक हो जाते हैं, यह भी अक्सर देखने में आता है, और कम से कम गृह-युद्ध के बाद तो ऐसा ही हुआ है कि लोग कांग्रेस की सदस्यता को इतना पसन्द नहीं करते हैं जितनी केबिनेट की सदस्यता को और वह इस ख्याल से नहीं कि वे राजनैतिक जीवन में बने रहें बल्कि इस ख्याल से कि वे उसके बाद राजनीति से पृथक हो जायें।[1]

उपसंहार :

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट है कि अमेरिका की केबिनेट राष्ट्रपति के इशारे पर चलती है और काम करती है।[2] उसमें चाहे कितने ही योग्य व्यक्ति क्यों न हों वे अपनी योग्यता से राष्ट्रपति को नहीं दबा सकते हैं। राष्ट्रपति की जिम्मेदारियाँ बहुत हैं। उसके पास जितने काम हैं उतने एक व्यक्ति के लिए जरूरत से ज्यादा हैं। इतने पर भी कोई भी व्यक्ति उसकी जिम्मेदारियों को न तो बाँट सकता है और न उससे उन्हें ले सकता है। लेकिन राष्ट्रपति इतना होने पर भी तानाशाह नहीं है। उसकी स्थिति और उसके कांग्रेस के प्रति सम्बन्ध उसकी केबिनेट को केवल एक शक्तिशाली निकाय बनाते हैं, उसके अस्तित्व को समाप्त नहीं करते हैं।

1 "Unlike England Cabinet office, this is to say, is an interlude in a career. There is no technique of direct preparation for it, there is no certainty that it will continue because it has begun, there is no assurance that the successful performance of his functions will lead to a renewal of office in a subsequent administration."

(*Laski : The President and his Cabinet, p. 95*)

2 The President (of U. S. A.) is always a driver or a brake ,he is never a spare wheel." —*Brogan.*

UNIVERSITY QUESTIONS

1. 'The American Cabinet differs in fundamental respects from the British Cabinet. It is a body of advisers to the President and not a Council of colleagues with whom he has to work and upon whose approval he depends." Discuss and illustrate.

(*Punjab, 1947; Agra, 1937*)

छठा परिच्छेद

संयुक्त राज्य अमेरिका की काँग्रेस

विधायनी निकायों के भिन्न-भिन्न देशों में भिन्न-भिन्न नाम हैं। इङ्गलैण्ड और फ्रान्स में व्यवस्थापिका पार्लियामेण्ट कहलाती है, जर्मनी में रीश्ताग (Reichstag) कहलाती है और अमेरिका में काँग्रेस कहलाती है। संयुक्त राज्य अमेरिका में संविधान ने विधायिनी शक्ति काँग्रेस को दे दी है। प्रो० ब्रोगन (Brogan) अमेरिका की काँग्रेस को "ब्रिटिश पार्लियामेण्ट की सब से महत्वपूर्ण, सब से प्राचीन, और सब से रोचक सन्तान" कहते हैं। काँग्रेस के दो सदन हैं—(१) सीनेट (Senate) और (२) प्रतिनिधि-आगार (House of Representatives), और दोनों का संयुक्त नाम काँग्रेस है। काँग्रेस का आधुनिक काल में कार्य बहुत बढ़ गया है और अब वह केवल एक विधायिनी शक्ति ही नहीं रही है। सन् १९४५ में Reorganisation Committee द्वारा जो काँग्रेस का पुनर्सङ्गठन किया गया और जिसमें राजनीति के बड़े-बड़े धुरन्धरों ने योग दिया उससे ज्ञात होता है कि काँग्रेस का काम अत्यन्त कठिन एवं जटिल है।[1] कुछ ही वर्ष पहले यह प्रतीत हुआ था कि काँग्रेस में प्रति वर्ष विभिन्न विषयों से सम्बन्ध रखने वाले करीब २५,००० विधेयक प्रवेश करते हैं।

वैधानिक कार्यवाही के अलावा काँग्रेस का और भी कार्य है। उसे यह भी देखना पड़ता है कि किस प्रकार के विधेयक बनाए जायँ और क्या वे पास होने पर जनता द्वारा मान्य होते हैं अथवा नहीं? उसे यह भी देखना पड़ता है कि कानून बनने के बाद उसका कार्यपालिका द्वारा ठीक पालन कराया जाता है अथवा नहीं। काँग्रेस वास्तव में एक ऐसा यन्त्र है जिसके द्वारा जनता राष्ट्र की नीति को निर्धारित करती है, उसका पालन करवाती है, और उसका निरीक्षण करती है।[2] काँग्रेस के पास न्यायपालिका सम्बन्धी कुछ अधिकार भी हैं। यह किसी भी मनुष्य को, जो काँग्रेस द्वारा किसी विषय की जाँच करते समय सूचना देने से इन्कार कर दे, दण्ड दे सकती है। यह किसी भी सिविल अफसर के ऊपर अभियोग चला सकती है और उसे पदच्युत कर

1 "The Re-organisation of Congress found that "the business of Congress has become huge, complicated, and technical. Thousand of bills are dumped into the legislative hopper each session, of which several hundred receive attention."

2 Munro : The Government of the United States, p. 347.

सकती है। यह युद्ध-घोषणा कर सकती है। काँग्रेस का कार्य-भार बहुत अधिक है और यही कारण है कि सन् १६४५ में राजनीति-विशारदों ने अपने द्वारा प्रकाशित रिपोर्ट —Reorganisation of Congress[1]—में इस बात को स्पष्ट स्वीकार किया कि इसका काम बहुत अधिक है।[2]

प्रश्न यह पैदा होता है कि काँग्रेस ने अपना कार्य-भार हल्का करने की क्यों नहीं सोची? शायद इसका एक कारण तो यह भी हो सकता है कि वह आलस्य और परम्परा की दासी है। दूसरा, जो कुछ मनोवैज्ञानिक है, यह भी हो सकता है कि शायद वह अपनी शक्ति को राज्यों की व्यवस्थापिकाओं को न देना चाहती हो। अस्तु, कारण कुछ भी हो परन्तु इतना अवश्य कहा जा सकता है कि यदि काँग्रेस कुशलतापूर्वक कार्य करना चाहती है तो उसे अपनी शक्ति का लोभ न करके उसे बाँट देना चाहिये। उदाहरण के लिए, व्यक्तिगत विधेयक (Private Bills) काँग्रेस का बहुत समय नष्ट करते हैं। इनके लिए काँग्रेस यह कर सकती है कि इनके सम्बन्ध में 'अल्प-सामयिक आदेश' (Provisional Orders) जारी कर दे, जैसा कि ब्रिटिश लोकसभा करती है। इन आदेशों से यह अभिप्राय है कि कभी-कभी यह आवश्यक हो जाता है कि किसी नियम को शीघ्र लागू करवाया जाय परन्तु समय इतना नहीं होता है कि वह संसद में पेश किया जाय और फिर वहाँ बहस वगैरह के लिए इन्तजार देखा जाय। यदि ऐसा किया जाता है तो शासन के काम में गड़बड़ होने की सम्भावना रहती है। अतः कोई केबिनेट का सदस्य या और कोई व्यक्ति, जिसे उस प्रकार का अधिकार प्राप्त है, यह आदेश दे देता है कि फिलहाल इस पर पालन किया जाय और पक्की मंजूरी संसद में पास होने पर मिल जायेगी। यह आदेश कुछ ही समय के लिए होता है और तब तक संसद को उस पर विचार कर लेना होता है। अगर वह विचार नहीं करती है तो वह स्वतः कानून बन जाता है।

काँग्रेस के सामान्य अधिकार :

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, काँग्रेस के कार्य बहुत हैं परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि उसकी शक्ति पर कोई प्रतिबन्ध नहीं है। यदि वास्तव में देखा जाय तो अमेरिका के शासन के तीनों अंगों में किसी के पास भी असीमित अधिकार नहीं हैं और तीनों को मिलाकर भी असीमित शक्ति नहीं है। काँग्रेस के अधिकारों को विधान ने ही नियन्त्रित कर रक्खा है। संविधान ने काँग्रेस को शक्ति दी है, काँग्रेस ने उससे ली नहीं है। इसका अर्थ यह है कि काँग्रेस के पास स्वयं की कोई शक्ति नहीं है बल्कि

१ रिपोर्ट का पूरा नाम यह था : The Re-organisation of Congress and the National Planning Association Report Strengthening the Congress.

2 Dimock & Dimock : The American Government in Action, p. 341.

जिस प्रकार संघ सरकार में दूसरों को शक्ति दी गई है उसी प्रकार काँग्रेस को भी दी गई है। काँग्रेस की वास्तविक शक्ति विधायिनी है। इस शक्ति की कहाँ तक सीमा है यह भी विधान में स्पष्ट कर दिया गया है। विधान ने इसे 'जन-साधारण की रक्षा तथा हित' के सम्बन्ध में जो विधायिनी शक्ति दी है उस पर भी सीमा है। काँग्रेस के कार्यों व अधिकारों का विवेचन करते हुए मुनरो ने यह निष्कर्ष निकाला है कि सांविधानिक दृष्टि से काँग्रेस के सम्बन्ध में तीन बातें स्पष्ट नजर आती हैं। प्रथम, काँग्रेस के पास विधान द्वारा दी गई शक्ति के अलावा और कोई विधायिनी शक्ति नहीं है। दूसरे, अपने सीमित क्षेत्र में इसका अधिकार सर्वोच्च है और उसका कोई विरोध नहीं कर सकता। तीसरे, काँग्रेस द्वारा बनाए हुए कानून को कोई भी राज्य अस्वीकार नहीं कर सकता और न कोई राज्य संघ सरकार से पृथक ही हो सकता है। एक बात ध्यान देने की यह है कि काँग्रेस की शक्ति की विधान में सीमा होने का यह अर्थ नहीं है कि इसकी शक्ति बढ़ नहीं सकती। जैसा कि मार्शल ने कहा है, "काँग्रेस के अधिकार संशोधनों द्वारा बढ़ाये भी जा सकते हैं और इसका उदाहरण सोलहवाँ संशोधन है" जिसके अनुसार काँग्रेस की शक्ति में कुछ वृद्धि हुई। कई अन्य अवसरों पर भी ऐसा हुआ है।

काँग्रेस के कार्यों का वर्गीकरण :

काँग्रेस के कार्यों का वर्गीकरण कई प्रकार से किया जा सकता है। एक प्रकार का वर्गीकरण तो उन कार्यों को बाह्य दृष्टि से देख कर किया जा सकता है अर्थात् वे कार्य निश्चयात्मक रूप (by express terms) से काँग्रेस को दे दिये गए हैं या निहित रूप में (by implication)। दूसरे प्रकार के वर्गीकरण का आधार यह है कि उनको देखा जाय कि वे निर्देशात्मक हैं अथवा अनिर्देशात्मक (permissive or mandatory)। तीसरे प्रकार के वर्गीकरण में यह कह सकते हैं कि काँग्रेस के कार्यों की समीक्षा करके यह निश्चित किया जाय कि कौन-कौन से कार्य सिर्फ वह कर सकती है और कौन-कौन से सम्मिलित रूप में राज्यों की व्यवस्थापिका के साथ कर सकती है (exclusive and concurrent powers), और चौथे प्रकार का वर्गीकरण जो सबसे अधिक महत्त्वपूर्ण है, कार्यों की प्रकृति (nature) के आधार पर किया जा सकता है।

(अ) निश्चित तथा निहित अधिकार (Express and Implied Powers)—क्या काँग्रेस को वे सब अधिकार जो विधान ने निश्चयात्मक रूप में दिए हैं, पूर्णतया प्राप्त हैं? उदाहरण के लिए, काँग्रेस को विधान ने ऋण लेने का अधिकार दे दिया है। क्या इस निश्चित अधिकार के साथ काँग्रेस को निहित अधिकार भी प्राप्त है कि वह ऋण लेने वाले अधिकार का प्रयोग करने के लिये बौंड वगैरह दे सके या बैंक स्थापित कर सके? इस सम्बन्ध में सर्वोच्च न्यायालय ने

जो निर्णय दिया उसके सम्बन्ध में लोगों में काफी मतभेद रहा। प्रधान न्यायाधीश मार्शल ने कहा था कि "संविधान को काँग्रेस को यह अधिकार दे देना चाहिये कि वह विधान द्वारा प्रदान किये गये अपने अधिकारों के प्रयोग के लिए अन्य आवश्यक सुविधाएँ जिनसे उन अधिकारों का प्रयोग जनता के लिए लाभदायक हो, स्वतः ही प्राप्त कर ले।"[1] अतः यह बात स्पष्ट हो जाती है कि संघ सरकार के अधिक महत्वशाली 'निहित' (implied) अधिकार हैं।

(ब) निर्देशात्मक तथा अनिर्देशात्मक अधिकार (Mandatory and Permissive Powers)—संविधान ने काँग्रेस को जो अधिकार दिए हैं वे अधिकतर अनिर्देशात्मक हैं अर्थात् काँग्रेस चाहे तो उन्हें प्रयोग में ला सकती है और चाहे तो नहीं। उदाहरण के लिए, काँग्रेस को ऋण लेने का अधिकार है[2] परन्तु यह आवश्यक नहीं है कि वह ऋण ले ही। परन्तु कुछ अधिकार वास्तव में निर्देशात्मक हैं। उदाहरणार्थ, संविधान में यह लिखित है कि सर्वोच्च न्यायालय को अपील सम्बन्धी अधिकार हैं और काँग्रेस के नियमों के अन्तर्गत आने पर ही किसी मामले की अपील हो सकती है। यदि काँग्रेस इस अधिकार का प्रयोग करे तो न्याय का मामला झमेले में पड़ जाय क्योंकि हर जगह काँग्रेस अपनी टाँग अड़ाती रहे, परन्तु यह काँग्रेस की इच्छा पर है कि वह अपनी विचार-शक्ति का प्रयोग करके कोई ऐसा काम न करे जिससे शासन के अन्य विभागों की व्यवस्था में गड़बड़ हो।

(स) एकीय तथा सम्मिलित अधिकार (Exclusive and Concurrent Powers)—एकीय अधिकार वह अधिकार है जिसका प्रयोग सिर्फ काँग्रेस ही कर सकती है, जैसे संविधान द्वारा काँग्रेस को ही युद्ध-घोषणा करने व ऋण लेने का अधिकार दिया गया है। राज्य की व्यवस्थापिकाएँ इस अधिकार से वंचित हैं। सम्मिलित अधिकार वे अधिकार हैं जिनका काँग्रेस तथा राज्यों की व्यवस्थापिकाएँ दोनों ही प्रयोग कर सकती हैं। ये दोनों प्रकार के अधिकार निश्चयात्मक रूप में लिख दिये गए हैं। उदाहरण के लिये, अठारहवें संशोधन को काँग्रेस तथा राज्य की व्यवस्थापिकाओं दोनों को स्वीकार करना पड़ा और उसमें दोनों को सम्मिलित अधिकार दिए गए। संविधान में करीब १८ धाराएँ ऐसी हैं जिनसे काँग्रेस के ही एकीय अधिकारों की गणना की गई है परन्तु अधिकारों की संख्या तो अठारह से अधिक है क्योंकि किसी-किसी धारा में एक से अधिक अधिकार भी लिखे हुए हैं।

काँग्रेस सांविधानिक दृष्टि से तो विधायिनी शक्ति है, परन्तु व्यावहारिक दृष्टि से प्रशासकीय शक्ति भी है। यह कानून बनाती ही नहीं है बल्कि उनका निरीक्षण भी करती है और देखती है कि उन पर अमल कराया जाता है या नहीं। काँग्रेस

1 McCulloch vs. Maryland, 4 Wheaton, 316.

2 Constitution of the United States of America, Article I, Section 8.

के अधिकार व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका तीनों से सम्बन्ध रखते हैं। वस्तुतः अमेरिका में राष्ट्रपति राष्ट्रीय सरकार की धुरी नहीं है वरन् कांग्रेस है।[1] आधुनिक काल में कांग्रेस की शक्ति बढ़ती ही जा रही है।

कांग्रेस एक द्वि-सभात्मक निकाय है (A Bicameral Body) :

ऊपर बताया जा चुका है कि अमेरिका की कांग्रेस के दो सदन हैं—(१) सीनेट (Senate), और (२) प्रतिनिधि-आगार (House of Representatives)। सीनेट और प्रतिनिधि-आधार दोनों ही सदनों की रचना प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली के आधार पर होती है। द्वि-सभात्मक व्यवस्थापिका बनाने का प्रथम प्रमुख कारण यह है कि अमेरिका निवासियों का सम्बन्ध अँग्रेजी व्यवस्था से था और दूसरे अपनी प्राचीन औपनिवेशिक व्यवस्था को ध्यान में रखते हुए भी आवश्यक समझा गया कि दो सदन ही बनाए जाएँ। तीसरे, दो भवनों के बनाने में यह सुविधा समझी गई कि छोटे और बड़े दोनों प्रकार के राज्यों का इस प्रकार एक दूसरे के प्रति असन्तोष मिट जायगा क्योंकि कम से कम एक सदन में तो उनके बराबर २ प्रतिनिधि होंगे (सीनेट में प्रत्येक राज्य के दो-दो प्रतिनिधि हैं)। प्रतिनिधि-आगार में तो जनसंख्या के आधार पर ही प्रत्येक राज्य के प्रतिनिधियों की संख्या निश्चित की जाती है।

एक-सभात्मक व्यवस्थापिका से राज्यों के असन्तोष को कभी दूर नहीं किया जा सकता था। एक बात और भी है—संविधान के निर्माताओं को यह भली-भाँति मालूम था कि निम्न सदन के आवेगों को रोकने के लिए एक दूसरे सदन की भी आवश्यकता है, और इस कारण उन्होंने सीनेट की व्यवस्था की जिसका काम निम्न सदन की बौखलाती हुई गर्मी को ठण्डा करना था। द्वि-सभात्मक व्यवस्थापिका वास्तव में एक अत्यन्त उपयोगी व्यवस्था है, हालाँकि इसके विरोधियों का कहना है कि यह व्यवस्था काम को बढ़ा देती है और उसमें कुशलता नहीं आने देती।[2] कुछ लोग वास्तव में यह समझते हैं कि द्वि-सभात्मक प्रणाली द्वारा जिम्मेदारी बाँटने की अपेक्षा एक-सभात्मक प्रणाली ही ठीक है जो अधिक जिम्मेदारी से कार्य करती है। परन्तु यदि सब बातों पर ध्यान दिया जाय तो यह निष्कर्ष निकलता है कि द्वि-सभात्मक प्रणाली ही अधिक उपयोगी है।[3] द्वि-सभात्मक प्रणाली ने राजनैतिक

---

1 Munro : op. cit., p. 362.

2 Indeed there is probably more truth to the contention that bicameralism divides responsibility and hence dilutes and even destroys it.
(*Dimock & Dimock : American Government in Action, p. 354*)

3 The Senate does not merely debate, it also conducts massive investigation. Granted the principle of Separation of Powers, it is of high importance that this function should be performed. This method is the only main guarantee against dishonesty or inefficient administration. The Cabinet ministers have neither collective responsibility nor continuity—this function realises the effective way by which quality of administration may be assessed." (*Laski: American Democracy, p. 89*)

व्यवस्था को शक्ति प्रदान की है और जनमत के ऊपर भी कोई प्रतिबन्ध नहीं लगाया है। जहाँ तक संयुक्त राज्य अमेरिका की सीनेट का सम्बन्ध है, कोई नहीं कह सकता कि इसे खत्म कर दिया जाय। प्रो० लिन्डसे रोजर (Lindsay Roger) के शब्दों में "सीनेट आधुनिक राजनैतिक व्यवस्था का एक अत्यन्त महत्वपूर्ण आविष्कार है।"

लॉर्ड ब्राइस का काँग्रेस के बारे में कथन है कि "यह कोई उतावली या फिसादी निकाय नहीं है जिसे बनाते समय संविधान के निर्माताओं को कोई भय प्रतीत हुआ हो। आवेगों के तूफान यहाँ बहुत कम आते हैं। अशान्ति के दृश्य तो बिल्कुल लुप्त हो चुके हैं······यह अब तो जनता की इच्छा के अनुकूल चलने के लिए इच्छुक ही नहीं वरन् जरूरत से ज्यादा उत्सुक है।[1]

सीनेट (Senate) :

सीनेट अमेरिका की काँग्रेस की दूसरी सभा है। इसमें राज्यों के प्रतिनिधि बैठते हैं। छोटे-बड़े प्रत्येक राज्य से दो-दो प्रतिनिधि आते हैं। समस्त राज्यों को इसमें समान प्रतिनिधित्व प्राप्त है। किसी राज्य का यह अधिकार छीना नहीं जा सकता। कोई भी सांविधानिक संशोधन इस अधिकार से किसी राज्य को वंचित नहीं कर सकता। संविधान के निर्माताओं का उद्देश्य सीनेट को संघ शासन के ढाँचे की रीढ़ की हड्डी बनाना था। उनका आशय था कि इसके द्वारा राज्यों को संघ सरकार के संचालन में प्रमुख हाथ मिल जायेगा, और इसी कारण उन्होंने सीनेट को अत्यधिक अधिकारों से सुशोभित किया; जैसे राष्ट्रपति द्वारा की हुई नियुक्तियों को स्वीकृति देना, संधि-प्रस्तावों की मन्जूरी देना आदि। प्रतिनिधि-आगार को ये अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

राज्य में सीनेट के सदस्यों के निर्वाचन की अप्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली द्वारा व्यवस्था की गई। उसके अनुसार यह तय किया गया कि राज्यों में उनकी व्यवस्थापिकाओं के सदस्य अनुभवी तथा विद्वान् लोगों को ही चुनें। इसका एकमात्र कारण यह था कि वैसे तो बड़े-बड़े वक्ता अपनी वक्तृता-शक्ति से लोगों पर जादू करके राज्यों की व्यवस्थापिकाओं में भले ही आ जायँ परन्तु वे व्यवस्थापिका के सदस्यों पर अपना प्रभाव नहीं डाल पायेंगे। अतः व्यवस्थापिका के सदस्यों द्वारा जो लोग चुने जायेंगे वे वास्तव में योग्य होंगे, कोरे भाषण देने वाले नहीं होंगे।

सीनेट व्यवस्था का एक यह भी उद्देश्य था कि वह दो तरफ प्रतिबन्ध रक्खे। प्रथम, यदि राष्ट्रपति तानाशाह बनने की कोशिश करे तो उसे रोके (राष्ट्रपति वास्तव में बिना सीनेट की अनुमति के बहुत काम नहीं कर सकता है) और यदि प्रतिनिधि-

1 Bryce : The American Government, p. 320.

आगार कोई उतावलेपन का कार्य कर डाले तो उस पर गम्भीर विचार करे और उसके उद्वेग को रोके।[1] दूसरे, सीनेट के सदस्यों को राज्यों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा निर्वाचित कराने की व्यवस्था द्वारा उन राज्यों की व्यवस्थापिकाओं को भी दृढ़ता प्रदान करे।

परन्तु इस व्यवस्था के कारण एक बुराई भी पैदा हो गई। कभी-कभी राज्यों की व्यवस्थापिकाओं में आपस में आन्तरिक मतभेद के कारण सीनेट के सदस्यों का निर्वाचन नहीं हुआ और सीनेट में कुछ सीटें खाली ही रह गईं। वोटों को खरीदने की बीमारी भी चल गई और इस प्रकार निष्पक्षता तथा ईमानदारी, जिसको स्थान मिलना चाहिए था, जाती रही। अतः लोगों का यह विचार हुआ कि सीनेट के सदस्य भी जनता द्वारा ही चुने जायँ। इसके लिये लोगों में जोश भी बढ़ा। इस जोश का एक कारण यह भी था कि वास्तव में व्यवस्थापिका के सदस्य खुले अधिवेशन में सीनेट के सदस्य नहीं चुनते थे बल्कि गुप्त रूप से गुटबन्दी के आधार पर तय कर लेते थे कि किसे भेजा जाय। उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध तक यह पुराना तरीका बहुत बदनाम हो गया[2] और लोग इस पक्ष मे हो गए कि प्रत्यक्ष निर्वाचन-पद्धति द्वारा ही सीनेट के सदस्य चुने जायँ।

इसी कारण काँग्रेस ने सन् १९१२ में एक संशोधन प्रस्तावित किया जिसका उद्देश्य सीनेट के सदस्यों को प्रत्यक्ष रूप से जनता द्वारा चुना जाना था। यह संशोधन सन् १९१३ में पास हुआ। इस संशोधन के कारण काँग्रेस में सीनेट की महत्ता अत्यधिक बढ़ गई क्योंकि इसके अनुसार सीनेट भी उसी प्रकार जनता की प्रतिनिधि बन गई जिस प्रकार प्रतिनिधि-आगार था।

सीनेट की अवधि तथा संगठन—यह बात ध्यान में रखनी चाहिए कि अमेरिका की कांग्रेस एक राष्ट्र की पार्लियामेण्ट नहीं है बल्कि कई राज्यों के संघ की प्रशासन-कर्त्री है। सीनेट का सदस्य ६ साल के लिए चुना जाता है जब कि प्रतिनिधि-आगार का सिर्फ दो साल के लिए ही चुना जाता है। सीनेट के समस्त सदस्यों की कार्यावधि एक साथ ही समाप्त नहीं हो जाती है, बल्कि कुल सदस्यों की संख्या के एक-तिहाई प्रति दूसरे वर्ष अवकाश ग्रहण करते जाते हैं और उनके स्थानों की नए निर्वाचित सदस्यों द्वारा पूर्ति कर दी जाती है। इस प्रकार सीनेट एक अर्ध-स्थायी निकाय है। सीनेट के सदस्यों की प्रतिनिधि-आगार के सदस्यों की अपेक्षा पुनर्निर्वाचन की अधिक गुंजाइश रहती है। ऐसे-ऐसे उदाहरण भी मौजूद हैं जब कि सीनेट में एक ही सदस्य ३० वर्ष तक लगातार रहा है।

1 Munro : The Senate & Its Organisation, p. 273.
2 George H. Haynes : The Election of Senators.

सीनेट की बैठकें राजधानी में अपने नियम के मुताबिक होती रहती हैं। राष्ट्रपति भी कभी-कभी इसकी विशेष बैठकें बुला सकता है चाहे भले ही उस समय प्रतिनिधि-आगार की बैठक न भी हो रही हो क्योंकि सीनेट को प्रतिनिधि-आगार से अधिक कार्य हैं और कुछ ऐसे है जिन्हें सीनेट तो कर सकती है परन्तु प्रतिनिधि-आगार नहीं।

अमेरिका की संघीय सीनेट एक शक्तिशाली राजनैतिक संस्था है—लॉर्ड ब्राइस के कथनानुसार अमेरिका की सीनेट संयुक्त राज्य की समस्त राजनैतिक संस्थाओं से अधिक शक्तिशाली है। इसने उन सब उद्देश्यों और आदर्शों की पूर्णरूपेण पूर्ति की है जो संविधान के निर्माताओं ने इसके निर्माण के समय इसके हेतु छोड़ दिए थे। "सीनेट ने शासन के बीच एक गम्भीरता का केन्द्र स्थापित करके संविधान के निर्माताओं द्वारा इसके बनाने के उद्देश्य की पूर्ति कर दी है। इसने एक ओर तो प्रतिनिधि-आगार के जनतन्त्र में सहज उतावलेपन को रोकने की कोशिश की है और दूसरी ओर राष्ट्रपति की राजतन्त्रीय भावनाओं को रोकने की कोशिश की है, और इस प्रकार इसने दोनों ओर प्रतिबन्ध लगाया है। दोनों के मध्य में आने की वजह से सीनेट दोनों ही की प्रतिद्वन्द्वी या विरोधी हो गई है। अब कांग्रेस बिना सीनेट के कुछ नहीं कर सकती है। इसका विरोध होने पर राष्ट्रपति भी कुछ नहीं कर सकता। ये सब सीनेट के नकारात्मक कार्य हैं परन्तु इसके सकारात्मक कार्य भी अनेक हैं और उनकी वजह से इसे काफी सफलता प्राप्त हुई है और इसने आदर पाया है।"[1]

प्रतिनिधि-आगार की अपेक्षा छोटा आकार होने के कारण सीनेट में दलबन्दी नहीं घुस पाई है। यह अपने छोटे आकार के कारण सर्वदा एक आदर्श, सच्ची, विचारशील तथा विवेकपूर्ण निकाय रही है, और है। स्थायी संस्था होने की वजह से भी इसमें अपने गौरव को उन्नत रखने का भाव हमेशा से रहा है और यह सर्वदा अपने महत्व को ऊँचा रखने का ही प्रयास करती रही है।

सीनेट में हमेशा जनता के सर्वोत्कृष्ट व्यक्ति ही प्रवेश पाते रहे हैं और प्रतिनिधि-आगार के प्रतिनिधियों का सर्वदा यह प्रयास रहा है कि उन्हें किसी प्रकार सीनेट में स्थान मिल जाय। सीनेट भी अपनी स्थिति को हमेशा सम्हाले रही है और अपनी इस इज्जत की जो उसके प्रति दूसरों की नजरों में है, हमेशा रक्षा करती रही है। सीनेट की बैठकों में हमेशा गम्भीरता तथा शान्ति नजर आती है। उनमें आवेश तथा जल्दबाजी बहुत कम नजर आती है। वहाँ सदस्यों को भाषण देने की पूर्ण स्वतन्त्रता है और कोई भी सदस्य चाहे जितनी देर तक बोल सकता है। इस कारण सीनेट का

1 Bryce : The American Commonwealth.

महत्व और भी अधिक है। सीनेट के सब सदस्य राष्ट्र की नीति से भली भाँति परिचित होते हैं और उस पर स्वतन्त्रतापूर्वक अपने विचार व्यक्त कर सकते हैं। "यदि सीनेट राष्ट्रपति के मनमानेपन को रोकती है तो वह शासन को भी ढंग पर लाती है, विधि-निर्माण भी उचित रूप से करती है और न्यायपालिका को भी उचित नमूना पेश करती है।" (अमीरचन्द)

सीनेट की शक्ति

संयुक्त राज्य अमेरिका की सीनेट आधुनिक जनतन्त्रीय राज्यों की द्वितीय सभाओं में सबसे अधिक शक्तिशाली कही गई है। संसार में जितने भी द्वितीय आगार हैं सब की आधुनिक युग में शक्ति कम हो गई है। एक समय था जब इङ्गलैण्ड में लॉर्डसभा को अत्यधिक शक्ति प्राप्त थी परन्तु सन् १९११ के संसदीय अधिनियम के पास होने के बाद उसकी शक्ति क्षीण हो गई। इसी प्रकार फ्रान्स की सीनेट की भी किसी समय डिप्टी चेम्बर (निम्न सदन) से कहीं अधिक शक्ति थी परन्तु अब वह शक्ति जाती रही है और उसकी छायामात्र ही शेष रह गई है। लेकिन अमेरिका में यह बात नहीं हो पाई है। चूँकि वहाँ सीनेट सदस्यों की कार्यपालिका शक्ति भी है इसलिए उसकी वैधानिक शक्ति बहुत है।[1] अमेरिका की सीनेट अपनी शक्ति की रक्षा ही नहीं कर सकी है बल्कि वास्तव में उसकी शक्ति प्रतिनिधि-आगार की शक्ति की अपेक्षा है भी बहुत अधिक।

सीनेट की कार्यपालिका शक्ति—सीनेट के पास व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका सम्बन्धी तीनों प्रकार की शक्तियाँ हैं। कार्यपालिका सम्बन्धी जो शक्ति सीनेट के पास है वह संसार में किसी भी द्वितीय सदन के पास नहीं है। यदि कनाडा, फ्रान्स तथा ब्रिटेन के द्वितीय सदन समाप्त कर दिए जाएँ तो शासन-व्यवस्था में कोई खास गड़बड़ नहीं होगी परन्तु यदि अमेरिका की सीनेट समाप्त कर दी जाय तो शासन का सब काम ठप हो जायगा। ऐसा इसलिए है कि सीनेट शासन-कार्य में बहुत हाथ बटाती है। यह राष्ट्रपति द्वारा की गई समस्त नियुक्तियों की मन्जूरी देती है और युद्ध-घोषणा एवं सन्धि करने के सम्बन्ध में राष्ट्रपति को पूरा सहयोग देती है। राष्ट्रपति शासन की महत्त्वपूर्ण धाराओं की प्रगति के बारे में सीनेट को बराबर सूचित करता है। बिना सीनेट की स्वीकृति के राष्ट्रीय नीति में कोई भी महत्त्वपूर्ण कदम नहीं उठाया जा सकता। राष्ट्रपति मनमानी बिल्कुल नहीं कर सकता है।[2] उदाहरण के लिए, प्रेसीडेण्ट विल्सन की इच्छा थी कि अमेरिका लीग

---

1 Munro : op. cit., p. 285.

2 "The central fact is that the Senate of the United States is the one constitutional expedient that provides the American public with the material upon which it can make an effective judgment on the presidential policy." (*Laski : American Democracy, p. 90*)

ऑफ नेशन्स (League of Nations) का सदस्य बन जाय परन्तु सीनेट की इच्छा न होने पर वह न बन सका।

सीनेट की विधायिनी शक्ति—सीनेट की विधायिनी शक्ति प्रतिनिधि-आगार के ही बराबर है। कोई भी विधेयक तब तक राष्ट्रपति के हस्ताक्षर के लिए नहीं जा सकता जब तक सीनेट उसे पास न कर दे। यद्यपि धन-विधेयक प्रतिनिधि-आगार में ही पहले प्रस्तुत किये जाते हैं परन्तु सीनेट उनमें संशोधन कर सकती है और उनमें परिवर्तन भी कर सकती है। यदि किसी विधेयक पर दोनों भवनों में कुछ मतभेद होता है तो दोनों की एक सम्मिलित समिति द्वारा वह दूर किया जाता है परन्तु उसमें भी सीनेट का ही मुख्य हाथ होता है। सीनेट चाहे तो राष्ट्रपति के सन्देशों को भी ठुकरा सकती है। इसीलिए तो लास्की ने इसे बहुत बड़ी विधायिनी-शक्ति बतलाया है। प्रो० लिन्डसे रोजर (Lindsay Roger) ने कहा है कि अमेरिका की सीनेट में राष्ट्र के सोलन (Solon) हैं जिन्हें भाषण की पूर्ण स्वतन्त्रता है और जनता पर जितना उनका प्रभाव है उतना प्रतिनिधि-आगार का नहीं है।"[1]

सीनेट की न्यायपालिका शक्ति—संविधान ने सीनेट को अभियोग चलाने की शक्ति प्रदान की है। सीनेट राष्ट्रपति, उप-राष्ट्रपति तथा अन्य सिविल अफसरों पर अभियोग चलाए जाने पर न्यायालय के रूप में बैठती है। ऐसे अवसरों पर सर्वोच्च न्यायालय का न्यायाधीश उसका सभापतित्व ग्रहण करता है और निर्णय दो-तिहाई वोटों से प्राप्त किया जाता है।

उपर्युक्त विवरण से स्पष्ट हो जाता है कि सीनेट वास्तव में एक अत्यन्त शक्तिशाली संस्था है। यह कहा जाता है कि "बहुत से ऐसे कार्य हैं जो राष्ट्रपति और सीनेट बिना प्रतिनिधि-आगार के कर सकते हैं, कुछ ऐसे भी हैं जो प्रतिनिधि-आगार तथा सीनेट बिना राष्ट्रपति के कर सकते हैं, परन्तु राष्ट्रपति और प्रतिनिधि-आगार मिल कर बिना सीनेट के बहुत कम कार्य कर सकते हैं।" इस कथन से सीनेट की शक्ति का पूरा पता लग जाता है। वास्तव में अमेरिका की सीनेट का मुकाबिला संसार का कोई द्वितीय भवन नहीं कर सकता। अपनी विवेकशीलता, स्थायित्व, चातुर्य तथा कार्यपालिका एवं विधायिनी शक्ति के कारण आज सीनेट अमेरिका की आँख का तारा बनी हुई है और संसार के द्वितीय भवनों की ईर्ष्या का कारण ही नहीं बनी है वरन् उनमें वैसा बनने की हसरत पैदा कर रही है।[2]

1 Dimock and Dimock : The American Government in Action, p. 253.

2 "Few legislative assemblies waste so much time; still fewer have made logrolling so perfect an art. It has no responsibility to the executive... It is a body which is eager to act in unity whenever appointments are in question, and yet it remains one of the outstanding successes of the American political system. It has the immense merit of being able to

Continued on next page

प्रतिनिधि-आगार (House of Representatives) :

"प्रतिनिधि-आगार लघु रूप में अमेरिकन राष्ट्र है। यह अमेरिकन जीवन की सुन्दर जड़ाऊ तस्वीर है जिसमें वहाँ के सामाजिक, राजनैतिक, धार्मिक, तथा स्वाभाविक विभिन्नताओं, चरित्र की दुर्बलताओं, प्रवेगों तथा मध्यमावस्थाओं का पूर्ण चित्रण है। इसके सदस्यों का विभिन्न राज्यों से जनसंख्या के आधार पर चुने जाने के कारण इसमें अमेरिका के जीवन की विभिन्नताओं का सम्मिश्रण है।

यह पूर्ण रूप में अमेरिकन प्रवृत्तियों को प्रदर्शित करती है। यह कभी-कभी वर्षों तक अपने स्पीकर की दासी बनी रहेगी और सीनेट व राष्ट्रपति की आदेशानुकारिणी भी बनी रहेगी, परन्तु यह यकायक उग्र रूप भी धारण कर सकती है। यह प्रस्तावों को सम्पूर्ण सदन की समिति की हैसियत में समाप्त भी कर सकती है, इसके सदस्य इतने आवेश में आ सकते हैं कि वे अपना-अपना स्थान छोड़कर सदन से चले जायँ, और यह ठुकराए हुए प्रस्तावों की तुरन्त मंज़ूरी भी दे सकती है। यह कभी तो सिविल सर्विस का विरोध कर सकती है और तुरन्त ही कोई रेवेन्यू बिल पास कर सकती है जिसके द्वारा सिविल सर्विस कमीशन की शक्ति को बढ़ा भी दिया जाय।"[1]

प्रतिनिधि-आगार के सदस्यों की संख्या ४३५ है। ये जनता के द्वारा प्रत्यक्ष रूप से चुने जाते हैं। निर्वाचन का आधार वयस्क मताधिकार है। प्रतिनिधि-आगार की सदस्यता के लिए खड़े होने वाले व्यक्ति की उम्र कम से कम २५ साल होनी चाहिए। वह सात साल से संयुक्त राज्य में रह रहा हो और उस जिले का निवासी हो जिससे वह खड़ा हुआ है। प्रतिनिधि-आगार का अध्यक्ष स्पीकर कहलाता है।

प्रतिनिधि-आगार में कार्य की पूर्ण व्यवस्था से लिए समितियाँ होती हैं जिनकी संख्या ६४ है। सन् १९१०–११ से पूर्व स्पीकर ही इन समितियों के सदस्यों को नियुक्त करता था परन्तु अब आगार ही नियुक्त करता है। समितियों के सदस्यों को वास्तव में राजनैतिक दल पहले से ही चुन लेते हैं, आगार में तो केवल औपचारिक कार्यवाही होती है। महत्त्वपूर्ण समितियों में तो केवल वही व्यक्ति रक्खे जाते हैं जिनको राजनैतिक क्षेत्र का अनुभव है।

In continuation to the last page

interest the ordinary citizen and it has the special virtue of being an object of ambition, which few are able to resist. It is perhaps the most vital check upon the despotism and ambition which the present could so easily develop. It sometimes contains members with a narrowly parochial outlook; as a legislative assembly it transcends the sectionalism which pervades every nook and cranny of the House of Representatives." (*Laski : American Democracy*)

1 Patterson : The American Government.

प्रतिनिधि-आगार की शक्ति भी काफी है। इसके पास भी व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकारों के अलावा कुछ कार्यपालिका तथा न्यायपालिका सम्बन्धी अधिकार हैं। परन्तु प्रतिनिधि-आगार में विचार-विनिमय अधिक नहीं हो पाता है और इसलिए उसके निर्णय अधिकांशतः विवेकपूर्ण नहीं होते हैं। अमेरिका में प्रतिनिधि-आगार को उतना सम्मान नहीं दिया जाता जितना सीनेट को दिया जाता है।[1] दूसरे देशों में लोग निम्न सभा के सदस्य बनने को इच्छुक रहते हैं परन्तु अमेरिका में उच्च सभा अर्थात् सीनेट की सदस्यता प्राप्त करने के इच्छुक होते हैं।

प्रतिनिधि-आगार तथा सीनेट :

प्रतिनिधि-आगार का जनमत संगठित करने में इतना अधिक महत्त्व नहीं है जितना सीनेट का है और लोगों का यह ख्याल हो गया है कि प्रतिनिधि-आगार में गम्भीर एवं शान्त विचारशीलता की अपेक्षा आवेश तथा उद्वेग अधिक स्थान पाते हैं। इसीलिए लोगों की उसके प्रति इतनी श्रद्धा नहीं है जितनी सीनेट के प्रति है। दूसरे, प्रतिनिधि-आगार का आकार इतना बड़ा है और राजनैतिक दलों की चालबाजियाँ वहाँ इतना काम करती रहती हैं कि उसका नियन्त्रण करना और उस पर ठीक अनुशासन रखना अत्यन्त कठिन हो गया है। राष्ट्रपति के तथा सीनेट के अधिकारों में वृद्धि हो जाने के कारण प्रतिनिधि-आगार का महत्त्व और भी कम हो गया है।

हम ऊपर बतला चुके हैं कि सीनेट ने किस प्रकार धीरे-धीरे अपनी शक्ति को दृढ़ किया है और क्यों वह एक बहुत महत्त्वपूर्ण संस्था बनी हुई है। यह सब लोगों का विश्वास है कि अमेरिका की जनता में से चुने हुए विवेकशील व्यक्ति ही सीनेट में मौजूद हैं और वह यह भी समझते हैं कि प्रतिनिधि-आगार में बहुत से नौसिखिए तथा अनुभवहीन व्यक्ति भरे हुए हैं। दूसरे, सीनेट एक अर्ध-स्थायी संस्था होने के नाते अमेरिका के राजनैतिक जीवन पर जितना प्रभाव डाल सकती है उतना प्रतिनिधि-आगार नहीं, क्योंकि इसका कार्य-काल ही कुल २ साल है। तीसरे, इस सम्बन्ध में यह कह देना भी अनुपयुक्त न होगा कि सीनेट का आकार छोटा होने के कारण (क्योंकि उसमें कुल ९६ सदस्य हैं) उसमें अधिक गम्भीरतापूर्वक विचार-विनिमय हो सकता है और अधिक शान्ति व अनुशासन रह सकता है बजाय प्रतिनिधि-आगार के जिसके सदस्यों की संख्या ४३५ है और जिसमें बहुत से "नीम हकीम" मौजूद रहते हैं।

---

1 "It fails to elicit interest of the politically-minded section of the nation, not because it is deficient but because it is never so organised as to use its power for great ends. It makes the headlines by the antagonism it arouses and not by the creation for which it is responsible.—*Laski.*

सीनेट और प्रतिनिधि-आगार की तुलना के सम्बन्ध में एक बात और भी विशेष ध्यान देने योग्य है। पहले जब सीनेट के सदस्य राज्य की व्यवस्थापिकाओं द्वारा चुने जाते थे तब दलबन्दी बहुत काम करती थी और व्यवस्थापिकाएँ दलबन्दी के आधार पर ही सीनेट के लिए प्रतिनिधि चुनती थीं। परन्तु अब सीनेट के सदस्य भी जनता द्वारा ही चुने जाते हैं। अतः उम्मीदवारों की असली योग्यता ही काम आती है। प्रतिनिधि-आगार के सदस्यों का प्रत्यक्ष जनमत के आधार पर चुनाव होने पर भी उसमें दलबन्दी ही अधिक काम करती है, वहाँ योग्यता अधिक काम नहीं करती। सीनेट का प्रत्यक्ष जनमत आधार होने के कारण इसे राष्ट्र का सच्चा प्रतिनिधित्व प्राप्त है और यह राष्ट्र के लिए वक्ता का काम कर सकती है तथा राष्ट्रीय शक्ति के ऊपर अपने संकल्प पर अड़ी रह सकती है। अप्रत्यक्ष निर्वाचित द्वितीय सभाएँ कभी भी कोई दृढ़ कदम नहीं उठा सकतीं। इङ्गलैण्ड की लॉर्डसभा तथा फ्रान्स की सीनेट का हाल पढ़ने पर भली प्रकार विदित हो जाता है कि किस प्रकार इन्हें अपने निम्न सदनों के सम्मुख झुकना पड़ता है। यह दूसरी बात है कि दोनों का मतभेद होने पर उसको दोनों की सम्मिलित समिति द्वारा दूर कर दिया जाय।

सीनेट को अनेक विशेषाधिकार प्राप्त हैं जिनका उल्लेख ऊपर किया जा चुका है; जैसे, राष्ट्रपति द्वारा की गई नियुक्तियों की स्वीकृति देना, युद्ध-घोषणा व सन्धि-प्रस्तावों का अनुमोदन करना, आदि। इस विशेषाधिकारों के कारण सीनेट की कार्य-पालिका शक्ति बहुत बढ़ गई है। प्रतिनिधि-आगार की इस प्रकार की कोई शक्ति नहीं है, और जैसा कि पहले कहा जा चुका है, राष्ट्रपति सीनेट के योग से बहुत से काम कर सकता है परन्तु प्रतिनिधि-आगार तथा राष्ट्रपति दोनों मिलकर बिना सीनेट के सहयोग के बहुत कम काम कर सकते हैं। वास्तव में राष्ट्रपति के योग से सीनेट प्रतिनिधि-आगार पर अपना प्रभुत्व भी रख सकती है और उसके निर्णयों को ठुकरा भी सकती है।

सीनेट और प्रतिनिधि-आगार की तुलना के सम्बन्ध में एक बात और उल्लेखनीय है। सीनेट में सदस्यों के ऊपर इतने प्रतिबन्ध नहीं हैं जितने प्रतिनिधि-आगार में। सीनेट में सदस्य चाहे जब तक बोल सकते हैं और वे विधेयक को काफी समय तक रोक सकते हैं। परन्तु प्रतिनिधि-आगार में यह बात नहीं है। सीनेट की कार्य-प्रणाली प्रतिनिधि-आगार की कार्य-प्रणाली की अपेक्षा अधिक सरल है। केबिनेट-प्रणाली की अनुपस्थिति के कारण शायद इसकी शक्ति अधिक बढ़ गई है। उसे इस क्षेत्र में शायद इतने अधिकार प्राप्त नहीं होते, यदि अमेरिका में भी इङ्गलैण्ड जैसी केबिनेट-व्यवस्था होती।

अन्त में हम यह कह सकते हैं कि अमेरिका की सीनेट और प्रतिनिधि-आगार दोनों की तुलना करते समय हमें यह स्पष्ट मालूम पड़ता है कि कार्य-क्षेत्र, अधिकार,

शक्ति व राजनैतिक और सामाजिक जीवन में सीनेट का प्रभाव प्रतिनिधि-आगार से कहीं अधिक है। इसके निम्नलिखित कारण हैं—(१) प्रत्यक्ष चुनाव-पद्धति से उसका निर्माण होता है, (२) उसका आकार छोटा है, (३) उसमें अधिक अनुभवी व विवेकशील व्यक्ति हैं, (४) उसके प्रति लोगों की श्रद्धा अधिक है, (५) वह एक अर्ध-स्थायी सदन है, (६) उसके कार्यपालिका सम्बन्धी अधिकार अधिक हैं, (७) उसकी प्रक्रिया सरल है, तथा (८) उसमें सदस्यों को अधिक स्वतन्त्रता है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के प्रतिनिधि-आगार के स्पीकर तथा इङ्गलैण्ड की लोकसभा के स्पीकर की तुलना :

(१) संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रतिनिधि-आगार का स्पीकर किसी राजनैतिक दल का व्यक्ति होता है, वह दलीय आधार पर ही चुना जाता है और चुने जाने के बाद वह अपने दल का साथ नहीं छोड़ता है। इङ्गलैण्ड में लोकसभा का स्पीकर चुने जाने के बाद वह अपने को किसी दल की सहानुभूति का पात्र नहीं रखता और दलीय भावना बिल्कुल त्याग देता है। अमेरिका में स्पीकर बहुमत दल का सदस्य होता है और चुने जाने के बाद भी वह अपने दल का साथ नहीं छोड़ता है, अतः उससे हम निष्पक्षता की आशा नहीं कर सकते हैं, जैसी कि इङ्गलैण्ड में लोकसभा के स्पीकर से करते हैं।

(२) एक बात और भी है कि इङ्गलैण्ड में स्पीकर लोकसभा द्वारा सर्वसम्मति से चुना जाता है और वह अपने पद पर तब तक रहता है जब तक उसकी इच्छा होती है। उसके निर्वाचन-क्षेत्र में उसका विरोध भी नहीं किया जाता; परन्तु अमेरिका में ऐसा नहीं है। वहाँ स्पीकर बहुमत दल का होने के नाते तभी तक स्पीकर के पद पर रहता है जब तक उसके दल का प्रतिनिधि-आगार में बहुमत होता है। इङ्गलैण्ड में बहुमत दल का नेता प्रधान मन्त्री होता है परन्तु अमेरिका में यह कार्य स्पीकर को करना पड़ता है।

(३) प्रतिनिधि-आगार का स्पीकर सदन के वाद-विवादों में पूर्ण भाग लेता है। इङ्गलैण्ड में वह निष्पक्ष रहता है, परन्तु अमेरिका में निष्पक्ष नहीं रहता। वह अपने दल का पक्ष लेता है, भाषण देता है, और परिस्थितिवश गुप्त मतदान के समय वह वोट भी देता है।

(४) अमेरिका में स्पीकर एक दल का व्यक्ति होता है और निष्पक्ष नहीं रह सकता, अतः उसे इतने अधिकार नहीं हैं जितने इङ्गलैण्ड में लोकसभा के स्पीकर को प्राप्त हैं। लोकसभा का स्पीकर प्रस्तावित संशोधन में से केवल महत्त्वपूर्ण संशोधनों पर ही वोट ले सकता है। अमेरिका में स्पीकर को इतने अधिकार नहीं हैं।

(५) इङ्गलैण्ड में स्पीकर किसी भी सदस्य को उसका 'नाम' लेकर मुअत्तिल कर सकता है। प्रतिनिधि-आगार के स्पीकर को यह अधिकार प्राप्त नहीं है।

उपर्युक्त समस्त बातों से यह स्पष्ट है कि इङ्गलैण्ड की लोकसभा तथा अमेरिका के प्रतिनिधि-आगार के स्पीकरों के अधिकारों व शक्तियों में बहुत अन्तर है, और जितने अधिकार इङ्गलैण्ड में स्पीकर को प्राप्त हैं उतने अमेरिका में नहीं हैं। परन्तु दोनों में कुछ समानता भी है। इङ्गलैण्ड के स्पीकर की तरह अमेरिका में भी स्पीकर प्रतिनिधि-आगार का सभापति होता है, वह बैठकों में अध्यक्ष का पद ग्रहण करता है, सभा में अनुशासन रखता है, विवादास्पद मामलों को तय करता है और सदन के कार्यक्रम को बनाता है तथा उसकी सीमा निर्धारित करता है। (कुछ समय पूर्व अर्थात् सन् १९१०-११ से पूर्व वह आगार की विभिन्न समितियों के सदस्यों को भी नियुक्त करता था, परन्तु यह अधिकार अब उसके पास नहीं है।) लेकिन फिर भी यह मानना पड़ता है कि उसका अब भी प्रतिनिधि-आगार में बहुत बड़ा महत्त्व है। फाइनर (Finer) के शब्दों में स्पीकर के पद का महत्त्व राष्ट्रपति के पद के बाद दूसरे नम्बर पर ही आता है। यद्यपि नेतृत्व अब एक व्यक्ति में न रहकर 'कमीशन' में निहित हो गया है फिर भी स्पीकर उस कमीशन या सिण्डीकेट (syndicate) का प्रमुख व्यक्ति है। उसके पास वास्तव में शक्ति बहुत है और यह शक्ति उसे अपने पद के कारण मिली होती है। इङ्गलैण्ड में स्पीकर के पास इतनी शक्ति नहीं होती जितना उसका प्रभाव होता है। अमेरिका में स्पीकर का इतना प्रभाव नहीं होता जितनी उसकी वास्तविक शक्ति होती है।

कांग्रेस में विधि-निर्माण प्रक्रिया (Law-making Procedure) :

व्यवस्थापिकाओं द्वारा जो कानून बनाये जाते हैं उनका जानना सब के लिए नितान्त आवश्यक है। अपने देश की विधि-निर्माण-प्रक्रिया के साथ-साथ दूसरे देशों की प्रणाली का ज्ञान भी आवश्यक है जिससे यह पता चल जाय कि विधि-निर्माण के क्या-क्या तरीके हो सकते हैं। अमेरिका में विधि-निर्माण-प्रक्रिया कोई अलग या अनोखी प्रक्रिया नहीं है बल्कि लगभग उसी प्रकार की है जैसी इङ्गलैण्ड या भारत में है।

विधेयक (Bill) कांग्रेस के किसी भी सदन में प्रस्तुत किया जा सकता है। (विधेयक के प्रस्तुत होने के बाद से लेकर उसके पारित होने तक की पूरी प्रक्रिया का संक्षेप पृष्ठ २३२-३३ के फुटनोट में देखिए)। केवल धन-विधेयक ही प्रतिनिधि-आगार में पहले पेश किए जाते हैं। "विधेयक प्रस्तावित विधि के कानून के उस रूप को कहते हैं जो उसके व्यवस्थापिका में प्रस्तुत होने के बाद से उसके पारित होने तक रहता है।"[1]

प्रत्येक विधेयक प्रायः टाइप करके पेश किया जाता है। विधेयक के तीन भाग होते हैं—शीर्षक, उसको पास की जाने की अनुमति देने वाली धारा तथा उस विधेयक का सार। विधेयक को राष्ट्रपति या उसकी केबिनेट के सदस्य पेश नहीं कर सकते

1 Dimock and Dimock : op. cit., pp. 365-366.

क्योंकि वे कांग्रेस के सदस्य नहीं होते और न उसकी बैठकों में कोई भाग ले सकते हैं। उसे पास कराना भी उनका काम नहीं है। अत: विधेयक व्यवस्थापिका के किसी एक सदस्य या अधिक सदस्यों द्वारा पेश किया जाता है। विधेयक के प्रस्तुत होने के बाद उसका शीर्षक वगैरह पढ़ा जाता है। उसके बाद वह उससे सम्बन्ध रखने वाली समिति में भेज दिया जाता है। समिति उस विधेयक की खूब छान-बीन करती है। वह उसके सम्बन्ध में लोगों को बुलाती है और उनसे प्रश्न वगैरह करके उस विधेयक की पूर्ण समीक्षा करती है। यदि समिति उस विधेयक की जाँच वगैरह करके सदन में कोई रिपोर्ट नहीं भेजती है तो वह विधेयक वहीं समाप्त हो जाता है। यदि कमेटी उसकी रिपोर्ट भेजती है तो उस विधेयक को सदन में दूसरी बार पढ़ा जाता है। इस समय उस बिल के सम्बन्ध में सदन में खूब वाद-विवाद होता है, उसके पक्षपाती बड़े-बड़े भाषण देकर उसका समर्थन करते हैं तथा विरोधी विरोध करते हैं। इसी समय संशोधन वगैरह भी किये जाते हैं। यदि द्वितीय पठन में विधेयक पास हो जाता है तो तीसरी बार फिर पढ़ा जाता है। इसके बाद वह काँग्रेस के दूसरे सदन में भेज दिया जाता है जहाँ पर फिर उसे सीनेट की ही भाँति कई स्टेजों से गुजरना पड़ता है। उसमें भी जब वह पास हो जाता है तब राष्ट्रपति के पास हस्ताक्षर करने हेतु भेज दिया जाता है। यदि राष्ट्रपति उसे स्वीकार कर लेता है तो वह अपनी मंजूरी की सूचना उस सदन को भेज देता है जहाँ प्रथम बार वह विधेयक पेश हुआ था और साथ ही सेक्रेटरी ऑफ स्टेट को उसे प्रकाशित करने का आदेश भी दे देता है।

यदि किसी विधेयक के सम्बन्ध में काँग्रेस के दोनों सदनों में मतभेद हो तो दोनों सदनों की एक सम्मिलित समिति बनाई जाती है और इस प्रकार मतभेद दूर किया जाता है।

राष्ट्रपति को भी किसी विधेयक को स्वीकार न करने का निषेधात्मक अधिकार (Veto Power)[1] है। लेकिन जैसा कि पहले एक परिच्छेद में कह चुके है, यह निषेधात्मक अधिकार विधेयक को कानून का रूप धारण करने में कुछ समय के लिए ही रोक सकता है हमेशा के लिए नहीं, क्योंकि काँग्रेस द्वारा दो-तिहाई बहुमत से उसके दो बार पास होने पर राष्ट्रपति को उसे मानना पड़ता है।[2]

1 "The veto is the refusal of a chief executive to sign a bill where such approval is necessary to complete the enactment of a law, and the return of the bill to the legislative house in which it originated."

2 Stages in the enactment of a law in the Congress :
i Introduction of Bill.
ii Reference to Committee.
iii Numbering and printing.
iv Delivery to Committee.
v Hearings (in the Committee).

Continued on next page

इङ्गलैण्ड और अमेरिका की विधि-निर्माण-क्रियाओं की तुलना :

(१) पहली बात तो यही है कि इङ्गलैण्ड में विधेयक केबिनेट के सदस्यों द्वारा ही पेश किये जाते हैं (व्यक्तिगत विधेयक भी पेश होते हैं परन्तु वे इतना महत्त्व नहीं रखते) । केबिनेट के सदस्य ही उसे पेश करने से पूर्व उसका पूरा ब्यौरा तैयार करते हैं और उन्हीं के ऊपर उसे पास कराने की जिम्मेदारी होती है । इस प्रकार हम देखते हैं कि ब्रिटेन में कार्यपालिका विधेयक बनाती है, पेश करती है, और उन्हें पास कराती है । अमेरिका में कार्यपालिका—राष्ट्रपति और उसकी केबिनेट—इस मामले में कोई अधिकार नहीं रखती और न उसकी कोई जिम्मेदारी होती है ।

(२) इङ्गलैण्ड में दो प्रकार के विधेयक होते हैं—सार्वजनिक विधेयक तथा असार्वजनिक विधेयक । सार्वजनिक विधेयक भी दो प्रकार के होते हैं—सरकारी विधेयक तथा गैर-सरकारी या व्यक्तिगत विधेयक । समस्त सरकारी विधेयकों के प्रति उनके प्रस्तुत करने से लेकर पारित कराने तक मन्त्रियों की जिम्मेदारी होती है जिनका उन से सम्बन्ध है । अमेरिका में केबिनेट के सदस्यों की इस प्रकार की कोई जिम्मेदारी नहीं होती ।

(३) इङ्गलैण्ड में विधेयक द्वितीय पठन के बाद उपयुक्त समिति में भेजा जाता है परन्तु अमेरिका में प्रथम पठन के बाद ही भेज दिया जाता है ।

In Continuation to the last page

vi Reference to Sub-Committee.
vii Consideration by Sub-Committee.
viii Consideration in the Committee (again).
ix Report of Committee.
x Consideration by Committee of the Whole House.
xi Consideration in the House.
xii Engrossment (on blue paper in the House of Representatives and on white paper in the Senate).
xiii Messaging to Senate.
xiv Reference to Senate Committee.
xv Senate printing and filing.
xvi Senate hearings.
xvii Consideration in the Senate Sub-Committee.
xviii Consideration in the Senate Committee.
xix Report of the Senate Committee.
xx Consideration by Senate.
xxi Return to House (if Senate suggests amendments).
xxii Consideration of Senate amendments.
xxiii Conference (if there is dis-agreement between the House and the Senate).
xxiv Enrolment (The bill is enrolled in the House in which it originated).
xxv Signature in House and Senate.
xxvi Approval by the President.
xxvii Proclamation.

(*Adapted—Macdonald, Webb, Lewis & Strauss : Outside Readings in American Government, pp. 338-342*)

(४) इङ्गलैण्ड में समितियों को रिपोर्ट भेजनी ही पड़ती है परन्तु अमेरिका में, जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, यह भी सम्भव है कि समिति रिपोर्ट न भेजे और विधेयक को वहीं समाप्त कर दे।[1] अमेरिका में समितियों को इङ्गलैण्ड की अपेक्षा अधिक अधिकार प्राप्त हैं।

(५) इङ्गलैण्ड में पार्लियामेण्ट के द्वारा पारित विधेयकों को राजा स्वीकार कर ही लेता है और उसे ऐसा करना ही पड़ता है, क्योंकि इङ्गलैण्ड में राजा का नाममात्र का अधिकार है, वास्तविक शक्ति तो पार्लियामेण्ट में ही निहित है, परन्तु अमेरिका का राष्ट्रपति अपने निषेधात्मक अधिकार का प्रयोग करके थोड़े समय तक उसे रोक भी सकता है।

कांग्रेस की समितियाँ (Committee System) :

प्रत्येक राज्य की व्यवस्थापिकाओं के काम को सरल और सुविधाजनक बनाने के लिए उनमें समितियाँ होती हैं। व्यवस्थापिकाओं के आकार बड़े होने के कारण उनके लिए यह बहुत मुश्किल हो जाता है कि प्रत्येक विधेयक पर पूर्ण रूप से छानबीन करें और फिर उस पर विचार करें। अतः उन्होंने अपनी-अपनी समितियाँ बना रक्खी हैं जो विधेयकों की सूक्ष्मातिसूक्ष्म छानबीन करके व्यवस्थापिका के सदनों में रिपोर्ट भेजती हैं जहाँ उन पर विचार होता है। इन समितियों के सदस्य साधारण योग्यता के सदस्य नहीं होते वरन् बड़े चतुर तथा विशेष ज्ञान रखने वाले होते हैं। इसीलिये तो वे विधेयकों पर और भी गम्भीर विचार कर सकते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका की कांग्रेस की भी समितियाँ हैं। अमेरिका की समितियों का इङ्गलैण्ड की समितियों की अपेक्षा अधिक महत्त्व है और उन पर काम भी बहुत है।[2] इसके दो कारण हैं—प्रथम तो अमेरिका में कार्य-भार अधिक है और दूसरे इङ्गलैण्ड में विधेयकों को पास कराने की जिम्मेदारी केबिनेट की होती है, समिति की नहीं। मन्त्री विधेयक तैयार करते हैं और वे ही बहुत कुछ समितियों का काम करते हैं परन्तु अमेरिका में ऐसी बात नहीं है। वहाँ केबिनेट के सदस्यों को इस बात से कोई प्रयोजन ही नहीं है, इसलिए समितियों का काम बहुत बढ़ जाता है।

[1] In America "the committee may take one of several courses; it may report the bill favourably, or report it unfavourably, or pigeon-hole it, thus letting it die in committee. Or it may substitute what is essentially a new bill, or amend the original, or report it out to the chamber with no recommendation at all. In any case the action of the committee is conclusive one way or the other."

(*Dimock & Dimock : op. cit., pp. 366-367*)

[2] "The committee system in America has robbed the House of Representatives of its essential functions." (*Laski : op. cit., p. 84*)

प्रतिनिधि-आगार में ६४ स्थायी समितियाँ हैं जिनमें निम्नलिखित प्रमुख हैं—

(१) कमेटी आफ वेज एण्ड मीन्स (Committee of Ways and Means)
(२) एप्रोप्रिएशन कमेटी (Appropriation Committee)
(३) रूल्स कमेटी (Committee of Rules)
(४) बैंकिंग और करैंसी (Banking and Currency Committee)
(५) देशी राज्यों से सम्बन्ध व व्यापार (Inter-State and Foreign Commerce)
(६) नदी व बन्दरगाह (Rivers and Harbours)
(७) सैनिक मामले (Military Affairs)
(८) जलसेना सम्बन्धी विषय (Naval Affairs)
(९) सार्वजनिक जायदाद व जमीन (Public Lands)

पहले समितियों के सदस्य प्रतिनिधि-आगार के स्पीकर द्वारा चुने जाते थे परन्तु अब आगार ही उन्हें चुनता है। विधेयक प्रथम वाचन के बाद ही तत्सम्बन्धी समिति में भेज दिया जाता है। हम बतला चुके हैं कि समिति का विधेयक के सम्बन्ध में क्या काम होता है तथा उसकी कितनी शक्ति होती है (देखो पृष्ठ २३४)। समिति में यदि विधेयक खत्म हो जाता है तो उसका अन्त ही हो जाता है, यदि प्रतिनिधि-आगार के आधे से अधिक सदस्य अपने हस्ताक्षरों द्वारा उसे वापिस न मँगायें।

स्थायी समितियों के सदस्यों की संख्या अधिकतर १२ रहती है वैसे आवश्यकतानुसार घटाई-बढ़ाई भी जा सकती है। प्रत्येक समिति का एक अध्यक्ष होता है जिसे समिति स्वयं चुनती है। अध्यक्ष अधिकतर ऐसे ही व्यक्ति चुने जाते हैं जो अन्य सदस्यों की अपेक्षा अधिक कुशल एवं अनुभवी हों। समितियों के निर्माण में भी दलबन्दी काम करती है।

स्थायी समितियों के अलावा तीन अन्य प्रकार की समितियाँ भी होती हैं—(१) सिलैक्ट कमेटी (Select Committee), (२) कॉन्फ्रेन्स कमेटी (Conference Committee), और (३) सम्पूर्ण सदन की कमेटी (Committee of the whole House)।

सिलैक्ट कमेटी वह समिति है जो किसी विशेष कार्य के लिए नियुक्त की जाती है और उस कार्य के बाद ही समाप्त कर दी जाती है। कॉन्फ्रेन्स कमेटी वह समिति है जो दूसरी सभा की किसी कॉन्फ्रेन्स कमेटी से मिलकर दोनों सदनों के मतभेद को दूर करती है। सम्पूर्ण सदन की कमेटी तब होती है जब

प्रतिनिधि-आगार धन-विधेयकों (आय-व्यय सम्बन्धी) पर विचार करने के लिए बैठता है।

इङ्गलैण्ड और अमेरिका की समितियों की तुलना :

जिस प्रकार हम इङ्गलैण्ड और अमेरिका की शासन-व्यवस्थाओं में अन्य क्षेत्रों में भेद पाते हैं उसी तरह दोनों की समितियों के कार्य-क्षेत्र, संगठन तथा अधिकारों में भी भेद है। हम बतला चुके हैं कि इङ्गलैण्ड में समितियों को इतने अधिकार व शक्ति प्राप्त नहीं हैं जितने अमेरिका में हैं। इङ्गलैण्ड में समितियों के ऊपर कार्य-भार भी उतना नहीं है जितना अमेरिका में है।

इङ्गलैण्ड की समितियों के बारे में हम विस्तृत रूप में बतला चुके हैं। उनके तथा उल्लिखित अमेरिका की समितियों के निरीक्षण से यह स्पष्ट विदित हो जायेगा कि दोनों में आकार, संख्या, संगठन, कार्यक्रम, नियुक्ति आदि सम्बन्धी सभी मामलों में भिन्नता है। अपने कार्यक्रम में भी अमेरिका की स्थायी समितियों में तथा इङ्गलैण्ड की लोकसभा की स्थायी समितियों में काफी भिन्नता है। अमेरिका में जनसंख्या ज्यादा है परन्तु उनमें सदस्य कम हैं।

जैसा कि ऊपर कह चुके हैं, अमेरिका की समितियों की शक्ति बहुत है। वे एक प्रकार से विधायिनी शक्ति के यन्त्र में तेल का काम करती हैं। यदि समितियाँ अपना काम ठीक न करें तो व्यवस्थापिका का काम एकदम रुक जाय। इसी कारण अमेरिका में प्रतिनिधि-आगार की विधायिनी शक्ति का बँटवारा हो गया है। आगार के पास कुल शक्ति नहीं है बल्कि ज्यादा शक्ति समितियों के पास है। समितियों के सामने प्रतिनिधि-आगार का महत्त्व कम रह गया है। साथ ही उसका काम भी ढीला पड़ गया है और सदस्यों की गैरजिम्मेदारी भी बढ़ गई है। प्रतिनिधि-आगार के वाद-विवादों में कोई आनन्द नहीं आता। प्रायः "वे विचारहीन होते हैं, उनमें जोशीलापन नहीं होता और इसीलिए उनका परिणामों पर बहुत कम प्रभाव पड़ता है।" इङ्गलैण्ड की समितियों के तथा लोकसभा के सम्बन्ध में यह बात नहीं कही जा सकती।

लॉबीइङ्ग (Lobbying) :

अमेरिका में काँग्रेस में केबिनेट का स्थान न होने के कारण एक दूसरी संस्था का जन्म हो गया है जो इङ्गलैण्ड में नहीं है। उसका नाम लॉबीइङ्ग (Lobbying) है। जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, इङ्गलैण्ड में विधेयकों को पास कराने की जिम्मेदारी केबिनेट के सदस्यों पर रहती है परन्तु अमेरिका में यह बात नहीं है। वहाँ तो काँग्रेस के सदस्य ही उसमें विशेष दिलचस्पी लेते हैं। परिणाम यह होता है कि बहुत से सदस्य आपस में मिल जाते हैं और मिलकर अपनी रुचि वाले विधेयकों को पास कराने के लिये अन्य सदस्यों पर जोर डालते हैं। वे उन विधेयकों का विरोध भी करते

हैं जिनको वे पास नहीं होने देना चाहते। उन सदस्यों की इस प्रकार की कार्यवाही जिसके द्वारा वे किसी विधेयक का समर्थन करते हैं और उसे पास कराना चाहते हैं तथा किसी का विरोध करते हैं जिससे वह पास न हो जाय, लॉबीइङ्ग (Lobbying) कहलाती है। इस प्रकार की कार्यवाहियों में व्यवसायी वर्ग के प्रतिनिधियों का विशेष हाथ होता है क्योंकि व्यवसाय सम्बन्धी एक विधेयक पास होने पर सम्पूर्ण व्यवसायी-वर्ग का फायदा नहीं कर सकता, यदि वह एक वर्ग का फायदा करेगा तो दूसरे का नुकसान। अतः व्यवसायी वर्गों के प्रतिनिधि इन चक्करों में बहुत रहते हैं। काँग्रेस में करीब १५० प्रकार के व्यवसायी-वर्गों के प्रतिनिधि ऐसे हैं जो लॉबीइङ्ग करते रहते हैं। इस कार्य के लिए दक्ष एवं कुशल व्यक्ति ही रहते हैं। लॉबीइङ्ग करने वाले प्रत्येक विधेयक के ऊपर गृद्ध-दृष्टि रखते हैं और विभिन्न उपायों से—भाषण, समाचार-पत्रों, तार, टेलीफोन, कभी-कभी रिश्वत तक देकर—अपने हितों की रक्षा करते हैं और विधेयकों को पास कराते हैं अथवा उनको खत्म कराते हैं। इस प्रकार की लॉबीज (Lobbies) राज्यों की व्यवस्थापिकाओं में भी हैं और वहाँ वे विधि-निर्माण में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है।

फिलीबस्टरिङ्ग (Filibustering) :

फिलीबस्टरिङ्ग (Filibustering) एक दूसरी प्रथा है जिसकी व्याख्या आवश्यक है। कभी-कभी यह होता है कि जब अल्पसंख्यक दल वाले यह देखते हैं कि उनके हितों को कोई विधेयक क्षति पहुँचा सकता है तो वे उसका विरोध करने की सोचते हैं। परन्तु बहुमत न होने के कारण उनका विरोध अधिक महत्त्व नहीं रख पाता। अतः वे भाषण दे-देकर विधेयक के पास होने में देर लगा देते हैं। सीनेट में भाषण की स्वतन्त्रता है। कोई सदस्य चाहे जो कुछ चाहे जितनी देर तक बोल सकता है। इसलिए वे लोग इस अधिकार का दुरुपयोग करते हैं और उल्टा-सीधा भाषण देते रहते हैं जिससे काम टल जाय। यह प्रथा फिलीबस्टरिङ्ग (Filibustering) कहलाती है (इसका एक उदाहरण बड़ा रोचक है। सन् १६०३ में सीनेट का सदस्य जिसका नाम टिलमेन (Tillman) था, बायरन (Byron) की चाइल्ड हैरोल्ड (Child Harold) नामक पुस्तक की एक प्रति लेकर खड़ा हो गया और बोला कि अमुक विधेयक में से जिसे वह नहीं चाहता था, उसके कुछ अहितकारी भाग निकाल दिए जाएँ, अन्यथा वह उक्त किताब में से कविताएँ पढ़ता ही रहेगा। अन्त में उसकी ही विजय हुई।)

सीनेट ने इससे सबक हासिल किया और इस प्रकार फिलीबस्टरिङ्ग द्वारा विधेयक को हार खाने से बचाने के लिए सन् १६१७ में एक नियम बनाया कि यदि १६ सदस्य हस्ताक्षर करके प्रस्ताव करें कि अमुक विवाद समाप्त हो जाय और यदि दो-तिहाई सदस्य उसका समर्थन करें तो विवाद समाप्त कर दिया जायेगा। सीनेट में अब भी

भाषण के लिए पूर्ण स्वतन्त्रता है। सदस्य चाहे जितनी देर तक बोल सकता है परन्तु तब से फिलीबस्टरिङ्ग का प्रयोग कम हो गया है।[1]

कांग्रेस तथा कार्यपालिका :

हम पहले बतला चुके हैं कि संयुक्त राज्य अमेरिका के संविधान में शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को अपनाया गया है और इसीलिए विधान के निर्माताओं ने व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका को एक दूसरे से अलग-अलग रक्खा। हम यह भी कह चुके हैं कि किस प्रकार इस उद्देश्य की पूर्ति के लिए अमेरिका में इङ्गलैण्ड जैसी केबिनेट-व्यवस्था नहीं है और न वहाँ कार्यपालिका का कोई सदस्य ही कांग्रेस का सदस्य हो सकता है। राष्ट्रपति जनता द्वारा निर्वाचित राष्ट्रपति-निर्वाचकों (electors) द्वारा चुना जाता है और वह अपनी केबिनेट के सदस्यों को नियुक्त करता है। न तो राष्ट्रपति और न उसकी केबिनेट के सदस्य ही कांग्रेस की कार्यवाही में भाग लेते हैं और न वे उसके प्रति अपने कार्यों के लिये उत्तरदायी हैं।

परन्तु इसका परिणाम अच्छा नहीं हो सकता। व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका एक ही शरीर—शासन—के अङ्ग हैं। उनका अलग-अलग कार्य अवश्य है परन्तु उनका सामूहिक कार्य भी है और यदि नहीं भी है तो भी यह मानना ही होगा कि एक का काम दूसरे के बिना सफलतापूर्वक नहीं चल सकता। यही कारण है कि कभी-कभी राष्ट्रपति और कांग्रेस में काफी तनातनी हो जाती है। यद्यपि यह बात सत्य है कि राष्ट्रपति प्रमुख राजनैतिक दल में से ही चुना जाता है और कांग्रेस में भी उसके ही दल का प्रायः बहुमत होता है परन्तु फिर भी दो विभिन्न क्षेत्रों में तथा दो अलग-अलग हैसियतों में काम करने से उनमें मतभेद पैदा हो सकता है और इस मतभेद का परिणाम यह भी हो सकता है कि उनमें आपस में एक दूसरे को दबाने की भावना पैदा हो जाय। जैसा कि लास्की ने कहा है, कांग्रेस उसका आदर भले ही करे, वह उससे भले ही डरे, और उसका कभी-कभी समर्थन भी भले ही करे; परन्तु वह हमेशा ऐसे अवसरों को ढूंढ़ा करती है जब कि उसका उससे मतभेद हो जाय और उसे जितना आनन्द उस मतभेद के समय होता है उतना शायद कभी भी नहीं होता। ऐसा इसलिए होता है कि उस समय वह समझती है कि उसकी प्रतिष्ठा बढ़ गई है।"[2]

"The liberty of unlimited debate in the Senate has been abused by filibustering tactics from time to time. The closure rule adopted in 1917, has not been effective in putting an end to the efforts of Senators to talk bills to death. Various amendments to the closure rule, all designed to end the practice of filibustering, were introduced in the 81st Congress soon after it was convened in 1949. It may be doubted."
(*Macdonald, Webb, Lewis & Strauss : op. cit., p. 244*)

Laski : The American Presidency, p. 129.

जब यह बात है तो राष्ट्रपति भी कांग्रेस पर अपना प्रभाव जमाने की नई-नई तरकीबें सोचता रहता है और उसमें यह भी है कि वह कांग्रेस को काबू में रखने के लिए कुछ लोगों को अपनी ओर मिला ले। ऐसा करने के लिए वह उनके मित्रों, दोस्तों, रिश्तेदारों आदि को ऊँची-ऊँची जगह दे देता है।

शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त एक प्रकार से और भी हानिकारक सिद्ध हुआ है। राष्ट्रपति अपनी केबिनेट में जिन सदस्यों को नियुक्त करता है वे कांग्रेस के सदस्य नहीं होते हैं अतः उन्हें राजनैतिक अनुभव बहुत कम होता है और जब किसी सम्बन्ध में वे कांग्रेस के समक्ष किसी बात को बतलाने के लिए बुलाए जाते हैं तो उनकी अनभिज्ञता उनकी स्थिति को संकोचमय बना देती है।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त वास्तव में कोई बहुत उपयोगी सिद्धान्त नहीं है। यह किसी समय पर किसी देश में कुछ समय के लिए लागू हो सकता है परन्तु हमेशा के लिए इसे अपनाना अत्यन्त घातक सिद्ध होगा। अमेरिका में भी इसे पूर्ण रूप में नहीं अपनाया गया है और हम देखते हैं कि वहाँ व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका एक दूसरे के क्षेत्र में एक दूसरे से स्वतन्त्र रहने पर भी एक दूसरे से काफी सम्बन्धित हैं और एक दूसरे को काफी प्रभावित करती हैं। हम बतला चुके हैं कि राष्ट्रपति को व्यवस्थापिका सम्बन्धी अधिकार भी प्राप्त हैं। सैद्धान्तिक दृष्टिकोण से तो राष्ट्रपति को कांग्रेस के कार्य में हस्तक्षेप करने का कोई अधिकार नहीं है परन्तु व्यवहार में ऐसा नहीं होता है। राष्ट्रपति विधि-निर्माण में किसी न किसी प्रकार अपना काफी प्रभाव डालता है और यह बात तो उसके अधिकार में है ही कि वह मौखिक तथा लिखित रूप में कांग्रेस को सन्देश भेज सकता है। विधि-निर्माण-क्षेत्र में उसे निषेधात्मक अधिकार भी प्राप्त है।

कांग्रेस भी राष्ट्रपति के कामों में काफी योग देती है। सीनेट उसके द्वारा की गई समस्त नियुक्तियों की मंजूरी देती है व युद्ध-घोषणा एवं सन्धि-वार्ता या विदेशी व्यापार सम्बन्धी नीति में राष्ट्रपति को स्वीकृति देती है। इन सब कार्यों में यदि सीनेट बात-बात पर रोड़ा अटकाये तो काम चलना मुश्किल हो जाय परन्तु सीनेट अपनी उदारता (senatorial courtesy) का परिचय देकर मेल-मिलाप के साथ कार्य करती है। कहने का तात्पर्य यह है कि कार्यकारिणी में, जिसका प्रधान राष्ट्रपति है, और व्यवस्थापिका में सैद्धान्तिक दृष्टि से भी काफी योग है। अतः शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त अमेरिका की व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका को एक दूसरे से विमुख नहीं करता वरन् उन्हें एक दूसरे से अलग-अलग रखते हुए भी मिलकर चलने को प्रेरित करता है।

अमेरिका में भी अन्य जनतन्त्रीय देशों की भाँति दलबन्दी है। अनेक प्रकार की चालबाजियों का प्रयोग कर ये दल अपनी-अपनी विजय के चक्कर में फँसे रहते हैं।

दलबन्दी वैसे तो जनतन्त्र में आवश्यक है ही (हालांकि अधिक दल होना खतरनाक है जैसा कि फ्रान्स में साबित हुआ है[1]) परन्तु अमेरिका में इसने एक और फायदा पहुँचाया है और वह यह है कि इसने बहुत कुछ अंश तक काँग्रेस और कार्यपालिका को मिलकर कार्य करने का मौका प्रदान किया है। प्रायः राष्ट्रपति भी उसी दल का नेता होता है जिस दल का बहुमत होता है और वही दल काँग्रेस में भी अधिक सीटें प्राप्त करता है। दोनों जगह एक दल के हो जाने की वजह से शासन-कार्य में रोड़े नहीं अटकते और शासन-धारा सुगम तरीके से बहती है। कई बार ऐसा हुआ है कि राष्ट्रपति ने काँग्रेस को अपने दल की शक्ति के आधार पर ही काबू में कर लिया है। अनेक बार रूजवेल्ट ने अपने भाषणों तथा सन्देशों द्वारा जनमत को अपने काबू में लाकर तथा काँग्रेस के अन्तर्गत अपने दल का सहारा लेकर काँग्रेस को अपने सिद्धान्तों व आदेशों को स्वीकार करने को बाध्य किया था।[2]

एक अन्य प्रकार से भी काँग्रेस और कार्यपालिका के सम्बन्ध स्थापित हुए नजर आते हैं। बहुत से कार्यपालिका के विभागों के सदस्यों को विभिन्न अवसरों पर अपने-अपने विभागों से सम्बन्धित विधेयकों के सम्बन्ध में साक्षी के रूप में काँग्रेस की समितियों के समक्ष बुलाया जाता है और इस प्रकार व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका एक दूसरे के सम्पर्क में आती हैं।

उपर्युक्त कथन से यह स्पष्ट है कि हालाँकि अमेरिका के विधान में शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त अपनाया गया है फिर भी कई प्रकार से, चाहे वह सांविधानिक हो अथवा असांविधानिक, व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका एक दूसरे से काफी सम्बन्धित हैं और मिलकर कार्य करती हैं।

उपसंहार :

पिछले पृष्ठों में हमने अमेरिका की काँग्रेस, उसका संगठन, उसकी शक्ति व अधिकार एवं कार्य-पद्धति पर विचार किया है। इस सम्बन्ध में हमने कुछ विशिष्ट बातें देखीं जो अन्य देशों की व्यवस्थापिकाओं में हमें नजर नहीं आतीं। काँग्रेस अमेरिका की व्यवस्थापिका ही नहीं बल्कि अमेरिकन जीवन की प्रतिनिधि भी है। उसके अधिकारों व उसकी प्रक्रियाओं में हमें संविधान की अनुकूलता ही नजर नहीं आती बल्कि अमेरिका-निवासियों के चरित्र, उनकी प्रकृति, उनकी मनोवृत्ति व उनके स्वभाव आदि की झलक भी दिखलाई पड़ती है। काँग्रेस का संगठन भी अनूठा है

१ फ्रान्स में दलों की अधिकता होने के कारण कोई भी दल अधिक समय तक शक्तिशाली नहीं रहता। अतः कोई भी मन्त्रिमण्डल बहुत दिनों तक नहीं रहता। वहाँ मन्त्रिमण्डल बहुत शीघ्र बदलते रहते हैं। फ्रान्स की केबिनेट की औसत आयु ६ माह है।

2 Board American Government and Politics, p. 213.

और उसके अधिकार तो विशेष हैं ही। संसार की किसी भी द्वितीय सभा के इतने अधिकार नहीं जितने अमेरिका की सीनेट के हैं। इसमें भी अमेरिका-निवासियों ने अपनी बुद्धि-चातुर्य का आदर्श प्रस्तुत किया है। उनकी कांग्रेस आज प्रतिनिधि-आगार की अपेक्षा सीनेट के आधार पर संसार में सब की आँखों में समाई हुई है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give a broad outline of the method of representation, constitution, and organisation of the American Senate. (*Agra, 1937, 1939, 1942, 1944*)
2. It is said that the Federal Senate has proved to be the most successful of all political institutions in U. S. A. Do you agree ? Give reasons. (*Agra, 1939, 1941*)
3. 'Of all the second chambers the American Senate is perhaps the strongest, and the Canadian Senate the weakest.' Discuss. (*Allahabad, 1943*; *Punjab, 1901*; *Agra, 1936, 1939, 1941*)
4. Describe the organisation of the House of Representatives. If you were given a choice to choose between a seat in the House of Representatives and one in the Senate, whereupon will your choice fall ? Give reasons to support your choice.
5. Compare and contrast the powers and the functions of the Speaker of the House of Representatives (U. S. A.) with those of the Speaker of the House of Commons. (*Agra, 1942*)
6. Describe the process of law-making in the Congress. How far is it different from that of England ? (*Agra, 1940*; *Punjab, 1949*)
7. (a) Describe the working of the Committee System in the legislature of the United States.

   (b) Compare the Committee System that exists in the British House of Commons with that of the House of Representatives. (*Agra, 1939, 1942, 1950*)
8. Give an account of the composition and working of the American House of Representatives. What are its chief shortcomings ? (*Agra, 1952*)

सातवाँ परिच्छेद

राजनैतिक दल

स्वतन्त्र राजनैतिक दलों द्वारा निर्मित सरकार का ही नाम जनतन्त्रीय सरकार है। कहीं भी बिना राजनैतिक दलों के जनतन्त्रीय सरकार नहीं हो सकी है। यही बात संयुक्त राज्य अमेरिका के विषय में भी सत्य है। विधान के निर्माताओं का तो यह विश्वास नहीं था कि अमेरिका में किसी भी प्रकार की दलगत सरकार बनेगी। इसके विपरीत उन लोगों का, जैसा कि मेडीसन (Medison) ने कहा था, विश्वास था कि वे एक ऐसी सरकार बनाने जा रहे थे जिसमें दलबन्दी नहीं हो पावेगी और जो कलह से रहित होगी परन्तु विधि ने दूसरी प्रकार ही रचना रची और उनके सब विश्वास झूठे पड़ गए।[1]

संयुक्त राज्य अमेरिका में दो दल हैं—(१) रिपब्लिकन (Republican), और (२) डेमोक्रेट (Democrat)। जब से संविधान की रचना हुई है तभी से अमेरिका में दो दल चले आ रहे हैं, यद्यपि उनके नाम बदलते रहे हैं। सन् १७८७ में ही देश में दो दल हो गए थे। एक का नेता एडमण्ड रैन्डोल्फ (Edmund Randolph) था और दूसरे का विलियम पैटंसन (William Paterson)। ये दोनों दल आगे चल कर और भी मजबूत बन गये जब कि वाशिंगटन के जमाने में अलैक्जैण्डर हैमिल्टन (Alexander Hamilton) ने टॉमस जैफर्सन (Thomas Jefferson) के विरोध में अपना मोर्चा बनाया। सन् १८०० ई० में उनके राजनैतिक दृष्टिकोणों में स्पष्ट विभिन्नता नजर आने लगी। जैफर्सन के अनुयायी इस बात का समर्थन करते थे कि घटक राज्यों को यह अधिकार प्राप्त हो कि वे संघ के नियमों को न मानें यदि वे उन्हें पसन्द न करें, और हैमिल्टन के समर्थक इस बात पर जोर देते थे कि संघ की शक्ति दृढ़ रहे और उसके सभी कानून घटक राज्यों को मान्य हों। जैफर्सन के समर्थकों में दक्षिण के किसान तथा छोटे-छोटे व्यापारी थे और हैमिल्टन के समर्थक बड़े-बड़े सेठ, साहूकार आदि थे। जैफर्सन के दल का नाम जनतन्त्रीय रिपब्लिकन दल (Democratic Republican party) या डेमोक्रेट (Democrat) पड़ गया और हैमिल्टन के अनुयायी 'फैडरलिस्ट' (Federalists) कहलाये।

---

1 "The stone which the builders rejected has become the chief stone of the corner." (*Munro : The Government of the United States, p. 114*)

कालान्तर में दोनों दलों में आन्तरिक मतभेद पैदा हो गया। पहले तो फैडरलिस्ट दल में फूट पड़ी और वह दल सन् १८२५ तक समाप्त हो गया। इसके बाद 'डेमोक्रेट' दल में फूट पड़ गई और वह काफी समय तक चलती रही। अन्त में परिणाम यह हुआ कि डेमोक्रेट दल काफी अशक्त हो गया और अन्त में जब उन दोनों भागों में एक नेशनल रिपब्लिकन दल का जन्म हुआ तब उनका मतभेद कम हुआ। दूसरा दल डेमोक्रेट कहलाया।

अमेरिका के राजनैतिक दलों में प्रेसीडेण्ट का चुनाव महत्त्व रखता है। प्रेसीडेण्ट जैक्सन ने चुनाव के बाद विरोधी दल के कर्मचारियों को एक-एक करके अलग कर दिया और अपने दल के लोगों की नियुक्तियाँ कीं। उसी समय से भ्रष्टाचार का बोलबाला हुआ। सन् १८४१ तक डेमोक्रेट दल काफी शक्तिशाली रहा। इसके बाद दासता के प्रश्न पर दोनों दल करीब-करीब खत्म हो गये और एक नई रिपब्लिकन पार्टी बनी जिसमें दासता के विपक्षी लोग थे। यह पार्टी सन् १८८४ तक चलती रही और तब जाकर एक डेमोक्रेट प्रेसीडेण्ट चुना गया। इसके बाद सन् १९२० में फिर रिपब्लिकनों के हाथ में शक्ति आई और वह सन् १९३२ तक चलती रही। इस प्रकार ये दोनों दल—रिपब्लिकन और डेमोक्रेट—आजकल अमेरिका की राजनीति के रंगमंच के खिलाड़ी हैं।

अमेरिका के राजनैतिक दलों की विशेषताएँ :

(१) **दलों की वैधानिक स्वीकृति**—कहीं भी दलीय व्यवस्था राज्य-व्यवस्था से इतनी बँधी हुई नहीं है जितनी अमेरिका में है। दलीय व्यवस्था ही राजनीति में पूर्ण हाथ रखती है और राज्य के प्रत्येक काम को चलाती है। पिछली शताब्दी में अमेरिका में राजनैतिक दलों में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण परिवर्तन हो गये हैं। वे अब ट्रेड यूनियनों की भाँति ऐसे संघ नहीं रहे हैं जिनमें स्वेच्छा से प्रवेश किया जा सके या स्वेच्छा से जिन्हें छोड़ा जा सके। अब तो उन्हें यह भी अधिकार नहीं रहा है कि वे स्वतन्त्रता-पूर्वक यह भी निश्चय करें कि कौन-कौन नेता चुने जायेंगे, कौन राष्ट्रपति के पद के लिए खड़ा किया जायेगा और कौन दल में रहेगा भी। उन पर भी अब सार्वजनिक नियन्त्रण हो गया है।[1]

(२) **दोनों राजनैतिक दलों में कोई महत्त्वपूर्ण सैद्धान्तिक भेद नहीं है**—भारतवर्ष तथा अन्य देशों में दलबन्दी से यह अभिप्राय निकाला जाता है कि विभिन्न राजनैतिक दलों के अलग-अलग सिद्धान्त होते हैं, अलग-अलग कार्य-प्रणाली और प्रोग्राम होता है, तथा अलग २ उन उद्देश्यों की पूर्ति के लिए लड़ते हैं। परन्तु अमेरिका में यह बात नहीं है। वहाँ राजनैतिक दलों में एक दूसरे के सिद्धान्तों में भेद

1 Edward M. C. Chesney Sait : American Parties and Elections, p. 9.

नहीं है। ब्रोगन (Brogan) के कथनानुसार अमेरिका के राजनैतिक दल तो वहाँ की समस्त राजनैतिक विचारधाराओं को अपने में संग्रहीत करते हैं और एक दल के खत्म हो जाने पर उसकी विचारधारा दूसरे दल में अवश्य स्थान पा जाती है।"[1] कहने का तात्पर्य यह है कि दोनों दलों के राजनैतिक विचारों व सिद्धान्तों में ऐसी भिन्नता नहीं है जैसी अन्य देशों के दलों में पाई जाती है।

हरमैन फाइनर (Herman Finer) भी इस बात को कहते हैं कि अमेरिका के राजनैतिक दलों में वह विभिन्नता नहीं है जैसी इङ्गलैण्ड में श्रम दल (Labour Party) तथा रूढ़िवादी दल (Conservative Party) में पाई जाती है परन्तु अमेरिका में तो दोनों दल एक ही दल के दो अंग कहे जा सकते हैं और उस दल को रिपब्लिकन-कम-डेमोक्रेटिक (Republican-cum-Democratic) दल कहा जा सकता है।[2] इसका मतलब यही निकलता है कि दोनों दलों में जो हजारों सदस्य हैं वे सब राजनैतिक दृष्टिकोण से एक दूसरे से अधिक भिन्नता नहीं रखते हैं। उनकी आशाएँ, उत्कण्ठाएँ एक ही प्रकार की हैं; परन्तु दोनों दल अपना अलग-अलग संगठन किए हुए हैं और उनमें सैद्धान्तिक विभिन्नता न होते हुए भी अपने-अपने स्वार्थ की विभिन्नता तो है ही। दोनों ही शासन-सत्ता को हथियाने की इच्छा रखते हैं। वे भले ही राष्ट्र के हित के लिए मिलकर प्रयत्न न करें परन्तु इतना अवश्य है कि सरकार में उच्च पदों को प्राप्त करने के लिए वे सदैव प्रयत्नशील रहते हैं।[3]

(३) **वर्गीय मतभेद**—अमेरिका के दलों में सैद्धान्तिक मतभेद नहीं है परन्तु वर्ग-भेद है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि उनमें वर्ग-भेद होने के कारण सैद्धान्तिक मतभेद नहीं है। इङ्गलैण्ड में दलों में पारस्परिक मतभेद सिद्धान्त के आधार पर है। भारत और फ्रान्स में भी कुछ हद तक जाति और धर्म के आधार पर भी दल बन गए हैं परन्तु अमेरिका में इन दोनों का कोई महत्त्व नहीं है। उनका आधार वर्ग है और वर्ग का आधार आर्थिक व्यवस्था है। इसीलिए बीअर्ड (Beard) ने कहा है कि "अमेरिका के दलों के संगठन का आधार राजनैतिक सिद्धान्त नहीं है बल्कि उनमें आर्थिक हित और व्यक्ति विशेष है।"[4]

1 Brogan : op. cit., p. 38.

2 "America has only one party of the Republican-cum-Democratic, divided into two nearly equal halves by habits, the contest for office, the Republican being one-half and the Democratic the other half of the party."
(*H. Finer : Theory and Practice of Modern Governments*)

3 Austin F. MacDonald : American State Government and Administration, p. 113.

4 Beard : op. cit., p. 126.

दलों का प्रोग्राम व उनकी नीति :

अमेरिका में दलों में सैद्धान्तिक मतभेद न होने के कारण उनके प्रोग्राम व उनकी नीति में भी विशेष विभिन्नता नहीं है। समय-समय पर परिस्थितियों के अनुसार वे अपने रवैये बदलते रहते हैं। सिद्धान्त में पारस्परिक मतभेद न होने का यही कारण है कि वे बातें जिनके कारण यूरोप में दलबन्दियाँ होती हैं, अमेरिका के संविधान ने खत्म कर दी हैं। अमेरिका में दलों की लड़ाई सिर्फ शासन-सत्ता को हथियाने की है। वे सिद्धान्त में तो भेद रखते ही नहीं, केवल शासन-सत्ता को हाथ में लेने का प्रयत्न करते रहते हैं। हालाँकि हाल ही में वहाँ समाजवादी तथा कम्युनिस्ट दल भी उत्पन्न हो गये हैं परन्तु इनके समर्थकों की संख्या बहुत कम है।

दलों का संगठन :

अमेरिका में कुछ ऐसी परिस्थितियाँ हैं, और ये परिस्थितियाँ विधान द्वारा तथा सामाजिक संगठन द्वारा उत्पन्न कर दी गई हैं, और इनमें देश-भक्ति या नीति कोई महत्व नहीं रखती है, जिनके कारण योग्य नागरिक राजनैतिक जीवन में प्रवेश करना पसन्द नहीं करते हालाँकि यदि वे परिस्थितियाँ न होतीं तो शायद वे ऐसा पसन्द करते।[1] अमेरिका में अधिकतर निवासी अब भी यह समझते हैं कि राजनीति एक बखेड़ा है और इसमें पड़ना ठीक नहीं है। वे यह भी समझते हैं कि राजनीतिज्ञ सच्चे नहीं होते और इसलिए राजनीति तथा राजनीतिज्ञों से अलग रहना ही ठीक है।[2] उनका यह भी ख्याल है कि चूंकि प्रायः राजनीतिज्ञ सच्चे नहीं होते अतः उन्हें चुनने वाले भी सत्पुरुष नहीं होते।[3] यही कारण है कि अमेरिका में राजनीति में लोगों की उतनी तीव्र रुचि नहीं है जितनी इङ्गलैण्ड व फ्रान्स में है और यही कारण है कि इन देशों की सी दलबन्दी भी अमेरिका में नहीं है। यद्यपि दलों में जो सदस्य हैं वे अत्यन्त उत्कण्ठा एवं जोश के साथ कार्य करते हैं परन्तु जो नागरिक दलों से बाहर हैं उनकी राजनीति व राजनीतिज्ञों में रुचि नहीं है

1 Bryce: The American Commonwealth, p. 38.

2 'Large number of Americans are convinced that politics is an evil and that most politicians are dishonest. This conviction becomes their justification for not participating in politics. It is probably safe to say that the politician is no better or worse than those who elect him and that he reflects the standards of his most active supporters. If the politician is ever to become a mirror of the interests of the whole community, then the whole community must participate in politics. This selection is an exhortation and a guide to action."
(*Macdonald, Webb, Lewis & Strauss : op. cit., p. 253*)

3 "To the average American, politicians are crooks "*What's the use of voting ?* asks Mr. Citizen. '*Politicians are all alike!*" The truth is that politicians are no more corrupt than the people who elect them. The people corrupt the politicians." (*Ibid, p. 253*)

और वे राजनैतिक जीवन के झमेलों में नहीं पड़ना चाहते। इस प्रकार बहुत से योग्य नागरिकों की सेवा से राजनीति वंचित रह जाती है।

अमेरिका में दलों का संगठन अत्यन्त कठोर है और इसके कठोर होने का एकमात्र कारण यह है कि यहाँ पर बहुत से ऐसे चुनाव होते हैं – जैसे, राष्ट्रपति का, काँग्रेस का, राज्यों के गवर्नरों का, न्यायाधीशों का—जिनके लिये कोई भी व्यक्ति आशा नहीं कर सकता यदि वह किसी दल द्वारा निर्वाचित नहीं हो। इसी लालच में लोग दलों में घुसते हैं और इसीलिए बहुत से लोग उनसे अलग भी रहते हैं कि कहीं ऐसा न हो कि झमेले में तो फँस जायँ और प्राप्ति कुछ भी न हो।

दलों का संगठन और दृढ़ीकरण राष्ट्रीय परिषदों, राज्यों की परिषदों, जिले और गाँवों की परिषदों द्वारा किया जाता है। ये परिषदें अमेरिका के जीवन में इतनी जड़ जमा गई हैं कि राजनैतिक क्षेत्र में जितना काम उन्होंने किया है उतना किसी अन्य संस्था ने नहीं।[1]

भ्रष्टाचार और दलीय व्यवस्था का कुप्रयोग :

अमेरिका में दलीय प्रणाली ने भ्रष्टाचार का बोलबाला कर दिया है और जो कोई दल राजसत्ता को हथिया लेता है वही अपने दल वालों को पदों पर भरना शुरू कर देता है। इस प्रथा का प्रारम्भ जैक्सन के समय से हुआ और इसने शासन की दृढ़ नींव को खोखला करने में काफी योग दिया है। वास्तव में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि अमेरिका-निवासी जो इतने व्यवहार-कुशल है, इस भ्रष्टाचार के चक्कर में फँस जायँ और इसकी वजह से अपने देश के योग्य व्यक्तियों की सेवाओं से वंचित रह जायँ। यह तो स्पष्ट ही है कि जहाँ इस प्रकार का बोलबाला है वहाँ योग्यता की पूछ नहीं हो सकती बल्कि दल के सदस्य, रिश्तेदार, उनके पिट्टू आदि लोगों को उच्च पद मिलते हैं चाहे वे निकम्मे हा हों। इस भ्रष्टाचार के कारण समस्त सरकारी पदों पर अधिकतर निकम्मे लोग भरे रहते है। जो लोग कहीं भी सफल नहीं होते हैं वे दलों का सहारा लेते हैं ताकि उनके साथ रह कर कोई सरकारी पद प्राप्त कर लें। आधुनिक काल में जनता में इस प्रकार के भ्रष्टाचार के प्रति अत्यन्त घृणा उत्पन्न हो गई है और हालाँकि बहुत से सरकारी पदों के लिए अब प्रतियोगिता परीक्षाएँ होने लगी हैं परन्तु फिर भी अभी पक्षपात, स्वार्थ आदि वहाँ घर किए हुए हैं।

इस भ्रष्टाचार के कारण अमेरिका में राजनीति भी एक पेशे का रूप धारण कर गई है और इन पेशेखोर राजनीतिज्ञों ने एक प्रकार की लूटमार मचा रक्खी है। "चुनाव के युद्ध में उच्च पद विजय-सूचक चिन्ह है और विजेता युद्ध के पहले और

1 Munro: op. cit., p. 132.

युद्ध के बाद में लूट का माल अपने साथियों में बाँटता है। इनमें बड़े-बड़े पद उन्हें दिए जाते हैं जिन्होंने युद्ध में काफी चतुराई दिखाई है। जिन्होंने कम योग्यता का परिचय दिया है उन्हें छोटे-छोटे पद दिये जाते हैं। इस भ्रष्टाचार के कारण राजनीति का रूप अत्यन्त विकृत हो गया है।"[1] इसके कारण ही दलों के नेता राष्ट्रीय परिषदों और संघों को सङ्गठित किए हुए हैं और इसके कारण शासन का स्तर बहुत नीचा हो गया है। लोग इसी की वजह से अपने असली कर्त्तव्य को भूल बैठे हैं और स्वार्थ तथा बेईमानी के शिकार बन गए हैं।

राजनैतिक दलों के कार्य :

(१) राजनैतिक दल चुनाव के अवसरों पर जनता की राय एकत्रित करते हैं और तय करते हैं कि उसका रवैया किस तरफ हो। वे जनता को राजनैतिक विषयों से परिचित करते हैं, अपने-अपने सिद्धान्तों का प्रचार करते हैं, और लोगों को विश्वास दिलाते हैं कि शासन की सत्ता उनके हाथ में आने पर वे सामाजिक, राजनैतिक तथा आर्थिक व्यवस्था को ठीक कर देंगे।

(२) राजनैतिक दल चुनावों में अपने-अपने उम्मीदवार खड़े करते हैं और उनको निर्वाचित कराने के लिए प्रयत्न करते हैं।

(३) राजनैतिक दल भविष्य के राजनीतिज्ञों को भी तैयार करते हैं।

(४) राजनैतिक दल शासन की नीति का समीकरण करते हैं और समस्त विरोधी तथा विवादग्रस्त विषयों को सुलझाते रहते हैं। यदि व्यवस्थापिका में किसी भी दल का बहुमत न हो तो शासन की नीति का निर्धारण नहीं होगा, क्योंकि हमेशा एक दूसरे का विरोध होता रहेगा और कोई भी अन्तिम निर्णय नहीं हो सकेगा। परन्तु एक राजनैतिक दल के लोग एक ही सूत्र में बंधे रहने के कारण एक दूसरे का समर्थन करते हैं और इसलिए निर्णयात्मक निश्चय पर पहुँचने में देर नहीं होती। इसी प्रकार कार्यपालिका के कार्य-क्षेत्र में भी कोई व्यवस्था नहीं रहेगी और हमेशा अधिकारियों में मतभेद रहेगा। "अपनी-अपनी बाँसुरी और अपना-अपना राग" वाली कहावत चरितार्थ होगी।

(५) राजनैतिक दल केन्द्रीय राज्यों की, शहरों की तथा गाँवों की शासन की इकाइयों का समीकरण करते हैं।

अमेरिका में दलीय व्यवस्था उपर्युक्त कार्यों को सफलतापूर्वक सम्पन्न करने में अधिक सफल नहीं रही है बल्कि अमेरिका में राजनैतिक दलों का इन कार्यों में असफल होना वहाँ की एक विशेष बात रही है।

हम ऊपर कह चुके हैं कि अमेरिका में दलीय सङ्गठन अत्यन्त कठोर है। परन्तु

1 Dimock and Dimock : American Government in Action, p. 246.

यह दलबन्दी आकस्मिक नहीं है। इसे बनने में अनेक वर्ष लग गये हैं और इसने लोगों को काफी सीमा तक इस बात के लिये प्रेरित किया है कि वे अमेरिका में जनतन्त्र को सफल बनावें।[1] दलों ने वास्तव में अपने-अपने सिद्धान्त बनाकर तथा विभिन्न पदों के लिए अपने-अपने उम्मीदवार चुनकर और सामूहिक उत्तरदायित्व का नमूना पेश करके अमेरिका में एक अत्यन्त कठोर आधार बना लिया है।

द्वि-दल प्रणाली (Two-Patry System):

अमेरिका की दलीय प्रणाली की यह विशेषता है कि इसका आधार सांविधानिक न होने पर भी यह शासन की मशीन में बँध गई है।[2] अमेरिका के इतिहास में यह बात कई बार देखने में आई है कि द्वि-दल प्रणाली के विरोध में एक तीसरा दल पैदा हुआ है लेकिन बार-बार उसे इन दोनों दलों के मुकाबिले हार ही खानी पड़ी है। वहाँ पर राष्ट्रीय चुनावों का रूप प्रायः सरल रहा है। पहले तो फैडरल और रिपब्लिकन दलों में संघर्ष चला और सन् १८५६ के बाद रिपब्लिकन और डेमोक्रेट दलों में चला। कई बार और दल भी पैदा हुए परन्तु निर्वाचनों में उन्हें बहुत कम समर्थन प्राप्त हुआ। कभी-कभी तो ५ प्रतिशत से भी कम रहा। इसीलिए यह कहा जाता है कि अमेरिका में द्वि-दल प्रणाली ही काम करती है। प्रारम्भ में द्वि-दल प्रणाली इङ्गलैण्ड से आरम्भ हुई और उसके ही सम्पर्क से अमेरिका में स्थान पा गई।

अमेरिका में द्वि-दल प्रणाली क्यों है? इस प्रश्न का उत्तर ठीक प्रकार नहीं दिया जा सकता और इसका कोई एक कारण हो भी नहीं सकता है। प्रोफेसर हालकोम्ब (Halcombe) के अनुसार अमेरिका की शासन-प्रणाली में कुछ ऐसी विशेषताएँ हैं जिनके कारण वहाँ बहु-दल प्रणाली नहीं हो सकती है। पहली बात तो यही है कि अन्य देशों में दलबन्दी के हेतु जाति, वर्ग, धर्म तथा सामाजिक और आर्थिक समस्याएँ योग देती हैं परन्तु अमेरिका में इन बातों के लिए स्थान नहीं है। संघीय व्यवस्था में ये बातें अनुपस्थित हैं। दूसरी बात यह है कि यदि राष्ट्रपति के चुनाव के सम्बन्ध में दो से अधिक दल भाग लें तो राष्ट्रपति का चुनाव ही न हो क्योंकि उसे पूर्ण बहुमत मिलना ही मुश्किल पड़ जाय।[3]

प्रोफेसर आर्थर मैकमेहोन (Arthur Macmahon) का कथन है कि द्वि-दल प्रणाली का आधार उसी समय बन गया था जब कि संविधान की रचना हुई और इस आधार को बाद में शासन-प्रणाली ने और भी दृढ़ कर दिया। उसका मत है कि "राज्य की कार्यपालिका के पदाधिकारियों के चुनाव तथा राष्ट्रपति के चुनाव का व्यवस्था ही द्वि-दल प्रणाली के निर्माण में प्रेरणा देते हैं।" इसके अलावा शासन

1 Munro : op. cit., p. 132.
2 Edmund M. C. Chesney Sait : op. cit., p. 227.
3 Laski : The Political Parties of Today.

के क्षेत्र को यदि छोड़ भी दिया जाय तो देश की वैधानिक तथा आर्थिक व्यवस्था भी ऐसी ही है कि वहाँ दो ही दल हो सकते हैं और वे दल अन्य छोटे-छोटे दलों को अपने में ही मिला लेते हैं न कि उन्हें अपना प्रतिद्वन्द्वी बनावें ।[1]

द्वि-दल प्रणाली वास्तव में एक अच्छी व्यवस्था है, क्योंकि इसमें निर्वाचकों को पदाधिकारी को चुनते समय अधिक चक्करों में नहीं पड़ना पड़ता बल्कि उनके सामने दो ही रास्ते होते हैं जिनमें से एक आसानी से चुना जा सकता है । मुनरो के कथनानुसार द्वि-दल प्रणाली, बहु-दल प्रणाली की अपेक्षा, जो यूरोप के बहुत से देशों में तानाशाही की स्थापना से पूर्व प्रचलित थी, बहुत अच्छी प्रणाली है ।[2]

अमेरिका तथा इङ्गलैण्ड की दलीय व्यवस्था की तुलना :

इङ्गलैण्ड और अमेरिका की दलीय व्यवस्था में काफी अन्तर है जैसा कि उनके शासन संविधान व शासन-व्यवस्था में है ।

(१) सबसे पहली बात तो यही है कि इङ्गलैण्ड में बहुमत दल के हाथ में ही विधायिनी शक्ति होती है और चूंकि उसी की केबिनेट बनती है इसलिये उसी के हाथ में कार्यपालिका शक्ति भी होती है । परन्तु अमेरिका में व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं इसलिये वहाँ दोनों जगह दल की तानाशाही नहीं चल सकती है । राष्ट्रपति स्वतन्त्र रूप में कार्य करता है । अतः अमेरिका में दलीय उत्तरदायित्व कोई महत्त्व नहीं रखता है । राजनैतिक दलों का सैद्धान्तिक रूप में तो शासन के कार्य में काफी महत्त्व है परन्तु व्यावहारिक रूप में कम ही है ।

(२) अमेरिका में दलों का संगठन अधिक कठोर परन्तु अत्यन्त सुव्यवस्थित है और उसका कानून द्वारा नियन्त्रण होता है । संसार के अन्य किसी भी देश में कानून ने दलीय व्यवस्था पर नियन्त्रण प्राप्त नहीं कर पाया है ।

(३) इङ्गलैण्ड में राजनैतिक दलों में सैद्धान्तिक मतभेद अधिक है । जब जनता किसी दल को चुनती है तो वह उसे उसके सिद्धान्तों और नीति के आधार पर चुनती है और यह प्रदर्शित करती है कि वह अमुक सिद्धान्त व नीति के द्वारा शासित होना चाहती है । परन्तु अमेरिका में दलों में सैद्धान्तिक मतभेद नहीं है ।

(४) अमेरिका में यह नहीं कहा जा सकता कि यह सरकार खत्म हो गई और दूसरी प्रारम्भ हुई जैसा कि इङ्गलैण्ड में कहा जाता है कि श्रम दल की सरकार खत्म हुई और रूढ़िवादी दल की शुरू हुई (या इसके विपरीत हुई) । अमेरिका में सरकार किसी दल की नहीं होती । सरकार एक ही राजनैतिक सिद्धान्त पर चलती है सिर्फ दल बदलते रहते हैं और जिसका भी मौका लग जाता है वही सरकार को अपने हाथ में ले लेता है ।

1 Dimock and Dimock : op. cit., p. 249.

2 Munro : op. cit., p. 132.

सक्षेप में यह कहा जा सकता है कि अमेरिका में राजनैतिक दल शासन के शुष्क ढाँचे को रक्त प्रदान करते हैं और उसमें जान डालते हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Trace the origin and growth of political parties in the U. S. A. Why has the American system opened the way to the greatest political abuses?
2. Describe the organisation and working of the party system in U. S. A. Point out its difference with the party system in England. (*Agra, 1938, 1940, 1947*)
3. "Although political parties are not mentioned at all in American Constitution and are rarely mentioned in law, they ramify deeply in all the practical aspects of government." (*Munro*)

   In the light of this statement describe the organisation and functioning of political parties in America.

   (*Delhi, 1952, 1954; Punjab Supplementary, 1953*)

आठवाँ परिच्छेद

संयुक्त राज्य अमेरिका की न्यायपालिका

संसार के किसी भी देश में न्यायपालिका का सार्वजनिक नीति के निर्धारण में इतना हाथ नहीं है जितना संयुक्त राज्य अमेरिका में। अमेरिका में न्यायालयों का काम केवल न्याय करना ही नहीं है वरन् कानून का प्रतिपालन भी है। विधि की व्याख्या करके वे विधि-निर्माण में भी हाथ रखते हैं। परन्तु यह बात ध्यान में रखनी है कि न्यायपालिका द्वारा विधि की व्याख्या किया जाना तथा उसके द्वारा उसकी समीक्षा किया जाना—ये दोनों बातें भिन्न हैं। व्याख्या करने में तो न्यायालय विधि का वास्तविक अर्थ बतलाते हैं परन्तु समीक्षा करने में वे यह बतलाते है कि अमुक विधि वैध है या अवैध।

प्रोफेसर चार्ल्स हेन्स (Charles Haynes) जिन्होंने अमेरिका की न्यायिक व्यवस्था की महत्त्वपूर्ण व्याख्या की है, कहते हैं कि "संविधान की रक्षा तथा विधि और राजनैतिक सिद्धान्तों का समर्थन करना—यह कार्य न्यायालयों का है, और न्यायाधीशों द्वारा कॉमन लॉ के अनुसार कानून बनाया जाना—यह आधार न्यायालयों की सर्वोच्चता का आधार है।"[1]

अमेरिका जैसे संघात्मक राज्य में न्यायालयों के वास्तव में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण कार्य हो सकते हैं। वे सरकार तथा जनता दोनों पर अनुशासन रखते हैं। संघात्मक राज्य में एक केन्द्रीय सरकार होती है और घटक राज्यों की अलग-अलग सरकारें होती हैं और यह बात निश्चित है कि दोनों में झगड़े होंगे ही। केवल शक्तिशाली न्यायपालिका ही उन्हें तय कर सकती है। इसीलिए संविधान के निर्माताओं ने एक दृढ़ न्यायपालिका की व्यवस्था की जिससे संघीय न्यायालयों के साथ-साथ संघ का एक सर्वोच्च न्यायालय भी हो। उनकी बुद्धिमानी का परिचय संयुक्त राज्य अमेरिका के न्यायालय देते चले आ रहे हैं। सांविधानिक मामलों के निर्णय करने में अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय ने जो तत्परता दिखाई है और जो महत्त्वपूर्ण कार्य किया है वह राज्य-विज्ञान के लिए एक महत्त्वपूर्ण देन है।[2]

1 Haynes : American Doctrine of Judicial Supremacy, p. 27.

2 Munro : The Judicial System of the United States, p. 547.
"The court," says Hughes, "is the final interpreter of the acts of Congress. Statutes come to the judicial test......with respect to their true import, and a federal statute finally means what the Court says."
(*Dimock & Dimock : op. cit., p. 462*)

संविधान के निर्माताओं में इस बात पर गम्भीर मतभेद था कि संघ में एक सर्वोच्च न्यायालय के अलावा और भी न्यायालय हों या न हों, और अगर हों भी तो वे न्यायालय किस ढंग पर संगठित किये जायँ। अन्त में उन्होंने यह निश्चय किया कि "संयुक्त राज्य की न्यायिक शक्ति एक सर्वोच्च न्यायालय में तथा ऐसे न्यायालयों में निहित होगी जो समय-समय पर स्थापित किये जायँ।"

संघीय न्याय-क्षेत्र :

इससे पहले कि हम न्यायिक व्यवस्था का विस्तृत अध्ययन करें हमें संघीय न्यायालयों और अन्य छोटे न्यायालयों के परस्पर सम्बन्ध को समझ लेना ही उपयुक्त होगा। संघीय न्यायालयों को कुछ विशेष बातों पर न्याय करने का अधिकार है और उनका कार्य-क्षेत्र संविधान में दिया हुआ है। उनको छोड़कर शेष मामलों में अन्य न्यायालयों को निर्णय देने का अधिकार है। संघीय न्यायालयों का न्यायिक विषय-क्षेत्र संविधान में इस प्रकार दिया हुआ है:—

"संयुक्त राज्य की न्यायिक शक्ति के अधिकार-क्षेत्र में विधि और न्याय के आधार पर सभी सांविधानिक मामले आवेंगे। उसमें संयुक्त राज्य द्वारा की हुई सन्धियाँ या की जाने वाली सन्धियाँ भी आ जावेंगी। राजदूतों, मन्त्रियों तथा कौंसलों (Consuls) से सम्बन्धित विषय भी आवेंगे। जल-सेना तथा विवाह से सम्बन्धित विषय, दो या अन्य राज्यों के आपसी झगड़े, एक राज्य तथा दूसरे राज्य के नागरिकों के बीच झगड़े, किसी राज्य के नागरिकों द्वारा दूसरे राज्यों में जमीन-जायदाद के ऊपर हक जमाने से उत्पन्न झगड़े, एक राज्य और उसके नागरिकों के बीच में उठ खड़े हुए झगड़े—सभी उनके क्षेत्र में आवेंगे।"[1]

यह बात स्मरणीय है कि संघीय न्यायालयों के सामने न्यायिक मामले ही आ सकते हैं; कार्यपालिका तथा विधान-मण्डल सम्बन्धी मामले नहीं आ सकते। समय-समय पर काँग्रेस ही यह तय करती है कि संघीय न्यायालयों की विवादग्रस्त विषयों पर कितनी शक्ति है। ये न्यायालय पूर्ण रूप से प्रत्येक विषय के ऊपर स्वच्छन्द फैसला नहीं दे सकते हैं और सिवाय उन मामलों के जिनमें संयुक्त राज्य ही स्वयं वादी है, या जिनमें राज्य फँसे हुए हैं, संघीय न्यायालयों और राज्य के अन्य न्यायालयों के अधिकार बराबर हैं।

संघीय न्यायालयों का संगठन :

संविधान में सिर्फ एक ही न्यायालय की व्यवस्था की गई थी और उसमें यह इंगित कर दिया गया था कि अन्य न्यायालय समय-समय पर आवश्यकता पड़ने पर काँग्रेस स्थापित कर सकती है। अतः संयुक्त राज्य अमेरिका की आधुनिक न्यायिक

1 Constitution of the United States of America, Article III, Section 2.

व्यवस्था के आधार कांग्रेस द्वारा समय-समय पर पारित किये हुए न्यायिक अधिनियम हैं जिनमें सबसे प्रथम सन् १७८९ का न्यायिक अधिनियम (Judiciary Act of 1789) था। आज अमेरिका में तीन प्रकार के न्यायालय हैं। सबसे नीचे जिले के न्यायालय (District Courts) हैं। उनके बाद सर्किट न्यायालय (Supreme Courts) आते हैं और सबसे ऊपर सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court) है।

जिले के न्यायालय—न्याय के हेतु सारा देश न्याय के हिसाब से जिलों में बँटा हुआ है और प्रत्येक जिले में एक न्यायालय होता है। प्रत्येक राज्य में इस प्रकार कम से कम एक न्यायालय है। अधिक जनसंख्या वाले राज्यों में दो या तीन या चार भी ऐसे न्यायालय हैं। प्रत्येक न्यायालय में प्रायः एक ही न्यायाधीश होता है परन्तु कहीं-कहीं कार्य-भार अधिक होने के कारण दो या तीन अथवा चार न्यायाधीश भी हो सकते हैं। इनकी नियुक्ति राष्ट्रपति द्वारा सीनेट की स्वीकृति से की जाती है। आज अमेरिका में इस प्रकार के करीब ९० न्यायालय हैं जिनमें लगभग १९९ न्यायाधीश हैं।

इन न्यायालयों को मौलिक मामलों में दीवानी तथा फौजदारी के क्षेत्र में अधिकार हैं। अपील सम्बन्धी अधिकार इन्हें प्राप्त नहीं हैं। पोस्ट सम्बन्धी, लगान सम्बन्धी कानून-भंग सम्बन्धी, दिवालियापन सम्बन्धी आदि मामले इनमें जाते हैं। इनकी अपीलें सर्किट न्यायालयों में होती हैं।

सर्किट न्यायालय—सारा देश इन न्यायालयों की दृष्टि से दस भागों में बँटा हुआ है और प्रत्येक भाग में एक-एक सर्किट न्यायालय है। इन न्यायालयों में प्रायः तीन-तीन न्यायाधीश होते हैं यद्यपि कुछ में तीन से अधिक भी हैं। इन न्यायालयों की अदालतें न्यायिक विभागों में स्थान-स्थान पर होती हैं। ये शायद इसीलिए सर्किट न्यायालय कहलाते हैं कि ये एक स्थान पर नहीं होते बल्कि अदालतें घूमती रहती हैं। इन्हें जिला न्यायालयों की अपीलें सुननी होती हैं। इनमें कोई मौलिक (original) मामले नहीं आते। ये न्यायालय सन् १९२२ के कांग्रेस के एक अधिनियम द्वारा सर्वोच्च न्यायालय के आधीन कर दिये गये हैं और उसका प्रधान न्यायाधीश इनके कार्यों की निगरानी करता है।

सर्वोच्च न्यायालय (Supreme Court)—सर्वोच्च न्यायालय अमेरिका का सबसे उच्च न्यायालय है। संविधान में सिर्फ एक सर्वोच्च न्यायालय के लिए ही व्यवस्था थी। अन्य न्यायालयों के सम्बन्ध में तो उसमें यही लिखा गया था कि उनकी स्थिति वैसी ही होगी जैसी समय-समय पर कांग्रेस करे।

सर्वोच्च न्यायालय न्यायिक व्यवस्था का शिखर है। इसे संविधान के द्वारा ही शक्ति प्रदान की गई है और इसलिये यह व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका के नियन्त्रण

से परे है। इसमें ६ न्यायाधीश होते हैं जिनमें एक प्रधान न्यायाधीश होता है। प्रधान न्यायाधीश को २५,००० डॉलर तथा अन्य न्यायाधीशों को २०,००० डॉलर प्रति वर्ष वेतन मिलता है।

इन न्यायाधीशों को सीनेट की स्वीकृति से राष्ट्रपति नियुक्त करता है। अधिकतर वे लोग ही इस पद पर नियुक्त किये जाते हैं जो कानून-पंडित अथवा न्याय-विशेषज्ञ होते हैं। जनता भी यही पसन्द करती है कि इस पद पर योग्य व्यक्ति ही रक्खे जायँ। न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में सीनेट भी गुप्त मन्त्रणा करके गम्भीर विचार करती है। न्यायाधीश बनने के बाद व्यक्ति राजनीति के क्षेत्र में पूर्ण रूप से निष्पक्ष हो जाता है।

सर्वोच्च न्यायालय में मौलिक मामले भी आ सकते हैं और अपील सम्बन्धी भी। मौलिक मामले राजदूतों, मन्त्रियों या राज्यों से सम्बन्धित विषयों पर आ सकते हैं हालाँकि इनमें बहुत से मामलों में विशेष न्यायालय (Tribunal) स्थापित किये जा सकते हैं और बजाय सर्वोच्च न्यायालय के उनकी उनमें सुनवाई हो सकती है। अतः सर्वोच्च न्यायालय का अधिकतर कार्य तो अपीलों को ही सुनना है। यह अन्य सङ्घीय न्यायालयों की अपीलें सुनता है।

सर्वोच्च न्यायालय के न्यायाधीश ईमानदारी से कार्य करते रहने पर ७० वर्ष तक की आयु तक कार्य कर सकते हैं। उन्हें सिर्फ दुराचार या अन्याय का अभियोग चलाकर ही पदच्युत किया जा सकता है।

सर्वोच्च न्यायालय केवल एक न्यायालय ही नहीं है बल्कि एक "अविरल गति से चलने वाली सांविधानिक परिषद्" भी है। यह समय-समय पर संविधान की व्याख्या करता है और व्यवस्थापिका व कार्यपालिका के कार्यों को वैध या अवैध घोषित करता है। न्यायिक विनिश्चयों तथा निर्णयों की समीक्षा व उनका अवलोकन इसका विशेष महत्त्वपूर्ण कार्य है। इसका अर्थ यह है कि कोई भी कानून जो काँग्रेस ने पास किया या जो किसी राज्य की व्यवस्थापिका ने पास किया है, सर्वोच्च न्यायालय के द्वारा वैध या अवैध घोषित किया जा सकता है। इस न्यायालय को यह अधिकार है कि वह काँग्रेस व राज्य व्यवस्थापिकाओं द्वारा पारित कानूनों का निरीक्षण करे, और यदि कानून संविधान के विरुद्ध है तो वह उसे अवैध घोषित कर सकता है। इससे सम्बन्धित अन्य जितने भी मामले होंगे उन्हें सर्वोच्च न्यायालय ही मौलिक रूप में सुनेगा। यदि सर्वोच्च न्यायालय ने किसी स्टैट्यूट को गैरकानूनी घोषित कर दिया तो वह वैसा ही रहेगा और छोटे न्यायालय भी उस पर उसी प्रकार अमल करेंगे।

सर्वोच्च न्यायालय को यह शक्ति सन् १८०३ में प्राप्त हुई जब वहाँ के प्रधान न्यायाधीश मार्शल थे। सन् १८६८ के १४ वें संशोधन के बाद इस शक्ति का खूब प्रयोग हुआ और अब तक यह शक्ति सर्वोच्च न्यायालय में ही निहित है।

लेकिन इस प्रकार कानून के अवलोकन करने का अधिकार केवल सर्वोच्च न्यायालय को ही नहीं है। इसके अलावा जो ६० संघीय न्यायालय तथा सर्किट न्यायालय (Circuit Courts) हैं उन्हें भी इस प्रकार का अधिकार है। लेकिन अपील होने पर अन्तिम निर्णय सर्वोच्च न्यायालय का ही होता है। राज्यों के न्यायालयों को भी अपने-अपने यहाँ की व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून पर इस प्रकार के अधिकार हैं लेकिन जहाँ संघ के विषयों का या सांविधानिक विषयों का मामला होता है वहाँ सर्वोच्च न्यायालय को ही यह अधिकार प्राप्त है।

लेकिन इसका यह मतलब नहीं है कि सर्वोच्च न्यायालय व्यवस्थापिका की प्रत्येक बात में टाँग अड़ाया करे। सर्वोच्च न्यायालय तथा अन्य न्यायालय तभी व्यवस्थापिका के कार्य को अवैध घोषित कर सकते हैं जब कोई झगड़ा उठ खड़ा हुआ है और किसी ने उसके सम्बन्ध में न्यायालय की शरण ली है। यह स्थिति तभी उपस्थित होती है जब कोई व्यक्ति या व्यक्तियों का वर्ग किसी प्रकार व्यवस्थापिका के किसी कानून से प्रपीड़ित होकर न्यायालय की शरण लेता है। बिना इस परिस्थिति के उपस्थित हुए कोई न्यायालय व्यवस्थापिका के किसी कार्य में हस्तक्षेप नहीं करता है।

इस प्रकार के न्यायिक अवलोकनों का परिणाम यह होता है कि न्यायपालिका अमेरिका में केवल न्याय के क्षेत्र में ही नहीं रहती वरन् राजनैतिक क्षेत्र में भी उतर पड़ती है। एक लेखक तो यहाँ तक कहता है कि "सर्वोच्च न्यायालय ही राजनीति" है। परन्तु इसमें सत्यता नहीं है। मिस्टर जस्टिस होम्स (Holmes) जो अमेरिका की न्याय-व्यवस्था के सम्बन्ध में विशेष ज्ञान रखते थे, कहते हैं कि "जब कभी कोई झगड़ा खड़ा होता है जिसमें कुछ लोग पक्ष में हैं और कुछ विपक्ष में तो वह झगड़ा दो सामाजिक दलों के झगड़े का रूप धारण कर लेता है और वे दोनों दल एक दूसरे को नीचा दिखाने की कोशिश करते हैं।"[1] तब सर्वोच्च न्यायालय ही उसकी राजनैतिक गम्भीरता को समझता है और उसके प्रति अपना निर्णय देता है। अमेरिका में सामाजिक तथा आर्थिक जीवन-क्षेत्र में भारी संघर्ष है और इस प्रकार के झगड़े प्रायः होते रहते हैं।

Dean Roscol Pound of the Harvard Law School comments on Judicial Review and says : "It is not what the legislation desires, but what the courts regard as jurisdically permissible that in the end becomes law. Statutes give way before the settled habits of legal thinking which we call the Common law. Judges and jurists do not hesitate to assert that there are extra-constitutional limits to legislative power which puts Common law dogmas beyond the reach of fundamental states" (*Law in Books and Law in Action*: *American Law Review, XLIV, Jan.-Feb., 1910*)

सर्वोच्च न्यायालय का महत्व—जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सर्वोच्च न्यायालय अमेरिका में अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान रखता है। यह संविधान का रक्षक है और साथ ही साथ नागरिकों के मूल अधिकारों का भी रक्षक है। हैस्किन (Haskin) के शब्दों में "यह एक सन्तुलन-चक्र है जो शासन की मशीन में लगा हुआ है। यह राष्ट्रपति की स्वेच्छाचारिता के ऊपर प्रतिबन्ध है और व्यवस्थापिका को भी मनमानी करने से रोकता है। इसने शासन के विकास में बहुत हाथ बँटाया है।" निहित अधिकार (Implied Powers) के द्वारा इसने अपनी शक्ति का काफी बढ़ा लिया है और इसने अमेरिका के संविधान को परिस्थितियों के अनुकूल बनाया है। एक कृषक देश के न्यायालय के रूप में उत्पन्न होकर अब यह एक बड़े भारी व्यावसायिक देश का न्यायालय हो गया है और आर्थिक संघर्षों के मध्य इसने अपने को उनका निबटारा करने में अपूर्व रूप में सफलीभूत बनाया है। फाइनर (Finer) के शब्दों में "सर्वोच्च न्यायालय अमेरिका के विधान में वास्तव में अपना एक विशेष स्थान रखता है और एक प्रकार से यह सीमेंट का काम करता है जिसने संघीय ढाँचे को पूर्ण रूप से मजबूत बना दिया है।" इसके बारे में यह भी कहा जाता है कि जिस प्रकार सौर्य-व्यवस्था (Solar System) के बिना सूर्य की कुछ स्थिति नहीं है उसी प्रकार बिना सर्वोच्च न्यायालय के अमेरिका के संविधान की भी कोई स्थिति नहीं है।[1]

अमेरिका की न्याय-व्यवस्था की आलोचना :

अमेरिका की न्यायिक व्यवस्था में कुछ संशोधन की आवश्यकता है। आधुनिक काल में न्यायालयों के ऊपर आर्थिक तथा राजनैतिक संघर्षों की वजह से इतना कार्य-भार पड़ गया है कि वह उनसे सम्हाले नहीं सम्हलता। इसीलिए प्रोफेसर विलोग्बी (Willoughby) कहते हैं कि जैसे शासन के अन्य कार्यों में कुशलता कम मिलती है उसी प्रकार न्याय-क्षेत्र में भी कार्य पूर्ण कुशलता से नहीं हो पाता है। विलियम हावर्ड टाफ्ट (William Howard Taft) जो राष्ट्रपति रहे थे और बाद में मुख्य न्यायाधीश भी बने, कहते हैं कि "यदि किसी क्षेत्र में हम अपने आदर्श से नीचे गिरे हैं तो केवल सार्वजनिक अधिकारों की रक्षा करने और न्याय प्रदान करने में, यद्यपि हमारी म्यूनिसिपल गवर्नमेण्ट भी आदर्श से नीचे है।"

हाल ही में संयुक्त राज्य में न्यायालयों के ढाँचों को दृढ़ बनाने के लिए एक आन्दोलन भी चला है और इसीलिए सन् १९३९ में काँग्रेस ने प्रशासकीय वर्ग में से कुछ अधिकारी इस कार्य के लिये नियुक्त किये कि वे न्यायालयों को कार्य-कुशल होने

1 "Judiciary has given the American polity and constitution its most needed leven......It harmonizes the smooth working of Federalism and is a bulwark both against sectionalism of the States and Central absolutism." (*Brij Pal's Letters*)

के लिये मदद दें। इनका कार्य न्यायालयों का सङ्गठन, उनकी आर्थिक व्यवस्था, न्यायालयों की जानकारी के लिये विविध सूचनाएँ एकत्रित करना तथा अन्य प्रकार के आँकड़े इकट्ठे करना आदि है।

इङ्गलैण्ड और अमेरिका की न्यायिक व्यवस्था की तुलना :

(१) इङ्गलैण्ड में न्यायालयों को संसद द्वारा पारित कानूनों को अवैध घोषित करने का अधिकार नहीं है, परन्तु अमेरिका में है।

(२) इङ्गलैण्ड में संसद की प्रभुता है, परन्तु अमेरिका में न्यायपालिका कांग्रेस की प्रभुता पर एक प्रतिबन्ध है।

इङ्गलैण्ड और फ्रान्स में न्यायालयों के पास कोई 'सर्वोच्च' कानून नहीं है जो संसद के कानून का खण्डन करे। यद्यपि फ्रान्स का संविधान भी लिखित है, फिर भी विधान की व्याख्या की शक्ति न्यायालयों को केवल सीमित रूप में ही दी गई है।

(३) अमेरिका में न्यायालयों का कानूनों का अवलोकन व उनकी समीक्षा करने का अधिकार अत्यन्त प्रबल है। इङ्गलैण्ड में यह नहीं है क्योंकि वहाँ संसद की प्रभुता है और उसके ऊपर कोई बड़ी शक्ति नहीं है।

"इङ्गलैण्ड में न्यायाधीश किसी भी हालत में संसद द्वारा पारित कानूनों का खण्डन नहीं कर सकते। यदि कोई नियम स्टैट्यूट की किताब पर लिखा हुआ है तो उन्हें उसे मानना ही पड़ता है। परन्तु अमेरिका में न्यायाधीश यह भी पूछ सकते हैं कि अमुक कानून को स्टैट्यूट की पुस्तक में लिखा जाने का अधिकार है या नहीं।"

(मेरिअट)

(४) इङ्गलैण्ड में समस्त कानूनों की एक समान शक्ति है और सब समान रूप में मान्य हैं। परन्तु अमेरिका में चार प्रकार के कानून हैं :—

(अ) संविधान।
(ब) संघीय स्टैट्यूट।
(स) राज्यों के स्टैट्यूट।
(द) राज्यों का विधान।

इन चारों में सबसे अधिक महत्त्व संविधान का है।

(५) डाइसी के अनुसार इङ्गलैण्ड और अमेरिका की न्यायिक व्यवस्थाओं में एक और भेद है। इङ्गलैण्ड में जब कोई बात अवैधानिक कही जाती है तब उसका यह आशय निकाला जाता है कि यह देश की परम्परा व रिवाज के विरुद्ध है, परन्तु जब अमेरिका में कही जाती है तब उसका यह अर्थ निकाला जाता है कि वह संविधान के विरुद्ध है। यह भेद इसलिए है कि अमेरिका का विधान लिखित है और इङ्गलैण्ड का अलिखित।

(६) अमेरिका में यह भी कहा जाता है कि असली राज्य करने वाले राजनीतिज्ञ नहीं अपितु वकील हैं, क्योंकि वे ही संविधान की व्याख्या करते हैं।

यद्यपि अमेरिका की न्यायिक व्यवस्था की विभिन्न प्रकार से आलोचना की गई है तथापि यह सर्वमान्य है कि न्यायपालिका ने जितना महत्त्वपूर्ण स्थान इस देश में प्राप्त कर लिया है उतना संसार के किसी अन्य देश में वहाँ की न्यायपालिका को प्राप्त नहीं है। सर्वोच्च न्यायालय ने जिस प्रकार अमेरिका में संविधान की रक्षा करके संसार में एक अद्भुत नमूना पेश किया है वह वास्तव में अत्यन्त प्रशंसनीय है और "इसीलिये संयुक्त राज्य अमेरिका की संघीय व्यवस्था अद्वितीय सफलता प्राप्त करती रही है।" (डाइसी)

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the organisation and functions of the Supreme Court of U. S. A. What part does it play in the working of the American political system ?
   (*Agra, 1946, 1949, 1950; Nagpur, 1937; Andhra, 1939; All., 1944; Punjab, 1938, 1941*)
2. "The Judiciary is the cement which has fixed firm the federal structure." Comment. (*Alld., 1944*)
3. Compare and contrast the composition, powers and role of Federal Judiciary in the U. S. A. and Switzerland.
   (*Punjab, 1953; Delhi, 1950, 1952*)

— — —

नवाँ परिच्छेद

संयुक्त राज्य अमेरिका में घटक राज्यों की शासन-प्रणाली

अमेरिका में राज्यों का स्थान :

संयुक्त राज्य अमेरिका में राज्यों के पास शासन के वे विषय हैं जो केन्द्रीय सरकार को नहीं दिए गए हैं। ये वे विषय हैं जो संविधान के दसवें संशोधन के द्वारा राज्यों के लिये छोड़ दिये गए हैं। केन्द्रीय सरकार को अनेक अधिकार निहित शक्ति के रूप में दिए गए हैं जिसका परिणाम यह हुआ है कि केन्द्रीय सरकार की शक्ति अधिक दृढ़ हो गई है और राष्ट्रीय प्रशासन में राज्यों का इतना महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं रहा है। लेकिन यद्यपि संशोधन के द्वारा राज्यों की शक्ति उतनी नहीं रही है जितनी संविधान के निर्माताओं ने उन्हें दी थी, परन्तु फिर भी जितनी उनकी आधुनिक काल में महत्ता है उतनी अतीत में नहीं रही है। इसका कारण यह है कि आधुनिक काल में शासन का कार्य बहुत बढ़ गया है और क्या राज्य तथा क्या केन्द्र, सभी का कार्य-क्षेत्र राष्ट्रीय पैमाने पर अत्यधिक बढ़ गया है।[1]

प्रारम्भ में सन् १७८७ में केवल १३ राज्य थे, जिनको मिलाकर संयुक्त राज्य अमेरिका बनाया गया था। ये वही उपनिवेश थे जिन्होंने ब्रिटिश सत्ता का बहिष्कार करके अमेरिका के स्वतन्त्रता-संग्राम में भाग लिया था। लेकिन बाद में नए उपनिवेशों की स्थापना हुई और कुछ क्षेत्र जीत कर राज्य बनाये गए तथा संयुक्त राज्य में शामिल कर लिये गए तथा कुछ अपने आप शामिल हो गए। इस प्रकार धीरे-धीरे उनकी संख्या बढ़ती गई। आज कुछ मिलाकर ४८ राज्य हैं। उनका अलग-अलग विधान है। उस विधान के द्वारा वे स्वतन्त्र हैं तथा उनके विधान भी स्वतन्त्र हैं, यद्यपि उन विधानों का रूप लिखित है और उनमें बहुत कुछ सिद्धान्त इङ्गलैण्ड के शासन-विधान से लिये गये हैं।

राज्यों के सम्बन्ध में कुछ विशेष बातें :

संयुक्त राज्य अमेरिका के राज्य जनसंख्या, क्षेत्रफल तथा भौगोलिक और आर्थिक परिस्थितियों में एक दूसरे से काफी भिन्नता रखते हैं। प्रत्येक राज्य का अपना-अपना अलग-अलग विधान है। प्रत्येक राज्य को अपने विधान में अपनी इच्छा के अनुसार संशोधन करने का अधिकार है; बशर्ते वह संशोधन किसी भी प्रकार केन्द्रीय शासन-विधान के प्रतिकूल नहीं है। प्रत्येक राज्य का संविधान केन्द्रीय

1 Munro : The Government of the United States, p. 589.

संविधान से स्वतन्त्र है और राज्यों की जनता ही उसकी निर्माता व रक्षक है। इस प्रकार अमेरिका के राज्यों में ४८ विधान हैं और यदि कोई वहाँ की शासन-व्यवस्था को पूर्ण रूप से समझना चाहता है तो उसे उन सब का अध्ययन करना होगा। कई वर्ष पूर्व एक फ्रान्सीसी विद्वान् ने अमेरिका की शासन-व्यवस्था के सम्बन्ध में भाषण देते हुए कहा था कि "अमेरिका की शासन-व्यवस्था को समझने के लिए एक विद्यार्थी को ४८ संविधानों का अध्ययन करना होगा, जिनमें आपस में किन्हीं भी दो में समानता नहीं है।" परन्तु यद्यपि इनके ढाँचे और वास्तविक शासन में व्यवहार में काफी अन्तर है फिर भी सैद्धान्तिक रूप में उन सब में काफी समानता है; और उनकी सैद्धान्तिक समानता के कारण ही हम उनके मूल सिद्धान्तों को सरलतापूर्वक समझ सकते हैं। लॉर्ड ब्राइस ने कहा है कि "उनमें हम इङ्गलैण्ड की प्राचीन संस्थाओं तथा चार्टर द्वारा प्रदान कॉरपोरेशनों की नकल पाते हैं और इङ्गलैण्ड की पार्लियामेण्ट तथा अँग्रेज जाति की शासन-प्रबुद्धि ने उन पर इतना प्रभाव डाला है कि ऐसा प्रतीत होता है कि वे १८ वीं शताब्दी के इङ्गलैण्ड की शासन-व्यवस्था से काफी समानता रखते हैं।[1]

इन राज्यों के शासन की समानता पर थोड़ा दृष्टिपात करने की आवश्यकता है। पहली बात तो यह है कि प्रत्येक राज्य का राष्ट्रीय संविधान में समान अधिकार है। प्रत्येक राज्य की स्वयं की सरकार है। प्रत्येक राज्य में प्रायः सार्वजनिक मताधिकार द्वारा ही संस्थाओं का निर्माण किया जाता है। प्रत्येक राज्य में नागरिक को समान अधिकार हैं और वे कानून की दृष्टि में बराबर हैं। प्रत्येक राज्य में शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को भी माना गया है। प्रत्येक राज्य का संविधान जनता का है और जनता की ही इच्छा पर आश्रित है। जनता ही प्रत्येक राज्य में सर्वोच्च अधिकारी अर्थात् गवर्नर को चुनती है और जनता ही के हाथ में जनतन्त्र के तीन अस्त्र—लोक-निर्णय (Referendum), निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) और प्रत्याहरण (Recall) हैं। विधान में संशोधन भी जनता ही करती है। प्रत्येक राज्य में एक निर्वाचित गवर्नर, शासन के कई अन्य अधिकारी, एक द्वि-सभात्मक व्यवस्थापक मण्डल, एक स्वतन्त्र न्यायपालिका और अन्य स्थानीय स्वायत्त संस्थाएँ जैसे काउण्टी, नगर टाउनशिप, ग्राम आदि होते हैं। वे सब इस बात पर सहमत हैं कि स्थानीय आवश्यकताओं की पूर्ति स्थानीय संस्थाओं द्वारा ही की जानी चाहिए। इन सब बातों के अलावा सब राज्यों में यह भी देखने में आता है कि वहाँ राजनैतिक दल भी एक-से हैं। राष्ट्रीय तथा राज्यों की राजनीति में वही दल काम करते हैं, उनके एक-से ही नाम हैं तथा उनका एक-सा

1 Bryce : American Commonwealth, Vol. I, p. 478.

ही संगठन है। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि अमेरिका की सम्पूर्ण शासन-व्यवस्था की धुरी राज्य ही है। बिना राज्यों के राष्ट्रीय सरकार काम ही नहीं कर सकती है। बिना उनके न तो राष्ट्रपति का निर्वाचन ही सम्भव है और न काँग्रेस का ही निर्माण हो सकता है। राज्य ही मतदाताओं की सूची तैयार करते हैं और काँग्रेस के चुनाव के लिए चुनाव-जिले बनाते हैं। बिना उनके प्रयास के काँग्रेस का चुनाव ही मुश्किल पड़ जाता।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट है कि राज्यों की सरकारों में एक दूसरे में अत्यधिक समानता है; यद्यपि दूसरे देशों के लोग इस बात पर ही अधिक जोर देते हैं कि उनमें भिन्नता बहुत है। हम यह नहीं कहते कि उनमें भिन्नता कम है परन्तु वह महत्त्वपूर्ण विषयों में नहीं है। अधिक महत्त्वपूर्ण विषयों में तो समानता का ही आधिक्य है। वास्तव में राज्यों की शासन-व्यवस्था में इतनी असमानता नहीं है जितनी एक दूसरे की परम्पराओं व रीति-रिवाजों में है तथा जितनी उनके दृष्टिकोणों में है एवं जितनी उन व्यक्तियों में है जिन्हें वे अपने-अपने यहाँ चुनते हैं। लेकिन जब हम अमेरिका की प्रादेशिक विभिन्नता पर गौर करते हैं तो हम असमानताओं से उतने आकर्षित नहीं होते जितने समानताओं से होते हैं।[1]

राज्यों का भविष्य :

संयुक्त राज्य अमेरिका में राज्यों की वर्तमान स्थिति अत्यन्त आलोचनापूर्ण है क्योंकि वे शासन-कार्य में इतनी कुशलतापूर्वक सहयोग नहीं दे पा रहे हैं जितना वे दे सकते हैं। राज्यों की शासन-व्यवस्था की कमजोरियों तथा राष्ट्रीय शासन की मजबूती को देखकर अमेरिका में कुछ आलोचक इन राज्यों के सम्बन्ध में यह तक ख्याल करते हैं कि शायद भविष्य में ये लुप्त हो जायें। प्रो० डब्ल्यू० वाई० इलियट (W. Y. Elliot) ने अपनी "सांविधानिक सुधार की आवश्यकता" (The Need for Constitutional Reform) नामक पुस्तक में राष्ट्रीय शासन की मजबूती तथा केन्द्रीय सरकार द्वारा शासन-सत्ता का केन्द्रीयकरण और राज्यों की सीमित शक्ति व उनकी दुर्बलता पर संकेत किया है और उन्होंने इस बात पर जोर दिया है कि बड़े-बड़े राज्यों को कुछ विधायनी तथा प्रशासकीय शक्तियाँ और भी दी जानी चाहिये। परन्तु यह सम्भव नहीं है कि इस प्रकार से राज्यों के अधिकारों की वृद्धि की जाय। ऐसी हालत में मध्यम मार्ग ही अपनाना उचित होगा और ऐसी स्थिति उत्पन्न करना ही ठीक होगा जिसमें केन्द्रीय शासन के क्षेत्राधिकार को बिना स्पर्श किये ही राज्य अपनी व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका शक्ति का स्वतन्त्रतापूर्वक सदुपयोग करें और इनमें तथा अपनी आर्थिक योजनाओं, काउण्टी व

1 Munro : The Government of the United States, p. 621.

म्यूनिसपैलिटी की सरकारों में किसी भी प्रकार केन्द्र से अनुचित रूप में प्रभावित न हों।[1]

राज्यों की व्यवस्थापिका :

राज्यों की शासन-व्यवस्था का सबसे महत्त्वपूर्ण भाग उनकी व्यवस्थापिका है। छोटी सभा प्रतिनिधि-आगार (House of Representatives) कहलाती है और बड़ी सभा सीनेट (Senate) कहलाती है (केवल एक राज्य में जिसका नाम निब्रास्का (Nebraska) है, एक-सभात्मक व्यवस्थापिका है) इस राज्य ने सन् १९३४ में एक संशोधन द्वारा एक-सभात्मक व्यवस्थापिका की स्थापना की जिसमें ४३ सदस्य थे। राज्यों की व्यवस्थापिकाएँ राज्यों के शासन में प्रमुख हाथ रखती हैं। वे विधि-निर्माण करती हैं, धन के व्यय पर नियन्त्रण रखती हैं तथा प्रशासकीय अधिकारी-वर्ग पर भी नियन्त्रण रखती हैं। इसमें सन्देह नहीं कि व्यवस्थापिकाओं की शक्ति पर नियन्त्रण काफी है और लोक-निर्णय (Referendum) तथा निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) की प्रणाली ने उनकी शक्ति पर काफी सीमा भी लगा दी है और यह भी निस्सन्देह सच है कि अधिकारी-वर्ग की स्वतन्त्रता के कारण व्यवस्थापिकाओं की शक्ति कुछ कम भी हो गई है परन्तु फिर भी व्यवस्थापिकाएँ ही राज्य की सबसे प्रभावशाली प्रशासिका हैं। राज्यों की व्यवस्थापिकाओं में भी अधिक विभिन्नताएँ हैं परन्तु उनकी मौलिक स्थिति में समानता ही है। उनके नाम भी अलग-अलग हैं परन्तु १९ राज्यों में उन्हें एक ही नाम से—जनरल असेम्बली (General Assembly)—पुकारा जाता है।

राज्यों की दोनों सभाओं के सदस्य वहाँ के नागरिकों द्वारा निर्वाचित किये जाते हैं। नागरिकों को दोनों सभाओं के लिये मतदान का अधिकार है। दोनों सभाओं के निर्वाचन-क्षेत्र भिन्न-भिन्न होते हैं (यदि ऐसा न हो तो फिर दो सभाएँ रखने का प्रयोजन ही क्या रहा)। सीनेट में काउण्टियों द्वारा निर्वाचित सदस्य आते हैं। प्रतिनिधि-आगार में चुनाव के लिये विभाजित किये हुए जिलों में से प्रत्येक से एक-एक प्रतिनिधि आता है। यह विभाजन जनसंख्या के आधार पर होता है। इसीलिये यह कहा जाता है कि सीनेट के निर्वाचन का आधार भौगोलिक है लेकिन प्रतिनिधि-आगार के निर्वाचन का आधार जनसंख्या है। सीनेट में अधिकतर शहरों के लोग होते हैं। इसका कारण यह है कि संयुक्त राज्यों में व्यवसायों में अत्यधिक वृद्धि हो जाने के कारण शहरों की संख्या बढ़ गई है लेकिन प्रतिनिधि-आगार में अधिकतर ग्रामीण जनता ही है। चूँकि प्रतिनिधि-आगार सीनेट से अधिक बड़ा है इसलिये अधिक प्रिय है।

व्यवस्थापिकाओं की अवधि—व्यवस्थापिका सभाओं का कार्य-काल समस्त राज्यों

1 Dimock & Dimock : op cit., p. 146.

में एक समान नहीं है। अधिकतर राज्यों में सीनेट का कार्य-काल प्रतिनिधि-आगार से अधिक है। प्रायः सीनेट में तो सदस्यों का कार्य-काल समाप्त हो जाने पर पुनरावृति ही होती है, उन्हीं में कुछ हेर-फेर कर दिया जाता है; परन्तु प्रतिनिधि-आगार का कार्य-काल समाप्त होने पर पुनः चुनाव होता है। बहुत से राज्यों में सीनेट के सदस्यों की आयु के सम्बन्ध में भी यह निश्चित कर दिया है कि उनकी आयु प्रतिनिधि-आगार के सदस्यों की आयु से अधिक हो। प्रत्येक राज्य की व्यवस्थापिका अपना कार्यक्रम तथा अपनी प्रक्रिया अलग-अलग बनाती है, हालांकि उनकी प्रक्रियाएँ कांग्रेस की प्रक्रिया से अधिक भिन्नता नहीं रखतीं।

व्यवस्थापिकाओं की कार्य-प्रणाली—समस्त राज्यों की व्यवस्थापिकाओं में सदस्यों को वेतन व भत्ते आदि सामान ही मिलते हैं और उन्हें करीब-करीब समान ही अधिकार हैं। प्रत्येक सदन में अध्यक्ष होता है और उसके अलावा अन्य कर्मचारी होते हैं जो उसकी कार्यवाही के लिये जिम्मेदार होते हैं। विधेयक किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है परन्तु धन-विधेयक केवल छोटी सभा अर्थात् प्रतिनिधि-आगार में ही पेश किया जा सकता है, लेकिन सीनेट उसमें संशोधन कर सकती है। प्रत्येक विधेयक के पास होने में तीन स्टेजें आती हैं। एक सभा में पास होने पर विधेयक दूसरी सभा में भेज दिया जाता है। यदि दोनों सभाएँ उसे पास कर देती हैं तो उस पर गवर्नर के हस्ताक्षर हो जाते हैं और वह कानून बन जाता है। यदि किसी विधेयक के विषय में दोनों सदनों में मतभेद हो जाता है तो वह विधेयक खत्म हो जाता है। गवर्नर भी किसी विधेयक को जिसे दोनों सदनों ने पास कर दिया है, पुर्नविचार के हेतु लौटा सकता है; परन्तु यदि उसे फिर दोनों सदनों ने निर्धारित बहुमत (जो प्रत्येक राज्य में अलग-अलग है) से पास कर दिया तो वह स्वयं ही कानून बन जाता है। उस समय गवर्नर का विरोध कुछ महत्त्व नहीं रखता। यह बात ध्यान में रखने योग्य है कि व्यवस्थापिकाओं का बहुत-सा कार्य समितियों द्वारा किया जाता है और प्रत्येक सदन में कई समितियाँ होती हैं।[1] स्थायी समितियों के अलावा कई विशेष समितियाँ भी होती हैं जो समय-समय पर आवश्यकतानुसार बनाई जाती हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका के सभी राज्यों में इस समिति-व्यवस्था के फायदों के साथ नुकसान भी नजर आते हैं। इनकी संख्या और इनके सदस्यों की संख्या इतनी अधिक है कि इनमें विधेयकों पर गम्भीर विचार नहीं हो पाता है।

सांविधानिक संशोधन :

संयुक्त राज्य अमेरिका के समस्त राज्यों के शासन-विधान का आधार केन्द्रीय

1 C. I. Winslow : State Legislative Committees.

शासन की भाँति शक्ति-विभाजन का सिद्धान्त है। लेकिन उनके संविधान में संशोधनों के सम्बन्ध में केवल व्यवस्थापिकाएँ ही बहुमत द्वारा कदम उठाती हैं। संशोधन के प्रस्ताव के लिये कितने वोट चाहिये, यह संख्या भी सब राज्यों में समान नहीं है। कहीं-कहीं उपस्थित सदस्यों व गणपूर्ति की संख्या के ३/४ वोटों की आवश्यकता होती है तो कहीं कुछ की। कहीं इन दोनों के बीच की कोई संख्या निश्चित होती है। लेकिन संशोधन लोक-निर्णय (Referendum) द्वारा ही पास किए जा सकते हैं। परन्तु कोई भी राज्य अपने विधान में ऐसा कोई संशोधन नहीं कर सकता जो केन्द्रीय शासन-विधान के प्रतिकूल हो क्योंकि केन्द्रीय शासन-विधान सर्वेसर्वा है और वह सम्पूर्ण राष्ट्र की सर्वोच्च विधि है।

राज्यों की व्यवस्थापिकाओं की शक्ति :

संयुक्त राज्य अमेरिका में केन्द्रीय सरकार की शक्तियाँ निर्धारित कर दी गई हैं। राज्यों के पास अवशिष्ट शक्तियाँ (Residuary Powers) हैं परन्तु आधुनिक काल में अन्तर्राष्ट्रीयता का अधिक जोर होने के कारण राज्य अधिकतर संघ सरकार का ही मुँह ताकते हैं। वाणिज्य तथा व्यवसाय की समस्याएँ बढ़ जाने के कारण अधिकांश में राज्य केन्द्रीय सरकार के ऊपर ही निर्भर हैं।

प्रत्यक्ष विधि-निर्माण तथा प्रत्याहरण (Direct Legislation and Recall):

लोकप्रिय शासन का अभिप्राय यह है कि मनुष्यों की आवश्यकताओं की पूर्ति की जाय और लोकप्रिय माँगों को पूरा किया जाय। जनता यह चाहती है कि उसके कानून समय के अनुकूल हों और लम्बे-लम्बे वाद-विवाद, व्यवस्थापिका की ढीली चाल, प्रतिबन्ध-सन्तुलन की नीति, दलीय प्रभाव, आवश्यकता से अधिक सावधानी आदि बातें विधि-निर्माण में रुकावट न डालें व देरी न करें। इसीलिये तो इनके प्रभाव को रोकने के लिये तथा समयानुकूल शीघ्रातिशीघ्र विधि-निर्माण के हेतु प्रत्यक्ष रूप में विधि-निर्माण की व्यवस्था की गई है जो लोकमत (Referendum) तथा निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) द्वारा होती है। ये जनतन्त्र के दो शक्तिशाली शस्त्र हैं जिनके द्वारा जनता प्रत्यक्ष रूप में स्वयं कानून बना सकती है। इसमें राज्य की व्यवस्थापिका के हस्तक्षेप की आवश्यकता नहीं होती। निर्बन्ध-उपक्रम-प्रणाली द्वारा जनता किसी भी विधि या संविधान में संशोधन के प्रस्ताव को लोगों के हस्ताक्षर करा कर पेश कर सकती है और फिर उस पर मतदान होता है। यदि राज्य की जनता अपने वोटों से उसे स्वीकार कर लेती है तो वह कानून बन जाता है। आधुनिक काल में अमेरिका में राज्यों में ५ प्रतिशत से लेकर १५ प्रतिशत तक जनता अपने हस्ताक्षरों सहित निर्बन्ध-उपक्रम के द्वारा प्रस्ताव पेश कर सकती है और इसी प्रकार ५ प्रतिशत से १० या १५ प्रतिशत तक जनता लोकमत के लिये भी प्रस्ताव कर सकती है। निर्बन्ध-उपक्रम और लोकमत में अन्तर यह है कि प्रथम के अनुसार तो

जनता प्रस्ताव पेश करती है और उस पर जनमत लिया जाता है लेकिन दूसरे के अनुसार व्यवस्थापिका किसी कानून को कार्य-रूप में लाने से पूर्व उस पर जनमत लेती है। एक जनता की ओर से उत्पन्न होता है, दूसरा व्यवस्थापिका की ओर से। लोकमत के लिए भी मतदाताओं को हस्ताक्षर सहित एक अर्जी देनी पड़ती है कि अमुक विधि पर लोकमत ले लिया जाय, अन्यथा व्यवस्थापिका स्वयं अपने आप ऐसा कोई कदम नहीं उठाती। लोकमत दो प्रकार का होता है। सांविधानिक संशोधनों के हेतु जो लोकमत लिया जाता है वह वैधानिक लोकमत कहलाता है और जो अन्य कानूनों पर लिया जाता है वह स्टैट्यूटरी लोकमत (Statutory Referendum) कहलाता है।

लोकमत तथा निर्बन्ध-उपक्रम को स्वीकार करने के कारण—लॉर्ड ब्राइस ने उपर्युक्त दोनों विधियों—लोकमत (Referendum) और निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) को स्वीकार करने के निम्नलिखित कारण बतलाए हैं:—

(१) व्यवस्थापिका पर अविश्वास और जनता द्वारा यह समझ लेना कि वह उनकी सच्ची प्रतिनिधि नहीं है और समयानुकूल उनके हितार्थ विधि-निर्माण नहीं कर सकती है।

(२) जनता का यह सन्देह कि व्यवस्थापिका में धनिक लोगों तथा कॉरपोरेशनों का अधिक प्रभाव हो सकता है और उनके ही पक्ष में कानून बन सकते हैं।

(३) जनता की कानून बनाने की शक्ति को अपने हाथ में रखने की इच्छा जिससे कि कानून सुगमता से बन जायं।

(४) समस्त जनता का सामूहिक बुद्धि-चातुर्य में विश्वास तथा उसके द्वारा यह समझा जाना कि उसकी बुद्धि व्यवस्थापिका के कतिपय सदस्यों की बुद्धि से श्रेष्ठ है।

(५) अमेरिका में लोग यह भी समझने लगे हैं कि "जनतन्त्र की बुराइयों को दूर करने का उपाय जनतन्त्र को और भी अधिक बढ़ा-चढ़ा रूप देना है।"

(६) मुनरो के अनुसार "जब मतदाताओं ने यह देखा कि उनके द्वारा चुने हुए प्रतिनिधि उनके विश्वासपात्र नहीं रहे तो उन्होंने व्यवस्थापिका के सदस्यों को बदलना तो उचित नहीं समझा परन्तु अपना प्रतिरोध दिखाने का दूसरा रास्ता निकाला जिससे विधि-निर्माण में धन, राजनीतिज्ञों का प्रभाव, चुनाव के समय किये हुए वायदों की अपूर्ति, दलों का दबाव, लॉबी (Lobby) प्रथा आदि का कोई महत्त्व न रहे तथा विधि बनाने वालों का यह भी ख्याल न रहे कि वे विधि के जानने वालों के लिये ही विधि-निर्माण कर रहे हैं। परिणाम यह हुआ कि इस प्रकार के विचार की पूर्ति के लिए उग्रदल (Radicals) वालों ने यह उक्ति सोची कि

सामाजिक सुधारों के लिए निर्वाचनों की भावना को प्रेरित करके उनके द्वारा ही सामाजिक सुधार किए जायँ।[1]

(७) एक बात यह भी है कि प्रत्यक्ष रूप से विधि-निर्माण करने से लोगों की शासन-कार्य में अधिक रुचि हो जाती है। प्राय: यह देखा जाता है कि व्यवस्थापिका के सदस्य, जो राजधानी में एक स्थान पर बैठते हैं और जिन्हें गवर्नर का सहारा होता है जो स्वयं कभी-कभी कुशासन करता है, जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व नहीं करते हैं और उनके ऊपर कार्य छोड़ देने पर जनता शासन-कार्य के प्रति विमुख सी हो जाती है।[2]

लोकमत तथा निर्बन्ध-उपक्रम व्यवस्था के दोष—व्यावहारिक दृष्टि से यह प्रथा अधिक लाभदायक सिद्ध नहीं हुई है। इसके निम्नलिखित दोष हैं:—

(१) प्रत्यक्ष रूप से विधि-निर्माण-प्रणाली नागरिक के सिविल अधिकारों को दुर्बल बना देती है क्योंकि बहुमत दल कभी भी अल्पसंख्यक दल की आवाज को कुचल सकता है। यदि बहुमत दल वाले किसी समय अपना कोई स्वार्थ सिद्ध करना चाहते हैं तो वे वैसा ही कानून बना सकते हैं और अल्पसंख्यक ऐसी हालत में नुकसान के भागी होते हैं।

(२) इस प्रणाली में यह भी निश्चित नहीं रहता कि अमुक कानून के निर्माण में अधिकांश जनता का हाथ है भी या नहीं। ८० प्रतिशत से अधिक लोग तो वोट देने ही नहीं जाते और जो जाते हैं उनमें से भी बहुत से वोट नहीं देते क्योंकि वे व्यवस्थापिका में भेजे हुए अपने सदस्यों का मुँह ताकते हैं और जैसे वे कहते हैं वैसा करते हैं। अत: जो कोई भी प्रस्ताव वोट द्वारा तय होता है उसमें २५ से ३० प्रतिशत तक ही वोट प्राप्त हो पाते हैं। इसीलिए यह कहा जाता है कि यह बहुमत के आधार पर निर्भर नहीं है बल्कि इसका आधार अल्पमत ही है; परन्तु उन अल्पसंख्यकों में राजनैतिक चैतन्यशीलता होती है।

(३) यह भी कहा जाता है कि लोकमत तथा निर्बन्ध-उपक्रम-व्यवस्था के आधार पर जनता की 'हाँ' या 'न' ही मालूम पड़ती है। उसे किसी विषय पर अपने विचार पूर्ण रूप से व्यक्त करने का मौका नहीं मिलता। मतदाताओं को दो रास्तों में से एक चुनना पड़ता है। ऐसा भी हो सकता है कि उन्हें एक भी रास्ता पसन्द न हो। ऐसी हालत में क्या होगा? इस प्रणाली में दो रास्तों में से बीच का रास्ता ढूँढने की कोई व्यवस्था नहीं है।

(४) इस प्रणाली से मतदाताओं का बोझ हल्का होने की अपेक्षा बढ़ जाता

1 Munro : Direct Legislation and Recall, p. 665.

2 Austin F. MacDonald: American State Government and Administration, p. 135.

है। इससे मतदान का खर्च भी बढ़ जाता है। इस प्रणाली से वे ही अधिक लाभ उठाते हैं जिनके पास पैसा है और जो अपनी बात का प्रचार करने हेतु काफी खर्च कर सकते हैं।

(५) इसमें कोई सन्देह नहीं कि इस प्रणाली के द्वारा ऐसे कानून भी पास हो जायँ तो जनता के लिए अहितकर हों, जिन्हें जनता आवेश में आकर पास कर दे। ऐसा भी हो सकता है कि लाभदायक नियमों को जनता अस्वीकार कर दे। ऐतिहासिक दृष्टिपात से यह ज्ञात होता है कि जनता ने अतीत में प्रत्यक्ष विधि-निर्माण के समय इतनी सावधानी व बुद्धिमानी का परिचय नहीं दिया है जितनी सावधानी व चतुरता उसने व्यवस्थापिका के लिए सदस्य निर्वाचित करते समय दिखाई है।

(६) अन्त में यह बात भी सच है कि इससे व्यवस्थापिका की शक्ति कमजोर हो जाती है और लोगों को उसका सदस्य बनने की उत्सुकता नहीं रहती।

उपर्युक्त बातों को ध्यान में रख कर यह कहा जा सकता है कि लोकमत तथा निर्बन्ध-उपक्रम व्यवस्था बहुत कुछ हद तक शासन के कार्य में बाधक ही हैं क्योंकि यह शासन-कार्य को बढ़ाती हैं। दूसरे अतीत के इतिहास के अवलोकन से ज्ञात होता है कि इस प्रणाली के द्वारा जनता ने अगर कोई बुरे कानून नहीं बनाये हैं तो कोई खास अच्छे भी नहीं बनाये हैं। परन्तु इसका यह अर्थ नहीं है कि यह प्रणाली बिल्कुल खराब है। कम से कम अमेरिका में तो यह जनतन्त्र का एक बहुत बड़ा अस्त्र है।

प्रत्याहरण (Recall)—

लोकमत तथा निर्बन्ध-उपक्रम के साथ-साथ ही प्रत्याहरण व्यवस्था बँधी हुई है। इसके द्वारा मतदाता हस्ताक्षर सहित अर्जी द्वारा गवर्नर या अन्य किसी भी राज्याधिकारी को हटाने का प्रस्ताव कर सकते हैं या कह सकते हैं कि अमुक अधिकारी के हटाने व न हटाने का निर्णय वोटों द्वारा कर लिया जाय। कई राज्यों में मतदाता यदि किसी अधिकारी के प्रत्याहरण के लिए प्रस्तावित करते हैं तो उसके उत्तराधिकारी के लिए भी साथ ही साथ प्रस्ताव भेज देते हैं।

प्रत्याहरण व्यवस्था का महत्व—अभियोग चलाने की प्रथा द्वारा सरकारी अफसरों पर मुकद्दमा चलाया जाता है और न्याय-विधान द्वारा उनका फैसला होता है परन्तु प्रत्याहरण व्यवस्था अभियोग चलाने की प्रणाली से भिन्न है। इसका यह अभिप्राय है कि अफसर जनता के समक्ष उत्तरदायी हों और यदि वे नहीं हैं तो जनता उन्हें अलग कर सकती है। अनुत्तरदायित्व तथा अविश्वास का पात्र होने पर जनता किसी भी अधिकारी को अलग कर सकती है। इसलिए अधिकारीगण अत्यन्त चौकन्ने और सावधान रहते हैं तथा पूर्ण चतुराई से काम करते हैं। जनता के प्रति उत्तरदायी होने के कारण वे केवल सावधानी से काम ही नहीं

करते बल्कि दलबन्दी वगैरह के चक्कर में भी नहीं पड़ते और सदैव जनता से सम्पर्क बनाए रखते हैं।

प्रत्याहरण व्यवस्था का दुरुपयोग—प्रत्याहरण व्यवस्था का दुरुपयोग भी किया जा सकता है। यदि इसका बार-बार प्रयोग किया जाय और उस प्रयोग के लिए कोई ठोस आधार न हो तो परिणाम यह होगा कि अधिकारीगण अपने कार्य में दिलचस्पी नहीं लेंगे क्योंकि वे यही समझते रहेंगे कि वे चाहें जिस समय हटाए जा सकते हैं और दूसरे यह बात भी होगी कि अच्छे तथा योग्य कर्मचारी प्राप्त करना कठिन हो जायेगा। दूसरी बात यह भी है कि यदि प्रत्याहरण प्रणाली एक ओर अधिकारियों में चतुरता, कार्य-कुशलता तथा जिम्मेदारी लाने के लिए है तो दूसरी तरफ यह दलबन्दी को भी प्रेरणा दे सकती है। उस हालत में अधिकारीगण अधिक से अधिक लोगों को अपने पक्ष में रखने का ही प्रयत्न करते रहेंगे। प्रारम्भ में जब इस प्रणाली को अपनाया गया था तो इसका एकमात्र उद्देश्य यह था कि इसका सहारा तब लिया जाय जब कोई दूसरा तरीका बाकी न रहे। यदि उस रूप में इसे प्रयोग में लाया जाता है तब तो ठीक भी है लेकिन यदि अन्य किसी भावना से इसका बार-बार प्रयोग किया जाता है तो काम ठीक प्रकार नहीं चलेगा और शासन-व्यवस्था ढीली पड़ जायगी। सौभाग्य की बात है कि अमेरिका के राज्यों में इसे अधिक प्रयोग में नहीं लाया जाता है। सन् १९०८ से केवल एक गवर्नर और करीब आधे दर्जन अन्य कर्मचारी ही हटाए गए हैं। इससे यही सिद्ध होता है कि इसका अमेरिका में विशेष प्रयोग नहीं होता।

राज्यों की कार्यपालिका :

अमेरिका के घटक राज्य छोटे-छोटे प्रजातन्त्र राज्य हैं और उनके संविधान में परिवर्तन नहीं किया जा सकता। प्रत्येक राज्य की प्रमुख कार्यपालिका शक्ति गवर्नर में निहित है जिसे जनता चुनती है। कार्यपालिका शक्ति व्यवस्थापिका से स्वतन्त्र है और कार्यपालिका विभाग में गवर्नर के अलावा एक लैफ्टीनेण्ट गवर्नर, एक सेक्रेटरी ऑफ स्टेट, एक कोषाध्यक्ष, एक एटोर्नी जनरल, एक ऑडीटर, एक शिक्षा सुपरिन्टेण्डेण्ट तथा कई अन्य कर्मचारी होते हैं।

गवर्नर :

प्रत्येक राज्य में कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी गवर्नर होता है। यह पद बहुत पुराना है—करीब ३०० वर्ष से चला आ रहा है—जब कि अमेरिका में छोटे २ उपनिवेश थे। गवर्नर के पद को केवल उसी राज्य का नागरिक प्राप्त कर सकता है। गवर्नर के पद के लिये उम्मीदवार प्राय: सभी राज्यों में प्राइमरी (Primaries) द्वारा चुने जाते हैं परन्तु कई राज्यों में जैसे न्यूयार्क तथा कनेक्टीकट में राज्यों की दलीय परिषदों द्वारा चुने जाते हैं। गुप्त मतदान प्रणाली द्वारा उनके वोट पड़ते हैं

और बहुमत प्राप्त करने वाला व्यक्ति गवर्नर बनाया जाता है। गवर्नर की आयु कम से कम तीस वर्ष की होनी चाहिये और वह उस राज्य में कम से कम ५ वर्ष रहता हुआ होना चाहिये। गवर्नर का कार्य-काल विभिन्न राज्यों में भिन्न-भिन्न है। प्रायः २ से ४ साल तक गवर्नर अपने पद पर रहता है। वह दुबारा भी चुनाव में खड़ा हो सकता है। उसके ऊपर अभियोग भी चलाया जा सकता है और सीनेट द्वारा दो-तिहाई वोटों से अभियोग स्वीकृत होकर राज्य के सर्वोच्च न्यायालय द्वारा निर्मित विशेष न्यायालय में उस पर मुकद्दमा भी चलाया जा सकता है। गवर्नर प्रत्याहरण-प्रणाली द्वारा भी हटाया जा सकता है।

गवर्नर की शक्तियाँ :

राज्य के गवर्नर की कई प्रकार की शक्तियाँ हैं। विधान-सभाओं द्वारा पारित विधेयक को वह अपने प्रस्ताव के साथ वापिस कर सकता है जिससे उस पर पुनः विचार किया जा सके। वह व्यवस्थापिका के विशेष अधिवेशन बुला सकता है। थ्योडोर रूजवेल्ट ने लिखा था कि "गवर्नर की हैसियत से मेरा आधे से ज्यादा काम विधि-निर्माण से सम्बन्ध रखता था।"[1] दल का नेता होने के नाते भी गवर्नर का बहुत काम है। बाह्य रूप में वह दलबन्दी से अलग रहता है परन्तु वह किसी भी दशा में अलग रह नहीं सकता। विधि-निर्माण में अपने दल के जोर पर ही वह सीनेट तथा प्रतिनिधि-आगार पर दबाव डाल सकता है। वह उन लोगों को जो उसके रास्ते में बाधक हैं जनमत द्वारा अलग भी करा सकता है। विधान-सभाओं द्वारा पारित कानूनों में सम्बन्धित वह अपने आदेश भी जारी कर सकता है। वह छोटे-छोटे अधिकारियों की नियुक्ति में भी हाथ रखता है। उसके कार्यों में शासन का निरीक्षण, धन-व्यय सम्बन्धी कार्य, सैनिक कार्य, केन्द्रीय शासन से सम्बन्ध रखना आदि प्रमुख हैं।

राज्य के अन्य कर्मचारी :

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, राज्य के अन्य कर्मचारी भी गवर्नर की भाँति जनता द्वारा चुने जाते हैं। वे उसके सहयोगी हैं। गवर्नर की केबिनेट के सदस्य केन्द्रीय केबिनेट के सदस्यों की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्र हैं। केन्द्र में तो वे राष्ट्रपति के द्वारा चुने जाते हैं अतः वे उसके प्रति उत्तरदायी होते हैं, परन्तु राज्यों में वे जनता के द्वारा चुने जाते हैं। राज्य के कर्मचारियों पर अभियोग भी चलाया जा सकता है। "वे जनता के ऊपर ही निर्भर हैं और उनमें एक के ऊपर एक अफसर है परन्तु वे सब बराबर के हैं।"[1]

1 Wilson : The State (1900), p. 499.

राज्यों की न्यायपालिका :

प्रत्येक राज्य का अलग-अलग स्वतन्त्र न्याय-विभाग है। राज्यों के न्यायालय संघीय न्यायालय के अधीन नहीं हैं। वे समान स्तर के हैं और अपने-अपने क्षेत्र में उन्हें पूर्ण न्यायिक अधिकार हैं। घटक राज्यों के न्यायालयों तथा संघीय न्यायालयों के सङ्गठन व प्रक्रियाओं में बहुत कुछ समानता है परन्तु विभिन्नता भी है। पहली बात तो यही है कि राज्यों के न्यायालयों में अधिकतर न्यायाधीश जनता द्वारा निर्वाचित होते हैं परन्तु केन्द्र में वे नियुक्त किये जाते हैं। दोनों न्यायालयों के न्यायिक क्षेत्र में भी भेद है। प्रत्येक राज्य में कई श्रेणियों के न्यायालय हैं। राज्यों में प्रायः तीन श्रेणियों के न्यायालय हैं। पहली श्रेणी में जस्टिसेज ऑफ दी पीस (Justices of the Peace) हैं जो मामूली रुपये-पैसे या छोटे-छोटे अपराधों की जाँच कर दण्ड देते हैं। इनके ऊपर काउण्टी तथा म्यूनिसिपल न्यायालय होते हैं जिनमें कुछ बड़े मुकद्दमों की प्रारम्भिक सुनवाई होती है तथा निचली अदालतों की अपीलें सुनी जाती हैं। इनके ऊपर उच्च न्यायालय होते हैं जो काउण्टी न्यायालयों के निर्णयों पर प्रार्थना किये जाने पर पुनर्विचार करते हैं और कुछ भारी मुकद्दमों पर प्रारम्भिक सुनवाई भी करते हैं। इन सब के ऊपर राज्य का सर्वोच्च न्यायालय होता है जिसमें सब प्रकार के मुकद्दमों पर अपील करने पर पुनः विचार होता है। इस न्यायालय के निर्णयों पर पुनर्विचार के हेतु संघ के सर्वोच्च न्यायालय (Federal Court) में अपील नहीं की जा सकती। सब राज्यों में न्यायाधीश अभियोग द्वारा अथवा छोटी सभा द्वारा आरोप लगाने पर सीनेट द्वारा मुकद्दमा चलाकर पदच्युत किये जा सकते हैं।

संयुक्त राज्य अमेरिका एक जनतन्त्रात्मक राज्य है, इसलिये समस्त घटक राज्यों में "स्थानीय शासन का काम जनता द्वारा प्रत्यक्ष रीति से चुनी हुई स्थानीय संस्थाओं द्वारा किया जाता है"। स्थानीय शासन के अन्तर्गत पुलिस, सफाई, निर्धनों की देख-भाल, शिक्षा, सड़क व पुल बनवाना, उद्योग व व्यापार के लाइसेंस देना, कर लगाना व इकट्ठा करना, छोटे-छोटे न्यायालय व जेल स्थापित करना आदि कार्य आते हैं। टाउनशिप (Township), काउण्टी (County), शिक्षालय जिला (The School District), कस्बा (Town) व नगर (City) ये सब स्थानीय संस्थाओं की इकाइयाँ हैं। इन संस्थाओं के अपने कर्मचारी होते हैं और इन्हें राज्यों से अधिकार मिले हुए होते हैं। इनमें नियम बनाने के लिये सभाएँ होती हैं जो उसी प्रकार कार्य करती हैं जैसे राज्यों की धारासभाएँ करती हैं। अमेरिका में स्थानीय शासन उस देश की शासन-प्रणाली का एक महत्त्वपूर्ण अंग है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the importance of Referendum, Initiative and Recall in democratic governments. How can they be exploited for ignoble ends ?
2. How does the executive in the States in U. S. A. differ from that at the Centre ?
3. Compare the judiciary of the States in U. S. A. with that at the Centre and point out the differences.

दसवाँ परिच्छेद

अमेरिका की सरकार की दार्शनिक समीक्षा

अमेरिका के संविधान और राष्ट्रीय शासन में अमेरिका-निवासियों की दार्शनिकता प्रतिबिम्बित होती है। राजनैतिक अवस्था के ऊपर उसकी छाप प्रत्यक्ष रूप से पड़ी है और उसका प्रभाव निरन्तर विद्यमान है।[1] अमेरिका-निवासियों के मस्तिष्क पर उनके राजनैतिक सिद्धान्तों की मौलिकता स्पष्ट रूप में मौजूद है। उनके हृदयों में कुछ सिद्धान्तों की इतनी दृढ़ नींव जमी हुई है कि उनका परित्याग करना उनके लिये असम्भव ही नहीं बल्कि पाप और अधर्म का चिह्न होगा। उन्हें वे अपने राजनैतिक ढाँचे में प्रमुख स्थान देकर उनके प्रति अपनी असीम श्रद्धा का परिचय देते हैं और उनका त्याग करना उनके राष्ट्र तथा जनतन्त्र के सर्वथा प्रतिकूल होगा।

अमेरिका के शासन के मूलभूत दार्शनिक सिद्धान्त :

(अ) शासन का प्रजातन्त्रीय स्वरूप—प्रजातन्त्र सरकार उस सरकार को कहते हैं जिसमें विधि-निर्मात्री तथा कानून के पालन करवाने वाली कार्यपालिका के सदस्य प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में जनता द्वारा चुने जायँ और दोनों के ऊपर प्रत्यक्ष अथवा अप्रत्यक्ष रूप में जनता का नियन्त्रण हो। कोई भी विधान-सभा जिसके सदस्यों को वंश-परम्परा के आधार पर सदस्यता प्राप्त होती है अमेरिका-निवासियों के मतानुसार प्रजातन्त्र के बिल्कुल प्रतिकूल है, चाहे वह कितना ही महत्त्वपूर्ण कार्य क्यों न करती हो। इसीलिए अमेरिका-निवासी प्रजातन्त्र का अर्थ जनतन्त्र निकालते हैं। राजतन्त्र उनके लिये असह्य है, चाहे राजा के अधिकार कितने ही सीमित क्यों न हों। उनके लिये राजतन्त्र तथा जनतन्त्र में कभी भी सामंजस्य नहीं हो सकता।

(ब) जनता के प्रतिनिधियों द्वारा निर्मित जनतन्त्र—वास्तव में असली जनतन्त्र वही हो सकता है जिसमें मतदाताओं को शासन की नीति के निर्माण में अधिकाधिक स्वतन्त्रता हो। जनतन्त्र जनता के प्रतिनिधियों द्वारा भी निर्मित किया जा सकता है और प्रत्यक्ष रूप में भी हो सकता है जिसमें प्रत्येक विषय पर जनता का लोकमत लिया जाय और उसी के आधार पर नवीन नीति बनाई जाय। अमेरिका के घटक राज्यों में हमें दोनों प्रकार का जनतन्त्र नजर आता है। वहाँ जनता कुछ कार्यों के लिये अपने प्रतिनिधि भी चुनती है लेकिन लोकमत (Referendum), निर्बन्ध-

1 Munro : The Government of the United States, p. 821.

उपक्रम (Initiative) तथा प्रत्याहरण (Recall) इन तीनों जनतन्त्रीय अस्त्रों के द्वारा प्रत्यक्ष जनतन्त्र का भी परिचय देती है।

(स) **समानता**—अमेरिका में जनता का यह विश्वास है कि व्यक्तियों को समान अवसर दिया जाय। प्रत्येक व्यक्ति को अपने पूर्ण विकास के लिए समान अवसर दिया जाता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि यदि एक व्यक्ति दूसरों से आगे बढ़ जाता है तो वह इसलिये बढ़ जाता है कि वह अधिक योग्य है न कि इसलिये कि उसे अन्य व्यक्तियों से अधिक सुविधाएँ प्राप्त हैं। सब को शिक्षा प्राप्त करने, मतदान देने, पद प्राप्त करने तथा जान व माल की रक्षा में समान अधिकार हैं।

(द) **सरकार की स्थिति**—अमेरिका की सरकार जनता की सेविका है और यह अपनी उपयोगिता तथा अपने न्याय के ऊपर स्थित है। इसमें आदर्शवाद तथा यथार्थवाद का सम्मिश्रण है।[1] सीलिये अमेरिका-निवासी इस बात को स्वीकार करते हैं कि जब तक सार्वजनिक कार्य के लिये व्यक्तिगत जिम्मेदारी कुशलतापूर्वक कार्य करती है तब तक सामूहिक जिम्मेदारी का कोई स्थान नहीं होना चाहिये। समाज को तभी क्षेत्र में आना चाहिये जब व्यक्ति सन्तोषजनक उत्तरदायित्व का परिचय नहीं देते हों। सरकार तो एक ऐसा अस्त्र है जिसे उसी समय प्रयोग में लाया जाय जब इसकी आवश्यकता हो परन्तु उस समय भी जनता का उस पर नियन्त्रण हो। व्यक्ति को इतना महत्त्व देकर तथा उसकी जिम्मेदारी में इतना विश्वास रखकर अमेरिका निवासियों ने आदर्शवाद की झलक दिखाई है और समाज तथा सरकार को व्यक्ति के पीछे लगाकर उन्होंने यथार्थवाद का परिचय दिया है।

सरकार की स्थिति के सम्बन्ध में उपयोगिता का जो सिद्धान्त है उसका आधार नैतिक है और वह इस बात को स्वीकार करता है कि सरकार का उद्देश्य अधिक से अधिक व्यक्तियों को सुख प्रदान करना हो। सरकार की स्थिति इसलिये आवश्यक है कि वह जनता का कल्याण करे और उसी के लिये प्रयत्नशील रहे। राज्य के न्याय का यही आधार है कि व्यक्ति की स्वतन्त्रता व उसकी जान व माल की रक्षा की जाय, उसे अपनी शक्तियों के विकास के लिये पूर्ण अवसर प्रदान किया जाय तथा उसके साथ निष्पक्षता एवं समानता का व्यवहार किया जाय। यदि राज्य ऐसा करता है तो वह निस्सन्देह स्थित रहने का अधिकारी है और उसकी उपयोगिता न्यायसंगत है।

1 Accordingly, the American view of government holds that individual responsibility for the public business is preferable to public responsibility so long as the public business can be satisfactorily accomplished in that way. But if it cannot, then society should undertake the task. The government is an instrument to be used when needed and its control must remain with the people.

(*Dimock and Dimock: The American View of Government, p. 57*)

शासकीय शक्ति को एक स्थान पर एकत्रित न होने देने का सिद्धान्त :

अमेरिका में सरकार के ऊपर सांविधानिक सीमाएँ हैं। बेन्थम (Bentham) ने राज्य के बारे में कहा था कि यदि राज्य को दृढ़ता और उन्नतशीलता प्राप्त करनी है तो उसके कार्यों पर प्रतिबन्ध नहीं होना चाहिए, लेकिन मिल (Mill) का इसके विपरीत यह कहना था कि जनतान्त्रिक राज्य का सिद्धान्त यह है कि प्रत्येक व्यक्ति को संरक्षण प्राप्त हो और राज्य उसी के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहे। उसने यह भी कहा था कि सरकार के कार्यों पर प्रतिबन्ध न होने पर अत्यधिक हानि की सम्भावना है। अमेरिका-निवासियों ने इसी सिद्धान्त को स्वीकार किया है। वे यह कभी सहन नहीं कर सकते हैं कि सरकार के कार्यों व उसकी शक्ति पर सीमा न हो। उन्होंने स्वयं अपने यहाँ शासन-कार्य को एक स्थान पर केन्द्रित नहीं रहने दिया है बल्कि राज्यों और राष्ट्र में बाँट दिया है। उन्होंने बहुत कुछ हद तक शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को अपनाया है और यह इसलिए कि वे परम्परा से ही शक्ति के केन्द्रीयकरण से घबड़ाते हैं। वे न तो उप-राज्यों की सरकारों को तथा न केन्द्र की सरकार को—किसी को अधिक शक्तिशाली नहीं होने देना चाहते हैं। सन्तुलन व प्रतिबन्ध तथा शक्ति-विभाजन के सिद्धान्तों को स्वीकार कर उन्होंने इस बात का पूर्ण परिचय दिया है।

उदारता, वैधानिकता तथा व्यवस्थापिका :

अमेरिका-निवासियों का विश्वास था कि सरकार एक बुरी वस्तु होते हुए भी उसकी आवश्यकता है। परन्तु उनका कहना है कि सरकार को पूर्ण वैधानिक होना चाहिए, अधिक उदार होना चाहिए, तथा समाज के कल्याण के लिए सदा प्रयत्नशील होना चाहिए।

अमेरिका की सरकार की विशेषता उसकी उदारता है जिसके द्वारा व्यक्ति को अपनी शक्ति के अनुसार कार्य करने के साथ-साथ आवश्यक सुविधाएँ भी प्रदान की जाती हैं तथा उसके प्रति सरकार का प्रत्येक बर्त्ताव न्यायसंगत एवं निष्पक्ष होता है। सरकार की जो भी नीति होती है उसका आधार बहुमत होता है। यदि वह समाज के किसी छोटे अंग का ही ख्याल करती है तो भूल करती है। वैधानिक सरकार का आशय यह है कि सरकार की शक्तियाँ नियन्त्रित हैं और यदि कोई सरकारी कर्मचारी शक्ति का दुरुपयोग करता है तो उस पर नियन्त्रण करने की पूर्ण व्यवस्था भी है।

व्यवस्थापिका की शक्ति का यह आशय है कि जनता द्वारा चुने हुए प्रतिनिधियों को ही विधि-निर्माण का अधिकार हो, बशर्ते उनके द्वारा निर्मित कोई कानून संविधान के प्रतिकूल नहीं है। संयुक्त राज्य में वैधानिक सत्ता इस प्रकार प्रत्यक्ष रूप में जनता के हाथ में नहीं है।

संयुक्त राज्य अमेरिका के शासन की सब से बड़ी विशेषता यह है कि वहाँ पर राजनीति तथा समाज दोनों ही द्वारा व्यक्ति की नैसर्गिक प्रवृत्तियों का आदर किया

जाता है। वहाँ के निवासियों का यह दृढ़ विश्वास है कि मानव के व्यक्तित्व को विकास के लिए अवसर दिया जाय, उसे सुविधाएँ प्रदान की जायँ न कि उसे किसी अन्य सामाजिक उद्देश्य की पूर्ति के लिये दबा कर रक्खा जाय। मानव के कल्याण में ही समाज तथा राज्य का कल्याण निहित है। उसी की स्वतन्त्रता में वास्तविक स्वतन्त्रता अन्तर्हित है। विकास की स्वतन्त्रता, उसके लिये सुविधाएँ और अवसर प्राप्त करना तथा देना यही वास्तविक न्याय और धर्म है।

अमेरिका का जनतन्त्र :

अमेरिका के जनतन्त्र की बहुधा आलोचना की जाती है। प्रायः यह कहा जाता है कि यह एक निर्जीव व्यवस्था है जो तन्द्रा और सुषुप्ति का शिकार बनी हुई है, जो समस्याओं को अन्धी होकर पकड़ती है और उसी प्रकार उनका हल निकालने की कोशिश करती है। यह भी कहा जाता है कि अमेरिका की शासन-व्यवस्था अस्थिर तथा चलायमान है, और शासन में अधिकतर आज्ञाओं की अवहेलना तथा अधिकारी-वर्ग की शक्ति का तिरस्कार करना दृष्टिगोचर होता है। कुछ लोगों का यह भी ख्याल है कि वहाँ पर बहुमत दल का इतना प्रभाव है कि अल्पसंख्यकों के हितों की रक्षा का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है और बड़े-बड़े भाषण देने वाले व्यक्ति ही जनता पर प्रभाव डाले हुए हैं। इसके अलावा वहाँ पर भ्रष्टाचार का बोलबाला है और इसकी वजह से ही राजनैतिक क्षेत्र में काफी गन्दगी आ गई है। इन सब के ऊपर एक और बात यह है कि अमेरिका में पदार्थवाद का अत्यधिक जोर बढ़ जाने के कारण लोगों में स्वार्थ इतना बढ़ गया है कि वह राष्ट्रीय हितों के लिये घातक सिद्ध हो रहा है।

परन्तु इन सबसे यह निष्कर्ष नहीं निकाल लेना चाहिए कि अमेरिका का जनतन्त्र पूर्णतया दोषपूर्ण है। यदि हम इन सब का निष्पक्ष भाव से विश्लेषण करें तो यही प्रतीत होगा कि इन सब में अधिकतर अतिशयोक्ति है। वास्तविकता यह है कि अमेरिका में राजनैतिक विषयों पर लोग रूढ़िवादी अधिक हैं और यद्यपि वे परिवर्तन के पक्ष में हैं फिर भी मूल सिद्धान्तों में कोई परिवर्तन नहीं पसन्द करते और यह रूढ़िवादी भावना जो कभी-कभी सुधारों का विरोध करती है अमेरिका-निवासियों की शक्ति को और भी दृढ़ बनाती है।[1] उनकी कठोर शासन-व्यवस्था ने उनके रूढ़िवाद को और भी अधिक प्रोत्साहन दिया है और उन्हें इसके लिए प्रेरित किया है कि वे व्यवहार में अपने पुरातन राजनैतिक सिद्धान्तों को, जो अत्यन्त सरल व पवित्र हैं, न भूलें। अमेरिका की शासन-व्यवस्था में अधिकारी-वर्ग की सीमा पर नियन्त्रण है, वहाँ कोई वर्ग-भेद नहीं है, और स्वार्थ, द्वेष तथा अहंकार जो वर्गीकृत समाज में नजर आते हैं, वहाँ स्थान नहीं पाते हैं। सब व्यक्ति समान हैं। सरकार

1 Bryce : The American Commonwealth, Vol. II, p. 451.

पर नियन्त्रण होते हुए भी उसे उस सीमा के भीतर पूर्ण स्वतन्त्रता है और संकट-कालीन अवस्था में उसे आशातीत कार्य-शक्ति प्राप्त हो जाती है।

अमेरिका का जनतन्त्र एक सफल जनतन्त्र साबित हुआ है और इसने सर्वदा अपने को समय के अनुकूल रखने का प्रयत्न किया है। इसमें जनता की बुद्धि का स्पष्ट परिचय मिलता है और यह सिद्ध हो जाता है कि उसकी कितनी प्राचीन परम्परा है जिसकी वह इज्जत करती है और उसका कितना दीर्घ अनुभव है। लोगों की यथार्थवादिता तथा प्रगतिशील सिद्धान्त-प्रवृत्ति ने देश में बहुत सुन्दर कार्य करके दिखाया है। जनतन्त्र ने उन्हें केवल यही नहीं सिखाया है कि स्वतन्त्रता का कैसे सदुपयोग किया जा सकता है, वरन् यह भी दिखाया है कि इसका दुरुपयोग कैसे रोका जा सकता है तथा किस प्रकार लोगों में समान-भाव तथा भ्रातृ-भाव पैदा किये जा सकते हैं।[1]

अमेरिका और ब्रिटेन की शासन-व्यवस्थाओं की तुलना :

अमेरिका और इङ्गलैण्ड की शासन-व्यवस्था में अन्तर प्रारम्भ से ही शुरू हो जाता है। अमेरिका में कार्यपालिका अध्यक्षात्मक (Presidential) है परन्तु इङ्गलैण्ड में संसदीय (Parliamentary)। उन दोनों की अलग-अलग व्याख्या के उपरान्त ही हम उनके गुण व दोषों का समीक्षण करेंगे।

अध्यक्षात्मक प्रणाली :

(१) राष्ट्र का अध्यक्ष जनता के द्वारा कुछ समय के लिए चुना जाता है। अपने स्थिति-काल में वह सिर्फ भयंकर अपराध करने पर ही अभियोग चलाकर अलग किया जा सकता है। वह व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायी नहीं है परन्तु वह उसमें भाषण दे सकता है। उसे राज्य के प्रमुख कर्मचारियों को नियुक्त तथा पृथक करने का भी अधिकार है। वह राज्य की वैदेशिक नीति का संचालक होता है, हालाँकि इस सम्बन्ध में उसे व्यवस्थापिका की किसी एक सभा की सहायता लेनी होती है।

(२) अध्यक्षात्मक प्रणाली में एक केबिनेट भी होती है लेकिन उसके सदस्य अध्यक्ष के द्वारा ही नियुक्त किये जाते हैं, उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं, तथा

---

1 Ibid, p. 471.

"The characteristics of the American nation are not due solely to democratic government but they have been strengthened by it and contributed to its solidity and the smoothness of its working.........America is made all of a piece; its institutions are the product of its economic and social conditions and the expression of its character. The old wine has been poured into new bottles, or to adapt a metaphor more appropriate to a country, the vehicle has been built with lightness, strength and elasticity, which fits it for the roads it has to traverse."

(*Bryce: Strength of American Democracy, p. 473*)

वही उन्हें पदच्युत कर सकता है। वे सदस्य न तो व्यवस्थापिका के प्रति जिम्मेदार होते हैं और न व्यवस्थापिका के किसी सदन के सदस्य ही होते हैं।

(३) अध्यक्षात्मक प्रणाली के अन्तर्गत एक व्यवस्थापक मण्डल भी होता है, जिसमें दो सदन होते हैं। इसका अध्यक्ष जनता द्वारा चुना जाता है। अध्यक्ष व्यवस्थापिका को भंग नहीं कर सकता। उसके द्वारा पारित विधेयकों के ऊपर अध्यक्ष को निषेधात्मक शक्ति का प्रयोग करने का भी अधिकार होता है, परन्तु दो-तिहाई बहुमत से पास हो जाने पर उसका वह अधिकार कुछ महत्त्व नहीं रखता।

संसदीय प्रणाली :

(१) संसदीय प्रणाली में कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी जनता के द्वारा निर्वाचित न होकर पैतृक आधार पर उस पद को प्राप्त करता है, परन्तु वह केवल नाममात्र का अधिकारी होता है। वास्तविक शक्ति संसद के हाथ में होती है। लेकिन संसद उसे अलग नहीं कर सकती।

(२) संसदीय प्रणाली में एक मन्त्रिमण्डल होता है जिसके सदस्य लोकसभा (व्यवस्थापिका) में से चुने जाते हैं और वे उसी के (व्यवस्थापिका) प्रति उत्तरदायी होते हैं।

(३) संसदीय प्रणाली में भी द्वि-सभात्मक व्यवस्थापिका होती है, जिसमें एक जनता के द्वारा कुछ समय के लिये चुनी जाती है और दूसरी पैतृक आधार पर प्राप्त की हुई सदस्यता के आधार पर निर्मित होती है। व्यवस्थापिका, केबिनेट के परामर्श पर कार्यपालिका के सर्वोच्च अधिकारी द्वारा भंग की जा सकती है।

अध्यक्षात्मक प्रणाली का सबसे अच्छा उदाहरण अमेरिका का संविधान है और संसदीय का इङ्गलैण्ड का संविधान। दोनों प्रथाओं में गुण और दोष दोनों ही हैं। दोनों प्रणालियों में अपने-अपने देश की परम्पराएँ तथा रीति-रिवाज घुसे हुए हैं और उनकी उन पर अमिट छाप है। एक का प्रयोग दूसरे देश में कभी अच्छे परिणाम नहीं दे सकता। उनके गुण व दोषों की विवेचना के सम्बन्ध में एक लेखक ने लिखा है कि "उनके गुणों की तुलनात्मक समीक्षा करने का अर्थ यह है कि हाथी और ह्वेल (Whale) की शक्तियों की तुलना की जाय। अपने-अपने देश में दोनों अनुकूल हैं और यदि उनका स्थान बदल दिया जाय तो अत्यन्त हास्यास्पद स्थिति पैदा हो जायेगी। इङ्गलैण्ड तथा अमेरिका दोनों की केबिनेट ने अपने-अपने यहाँ की राजनीति में सन्तोषजनक कार्य करके दिखलाया है······यदि अमेरिका की प्रणाली में यह दोष है कि वहाँ शासन की दो शाखाओं (व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका) में परस्पर घनिष्ठ सम्बन्ध न होने पर दुर्बलता आ गई है तो वहाँ की यह विशेषता है कि वहाँ शक्ति कतिपय व्यक्तियों की मुट्ठी में भी नहीं आ गई है।"

अध्यक्षात्मक एवं संसदीय प्रणालियों की मूलभूत विभिन्नताएं :

(१) अमेरिका की शासन-व्यवस्था का आधार शक्ति-विभाजन तथा सन्तुलन व प्रतिबन्ध का सिद्धान्त है। वहाँ पर व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका दोनों को समान स्तर प्राप्त है और उसमें यह खतरा है कि दोनों में मतभेद होने पर शासन-व्यवस्था का काम गड़बड़ हो सकता है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि वहाँ पर शासन के दो विभिन्न भागों में ऐक्य नहीं है। परन्तु इङ्गलैण्ड में यह बात नहीं है। वहाँ पर संसद सर्वोच्च शक्ति है और कार्यपालिका उसके प्रति उत्तरदायी है। अतः जितना वहाँ शासन के भागों में मिलाप है उतना अमेरिका में नहीं है।

(२) अमेरिका और इङ्गलैण्ड की केबिनेट में भारी अन्तर है। इङ्गलैण्ड की केबिनेट तभी तक कायम रहती है जब तक उस पर लोकसभा का विश्वास है अर्थात् अपनी अक्षमता के लिए वह लोकसभा के प्रति उत्तरदायी है परन्तु अमेरिका में जनता यह जानती ही नहीं कि "लापरवाही तथा गलती का जिम्मेदार किसे ठहराया जा सकता है"।

(३) दोनों देशों की न्यायपालिका में भी अन्तर है। अमेरिका की न्यायपालिका न्यायिक कर्त्तव्यों के अतिरिक्त कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका के सम्बन्ध में कुछ वैधानिक बातों का भी निर्णय करती है। इङ्गलैण्ड में न्यायपालिका का एकमात्र कार्य संसद द्वारा पारित कानूनों की रक्षा करना है।

अध्यक्षात्मक प्रणाली के गुण व दोष :

अध्यक्षात्मक प्रणाली में गुण व दोष दोनों हैं। गुणों की हम निम्न प्रकार से व्याख्या कर सकते हैं—

(१) व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका के एक दूसरे से स्वतन्त्र रहने का परिणाम यह होता है कि शक्ति का दुरुपयोग नहीं हो सकता क्योंकि शक्ति एक स्थान पर केन्द्रित नहीं होती। इस प्रकार न तो व्यवस्थापिका ही स्वेच्छाचारिता की ओर झुक सकती है और न कार्यपालिका ही। जनता के हितों व अधिकारों की रक्षा पूर्ण रूप से इसमें हो सकती है।

(२) कार्यपालिका के अधिकारी अधिक कार्य-कुशल होते हैं और वे अपनी कुशलता का परिचय दे सकते है क्योंकि वे स्वतन्त्र रूप में काम करते हैं और किसी दबाब में नहीं रहते।

(३) दलबन्दी अधिक कठोर नहीं होती क्योंकि उनका उद्देश्य इतना लालच भरा नहीं होता जितना संसदीय प्रणाली में होता है। संसदीय व्यवस्था में तो व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका दोनों प्रकार की शक्ति हाथ में लेने का लालच रहता है परन्तु अध्यक्षात्मक व्यवस्था में तो सिर्फ व्यवस्थापिका शक्ति ही प्राप्त हो सकती है

और यदि कार्यपालिका होती भी है तो उन दोनों में इतना गठबन्धन नहीं होता जितना संसदीय व्यवस्था में होता है।

(४) अध्यक्षात्मक प्रणाली के द्वारा देश में अधिक परिवर्तनों की सम्भावना नहीं रहती। संसदीय व्यवस्था में तो एक दल की हार होने पर शासन की समस्त नीति ही परिवर्तित हो जाती है।

अध्यक्षात्मक प्रणाली में दोष भी हैं और वे निम्नलिखित हैं—

(१) अध्यक्षात्मक प्रणाली अत्यन्त कठोर एवं अपरिवर्तनशील होती है और अध्यक्ष को कभी-कभी अत्यधिक शक्ति प्राप्त हो जाती है, जिसका वह दुरुपयोग भी कर सकता है। दूसरे, व्यवस्थापिका कभी-कभी उसके कार्य में और वह व्यवस्थापिका के कार्य में रोड़ा अटका सकते हैं जिससे शासन-कार्य सुगमता से नहीं चल सकता है।

(२) अध्यक्षात्मक प्रणाली में अध्यक्ष तथा केबिनेट का व्यवस्थापिका के प्रति उत्तरदायित्व न होने के कारण जनता के अधिकारों को हानि भी पहुँच सकती है क्योंकि वे तानाशाही का सहारा ले सकते हैं। इस प्रकार यह प्रणाली यदा-कदा जनतन्त्र के प्रतिकूल भी जा सकती है।

(३) लॉर्ड ब्राइस के कथनानुसार "अध्यक्षात्मक व्यवस्था में आकस्मिकता के लिए जितना स्थान है उतना संसदीय व्यवस्था में नहीं है।"

संसदीय प्रणाली के गुण व दोष :

संसदीय प्रणाली में भी गुण व दोष दोनों हैं। गुणों की हम निम्न प्रकार से व्याख्या कर सकते हैं—

(१) संसदीय प्रणाली में कार्यपालिका अपने कार्यों के लिए जनता के प्रतिनिधियों के प्रति उत्तरदायी होती है। अतः यह लोकप्रिय सरकार होती है।

(२) केबिनेट के सदस्य जनता के प्रतिनिधियों में से ही निर्वाचित होते हैं और उन्हीं के प्रति वे व्यक्तिगत तथा सामूहिक रूप से उत्तरदायी होते हैं।

(३) संसदीय प्रणाली में राज्य का सर्वोच्च अधिकारी दलबन्दी से पृथक रहता है अतः उसका निर्णय अधिक स्थिर और निष्पक्ष होता है।

(४) केबिनेट केवल लोकसभा के प्रति उत्तरदायी ही नहीं होती वरन् उसके ऊपर नियन्त्रण भी रखती है।

(५) फाइनर (Finer) के अनुसार "ब्रिटिश केबिनेट का नेतृत्व प्रायः अधिक दृढ़, उत्तरदायित्वपूर्ण तथा विवेकपूर्ण होता है। यह नियन्त्रित रहता है। इसकी आलोचना होती है परन्तु इस पर अविश्वास नहीं होता है। इसमें दलबन्दी का भाव होता है परन्तु व्यक्तिगत द्वेष नहीं होता।"

संसदीय प्रणाली में निम्नलिखित दोष स्पष्ट हैं—

(१) केबिनेट का संसद पर और संसद का केबिनेट पर दबाव कभी-कभी शासन के संचालन में रुकावट पैदा करता है। अपनी-अपनी जिद् को रखने के लिए वे दोनों कभी-कभी एक दूसरे पर नाजायज प्रभाव डालने का प्रयत्न करते हैं। यदि केबिनेट शक्तिशाली होती है तो वह संसद को भंग कराने की कोशिश करती है और यदि संसद शक्तिशाली होती है तो वह केबिनेट को समाप्त करने की कोशिश करती है।

(२) मन्त्रिमण्डल के सदस्य शासन-कार्य में इतना जोश व उत्साह प्रदर्शित नहीं करते जितना अपने दल सम्बन्धी बातों के लिए दिखाते हैं।

(३) मन्त्रीगण अधिकांशतः मीटिङ्गों और कॉन्फ्रेन्सों में फँसे रहते हैं, शासन-कार्य में इतना समय नहीं दे पाते।

(४) कार्य सरलता से नहीं होता (केबिनेट का संसद के प्रति उत्तरदायित्व होने के कारण संसद में दोनों ओर से भाषणबाजी तथा वाद-विवाद होता रहता है जिससे कार्य में रुकावट आती है)।

(५) संसदीय प्रणाली में दलीय संगठन अत्यधिक जोर पकड़ता है और एक दल सर्वदा दूसरे दल व उसकी नीति को समाप्त करने की कोशिश करता रहता है।[1] यदि एक दल का विशेष जोर होता है तो वह विरोधी दल को कुचलने की कोशिश करता है और यह बात जनतन्त्र तथा न्याय के बिल्कुल विरुद्ध है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Compare the Presidential system of government in U. S. A. with the Parliamentary system of government in Great Britain and discuss their relative merits and demerits.
(Agra, 1935, 1941, 1944; Punjab, 1941; Patna, 1939)

1 Parliamentary system intensifies the spirit of party and keeps it always on the boil. If there are no important issues before the nation, there are always the offices to be sought for. One party holds them, the other desires them, and the conflict is unending, for immediately after a defeat, the beaten party begins its campaign to dislodge the victors."
—*Bryce.*

स्विट्जरलैंड की शासन-व्यवस्था

प्रथम परिच्छेद

स्विट्ज़रलैण्ड के संविधान की विशेषताएँ

विषय-प्रवेश :

स्विट्ज़रलैण्ड एक पहाड़ी प्रदेश है। इसके उत्तर में जर्मनी, पूर्व में आस्ट्रिया, दक्षिण में इटली और पश्चिम में फ्रान्स है। आधुनिक जनतन्त्रीय राज्यों में स्विट्ज़रलैण्ड के शासन-विधान का अध्ययन विशेष महत्त्व रखता है। इसका शासन-विधान बहुत पुराना है और इसके अन्तर्गत जो विभिन्न समुदाय या वर्ग हैं उनमें लोकप्रिय सरकारें उस समय से चली आ रही हैं जब दूसरे देशों में उनका जन्म भी नहीं हुआ था और इन्होंने जनतन्त्रीय भावना को जितनी प्रेरणा दी है तथा उसे जितनी आगे बढ़ाया है उतना यूरोप के अन्य किसी राज्य ने नहीं बढ़ाया है।[1] इसके अलावा इसके संघात्मक शासन के ढाँचे में जितना महत्त्वपूर्ण स्थान जनतन्त्रीय संस्थाओं का है उतना किसी देश की शासन-व्यवस्था में नहीं है और न किसी देश में इतनी जनतन्त्रीय संस्थाएँ ही हैं। इस सम्बन्ध में इसका अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया भी मुकाबिला नहीं कर सकते हैं।

स्विट्ज़रलैण्ड के शासन-विधान का अध्ययन करने के लिए यह आवश्यक है कि उसकी भौगोलिक स्थिति पर थोड़ा-सा दृष्टिपात किया जाय तथा उसके अन्तर्गत समुदायों तथा वर्गों के इतिहास का ज्ञान प्राप्त कर लिया जाय जिनमें जाति तथा भाषा के आधार पर काफी विभिन्नता है। स्विट्ज़रलैण्ड की भौगोलिक परिस्थितियाँ, वहाँ की जातियों और भाषाओं की विभिन्नता, तथा धर्म और वर्ग-भेद ने स्विट्ज़रलैण्ड में जनतन्त्रीय शासन को अधिकाधिक स्फूर्ति देने में अत्यधिक सहायता प्रदान की है।

स्विट्ज़रलैण्ड की स्थिति तथा जनसंख्या :

स्विट्ज़रलैण्ड एक छोटा-सा देश है। इसका क्षेत्रफल १५,९७६ वर्गमील है और करीब ४० लाख जनसंख्या है। इसमें आधे और पूरे मिलाकर २५ कैण्टन (Cantons) हैं। इनमें १९ पूरे हैं और ६ आधे। समस्त पूर्ण तथा अर्ध-कैण्टन अर्ध-स्वायत्त-सत्ताधिकारी (Semi-autonomous) राजनैतिक इकाइयाँ हैं और स्विट्ज़रलैण्ड के संघ के सदस्य हैं।

पहाड़ी प्रदेश होने के कारण स्विट्ज़रलैण्ड का अधिकांश भाग कृषि के योग्य नहीं है। कुल भूमि का केवल ३५ प्रतिशत भाग कृषि के योग्य है। लोहे और

1 Bryce: Modern Democracies, Vol. 1, p. 327.

कोयले की खानें भी वहाँ अधिक नहीं हैं। अतः व्यवसाय के लिये भी अधिक क्षेत्र नहीं है।

जाति, धर्म तथा भाषा के आधार पर स्विट्ज़रलैण्ड में हम बहुत विभिन्नताएँ पाते हैं। इसमें तीन प्रकार की भाषाएँ बोली जाती हैं—जर्मन, फ्रेंच तथा रोमन; और इसमें यही तीन जातियाँ रहती हैं। यह बात स्मरणीय है कि यद्यपि भाषाओं के आधार पर कैण्टन एक दूसरे से अलग-अलग हैं परन्तु फिर भी एक कैण्टन की भाषा दूसरे कैण्टनों में बहुत कुछ हद तक प्रवेश कर गई है। धार्मिक दृष्टि से वहाँ पर दो समुदाय हैं—प्रोटेस्टैण्ट तथा रोमन कैथोलिक। पहले धर्म तथा भाषा के आधार पर वहाँ बड़े झगड़े होते रहते थे परन्तु अब यूरोप में ऐसा कोई देश नहीं है जहाँ राष्ट्रीयता की भावना इतना जोर पकड़ गई हो जितनी स्विट्ज़रलैण्ड में। एक छोटा-सा प्रदेश होने के कारण वहाँ की जनता कैण्टनों के शासन में जितनी रुचि रखती है उतनी और कहीं नहीं रख सकती। दूसरी परिस्थितियों की इसी प्रकार की सरकार भिन्न रूप धारण कर लेती परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड का आकार छोटा होने के कारण यहाँ पर शासन में जो दृढ़ता एवं एकता है उतनी अन्यत्र कहीं नहीं है।

स्विट्ज़रलैण्ड की राजनैतिक व्यवस्था का महत्त्व :

ब्रुक्स ने लिखा है कि स्विट्ज़रलैण्ड राजनीति के साहसपूर्ण कार्यों की प्रयोगशाला है और उसकी सफलता समस्त प्रजातन्त्रीय राष्ट्रों को स्फूर्ति प्रदान करती है।"[1] यह बात यथार्थ में सत्य है क्योंकि स्विट्ज़रलैण्ड में जनतन्त्रीय सिद्धान्तों की जितनी रक्षा की जाती है उतनी संसार के अन्य किसी राज्य में नहीं की जाती। संसार में केवल अमेरिका, ब्रिटेन या सोवियट रूस जैसे बड़े-बड़े राज्यों के विधान ही लोगों को आकर्षित नहीं करते हैं वरन् कुछ छोटे-छोटे राज्यों के विधानों में भी विशेष आकर्षण है। स्विट्ज़रलैण्ड का विधान उनमें प्रमुख है।

यद्यपि स्विट्ज़रलैण्ड की जनसंख्या व सैनिक-शक्ति बहुत कम है परन्तु इसका संविधान बहुत पुराना है और संसार के उत्कृष्ट संविधानों में से एक है। यूरोप के सब राज्यों में इसी ने सब से अधिक राजतन्त्र का विरोध किया है और जनतन्त्रीय सिद्धान्तों को अपनाया है। इसकी समस्त संस्थाएँ जनतन्त्रीय हैं। इसमें प्रत्यक्ष जनतन्त्र (Direct Democracy) को जितना स्थान मिला है उतना अन्यत्र किसी देश में नहीं मिला है। यदि ग्रेट ब्रिटेन को संसदीय प्रणाली की जननी कहा जाता है और संयुक्त राज्य अमेरिका को आदर्श संघात्मक व्यवस्था का नमूना

1 Switzerland "is a laboratory of adventurous experiment, and her success contributes to the instruction of all republican peoples."
(Brooks : Government and Politics of Switzerland, Introduction)

बतलाया जाता है तो स्विट्जरलैण्ड को यदि प्रत्यक्ष जनतन्त्रीय व्यवस्था का अनुपम उदाहरण कहा जाय तो कोई असंगत बात न होगी। यही एक ऐसा देश है जहाँ लोक-निर्णय (Referendum) तथा निर्बन्ध-उपक्रम (Initiative) को अपना-अपना उचित स्थान प्राप्त है और जहाँ वे सच्चे स्वरूप में कार्य करते हुए नजर आते हैं।

एक विशेष बात जो स्विट्जरलैण्ड के विधान में नजर आती है वह यह है कि इस में ब्रिटेन और अमेरिका की व्यवस्थाओं का सम्मिश्रण है। मन्त्रिमण्डल के उत्तर-दायित्व (जो ब्रिटेन की व्यवस्था में है) के साथ-साथ उसकी दृढ़ स्थिति (जो अमेरिका में है) यहाँ हमें देखने में आती है। स्विट्जरलैण्ड-निवासियों ने मन्त्रिमण्डल के उत्तर-दायित्व का यह अर्थ नहीं निकाला है कि उसे चाहे जब समाप्त कर दिया जाय तथा मन्त्रिमण्डल के सदस्य जेबों में त्यागपत्र रक्खे रहें।

स्विट्जरलैण्ड की शासन-व्यवस्था में एक और विशेषता है। जाति तथा धर्म की विभिन्नता होते हुए भी वहाँ राजनैतिक एकता है,[1] और यद्यपि कैण्टन एक दूसरे से स्वतन्त्र हैं परन्तु फिर भी उनके निवासियों में जितना सहयोग है और उनमें जितना प्रेम है उतना अन्य संघात्मक देशों में नहीं है। इसीलिये स्विट्जरलैण्ड की व्यवस्था का अध्ययन भारतीय विद्यार्थियों के लिए और भी अधिक लाभदायक तथा रोचक है। स्विट्जरलैण्ड एक उदाहरण प्रस्तुत करता है कि वहाँ पर जाति, धर्म तथा बोली की विभिन्नताएं होते हुए भी राजनैतिक एकता है।[2]

अन्त में स्विट्जरलैण्ड के विधान के अध्ययन के सम्बन्ध में एक बात और उल्लेख-नीय है और वह यह है कि यह दोनों महायुद्धों में तटस्थ रहा है और सांसारिक प्रपंचों में नहीं फँसा है। इसीलिये शायद जिनेवा (जो स्विट्जरलैण्ड में है) को लीग ऑफ नेशन्स का हैडक्वार्टर चुना गया था।

संविधान की विशेषताएँ :

(१) **इसका संघात्मक रूप**—स्विट्जरलैण्ड का विधान संघात्मक है। जैसा कि

1 The Swiss system "has demonstrated the possibility of close co-operation between peoples who at one time were independent of each other politically and who to-day are widely divided by language and religion."
(Buell : Democratic Government in Europe, p. 558)

2 "One of the most unique and challenging features of Swiss nationhood is its violation of the nationalistic canons of demographic and cultural unity."
"All Switzerland is, so to speak, only one large town, whose wide and long streets, more to than that of Saint Antoine are sown with forests divided by mountains, and whose rare and isolated houses are joined only by an English garden."—*Rousseau.*

ऊपर कहा जा चुका है, इसमें १९ पूर्ण कैण्टन तथा ६ अर्ध-कैण्टन सम्मिलित हैं। केन्द्र में एक सरकार है जिसके पास व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्यायपालिका शक्ति है। (यह प्रायः उसी प्रकार की है जैसी कि संयुक्त राज्य अमेरिका की केन्द्रीय सरकार है) केन्द्रीय सरकार को वही अधिकार प्राप्त हैं जो विधान ने उसे दिये हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की तरह यहाँ भी अवशिष्ट शक्तियाँ कैण्टनों को प्राप्त हैं। परन्तु अमेरिका और स्विट्जरलैण्ड के संघों में अन्तर भी काफी है। अमेरिका में जो निहित तथा निश्चित अधिकारों का भेद है और उनका महत्त्व है वह स्विट्जरलैण्ड में नहीं है, तथा स्विट्जरलैण्ड में शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को भी नहीं माना गया है। इसके अलावा स्विट्जरलैण्ड में कुछ ऐसे विषय भी हैं जिन पर केन्द्रीय सरकार तथा कैण्टनों की सरकारों को सम्मिलित अधिकार हैं।

(२) **स्विट्जरलैण्ड का विधान लिखित है**—स्विट्जरलैण्ड का संविधान लिखित है और यह अमेरिका के संविधान का लगभग आधा है। यद्यपि विधान पूर्ण रूप में लिखित है परन्तु फिर की इसमें परम्पराओं तथा रिवाजों का काफी हाथ है। उदाहरण के लिए संघ की सरकार को विदेशियों के बारे में नागरिकता सम्बन्धी नियम बनाने का अधिकार है परन्तु इसके बारे में कैण्टनों ने अपने-अपने यहाँ अलग-अलग नियम बना रक्खे हैं और ये नियम उनकी परम्परा तथा रीति-रिवाजों पर आधारित हैं। स्विट्जरलैण्ड का विधान निस्सन्देह उस देश की भौगोलिक परिस्थितियों के अनुकूल है।

(३) **स्विट्जरलैण्ड का विधान कठोर है**—स्विट्जरलैण्ड का विधान कठोर है और इसमें संशोधन करने का तरीका साधारण विधि-निर्माण के तरीके से भिन्न है। संशोधन करने वाली तथा विधि-निर्माण करने वाली संस्थाएँ भी अलग-अलग हैं। उनके ढाँचे तथा कार्य भी अलग-अलग हैं। संशोधन के लिये व्यवस्थापिका के दोनों सदन प्रस्ताव करें और फिर उस पर लोक-निर्णय लिया जाय तथा बहुमत में कैण्टनों द्वारा वह पास हो जाये तब विधान में संशोधन हो सकता है, अथवा ५० हजार या अधिक मतदाता हस्ताक्षर सहित अर्जी दें और फिर उस पर लोकमत लिया जाय और वह पास हो जाय तब विधान में संशोधन हो सकता है।

(४) **स्विट्जरलैण्ड की कार्यकारिणी**—स्विट्जरलैण्ड की कार्यकारिणी एक अनोखे प्रकार की है और इसमें कार्यसत्ता एक व्यक्ति के हाथ में न देकर एक समिति को सौंप दी गई है। अतः यह बहुसंख्यक कार्यकारिणी (Plural Executive) है। यहाँ की कार्यकारिणी में हमें ब्रिटेन की व्यवस्था तथा अमेरिका की व्यवस्था का सम्मिश्रण मिलता है। मन्त्रिमण्डल धारासभा के प्रति उत्तरदायी अवश्य है परन्तु मन्त्रीगण अपने पदों से हटाये नहीं जा सकते हैं। इस प्रकार हम इस कार्यकारिणी में उत्तरदायित्व तथा स्थायित्व दोनों ही पाते हैं।

(५) **विधान का जनतन्त्रीय स्वरूप**—स्विट्जरलैण्ड का विधान जनतन्त्र का उत्कृष्ट उदाहरण है।[1] इसने नागरिकों को मूल अधिकार देकर ही जनतन्त्र का आदर्श प्रस्तुत नहीं किया है बल्कि समस्त उच्च राजतन्त्रीय भावनाओं का उन्मूलन करके तथा लोक-निर्णय व निर्बन्ध-उपक्रम को अपना कर तथा सब पदों को प्रजातन्त्रीय रूप देकर अपने छोटे से राज्य द्वारा बड़े-बड़े राज्यों पर अपनी धाक जमा ली है।

(६) **संविधान उदार है**—स्विट्जरलैण्ड के विधान की एक विशेषता यह है कि वह व्यक्ति को अत्यधिक महत्त्व देता है और इस बात को स्वीकार करता है कि राज्य व समाज व्यक्ति के लिये हैं। अतः स्विट्जरलैण्ड का विधान व्यक्ति को पूर्ण स्वतन्त्रता प्रदान करता है और उसे भाषण, लेखन, शिक्षा आदि सम्बन्धी विभिन्न स्वतन्त्रताएँ प्राप्त हैं।

(७) **संघीय विधान सर्वोच्च शक्ति है**—संयुक्त राज्य अमेरिका की भाँति स्विट्जरलैण्ड का विधान भी पूर्ण रूप से देश की सर्वोच्च विधि है। परन्तु इसकी सत्ता की रक्षा जैसे अमेरिका में सुप्रीम कोर्ट करता है वैसे स्विट्जरलैण्ड की न्यायपालिका नहीं करती है। यद्यपि उसे भी अमेरिका की ही भाँति अधिकार प्राप्त हैं परन्तु उनकी सीमा बहुत है। स्विट्जरलैण्ड में संघीय न्यायालय (Federal Tribunal) संविधान की उस समय पूर्ण रक्षा कर सकता है जब संघ का और कैण्टनों का झगड़ा होता है परन्तु वह संघीय व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून का खण्डन नहीं कर सकता। अमेरिका में सर्वोच्च न्यायालय को यह अधिकार है कि वह कांग्रेस द्वारा पारित कानूनों को, यदि वे संविधान के विरोधी हैं, अवैध घोषित कर सकता है। स्विट्जरलैण्ड में व्यवस्थापिका की प्रधानता है अतः संघीय न्यायालय उसकी किसी धारा को अवैध घोषित नहीं कर सकता।

(८) अन्त में यह भी कह देना उचित होगा कि स्विट्जरलैण्ड में विभिन्नताओं के बीच जितनी एकता है उतनी संसार के अन्य किसी देश में नहीं है। हम पहले कह चुके हैं कि वहाँ पर जाति, धर्म तथा भाषा की विभिन्नता होते हुए भी संविधान ने सम्पूर्ण राष्ट्र को ऐसा ऐक्य प्रदान किया है जैसा कहीं नजर नहीं आता है।

स्विट्जरलैण्ड का संविधान उपर्युक्त बातों की वजह से ही विशेषता नहीं रखता है बल्कि इसका लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम का सिद्धान्त अत्यन्त प्रशंसनीय है और वह इसे अधिक विशेषता प्रदान करता है। इन्हीं सब कारणों की वजह से यहाँ की शासन-सत्ता अत्यन्त दृढ़ एवं कार्यकुशल है। यहाँ की कार्यकारिणी भी

---

1 "The Swiss democracy is much truly democratic than that of any other country in the world—*Lord Bryce*.

अत्यन्त अनोखी है और यह भी इसे दृढ़ता प्रदान करती है। व्यवस्थापिका की यहाँ काफी शक्ति है परन्तु यदि मन्त्रि-परिषद् का इससे मतभेद हो जाता है तो जैसा संसदीय प्रणालियों में है, यहाँ की मन्त्रि-परिषद् त्यागपत्र नहीं देती।

संविधान का विकास :

स्विट्जरलैण्ड के राजनैतिक इतिहास को प्रायः पाँच भागों में बाँटा जाता है—प्राचीन संघ (सन् १२९१ से १७९८ तक), (२) हैल्वेटिक प्रजातन्त्र (सन् १७९८ से १८०३ तक), (३) नेपोलियन का काल (सन् १८०३ से १८१५ तक), (४) संघ राज्य (सन् १८१५ से १८४८ तक), तथा (५) सन् १८४८ से आधुनिक समय तक।

स्विट्जरलैण्ड सदैव से संघात्मक राज्य नहीं रहा है। सन् १२९१ में उरी, स्वीग तथा अन्टरवाल्डन नामक तीन कैण्टनों ने अपने को एक स्थायी संगठन में बाँध कर संघीभूत किया। इसके बाद इसमें सदस्य-कैण्टनों की संख्या बढ़ती गई यद्यपि बहुत उथल-पुथल होते रहे, और सन् १८४८ में इनकी संख्या २२ हो गई। परन्तु उस समय तक स्विट्जरलैण्ड में कोई सुसंगठित संघ-शासन नहीं था। यद्यपि शासन-व्यवस्था संघीय थी परन्तु उस संघ का ढाँचा बहुत ढीला था। सन् १८७४ में संविधान को फिर दुहराया गया और उसे नवीन रूप प्रदान किया गया जो आज तक प्रचलित है। सन् १८७४ के विधान द्वारा ही आज स्विट्जरलैण्ड की शासन-व्यवस्था चल रही है। यह विधान छोटा ही है और अमेरिका के विधान के करीब-करीब आधे के बराबर है, परन्तु इस विधान का रूप दूसरा है। संयुक्त राज्य अमेरिका तथा स्विट्जरलैण्ड के विधानों की तुलना हम आगे करेंगे। यहाँ पर यही कहना पर्याप्त होगा कि सन् १८७४ के विधान द्वारा स्विट्जरलैण्ड में संघ तथा कैण्टनों की शक्ति पर सीमा लगा दी गई है तथा दोनों के लिए एक दूसरे के अधिकारों पर अतिक्रमण करने की गुंजाइश नहीं छोड़ी है।[1] स्विट्जरलैण्ड की व्यवस्था संघ तथा कैण्टनों की शक्ति का सामंजस्य स्थापित करती है और एक दूसरे के अधिकारों में मेल कराती है।[2] वास्तव में स्विट्जरलैण्ड के विधान-निर्माताओं ने अपनी व्यवस्था को संघ तथा कैण्टनों के पारस्परिक कलह तथा संघर्ष से बचाने के लिए पूर्ण व्यवस्था की। वे शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को लेकर प्रतिबन्ध तथा सन्तुलन (Checks and Balan-

1 It (The Constitution of 1874) delimits "the competence, legislative and administrative, of the Federation on one hand and the Cantons on the other." (*Brooks: op. cit., p. 48*)

2 The Swiss system is "a patient compromise between the advocates of cantonal rights and those of federal rights." "It anticipates and prevents causes of internal friction and possibility of civil strife, (and so) it takes high rank among the political virtues." (*Ibid, p. 49*)

ces) के चक्कर में अधिक न पड़े। उन्होंने तो अपनी व्यवस्था को ऐसा बनाने की कोशिश की कि आन्तरिक संघर्षों की कम से कम सम्भावना रहे।[1]

समय-समय पर इसमें संशोधन भी होते रहे हैं। स्विट्जरलैण्ड का संविधान संघीय व्यवस्था का एक अनूठा उदाहरण है। यह कैण्टन और केन्द्र की सरकारों की सीमा बतलाते हुए उनमें एक सहानुभूतिपूर्ण मिलाप भी कराता है और आपसी मतभेद तथा गृह-युद्ध की सम्भावनाओं को दूर करके संसार में एक अनूठा उदाहरण प्रस्तुत करता है।[2]

संविधान में संशोधन :

स्विट्जरलैण्ड के संविधान में संशोधन जनता द्वारा लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम प्रणालियों द्वारा किया जाता है। ब्रिटेन, संयुक्त राज्य अमेरिका तथा सोवियट रूस आदि किसी भी देश में इस प्रकार की व्यवस्था नहीं है। स्विट्जरलैण्ड में विधान में पूर्ण तथा आंशिक संशोधन भी हो सकते हैं। ऐसा अन्य देशों में नहीं हो सकता है। यदि स्विट्जरलैण्ड की फैडरल असेम्बली के दोनों सदन अलग-अलग पूर्ण संशोधन के लिए प्रस्ताव पास करते हैं तो वह प्रस्ताव लोक-निर्णय के लिए रखा जाता है और यदि जनता भी अपने वोट द्वारा उसे स्वीकार कर लेती है तो संशोधन हो जाता है। यदि एक सदन उसे पास कर देता है तो भी वह जनता के समक्ष रखा जा सकता है और यदि जनता उसे स्वीकार कर लेती है तो फैडरल असेम्बली भंग कर दी जाती है और नए चुनाव होते हैं और फिर दोनों सदनों में वह प्रस्ताव रखा जाता है। इसी प्रकार से आंशिक संशोधन भी होता है। स्विट्जरलैण्ड में फैडरल असेम्बली ही संशोधन के लिए कदम नहीं उठा सकती है वरन् जनता भी उठा सकती है। यदि ५०,००० मतदाता अपने हस्ताक्षर सहित किसी आंशिक संशोधन के लिए अर्जी देते हैं तो असेम्बली पुनः उस पर विचार करती है और लोक-निर्णय द्वारा तय करती है कि अमुक संशोधन पास हो अथवा न हो। कहने का तात्पर्य यह है कि संशोधन के लिए दोनों ओर से कदम उठाया जा सकता है—जनता भी कदम उठा सकती है और फैडरल असेम्बली भी। परन्तु संशोधन के सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय देने का अधिकार जनता को ही है। यह तरीका न तो कठोर है और न मुश्किल और साथ ही साथ जनतन्त्रीय सिद्धान्तों के पूर्णतया अनुकूल है परन्तु यह केवल स्विट्जरलैण्ड जैसे छोटे राज्य में ही सफल हो सकता है। सन् १८७४ के बाद से अब तक १४ संशोधन जनता द्वारा और ३० संशोधन व्यवस्थापिका द्वारा प्रस्तावित होकर पास हुए हैं।

---

1 The framers of the constitution did believe in the doctrine of Separation of Powers, and so they "did not provide for the separation of powers with an electorate system of checks and balances in the government they created. (*Ibid, p. 50*)

2 Ibid, pp. 48-49.

संघ सरकार तथा कैण्टनों की सरकारों में शक्ति का वितरण :

स्विट्जरलैण्ड में शासन के विषय संघ सरकार तथा कैण्टनों की सरकारों में उसी प्रकार बँटे हुए हैं जैसे अमेरिका तथा आस्ट्रेलिया में। परन्तु स्विट्जरलैण्ड में जितने अधिकार केन्द्रीय सरकार को हैं उतने अमेरिका में नहीं हैं। विधान द्वारा संघीय शक्ति को निर्दिष्ट कर दिया गया है। विधान के प्रथम परिच्छेद के द्वितीय अनुच्छेद (Article) में संघीय शक्ति का सार वर्तमान है। उसमें लिखा है कि "संघ का उद्देश्य देश की स्वतन्त्रता की विदेशी आक्रमण से रक्षा करना, देश की सीमा के अन्दर शान्ति व्यवस्था कायम रखना तथा सामान्य सम्पर्क के हेतु जनता की स्वतन्त्रता व उसके अधिकारों की रक्षा करना है।" संविधान का तृतीय अनुच्छेद कैण्टनों की शक्ति की ओर इंगित करता है। उसमें यह लिखित है कि "कैण्टन अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र हैं और संघीय शक्ति की सीमा तक उनकी स्वतन्त्रता है। उन्हें वे सब शक्तियाँ प्राप्त हैं जो संघीय सरकार को नहीं दी गई हैं।" सन् १८७४ के विधान के अनुसार संघ-सरकार को निम्नलिखित अधिकार प्राप्त हैं:—

(१) युद्ध व सन्धि की घोषणा करना।

(२) वैदेशिक सम्बन्ध स्थापित करना तथा राजदूत भेजना व आमन्त्रित करना।

(३) रेलों का नियन्त्रण व उन पर स्वामित्व।

(४) सेना का प्रबन्ध।

(५) व्यापार, व्यवसाय, बैंकिङ्ग आदि का संचालन।

(६) पोस्ट ऑफिस तथा तार का प्रबन्ध, उच्च शिक्षा, मुद्रा, नाप-तौल के बाँट आदि निर्धारित करना।

(७) कैण्टनों के बीच झगड़े तय करना व उनकी एक दूसरे के आक्रमण से रक्षा करना।

(८) संविधान की व्याख्या।

(९) कैण्टनों के साथ संघ सरकार के कुछ सम्मिलित अधिकार भी हैं, और यह बहुत से मामलों में कैण्टनों के कार्य का निरीक्षण करती है जैसे, इन्श्योरेंस (बीमा), यातायात, प्रेस व शिक्षा का निरीक्षण आदि। सम्मिलित अधिकार का प्रयोग करते समय यदि दोनों सरकारों में कोई मतभेद होता है तो संघ सरकार की बात ही अधिक महत्त्व रखती है।

सन् १८७४ के बाद से संघ सरकार की शक्ति बराबर बढ़ती जा रही है और आधुनिक काल में उसकी शक्ति को और भी अधिक बढ़ाने की प्रवृत्ति हो गई है। संघ सरकार की शक्ति में वृद्धि का प्रमुख कारण है स्विट्जरलैण्ड की जनता की राष्ट्रीय एकता को दृढ़ तथा अविच्छिन्न बनाने का प्रयत्न। परिणाम स्पष्ट है। कैण्टनों

की शक्ति व उनकी स्वतन्त्रता कम हो रही है और संघ सरकार की शक्ति बढ़ रही है। आज संघ सरकार की शक्ति के अन्तर्गत निम्नलिखित विषय और आ गये हैं—जैसे, जल-शक्ति का उपयोग, दीवानी व फौजदारी कानून, शराब, यातायात, जल-थल व हवाई आवागमन के साधन, बैंकिङ्ग तथा सामाजिक कल्याण के कार्य। इन सब के खर्च के लिये संघ सरकार को बहुत से कर लगाने के अधिकार भी प्राप्त हो गये हैं और उसने कर लगाने के बहुत से साधन ढूंढ़ भी लिये हैं। "इसी कारण आज संघ सरकार की शक्ति बहुत बढ़ गई है और शक्ति के बढ़ने से इसकी प्रतिष्ठा में काफी वृद्धि हो गई है।"[1]

स्विट्जरलैण्ड और अमेरिका की संघीय व्यवस्था की तुलना :

स्विट्जरलैण्ड में प्रचलित संघ प्रणाली की तुलना यदि हम संयुक्त राज्य अमेरिका की संघ प्रणाली से करें तो स्थूल रूप में से हम यह कह सकते हैं कि दोनों संघ प्रणालियों में बहुत कुछ समानता है।

(१) अमेरिका और स्विट्जरलैण्ड दोनों ही में संघ सरकार की शक्ति व उसके अधिकृत विषय निश्चित कर दिये गये हैं तथा अवशिष्ट शक्तियाँ अमेरिका में उप-राज्यों को तथा स्विट्जरलैण्ड में कैण्टनों को प्रदान की गई हैं।

(२) संघ सरकार तथा उप-राज्यों की सरकारों के जैसे सम्बन्ध अमेरिका में हैं वैसे ही स्विट्जरलैण्ड में हैं।

(३) अमेरिका में जिस प्रकार सीनेट में प्रत्येक उप-राज्य से दो-दो प्रतिनिधि आते हैं उसी प्रकार स्विट्जरलैण्ड में भी राज्य-परिषद् में प्रत्येक कैण्टन से दो-दो प्रतिनिधि आते हैं।

(४) दोनों ही देशों में संघ सरकार के अधिकार निश्चित कर दिये गये हैं परन्तु फिर भी दोनों देशों में शासन की शक्ति केन्द्रीय सरकार की ओर अधिक दृढ़ रही है और आधुनिक काल में अधिकाधिक केन्द्रीयकरण की प्रवृत्ति हो गई है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि स्थूल रूप से दोनों देशों की संघ प्रणाली में समानता है तथापि संघीय सिद्धान्तों की प्रयुक्त रूप में दोनों देशों में कुछ विभिन्नता पाई जाती है।

(१) स्विट्जरलैण्ड के शासन-विधान के द्वारा केन्द्रीय सरकार तथा कैण्टनों की सरकार में अधिक घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित कर दिया गया है। वहाँ अमेरिका की भाँति यह नहीं है कि संघीय कानूनों का पालन संघ सरकार के कर्मचारी ही करावें। स्विट्जरलैण्ड में संघीय कानूनों का पालन तो कैण्टनों की सरकारें ही कराती हैं, संघ की सरकार के अफसर तो केवल निरीक्षण करते हैं।

---

1 Shotwell : Governments of Europe, p. 986.

(२) स्विट्ज़रलैण्ड के संविधान में ऐसा कोई परिच्छेद नहीं है जिसके द्वारा नागरिक के मूल अधिकार बताए गए हों और उनकी रक्षा का प्रबन्ध किया गया हो, जैसा कि संयुक्त राज्य अमेरिका व सोवियट रूस के संविधानों में है। परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं है कि वहाँ नागरिक के मूल अधिकार नहीं हैं। वहाँ प्रत्येक नागरिक को समस्त अधिकार हैं यद्यपि उनके लिए विधान में कोई अलग स्थान नहीं है। वे संघ की सम्पूर्ण नियमावली में बिखरे हुए हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you regard as the special features of the Swiss Constitution ? To what extent have they contributed to the stability and efficiency of government in Switzerland ?
   (*Alld.*, *1943*; *Agra*, *1937*, *1943*, *1947*; *Punjab*, *1941*, *1949*)
2. Describe the process of amendment in the Swiss Constitution.
   (*Agra*, *1935*, *1938*, *1941*, *1948*)
3. On what lines have the powers been distributed between the Federal government and the governments of the units in the Constitutions of U. S. A. and Switzerland?
   (*Agra*, *1939*, *1949*; *Nagpur*, *1937*; *Punjab*, *1948*)
4. Compare and contrast the distribution of powers in the Swiss and American federations. (*Agra*, *1954*)
5. "Swiss democracy is more truly democratic than that of any other country in the world." (*Bryce*) What features of the Swiss democracy, in your opinion, led him to such a view?
   (*Agra*, *1953*)

द्वितीय परिच्छेद

राष्ट्रीय सरकार का ढाँचा

जैसा कि पिछले परिच्छेद में कहा जा चुका है स्विट्ज़रलैण्ड की सरकार अमेरिका की तरह संघात्मक है, ग्रेट ब्रिटेन अथवा फ्रान्स की भाँति एकात्मक नहीं है। स्विट्ज़रलैण्ड की संघीय सरकार के चार अंग हैं—

(१) व्यवस्थापिका जिसे फेडरल असेम्बली कहते हैं और जो जनता के सच्चे प्रतिनिधित्व पर आधारित है।

(२) कार्यपालिका जो फेडरल कौंसिल कहलाती है और जिसके सात सदस्य हैं।

(३) न्यायपालिका।

(४) जनता जो अपने प्रत्यक्ष जनतन्त्र के अस्त्र—लोक-निर्णय तथा प्रत्याहरण—द्वारा समस्त शासन के ऊपर अधिकार रखती है।[1]

परन्तु जनता का कार्य शासन के संचालन में नित्यप्रति हस्तक्षेप करना या अधिकतर हाथ बँटाने का नहीं है। अतएव वह शासन की उस अर्थ में अंग नहीं है जिसमें अन्य तीन भाग हैं। परन्तु इतना निश्चित है कि स्विट्ज़रलैण्ड में शासन के संचालन में जनता जितना महत्त्वपूर्ण हाथ रखती है उतना अन्य किसी देश में नहीं रखती।

संघ व्यवस्थापिका—फेडरल असेम्बली (Federal Assembly) :

स्विट्ज़रलैण्ड में संघ व्यवस्थापिका फेडरल असेम्बली (Federal Assembly) के नाम से पुकारी जाती है। संविधान के ४७ वें अनुच्छेद के अनुसार संघ की समस्त व्यवस्थापिका शक्ति इसे दी गई है। इसका निर्माण द्वि-सभात्मक प्रणाली के आधार पर हुआ है, अर्थात् इसके दो सदन हैं—(१) राष्ट्रीय परिषद् (National Council), तथा (२) राज्य परिषद् (Council of States)। प्रत्येक सदन की अवधि ३ साल है।

राष्ट्रीय परिषद् (National Council) :

राष्ट्रीय परिषद् संघ व्यवस्थापिका का निचला आगार है। इसका महत्त्व स्विट्ज़रलैण्ड में उसी तरह का है जैसा अमेरिका में प्रतिनिधि-आगार का, तथा

1 Bryce : Modern Democracies, V l. II. (Bryce mentions 'The People of the Confederation' as the fourth branch).

इङ्गलैण्ड और भारत में लोकसभा का है। इसकी अवधि पहले तीन वर्ष थी पर सन् १९३० ई० के निर्बन्ध से इसका कार्य-काल तीन वर्ष से बढ़ा कर चार वर्ष कर दिया गया है। इसकी साल में चार बैठकें होती हैं। इसके सदस्य प्रौढ़ नागरिक आनुपातिक प्रतिनिधित्व के आधार पर चुने जाते हैं। प्रति २२,००० नागरिकों का एक प्रतिनिधि चुना जाता है परन्तु प्रति कैण्टन से कम से कम एक प्रतिनिधि अवश्य होता है, चाहे उसकी जनसंख्या कितनी ही कम क्यों न हो। सन् १९४३ के चुनाव में इसके सदस्यों की कुल संख्या १९४ थी। राज्य का प्रत्येक नागरिक जिसने २१ वें वर्ष में प्रवेश किया है, मतदान कर सकता है और कोई भी २१ वर्ष से अधिक आयु का नागरिक सदस्यता का उम्मीदवार हो सकता है। कोई भी व्यक्ति एक साथ दोनों आगारों का सदस्य नहीं बन सकता।

राष्ट्रीय परिषद् प्रत्येक सत्र (Session) के लिए एक सभापति तथा एक उप-सभापति चुनती है और उन्हें "दूसरे सत्र में फिर सभापति या उप-सभापति नहीं चुना जा सकता। समान मत होने पर सभापति को निर्णायक मत (Casting vote) देने का अधिकार है। अतएव साधारण प्रश्नों पर वह दो मत दे सकता है परन्तु समितियों के सदस्यों के निर्वाचन में वह एक ही मत दे सकता है जैसा अन्य सदस्य देते हैं। इसकी शक्ति व प्रभाव बहुत कम है। अमेरिका के स्पीकर की तुलना में इसकी शक्ति बहुत कम है। परन्तु फिर भी बड़े-बड़े राजनीतिज्ञों को इस पद को प्राप्त करने की लालसा होती है और जो भाग्य से इस पद को प्राप्त कर लेते हैं वे अपने साथियों में बहुत आदर व सम्मान के पात्र बन जाते हैं। राज्य-परिषद् (Council of States) के अध्यक्ष के सम्बन्ध में भी यही बात लागू होती है।"[1]

राज्य परिषद् (Council of States) :

राज्य परिषद् संघ व्यवस्थापिका का ऊपर वाला आगार है। इसके सदस्य कैण्टनों द्वारा निर्वाचित होते हैं और उनकी संख्या राष्ट्रीय परिषद् के सदस्यों की संख्या से कम होती है। यह अमेरिका की सीनेट से मिलता-जुलता है। पूर्ण कैण्टन तथा अर्ध-कैण्टन के प्रतिनिधि ही इसके सदस्य हो सकते हैं। प्रत्येक पूर्ण कैण्टन दो और अर्ध-कैण्टन एक सदस्य भेज सकता है। इस प्रकार १९ पूर्ण कैण्टनों से ३८ सदस्य और ६ अर्ध-कैण्टनों से ६ सदस्य जाते हैं, अर्थात् राज्य परिषद के कुल सदस्यों की संख्या ४४ है। इसके सदस्यों की निर्वाचन-पद्धति पर या उनकी कार्य-विधि पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं लगाया गया है। प्रत्येक कैण्टन अपने सदस्यों की निर्वाचन-विधि तथा उनकी कार्यावधि निश्चित करने में पूर्ण स्वतन्त्र है।

1 Brooks : Government and Politics of Switzerland, pp. 79-80.

कुछ कैण्टन एक साल के लिए, कुछ दो साल के लिये तथा कुछ तीन साल के लिये अपने प्रतिनिधि भेजते हैं। एक ही व्यक्ति राज्य परिषद् तथा राष्ट्रीय परिषद् दोनों का सदस्य नहीं हो सकता। इसके सदस्यों को वेतन व भत्ते आदि कैण्टनों द्वारा ही दिये जाते हैं। इसका भी एक सभापति और एक उप-सभापति होता है परन्तु उन्हें भी उतनी शक्ति व अधिकार प्राप्त नहीं हैं जितने अमेरिका व ग्रेट ब्रिटेन में उनके समानपदी अध्यक्ष व उपाध्यक्ष को प्राप्त हैं। [राज्य परिषद् के सदस्य कुछ कैण्टनों में प्रत्यक्ष रूप में प्रजा द्वारा चुने जाते हैं और कुछ में उनकी धारासभाएँ चुन कर भेजती हैं।]

फैडरल असेम्बली की शक्ति व उसके अधिकार :

फैडरल असेम्बली के तीन प्रकार के अधिकार हैं—प्रशासन सम्बन्धी, विधि-निर्माण सम्बन्धी, तथा वित्त सम्बन्धी।

प्रशासन सम्बन्धी कार्य—संविधान की ९५ वीं धारा के अनुसार राज्य की सर्वोच्च प्रशासकीय शक्ति फैडरल कौंसिल में निहित कर दी गई है परन्तु कुछ हद तक फैडरल असेम्बली भी प्रशासकीय कार्य में हाथ बँटाती है। उदाहरण के लिये यह प्रधान सेनापति, फैडरल न्यायालय के सदस्य तथा अध्यक्ष व उपाध्यक्ष को निर्वाचित करती है। प्रायः संघीय इकाइयों में झगड़े खड़े हो उठते हैं और यह उन झगड़ों को तय करती है। फैडरल असेम्बली संधि वगैरह भी कर सकती है और प्रशासकीय अफसरों को पदच्युत करने की धमकी भी दे सकती है, यदि वे कुशलतापूर्वक कार्य नहीं करते हैं।

विधि-निर्माण सम्बन्धी शक्ति—विधि-निर्माण सम्बन्धी शक्ति फैडरल असेम्बली में निहित है। वही विधेयकों की रूपरेखा बनाती है और वही उन्हें पास करती है, बशर्ते जनता द्वारा उसका विरोध नहीं होता है। (वैसे कभी-कभी फैडरल कौंसिल के सदस्य भी विधेयक पेश कर सकते हैं परन्तु प्रायः असेम्बली ही उन्हें प्रस्तावित करती है और वही उन्हें पास करती है) फैडरल कौंसिल को उसके द्वारा पारित विधेयकों पर कोई निषेधात्मक (veto) अधिकार नहीं है। उनका विरोध केवल जनता ही अपने लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रमों के अस्त्रों द्वारा कर सकती है।

वित्त सम्बन्धी कार्य—फैडरल कौंसिल आय-व्यय का समूचा ब्यौरा बना कर फैडरल असेम्बली के समक्ष प्रस्तुत करती है और फैडरल असेम्बली द्वारा पास कर देने पर ही उस पर अमल किया जा सकता है। अतः वित्त पर फैडरल असेम्बली का पूर्ण नियन्त्रण है।

संसार में ऐसी बहुत कम व्यवस्थापिकाएँ हैं जो स्विट्जरलैण्ड की व्यवस्थापिका

(फैडरल असेम्बली) के बराबर कार्य करती हैं। संक्षेप में, इसके अधिकार व शक्तियाँ निम्नलिखित हैं:—

(१) विदेशी सम्बन्ध स्थापित करना, युद्ध व सन्धि की घोषणा करना, संघ सेना के लिए नियम बनाना, राज्य की रक्षा करना तथा उनकी तटस्थता कायम रखने का प्रयत्न करना।

(२) संघ के आय-व्यय के ऊपर नियन्त्रण रखना।

(३) कैण्टनों के पारस्परिक अधिकारों की रक्षा करना व उन्हें सांविधानिक सुरक्षा की प्रतिभू (guarantee) देना।

(४) क्षमा प्रदान करना व सजा को कम करना।

(५) प्रशासकीय झगड़ों व संघीय कर्मचारियों के अपने-अपने क्षेत्राधिकार सम्बन्धी झगड़ों को तय करना।

(६) संघ की सामान्य निर्बन्ध शक्ति को कार्यान्वित करना।

(७) संघ के पदाधिकारियों तथा कर्मचारियों का प्रबन्ध व शासन के विभागों की रचना तथा अफसरों के वेतन आदि की समुचित व्यवस्था करना।

(८) जनता की सम्मति से शासन-विधान में संशोधन करना।

राष्ट्रीय परिषद् तथा राज्य परिषद् के सम्बन्ध :

दोनों सदनों के अधिकार व शक्तियाँ बराबर हैं (जैसा कि आस्ट्रेलिया में है परन्तु संयुक्त राज्य अमेरिका में नहीं है) परन्तु राज्य परिषद् राष्ट्रीय परिषद् के मुकाबिले कुछ कमजोर है। बहुधा उत्साही पुरुष परिषद् में ही जाना पसन्द करते हैं। दोनों सदनों में मतभेद होने पर उसे सुलझाने का कोई तरीका नहीं है, परन्तु मतभेद बहुत कम होते हैं क्योंकि राज्य परिषद् अपनी इच्छा से ही रूढ़िवादी व जिद्दी नहीं है। इन सदनों के सदस्य अपने-अपने कैण्टनों में चाहे जो पद प्राप्त कर सकते हैं। कहने का तात्पर्य यह है कि एक व्यक्ति दोनों सदनों का सदस्य नहीं हो सकता परन्तु वह अपने कैण्टन में चाहे जिस पद पर काम कर सकता है, यहाँ तक कि वह जज भी हो सकता है।[1]

यद्यपि दोनों सदनों के बराबर-बराबर अधिकार हैं परन्तु व्यवहार में राज्य परिषद् का महत्त्व कम हो गया है। दोनों सदनों की निम्नलिखित कार्यों के लिये सम्मिलित बैठकें भी होती हैं:—

(१) संघ के बड़े-बड़े कर्मचारियों जैसे अध्यक्ष, उपाध्यक्ष, चान्सलर तथा संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों का निर्वाचन।

(२) संघीय सरकार तथा अन्य किसी शक्ति के झगड़े को तय करना।

1 Bryce: op. cit., p. 345.

(३) क्षमा प्रदान करना।

स्विट्ज़रलैण्ड में किसी सदन को कोई विशेषाधिकार प्राप्त नहीं हैं। दोनों को समान अधिकार हैं और विधेयक किसी भी सदन में पेश किया जा सकता है। "संसार में स्विट्ज़रलैण्ड की व्यवस्थापिका ही केवल ऐसी व्यवस्थापिका है जिसमें दोनों सदनों की शक्तियों और अधिकारों में कोई भेद नहीं है।"[1] उनमें प्राय: मतभेद कम होता है और यदि एक सदन अपनी जिद रखना चाहता है तो दूसरा नहीं रखता है और इतने पर भी यदि कोई मतभेद होता है तो उसे समितियाँ ही आपस में तय कर लेती हैं।

स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल असेम्बली के दोनों सदनों में कार्य अत्यन्त शान्तिपूर्वक होता है। यहाँ पर पूर्ण शिष्टाचार और सभ्यता का वातावरण है। वाद-विवाद अत्यन्त धैर्यपूर्वक एवं सीमित होता है। लम्बे-लम्बे भाषण तो कभी सुनने में ही नहीं आते। वक्ता को बोलते समय न कोई रोकता है और न तालियाँ बजाकर या अन्य प्रकार से प्रोत्साहित किया जाता है। सदस्यगण शान्ति से उसके भाषण को सुनते हैं। सदस्यों की शिक्षा बहुत ऊँची होती है और दोनों सदनों के करीब तीन-चौथाई सदस्य विश्वविद्यालय की शिक्षा प्राप्त किये हुए होते हैं। संयुक्त राज्य अमेरिका की काँग्रेस की भाँति यहाँ की असेम्बली में दलबन्दी अधिक जोर पकड़े हुए नहीं है। प्राय: सभी सदस्य चतुर तथा गम्भीर होते हैं और अपनी आन्तरिक भावना को जोश द्वारा भड़काए जाने से रोकते हैं। यहाँ के सदस्यों के इन गुणों ने यहाँ के जनतन्त्र की बड़ी रक्षा की है और उसे भ्रष्ट वातावरण से बचाया है। "यहाँ की व्यवस्थापिका पूर्ण रूप से व्यवसायी मस्तिष्क रखे हुए है और अपने कार्य के सिवाय दूसरी बातों के बारे में बहुत कम सोचती है।"

संघीय कार्यकारिणी—फैडरल कौंसिल (Federal Council) :

स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल कौंसिल (Bundesrath) का अध्ययन एक विशेष महत्त्व रखता है। ऐसा संसार के किसी भी देश में नहीं है कि कार्यपालिका शक्ति का सर्वोच्च अधिकारी एक व्यक्ति न होकर एक व्यक्तियों का समूह हो तथा उसे दलबन्दी से विशेष रुचि न हो।[2] परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में कार्यपालिका शक्ति एक व्यक्ति में निहित न होकर एक व्यक्तियों के समूह में निहित है और उसे दलबन्दी में कोई विशेष रुचि नहीं है।

फैडरल कौंसिल, ब्रिटेन की केबिनेट के समान नहीं है क्योंकि यह न तो व्यवस्थापिका का नेतृत्व ग्रहण करती है और न उसके द्वारा समाप्त की जा सकती है और

1 Strong : Modern Political Constitutions, p. 208.
2 Bryce : op. cit., p. 351.

न यह संयुक्त राज्य अमेरिका की केबिनेट के समान व्यवस्थापिका से पूर्णतया स्वतन्त्र ही है। कहने का तात्पर्य यह है कि यह न तो संसदीय प्रणाली के समान संसद के प्रति पूर्णतया उत्तरदायी ही है और न अध्यक्षात्मक प्रणाली के समान उससे बिल्कुल स्वतन्त्र ही है। इसमें दोनों प्रणालियों की छाप नजर आती है परन्तु साथ ही साथ यह अपना अनोखा रूप भी लिए हुए है। इसमें दलबन्दी अपना रंग नहीं जमा पाती है।

ब्रिटेन, फ्रान्स तथा संयुक्त राज्य अमेरिका में कार्यपालिका शक्ति एक ही व्यक्ति में निहित है चाहे वह वास्तविक हो और चाहे नाममात्र को परन्तु कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी एक ही व्यक्ति है, परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में ऐसा नहीं है। संविधान की ६५ वीं धारा के अनुसार कार्यपालिका शक्ति एक संघीय कौंसिल में निहित कर दी गई है जिसके सात सदस्य हैं। यह स्विट्ज़रलैण्ड के निवासियों की मनोवृत्ति का एक स्पष्ट उदाहरण है कि वे किसी भी एक व्यक्ति में कार्यपालिका शक्ति निहित करना नहीं चाहते हैं। राजतन्त्र से तो वे कोसों दूर भागते हैं।

फैडरल कौंसिल के सदस्य फैडरल असेम्बली की दोनों सभाओं द्वारा अपनी सम्मिलित बैठक में चुने जाते हैं, (जैसा कि फ्रान्स में होता है परन्तु फ्रान्स में व्यवस्थापिका अध्यक्ष को ही चुनती है, केबिनेट को नहीं)। स्विट्ज़रलैण्ड में व्यवस्थापिका केबिनेट को चुनती है। ये सातों सदस्य ४ साल तक कार्य करते रहते हैं। परन्तु यदि इस बीच में फैडरल असेम्बली का निम्न सदन अर्थात् राष्ट्रीय परिषद् भंग हो जाता है तो नवनिर्मित राष्ट्रीय परिषद् पुनः राज्य परिषद् के साथ नई फैडरल कौंसिल बनाती है। फैडरल कौंसिल में सदस्य दुबारा भी चुने जा सकते हैं।

फैडरल कौंसिल के अधिकतर सदस्य फैडरल असेम्बली में से ही चुने जाते हैं, यद्यपि ये बाहर से भी चुने जा सकते हैं। परन्तु फैडरल कौंसिल का सदस्य बनने पर उन्हें फैडरल असेम्बली की सदस्यता से त्यागपत्र दे देना पड़ता है और उनके द्वारा रिक्त स्थानों की पूर्ति विशेष निर्वाचन द्वारा कर दी जाती है। फैडरल कौंसिल के सदस्यों में किसी भी कैण्टन का एक से अधिक सदस्य नहीं हो सकता और ऐसी प्रथा प्रचलित है कि बर्न (Berne) तथा ज्यूरिच (Zurich) जो बड़े-बड़े कैण्टन हैं, उनके सदस्य अवश्य होते हैं। जैसा कि पहले कहा जा चुका है, फैडरल कौंसिल के सदस्य पुनर्निर्वाचित भी हो सकते हैं। ऐसे उदाहरण भी मौजूद हैं कि कोई-कोई व्यक्ति २५ से ३२ वर्ष तक लगातार उसके सदस्य रहे हैं। फैडरल कौंसिल के सदस्य अत्यन्त अनुभवी एवं राजनैतिक दृष्टिकोण वाले होते हैं और उनके दीर्घ अनुभव के कारण फैडरल कौंसिल एक अत्यन्त शक्तिशाली एवं महत्त्वपूर्ण कार्यपालिका बन गई है। फैडरल कौंसिल के सातों सदस्यों के समान अधिकार हैं।

उनमें कोई ऐसा नहीं जो सब के ऊपर हो, जैसे कि ब्रिटेन की या फ्रान्स की केबिनेटों में प्रधान मन्त्री होता है। परन्तु फिर भी यह आवश्यकता तो होती ही है कि कोई एक व्यक्ति उसके कार्यों का समीकरण करने के लिये हो। अतः कौंसिल अपना एक अध्यक्ष और एक उपाध्यक्ष चुनती है। वे लोग अपने-अपने पद पर सिर्फ एक साल के लिये रहते हैं। पिछले वर्ष का उपाध्यक्ष अगले वर्ष के लिये अध्यक्ष चुन लिया जाता है। कोई भी व्यक्ति लगातार दो साल तक अध्यक्ष या उपाध्यक्ष नहीं रह सकता। अध्यक्ष केवल फैडरल कौंसिल का सभापति ही रहता है। वह उत्सवों में संघ का प्रतिनिधित्व ग्रहण करता है, कौंसिल का काम चलाता है तथा सामान्य कार्य की देखभाल करता है। कौंसिल में यदि किसी विषय पर बराबर-बराबर मत हों तो वह निर्णायक मत (Casting Vote) भी दे सकता है, किन्तु अध्यक्ष को धारासभा द्वारा पारित किसी कानून के विषय में प्रतिषेधात्मक अधिकार नहीं है और वह अन्य सदस्यों का अफसर भी नहीं समझा जाता है। संक्षेप में हम कह सकते हैं कि वह "बिना महत्त्व का अध्यक्ष"[1] अथवा "बिना शक्ति का अध्यक्ष" है।

फैडरल कौंसिल की शक्ति व कार्य :

स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल कौंसिल के निम्नलिखित कार्य हैं:—

(१) फैडरल कौंसिल के सातों सदस्य शासन के किसी न किसी विभाग के अधिकारी हैं। शासन के निम्नलिखित भाग हैं :—

- (अ) परराष्ट्र विभाग।
- (ब) न्याय व पुलिस विभाग।
- (स) गृह-विभाग।
- (द) युद्ध-विभाग।
- (य) अर्थ-विभाग।
- (र) उद्योग व कृषि-विभाग।
- (ल) डाक व रेल-विभाग।

प्रत्येक विभाग ब्यूरोज (Bureaus) में बँटा हुआ है और ब्यूरो भी छोटे-छोटे भागों में बँटे हुए हैं।

(२) फैडरल कौंसिल का कार्य उन सब निर्बन्धों व कानूनों का पालन करवाना है जो फैडरल असेम्बली द्वारा पास किये जाते हैं।

(३) देश में शान्ति रखना तथा राज्य की रक्षा करना।

---

1 'A Presidium of no great importance.'

(४) वित्त, सेना व प्रशासन के कार्यों का निरीक्षण करना।

(५) कर संचित करना तथा वित्त को समुचित रीति से व्यय करना।

(६) कैण्टनों के संविधानों का आदर करना तथा उनके द्वारा आपस में या पड़ौसी राज्यों के साथ स्थापित किये हुए सम्बन्धों की जाँच करना।

कौंसिल की विधायिनी शक्ति—जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है फैडरल कौंसिल के सदस्य असेम्बली के सदस्य नहीं होते हैं अतः उनका विधि-निर्माण में कोई विशेष हाथ नहीं होता है; परन्तु फिर भी इनका उसमें हाथ होता है। उनके विधि-निर्माण सम्बन्धी निम्नलिखित कार्य हैं :—

(१) वे विधि-निर्माण सम्बन्धी प्रस्ताव की रूपरेखा तैयार करते हैं और उसे असेम्बली में पेश करते हैं।

(२) फ्रान्स की केबिनेट के समान फैडरल कौंसिल के सदस्य भी व्यवस्थापिका में प्रश्नों का जवाब देते हैं परन्तु उन सवालों का वहाँ उतना महत्त्व नहीं है जितना फ्रान्स में है।

(३) फैडरल कौंसिल आय-व्यय का लेखा तैयार करती है और उसे असेम्बली में पेश करती है।

(४) किसी भी विधेयक पर असेम्बली में तब तक विचार नहीं होता जब तक फैडरल कौंसिल के सदस्य उस पर पहले विचार नहीं कर लेते हैं।

(५) फैडरल कौंसिल के सदस्य किसी विषय पर भी यह प्रस्ताव कर सकते हैं कि उस पर जनमत ले लिया जाय।

फैडरल कौंसिल के सदस्यों में आपस में कभी-कभी मतभेद भी हो जाता है और मतभेद होना वहाँ पर बुरा भी नहीं माना जाता है। जब कभी किसी बात पर मतभेद हो जाता है तो वह व्यक्त कर दिया जाता है और उसे दूर करने की कोशिश की जाती है। मतभेद प्रायः प्रशासकीय विषयों पर ही होता है और वह मिलजुल कर ठीक कर लिया जाता है।

[फै]डरल कौंसिल का समालोचनात्मक अध्ययन :

फैडरल कौंसिल की बैठकें सप्ताह में दो बार बर्न नगर में होती हैं। गणपूर्ति चार सदस्यों से हो जाती है। सब निर्णय मताधिक्य से होते हैं। संसार की समस्त कार्यपालिकाओं में यह एक अनूठा रूप लिए हुए है।

(१) इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि यह "कॉलिजिएट" (collegiate) ढंग की है और कार्यपालिका की शक्ति एक व्यक्ति में निहित न होकर व्यक्तियों के एक समूह में निहित है। उन व्यक्तियों की कुल संख्या सात है और वे सब एक दूसरे के बराबर पद के है। अध्यक्ष, जो उस कौंसिल का सभापति होता है, या उपाध्यक्ष जो

उप-सभापति होता है, कौंसिल में कोई विशेषाधिकार प्राप्त किए हुए नहीं होता, जैसा कि इङ्गलैण्ड में प्रधान मन्त्री होता है। वह अपने साथियों को भी नहीं चुनता है। अमेरिका के अध्यक्ष के साथ इसकी तुलना करना तो व्यर्थ ही है क्योंकि उसकी (अमेरिका के राष्ट्रपति की) शक्ति, अधिकार, मन्त्रियों की नियुक्ति सम्बन्धी कार्य तथा अन्य कार्य इतने अधिक हैं कि स्विट्ज़रलैण्ड की कौंसिल के अध्यक्ष के कुछ भी नहीं हैं। इन सब बातों का कारण यही है कि स्विट्ज़रलैण्ड में कार्यपालिका शक्ति एक व्यक्ति के हाथ में न होकर सात व्यक्तियों के हाथ में है।

(२) दूसरी बात जो फैडरल कौंसिल के विषय में कही जा सकती है वह यह है कि यह असेम्बली के प्रति उत्तरदायी है और नहीं भी है। "वह राष्ट्र की किसी अन्य कार्यकारी सत्ता की ओर से कार्य नहीं करती है।" अतः यह धारासभा के प्रति उत्तरदायी नहीं होती है। इसकी रचना उस ढंग पर नहीं होती जिस ढंग पर ब्रिटेन में केबिनेट की होती है जिसमें बहुसंख्यक दल का नेता प्रधान मन्त्री बनाया जाता है और वह अपने अन्य साथियों को चुनता है। इसके अलावा इसके सदस्य एक ही राजनैतिक दल के न होकर विभिन्न राजनैतिक दलों के होते हैं परन्तु फिर भी उनमें जो संगठन व सद्भावना की प्रवृत्ति होती है वह वास्तव में आश्चर्यजनक है।

फैडरल कौंसिल फैडरल असेम्बली के प्रति इस अर्थ में उत्तरदायी नहीं है कि असेम्बली उसका विघटन कर सके अन्यथा अपने समस्त कार्यों के लिए वह उसके प्रति उत्तरदायी है। असेम्बली में कौंसिल के सदस्यों से प्रश्न पूछे जाते हैं और असेम्बली के द्वारा निर्धारित नीति का उनको पालन करना पड़ता है। इस सम्बन्ध में हम फैडरल कौंसिल में तथा ब्रिटेन की केबिनेट में काफी समानता पाते हैं परन्तु ब्रिटेन की केबिनेट की तरह यह असेम्बली द्वारा समाप्त नहीं की जा सकती और न अमेरिका की व्यवस्थानुसार इसके सदस्य व्यवस्थापिका से पूर्णतया स्वतन्त्र होते हैं और न स्वतन्त्र रूप में कार्य ही कर सकते हैं।

(३) फैडरल कौंसिल एक स्थायी संस्था है और असेम्बली से किसी बात पर मतभेद होने पर त्यागपत्र नहीं देती। इस प्रकार फैडरल कौंसिल में उत्तरदायित्व और अनुत्तरदायित्व का अद्भुत सम्मिश्रण है जिसके आधार पर हम इसे संसदात्मक तथा अध्यक्षात्मक दोनों प्रणालियों से भिन्न पाते हैं।[1]

(४) अमेरिका में मन्त्री राष्ट्रपति द्वारा नियुक्त किये जाते हैं और इङ्गलैण्ड में वे राजा द्वारा प्रधान मन्त्री की सलाह से नियुक्त किये जाते हैं परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में वे

1 'It is this union of responsibility to the legislative with permanence which is a peculiar feature of it and distinguishes it at once from the Presidential and the Parliamentary executive."

फैडरल असेम्बली द्वारा चुने जाते हैं। इस सम्बन्ध में भी फैडरल कौंसिल एक अनोखी संस्था है।

(५) स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल कौंसिल को केबिनेट नहीं कहा जा सकता यद्यपि कुछ कार्य वह सामूहिक रूप में करती है और केबिनेट की तरह इसकी साप्ताहिक बैठकें भी होती हैं। दूसरी बात जिसकी वजह से हम फैडरल कौंसिल को केबिनेट नहीं कह सकते, यह है कि इसमें केबिनेट की तरह ऐक्य व सामूहिक उत्तरदायित्व तथा दलबन्दी को कायम रखने की प्रबल इच्छा आदि बातें नजर नहीं आती हैं। केबिनेट में प्रायः एक ही दल के लोग होते हैं और अपनी दलगत भावनाओं तथा सिद्धान्तों की रक्षा के लिए निरन्तर प्रयत्नशील रहते हैं। परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल कौंसिल में ये बातें नाममात्र को भी नहीं हैं।

(६) स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल कौंसिल में दलबन्दी से उत्पन्न हुए भ्रष्टाचार, स्वार्थ व एक दूसरे दल को कुचलने की भावना आदि को स्थान नहीं है। इसीलिए यह कौंसिल जितनी सुगमता तथा कुशलता से काम चलाती है उतना अन्यत्र कोई भी कार्यपालिका नहीं चलाती। बहुसंख्यक कार्यपालिका होते हुए भी इसके कार्यों में एकता नजर आती है और संघीय शासन में इसकी कार्य-कुशलता के कारण स्विट्ज़रलैण्ड को वास्तविक उन्नति और सफलता प्राप्त हुई है।

(७) इस प्रथा के कभी-कभी कुपरिणाम भी नजर आते हैं। ऐसी परिस्थितियाँ आधुनिक काल में अक्सर आ जाया करती हैं जब यह आवश्यक समझा जाता है कि कार्यपालिका के सब सदस्य एक ही मत तथा एक ही दल के हों और सब एक दूसरे के स्वर में स्वर मिलायें जिससे कार्य में परस्पर मतभेद के कारण रुकावट न पड़े। स्विट्ज़रलैण्ड में यह बात स्वाभाविक है कि कौंसिल के सदस्यों में प्रायः मतभेद रहता है चाहे वह भले ही बाद में दूर हो जाय और कार्य की प्रगति उसकी वजह से धीमी रहे।

(८) हम पहले कह चुके हैं कि फैडरल कौंसिल फैडरल असेम्बली से किसी बात पर मतभेद होने पर त्यागपत्र नहीं देती और सदस्य असेम्बली में अपनी हार हो जाने पर अपमान को पी जाते हैं। इस प्रणाली से एक बहुत बड़ा फायदा यह हुआ है कि स्विट्ज़रलैण्ड में अनुभवी व्यक्ति बहुत दिनों तक रहे हैं क्योंकि उन्हें असेम्बली से मत-भेद होने पर त्यागपत्र नहीं देना पड़ता और वे कई-कई बार चुने भी जा सकते हैं। इङ्गलैण्ड में यह बात स्वप्न में भी नहीं सोची जा सकती। वहाँ तो त्यागपत्र लोगों की जेबों में रखे रहते हैं और नए चुनावों के बारे में या नए मन्त्रिमण्डल के निर्माण के समय पहले यह नहीं मालूम पड़ सकता कि किस करवट ऊँट बैठेगा।

ब्राइस ने स्विट्ज़रलैण्ड की कार्यकारिणी की प्रशंसा इस प्रकार की है:—"इस प्रणाली ने ऐसी संस्था की स्थापना की है जो जनता के प्रति अपने उत्तरदायित्व को

कम भी नहीं करती है और साथ ही फैडरल असेम्बली को भी परामर्श देती है, और दलबन्दी से दूर रहने के कारण यह जरूरत पड़ने पर दो लड़ने वाले दलों में मध्यस्थ का काम भी करती है तथा उनके मतभेद को दूर कर समझौता भी कराती है। इसके द्वारा अनुभवी तथा सिद्धहस्त व्यक्ति राष्ट्र की सेवा में लगे रहते हैं। यह राष्ट्र की परम्परा की रक्षा करती है और उसकी नीति को अविच्छिन्न बनाए रखती है।"

ब्राइस आगे कहता है कि इसकी बहुसंख्यक कार्यकारिणी, इसमें प्रधान मन्त्री जैसे किसी एक केन्द्रीय शक्त्याधिकारी का न होना, इसका असेम्बली के आधीन रहना, इसमें ठोसपन न होते हुए भी एकता का होना, इसका स्थायीपन, इसका दलबन्दी से अलग रहना, इसकी मन्त्रिमण्डल के प्रति उत्तरदायित्व की अनूठी प्रणाली —ये सब इसकी प्रमुख विशेषताएँ हैं जिनकी वजह से इसका अध्ययन एक विशेष रोचकता रखता है।

अपने कार्य में फैडरल कौंसिल ने हमेशा सफलता दिखलाई है क्योंकि जनतन्त्रीय भावना से यह सदैव ओत-प्रोत रही है और हमेशा जनता की सच्ची सेविका रही है। विभिन्न दलों की निकृष्ट चालबाजियाँ इस पर बिल्कुल प्रभाव नहीं डाल सकी हैं बल्कि इसने उनके द्वारा उत्पन्नित मतभेदों व झगड़ों को ही दूर करने का प्रयास किया है। इसमें देश के योग्य तथा अनुभवी व्यक्ति ही आए हैं और बहुत से लोगों को इसमें कई-कई बार निर्वाचित होने के कारण वर्षों काम करने का मौका मिला है जिसके कारण शासन की नीति में क्रमबद्धता एवं स्थायीपन रहा है। यद्यपि इङ्गलैण्ड और फ्रान्स में भी कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी दलबन्दी से दूर रहता है परन्तु वहाँ उसका इतना महत्त्व नहीं है और इसलिए दलबन्दी ही हमेशा अपना प्रभाव रखती है। स्विट्जरलैण्ड ही एक ऐसा देश है जहाँ कार्यपालिका में दलगत भावना नहीं है तथा जहाँ उसके पास वास्तविक शक्ति भी है।

फैडरल कौंसिल का व्यवस्थापिका से सम्बन्ध :

स्विटजरलैण्ड की फैडरल कौंसिल और फैडरल असेम्बली के पारस्परिक सम्बन्धों की समीक्षा करने पर प्रतीत होता है कि न तो ये संयुक्त राज्य अमेरिका की कार्य पालिका और कांग्रेस के समान सम्बन्ध रखती हैं और न इनके सम्बन्ध ब्रिटेन की केबिनेट और पार्लियामेण्ट के से ही हैं, बल्कि इन्होंने एक बीच का रास्ता अपनाया हुआ है। दूसरे शब्दों में हम यह कह सकते हैं कि न तो यह अमेरिका की तरह व्यवस्थापिका से पूर्णतया स्वतन्त्र है और न ब्रिटेन की तरह उसका अंग ही है। स्विट्जरलैण्ड की कौंसिल की स्थिति इतनी कठोर नहीं है जैसी कि उपरोक्त दोनों देशों में है जहाँ पर उनकी कठोरता ने विभिन्न बुराइयाँ पैदा कर दी हैं। स्विट्जरलैण्ड ने दोनों के सद्गुणों को अपनाकर अपनी स्थिति को आदर्श रूप प्रदान किया है।

फैडरल कौंसिल के सदस्य व्यवस्थापिका के सदस्य नहीं होते और यदि वे उनमें से

चुने जाते हैं तो उन्हें व्यवस्थापिका की सदस्यता से त्यागपत्र दे देना पड़ता है। वे लोग असेम्बली की बैठकों में उपस्थित रह सकते हैं और उन्हें असेम्बली में पूछे गये प्रश्नों का जवाब भी देना पड़ता है परन्तु वे किसी विषय पर वोट नहीं दे सकते। यदि किसी विषय पर उनमें और असेम्बली में मतभेद भी हो जाता है तो वे अपनी हार पर त्यागपत्र नहीं देते। इङ्गलैण्ड और फ्रान्स में यह बात इसके बिलकुल विपरीत है। परन्तु इस विचित्र प्रकार के उत्तरदायित्व के रहते हुए भी स्विट्जरलैण्ड में फैडरल कौंसिल तथा फैडरल असेम्बली में पारस्परिक सम्बन्ध घनिष्ठ हैं और कार्य अत्यन्त सुगमता से चलता रहता है।

फैडरल कौंसिल को फैडरल असेम्बली द्वारा बनाए हुए कानूनों का पालन करवाना पड़ता है। फैडरल असेम्बली ही संघ की सर्वोच्च शक्ति है। परराष्ट्र नीति, युद्ध-घोषणा व सन्धि-वार्ता आदि विषयों के सम्बन्ध में कोई कदम उठाने से पहले कौंसिल को असेम्बली की पूर्व-स्वीकृति लेनी पड़ती है। दूसरे तरीके से भी असेम्बली कौंसिल के कार्यों को प्रभावित करती है और वह समय-समय पर प्रस्ताव व निर्णय प्रस्तुत करती है कि कौंसिल अमुक सम्बन्ध में अमुक तरीके से कार्य करे। कहने का तात्पर्य यह है कि फैडरल असेम्बली फैडरल कौंसिल के कार्यों के ऊपर काफी नियन्त्रण रखती है परन्तु इससे यह नहीं समझना चाहिए कि फैडरल कौंसिल असेम्बली की अधीनता में है। वास्तव में कौंसिल अपना एक विशेष महत्त्व व स्थान रखती है। कौंसिल द्वारा असेम्बली में प्रस्तावित विधेयकों का असेम्बली हमेशा आदर करती है। ब्राइस के कथनानुसार "यह (फैडरल कौंसिल) एक प्रकार की निर्देशक है जो एक अस्त्र है और जो प्रस्ताव बनाती भी है और उन्हें प्रस्तावित भी करती है।"[1] प्रारम्भ में असेम्बली की वास्तविक शक्ति बहुत थी परन्तु प्रथम महायुद्ध के बाद से कौंसिल की शक्ति काफी बढ़ गई है। अन्तर्राष्ट्रीय परिस्थितियों ने भी कौंसिल की शक्ति को बढ़ाने में काफी योग दिया है। द्वितीय महायुद्ध में तो असेम्बली ने ही कौंसिल को अत्यधिक शक्ति प्रदान की और स्वतन्त्र रूप में कार्य करने का अधिकार दिया।

स्विट्जरलैण्ड में जहाँ तक कार्य का सम्बन्ध है वहाँ तक फैडरल कौंसिल के सदस्य वही कार्य करते हैं जो इङ्गलैण्ड में केबिनेट के मन्त्री करते हैं। "वे विधेयक की रूपरेखा तैयार करते हैं, उस पर विचार करते हैं, उसे असेम्बली में पेश करते हैं तथा पास कराने की कोशिश करते हैं।" स्विट्जरलैण्ड में कार्यकारिणी के विधि-निर्माण, वित्तीय तथा कार्यपालिका सम्बन्धी करीब-करीब वही कार्य हैं जो ब्रिटेन में मन्त्रियों के हैं परन्तु उनकी शक्ति, उनकी दलीय अधीनता, उनका संसद में हार

1 Bryce : Modern Democracies.

जाने पर त्यागपत्र देना, उन्हें संसद में वोट देने का अधिकार होना, सामूहिक उत्तरदायित्व होना, आदि बातें स्विट्जरलैण्ड में नहीं हैं। दूसरे इङ्गलैण्ड में जैसे प्रधान मन्त्री होता है और जो अन्य मन्त्रियों की उसके सामने स्थिति होती है, उस प्रकार का संगठन भी स्विट्जरलैण्ड में नहीं है।

इसी प्रकार अमेरिका की सी व्यवस्था भी स्विट्जरलैण्ड में नहीं है यद्यपि अमेरिका की तरह फैडरल कौंसिल के सदस्य भी व्यवस्थापिका के सदस्य नहीं रह पाते हैं और वे दलीय भावनाओं से परे रहते हैं। लेकिन अमेरिका में मन्त्री लोग कॉंग्रेस में नहीं जाते हैं और न वे विधि-निर्माण सम्बन्धी उस प्रकार के कार्य करते हैं जिस प्रकार के स्विट्जरलैण्ड में करते हैं। अमेरिका में वे वोट ही नहीं दे सकते बल्कि उनको विधि-निर्माण में फैडरल कौंसिल के सदस्यों के समान भी अधिकार प्राप्त नहीं हैं।

कॉलिजियल एक्जीक्यूटिव (Collegial Exec tive) :

स्विट्जरलैण्ड की कॉलिजियल एक्जीक्यूटिव संसार में एक अनोखी संस्था है। इसके मुकाबिले की कोई दूसरी संस्था नहीं है। इसका संगठन, इसके कार्य, इसकी शक्ति तथा जिम्मेदारी अन्य देशों की कार्यपालिकाओं के संगठन, शक्ति, कार्य व जिम्मेदारी से सर्वथा भिन्न हैं। हम ऊपर बतला चुके हैं कि किस प्रकार इसमें ब्रिटेन की तरह न तो कोई प्रधान मन्त्री होता है और न अमेरिका की तरह अध्यक्ष। इसमें एक सभापति व एक उप-सभापति होते हैं परन्तु उनके कार्य-काल, उनके निर्वाचन की प्रणाली, उनकी शक्ति आदि में अमेरिका के राष्ट्रपति से जमीन आसमान का अन्तर है। यह एक बहुसंख्यक कार्यपालिका है जिसमें कोई एक व्यक्ति नेता नहीं होता है। दूसरे, स्विट्जरलैण्ड में अमेरिका की भाँति शक्ति-विभाजन के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है अतः यहाँ पर कार्यपालिका तथा व्यवस्थापिका के जितने सम्बन्ध हैं उतने अमेरिका में नहीं हैं। परन्तु स्विट्जर-लैण्ड की कौंसिल व्यवस्थापिका की एक प्रकार से दासी है और उसके द्वारा बनाये हुए नियमों का पालन करवाना ही उसका प्रमुख कार्य है।

विभिन्न देशों में विभिन्न प्रकार का राजनैतिक वातावरण होने की वजह से विभिन्न प्रकार की राजनैतिक संस्थाएँ बन जाती हैं और उनकी नकल प्रत्येक देश में या किसी भी देश में वैसी नहीं हो सकती है। आयरलैण्ड ने स्विट्जरलैण्ड की कौंसिल की नकल अपने यहाँ करनी चाही ताकि उसकी राजनैतिक समस्याएँ हल हो जायँ परन्तु इसमें वह असफल रहा। इसी प्रकार फ्रान्स में भी परिस्थितियाँ भिन्न होने के कारण वहाँ स्विस संस्थाएँ सफल नहीं हो सकतीं। वे तो स्विट्जर-लैण्ड के लिए ही बनी हैं और वहाँ के वातावरण में तथा वहीं के सीमित क्षेत्र

में सफल हो सकती हैं और हो रही हैं। यदि उनकी नकल दूसरी जगह की जायगी तो सफलता होने की कम ही सम्भावना है।

फैडरल कौंसिल का अध्यक्ष :

स्विट्ज़रलैण्ड की बहुसंख्यक कार्यकारिणी की प्रणाली ने जिसके द्वारा शक्ति एक व्यक्ति के हाथ में न रहकर व्यक्तियों के एक समूह के हाथ में सौंपी गई है, काफी सफलता प्राप्त की है। वैधानिक दृष्टि से कौंसिल के सभी सदस्य वहाँ पर शक्ति लिये हुए हैं परन्तु प्रशासकीय दृष्टि से यह आवश्यक है कि उनमें कोई न कोई सभापति या मुखिया या अध्यक्ष हो। अतः फैडरल कौंसिल में एक सभापति होता है जो असेम्बली द्वारा नियुक्त किया जाता है। वह फैडरल कौंसिल के सदस्यों में से ही होता है। वह सिर्फ एक साल के लिए चुना जाता है। उसके अलावा एक उप-सभापति भी होता है। वह भी एक साल के लिये चुना जाता है। दूसरे वर्ष सभापति निवृत्त हो जाता है और उप-सभापति सभापति बना दिया जाता है और वह उस पद पर एक साल के लिए रहता है।

सभापति की शक्तियाँ :

जैसा कि हम ऊपर कह आए हैं फैडरल कौंसिल के सभापति की शक्ति अत्यधिक कम है। वह राष्ट्र की कार्यपालिका का सर्वोच्च अधिकारी नहीं है और न उसके पास कोई महत्त्वपूर्ण शक्ति ही है। वह न किसी अफसर को नियुक्त करता है और न कोई सन्धि-वार्ता वगैरह कर सकता है। उसे अमेरिका के राष्ट्रपति की तरह किसी विधेयक पर प्रतिषेधात्मक अधिकार भी नहीं है। सिवाय इसके कि वह फैडरल कौंसिल की बैठकों में सभापतित्व ग्रहण करे, तथा विभिन्न विभागों द्वारा भेजी गई रिपोर्टों को देखे, और विभिन्न प्रशासकीय विभागों के कार्यों का सामान्य निरीक्षण करे, वह और कोई महत्त्वपूर्ण कार्य नहीं करता है। वह सिर्फ बराबर वालों में प्रथम (First among equals : primus inter pares) ही है। ब्राइस के कथनानुसार वह "बिना महत्त्व का अध्यक्ष" है और यह बात सत्य भी है। स्विट्ज़रलैण्ड में लोग अपने सभापति के नाम तक को नहीं जानते हैं; परन्तु फिर भी उसका पद अत्यन्त गौरव का है और लोग उस पद को प्राप्त करने के लिए अत्यन्त लालायित रहते हैं तथा उसे प्राप्त कर लेना वे अपने राजनैतिक जीवन की पराकाष्ठा की सीढ़ी को प्राप्त करना समझते हैं।

फैडरल कौंसिल का सभापति तथा अमेरिका का अध्यक्ष :

यह कहने की आवश्यकता नहीं है कि अमेरिका के राष्ट्रपति की और स्विट्ज़रलैण्ड की फैडरल कौंसिल के सभापति की शक्तियों, कार्यों व अधिकारों में ज़मीन आसमान का अन्तर है। अमेरिका के राष्ट्रपति की ब्रिटेन के प्रधान मन्त्री से तुलना की जाती है और वास्तव में उनके अधिकारों तथा शक्तियों में बहुत कुछ समानता है

परन्तु फैडरल कौंसिल के सभापति की शक्ति तथा अधिकार तो उन दोनों के सामने कुछ भी नहीं हैं।

अमेरिका के राष्ट्रपति के सम्बन्ध में हम बतला चुके हैं कि किस प्रकार उसे विभिन्न प्रकार के अधिकार हैं जो बड़े-बड़े अफसरों की नियुक्ति, केबिनेट के सदस्यों की नियुक्ति, युद्ध व सन्धि-वार्ता सम्बन्धी विधेयकों के प्रति प्रतिषेधात्मक अधिकार आदि बातों से सम्बन्ध रखते हैं, परन्तु फैडरल कौंसिल के सभापति को ये सब अधिकार प्राप्त नहीं हैं। वह तो स्विट्ज़रलैण्ड में नाममात्र का अध्यक्ष है जिस प्रकार इङ्गलैण्ड में राजा है और उसी की तरह उत्सवों में वह राज्य का नेतृत्व ग्रहण करता है परन्तु इङ्गलैण्ड के राजा की तरह उसकी शान व शौकत नहीं है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि फैडरल कौंसिल का अध्यक्ष वास्तव में अध्यक्ष कहलाने का उतना हक नहीं रखता जितना सभापति कहलाने का, क्योंकि सिवाय इसके कि वह कौंसिल का सभापतित्व ग्रहण करे और उसके कार्यों का सामान्य निरीक्षण करे, उसके पास कोई और शक्ति नहीं है।

स्विट्ज़रलैण्ड की न्यायिक व्यवस्था :

स्विट्ज़रलैण्ड की न्यायिक व्यवस्था शासन संविधान के विद्यार्थियों के लिए विशेष महत्त्व नहीं रखती है, क्योंकि उसका वहाँ कोई ऐसा महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं है जैसा कि अमेरिका में सर्वोच्च न्यायालय का है।

स्विट्ज़रलैण्ड के संघीय न्यायालय का नाम संघीय ट्रिब्यूनल (Federal Tribunal) या बुन्देसजेरिश्त (Bundesgerischt) है। सन् १८४८ के संविधान द्वारा इसकी स्थापना हुई थी और उसने इसे अत्यन्त सीमित अधिकार प्रदान किये थे। बाद में शासन में कुछ संशोधन हुए जिनके द्वारा इसकी शक्ति में भी कुछ वृद्धि हो गई। आजकल यह स्थायी रूप में वण्ड (Vand) नामक कैण्टन की राजधानी लॉसेन (Lausanne) में स्थित है। इसमें २४ न्यायाधीश हैं और वे फैडरल असेम्बली की सम्मिलित बैठक में निर्वाचित किये जाते हैं। उनका कार्य-काल ६ वर्ष है। विधान द्वारा यह निश्चित कर दिया गया है कि स्विट्ज़रलैण्ड में भाषाओं के आधार पर बनाए गये तीनों क्षेत्रों के प्रतिनिधि उसमें हों। यद्यपि विधान द्वारा उनकी कार्यावधि ६ वर्ष निश्चित कर दी गई है परन्तु वे उस अवधि के बाद पुनर्निर्वाचित हो सकते हैं और प्रायः उनका निर्वाचन हो ही जाता है। न्यायिक क्षेत्र में प्रायः अनुभवी व्यक्ति ही चुने जाते हैं। चूंकि संघीय न्यायालय के न्यायाधीशों की अपने पद पर स्थिति काफी दृढ़ है अतः वे लोग अत्यन्त कुशलतापूर्वक कार्य करते हैं। वे लोग व्यवस्थापिका के किसी सदन के सदस्य नहीं हो सकते। न्यायाधीश अपना एक सभापति और एक उप-सभापति चुनते हैं।

इस न्यायालय के पास प्राथमिक (original) तथा अपील सम्बन्धी (appellate) दोनों प्रकार के मामले आते हैं। जो विषय संघ तथा कैण्टनों के झगड़ों से सम्बन्ध रखते हैं वे प्राथमिक रूप में इसके पास आते हैं। कैण्टनों के न्यायालयों से अपीलें भी इस न्यायालय में आती हैं। इसमें कैण्टनों के पारस्परिक झगड़े सम्बन्धी मुकद्दमे भी आते है।

मुकद्दमों की जाँच और फैसला करने के लिए इस ट्रिब्यूनल के चार भाग हैं और उनमें एक ग्राण्ड जूरी (Grand Jury) कहलाता है। संघीय न्यायालय में सब निर्णय जूरी की राय से होते हैं। संघीय न्यायालय को व्यवस्थापिका द्वारा पारित किसी भी कानून को अवैध घोषित करने का अधिकार नहीं है परन्तु यह कैण्टनों की व्यवस्थापिका के किसी भी कानून को, यदि वह संघ के प्रतिकूल है, अवैध घोषित कर सकता है।

संविधान की ११३ वीं धारा में यह स्पष्ट है कि संघीय न्यायालय फैडरल असेम्बली द्वारा पारित समस्त कानूनों का पालन करवायेगा तथा उनका दृढ़ीकरण करेगा। अतः अमेरिका के संघीय न्यायालय की तरह इसे यह अधिकार नहीं है कि यह संविधान की व्याख्या करे। इसलिए इसे सर्वोच्च न्यायालय नहीं कहा जा सकता। इसे प्रति वर्ष अपने समस्त कार्यों की रिपोर्ट भी फैडरल असेम्बली को भेजनी पड़ती है।

फ्रान्स के प्रशासकीय न्यायालयों की तरह यह न्यायालय स्विट्जरलैण्ड के बड़े-बड़े अफसरों के ऊपर चलाये गये मुकद्दमे भी सुनता है। सरकारी कर्मचारी तथा नागरिकों के बीच उत्पन्न हुए झगड़े भी इसी के द्वारा तय किये जाते हैं। इसे यह शक्ति सन् १९२५ में प्रदान की गई थी। परन्तु इस प्रकार के झगड़े अधिक नहीं होते हैं क्योंकि अधिकतर सरकारी कर्मचारी कैण्टनों के एजेण्ट होते हैं और उनके झगड़े कैण्टनों के प्रशासकीय न्यायालयों के ही सामने लाये जाते हैं। इसलिए अपनी शक्ति सीमित होने के कारण, न्यायाधीशों की नियुक्ति के सम्बन्ध में निर्वाचन प्रणाली होने के कारण, तथा व्यवस्थापिका की अधीनता होने की वजह से स्विट्जरलैण्ड की न्यायिक व्यवस्था पक्षपातरहित एवं शक्तिवर्द्धक न्यायिक कार्य करने में असफल रही है। यह बात विशेष महत्त्वपूर्ण है क्योंकि स्विट्जरलैण्ड-निवासियों ने इस सम्बन्ध में अमेरिकन न्यायिक व्यवस्था की नकल करनी चाही।[1] परन्तु वे उसमें सफल नहीं हुए। लेकिन जहाँ तक न्याय की शुद्धता, तत्परता, मितव्ययता तथा निश्चितता का सम्बन्ध है हम यह कह सकते हैं कि स्विट्जरलैण्ड की व्यवस्था इङ्गलैण्ड और अमेरिका के मुकाबिले की है और कैण्टनों के न्यायालयों से कहीं अधिक मात्रा में ये गुण हमें संघीय ट्रिब्यूनल में नजर आते हैं। यद्यपि जहाँ तक कार्याधिकार के क्षेत्र का सम्बन्ध है संघीय

1 Federal Polity, pp. 186-187.

ट्रिब्यूनल का कार्य-क्षेत्र अमेरिका के सर्वोच्च न्यायालय के मुकाबिले बहुत कम है और इसीलिए इसे स्विट्ज़रलैण्ड का सुप्रीम कोर्ट नहीं कह सकते, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि निकट भविष्य में यह धीरे-धीरे वहाँ पर वही स्थान प्राप्त कर लेगा जो अमेरिका में सुप्रीम कोर्ट का है, क्योंकि इसका कार्य-क्षेत्र पहले से बहुत बढ़ गया है और दिन प्रति दिन बढ़ता ही जा रहा है।

स्विट्ज़रलैण्ड में विधान की व्याख्या करने का काम भी व्यवस्थापिका का ही है और अपने द्वारा पारित नियमों को वापिस लेना या उनमें संशोधन करना भी उसी का काम है। न्यायपालिका को इससे कोई सरोकार नहीं है।[1]

राजनैतिक दल :

स्विट्ज़रलैण्ड में राजनैतिक दलों का महत्त्व बहुत कम है और मतदान के समय किसी दल का विजयी होना अथवा किसी का हार जाना विशेष महत्त्वपूर्ण घटना नहीं मानी जाती है जैसा कि अन्य देशों में समझा जाता है। यूरोप के किसी भी देश में नवीन राजनैतिक दलों की उत्पत्ति के लिए इतना वातावरण नहीं है जितना स्विट्ज़रलैण्ड में है, क्योंकि इतने धर्म, जातियाँ तथा भाषाएँ भी नहीं हैं और न इतनी आर्थिक तथा व्यावसायिक विभिन्नताएँ ही है, लेकिन फिर भी यहाँ पर राज्य-रूपी जहाज दलबन्दी की लहरों द्वारा डगमगाया नहीं है।[2] वास्तव में स्विट्ज़रलैण्ड में दलबन्दी अत्यन्त अशक्त एवं दुर्बल है।

स्विट्ज़रलैण्ड में दलबन्दी की दुर्बलता के कारण :

(1) स्विट्ज़रलैण्ड में दलबन्दी की दुर्बलता एवं अशक्तता का प्रमुख कारण कार्यपालिका का स्थायीपन है। अपने कार्य-काल में फैडरल कौंसिल के सदस्य हटाये नहीं जा सकते। अतः वे दलबन्दी के चक्कर में नहीं पड़ते, क्योंकि उन्हें अपने को सम्हालना नहीं पड़ता। दूसरे, स्विट्ज़रलैण्ड में यह प्रथा प्रचलित है कि फैडरल कौंसिल के सदस्य प्रायः पुनर्निर्वाचित होते रहते हैं। अतः वहाँ दलबन्दी का सवाल ही पैदा नहीं होता। दलबन्दी तो वहाँ जोर पकड़ती हैं जहाँ सत्ता को हथियाने के लिए दौड़ होती है और एक दल दूसरे दल से उसे छीनने की कोशिश में रहता है। संविधान तथा परम्परा दोनों ने ही इस परिस्थिति को स्विट्ज़रलैण्ड में असम्भव बना दिया है। व्यवस्थापिका में भी दलबन्दी की भावना कम महत्त्व रखती है, क्योंकि एक तो फैडरल असेम्बली के सत्र बहुत कम समय के लिए होते हैं और दूसरे वहाँ पर सदस्य दल के आधार पर नहीं चुने जाते बल्कि जिला-क्षेत्र के आधार पर निर्वाचित होते है। अतः वहाँ दलगत भावना को महत्त्व नहीं दिया जाता।

दूसरी वजह जिससे दलबन्दी अत्यधिक जोर पकड़ जाती है, भ्रष्टाचार प्रणाली

1 Bryce : Modern Democracies, Vol. I, p. 358.
2 Bryce: op. cit., p. 408.

(Spoil System) है जैसी कि अमेरिका में प्रचलित है जिसके द्वारा शक्ति प्राप्त करने पर उसी दल के लोगों को पदों पर भर दिया जाता है जिस दल की सरकार बनी है। परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में यह प्रणाली नहीं है। एक तो वहाँ पर नियुक्तियाँ ही योग्यता के आधार पर होती हैं और दूसरे वहाँ पर इतनी अधिक संख्या में पद ही नहीं हैं कि कोई दल अपने समर्थकों को भर सके। वहाँ पर कैण्टनों को काफ़ी अधिकार प्राप्त हैं और छोटा देश होने के कारण वहाँ वे आकर्षण भी नहीं हैं जो संयुक्त राज्य अमेरिका जैसे राष्ट्र में हो सकते हैं।

लोक-निर्णय, निर्बन्ध-उपक्रम तथा प्रत्याहरण, इन तीन जनतन्त्र के अस्त्रों की प्रधानता के कारण भी दलबन्दी को स्विट्ज़रलैण्ड में अधिक स्थान नहीं मिला। जितने भी महत्त्वपूर्ण प्रश्न होते हैं वे सब लोक-निर्णय द्वारा तय किये जाते हैं और इसलिए वहाँ यह प्रश्न ही नहीं उठता कि एक दल किसी स्वार्थ को लेकर अपना स्वार्थ किसी न किसी प्रकार सिद्ध करे।

स्विट्ज़रलैण्ड-निवासी चतुर, गम्भीर एवं देश-भक्त हैं और वे अपने राष्ट्रीय हितों को पारस्परिक झगड़ों द्वारा नष्ट नहीं करना चाहते हैं। इसलिए वहाँ भी दलबन्दी जोर नहीं पकड़ पाती। उनकी भौगोलिक परिस्थिति भी उन्हें एक सूत्र में बँधा रहने को प्रेरित करती है। उनके चुनाव के समय अत्यन्त धैर्य एवं शान्ति से काम होता है।

लॉर्ड ब्राइस ने स्विट्ज़रलैण्ड में दलबन्दी के अशक्त होने के कई कारण बतलाये हैं। उनके कथनानुसार "देश के सामने बहुत समय तक कोई बड़ी-बड़ी-समस्याएँ न होने, आर्थिक व्यवस्था के प्रति सन्तुष्ट रहने, तथा प्राचीन धार्मिक मतभेद और वर्ग-भेद के प्रति घृणा होने के कारण वहाँ पर प्रबल दलबन्दी नहीं होने पाई है। वहाँ पर व्यक्तिगत आकांक्षाओं तथा नेतृत्व ग्रहण करने की लालसाओं का अभाव है। वहाँ पर सार्वजनिक जीवन में व्यक्तियों के लिए बहुत कम आकर्षण हैं। बड़ी-बड़ी समस्याएँ सीधी जनता द्वारा तय कर ली जाती हैं। इन्हीं सब कारणों से दलबन्दी जो अन्य जनतन्त्रीय देशों में विशाल धारा का रूप धारण कर लेती है, स्विट्ज़रलैण्ड में एक छोटी सी लहर ही पैदा कर पाती है।[1]

जिस प्रकार ग्रेट ब्रिटेन को छोड़कर यूरोप के समस्त देशों में बहुदल प्रणाली है, उसी प्रकार स्विटज़रलैण्ड में भी है। प्रारम्भ में उप-राज्यों के अधिकारों के प्रश्न पर राजनैतिक दलों का संगठन हुआ था। मौलिक दल के अनुयायी, जो अपने को परम्परा के समर्थक समझते थे, स्वयं को फैडरलिस्ट (Federalist) कहते थे और वे इस बात पर जोर देते थे कि कैण्टनों के अधिकारों को सुरक्षित रक्खा जाय। इसके विपरीत जो केन्द्र की शक्ति को दृढ़ करना चाहते थे वे अपने आपको सेण्ट्रलिस्ट (Cen-

1 Ibid, p 409

tralist) कहते थे। कुछ समय के बाद इस दल के दो भाग हो गये—(१) उग्र दल (Radicals), और (२) राइट-विंगर्स (Right-Wingers)। धीरे-धीरे उग्र दल की शक्ति बढ़ती गई और इसी की वजह से सन् १८७४ में विधान में संशोधन हुआ। राइट-विंगर्स जल्दी ही राजनैतिक क्षेत्र से लुप्त हो गये। उग्र दल से ही समाजवादी दल की उत्पत्ति हुई और उन्होंने सन् १८६० के राष्ट्रीय परिषद् (National Council) के चुनावों में ६ सीटें प्राप्त कर लीं परन्तु इस दल की विशेष उन्नति नहीं हुई।

इस समय स्विट्ज़रलैण्ड में वैसे तो कई दल हैं परन्तु दो बहुत शक्तिशाली हैं—(१) कैथोलिक अनुदार दल (Catholic Conservatives), और (२) स्वतन्त्र डेमोक्रेटिक उग्र दल (Independent Democrat Radicals)। यह बात अत्यन्त रोचक है कि स्विट्ज़रलैण्ड में ये दल किसी विशेष क्षेत्र पर अपना प्रभाव डाले हुए नहीं हैं बल्कि प्रत्येक कैण्टन में प्रत्येक दल के समर्थक मिलते हैं। इसीलिए उनका संगठन इतना दृढ़ नहीं है स्विट्ज़रलैण्ड में राजनीति एक बहुत सस्ती वस्तु है और उसे खरीदने के लिए दलों के झमेलों की आवश्यकता नहीं होती। यही कारण है कि स्विट्ज़रलैण्ड का सार्वजनिक जीवन अत्यन्त ठोस एवं दृढ़ है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Compare and contrast the position, powers and functions of the President in the constitutions of Switzerland and the U. S. A. (*Agra, 1939, 1942*)
2. Describe the composition and functions of the Swiss Federal Council. (*Agra, 1939; Patna, 1944*)
3. Point out the peculiar features of the Federal Executive in Switzerland. (*Agra, 1942, 1944; Punjab, 1937*)
4. Compare the Swiss Federal Executive with the British Cabinet. (*Agra, 1938; Nagpur, 1942*)
5. Examine the relation between the legislative and executive in Switzerland. (*Allahabad, 1941, 1942; Punjab, 1942*)
6. Describe the composition and functions of the Swiss Federal Legislative. What are its powers ? Indicate the relation between the two chambers.
7. Describe the composition and functions of the Federal Judiciary. Compare the Federal Court of Switzerland with that of the U. S. A. (*Agra, 1942*)
8. What are the factors which have contributed to the lack of well-knit and organised party-system in Switzerland.
9. The relation of the Swiss ministers to the legislative body is different from that which exists in any other country. Explain this relation fully and point out the unique nature of the Swiss Executive. (*Agra, 1953*)

तीसरा परिच्छेद

स्विट्ज़रलैंड में प्रत्यक्ष जनतन्त्र

संसार के समस्त देशों में स्विट्ज़रलेण्ड ही ऐसा देश है जिसमें प्रत्यक्ष जनतन्त्र (Direct Democracy) को अपनाया गया है। "स्विस व्यवस्था में कोई बात ऐसी नहीं है जो जनतन्त्रीय व्यवस्था के अध्ययनकर्त्ता के लिए उपयोगी न हो क्योंकि उस व्यवस्था में वहाँ की जनता की आत्मा स्पष्ट रूप में देखने में आती है। उसकी भावनाएँ तथा विचार किसी अन्य निर्वाचित निकायों में प्रतिबिम्बित नहीं होते बल्कि वे प्रत्यक्ष रूप में देखने में आते हैं।"[1]

स्विट्ज़रलैण्ड में यह स्पष्ट रूप से प्रतीत होता है कि वहाँ जनता प्रत्यक्ष रूप में शासन-कार्य में भाग लेती है। शासन-संचालन को वह दो प्रकार से अपने अधीन रखती है। वह स्वयं नियम व नीति बना सकती है और कार्यपालिका को उसका पालन करने के लिए आदेश दे सकती है, और दूसरे वह अपने द्वारा निर्वाचित निकायों के द्वारा नियम और विधि बनवा सकती है और उनके कार्यान्वित करने का काम कार्यपालिका पर छोड़ देती है। पहले तरीके को हम प्रत्यक्ष जनतन्त्र के नाम से पुकारते हैं, और दूसरे को अप्रत्यक्ष जनतन्त्र कहते हैं।

जैसा कि हम अमेरिका के संविधान के वर्णन के साथ बतला चुके हैं, लोक-निर्णय से अभिप्राय है कि व्यवस्थापिका द्वारा पारित कानून तब तक कार्यान्वित नहीं किया जा सकता जब तक उस पर जनता का मत न ले लिया जाय। लोक-निर्णय जनतन्त्र का बहुत बड़ा अस्त्र है क्योंकि यह जनता को शासन-कार्य में प्रत्यक्ष रूप से भाग लेने का अवसर प्रदान करता है। स्विट्ज़रलैण्ड में जनता ने इस प्रणाली को पूर्णतया अपनाया है।

आधुनिक काल में लोक-निर्णय प्रत्येक राज्य में सफल नहीं हो सकता है क्योंकि जनसंख्या अधिक होने के कारण जनता एक स्थान पर एकत्रित नहीं हो सकती है, परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में यह प्रथा इसलिए प्रचलित है और सफल भी होती है क्योंकि वहाँ की जनसंख्या कम है और लोक-निर्णय प्राप्त करना आसान है। स्विट्ज़रलैण्ड की जनसंख्या और क्षेत्रफल लोक-निर्णय की सफलता के लिए अत्यधिक सुविधा प्रदान करते हैं।

1 Bryce : Modern Democracies. Vol. I, p. 415.

लोक-निर्णय निम्नलिखित विषयों पर प्रयोग में लाया जाता है :

(१) संविधान में संशोधन लोक-निर्णय द्वारा ही किया जा सकता है। इसके लिए केवल जनसंख्या ही आधार नहीं है वरन् कैण्टनों की कुल संख्या (अर्थात् २५) में से आधे से अधिक कैण्टन संशोधन के लिये इच्छुक होने चाहिये।

(२) सङ्घ के समस्त सामान्य नियमों व कानूनों पर लोक-निर्णय लिया जाता है; यदि वे कानून अथवा नियम असेम्बली द्वारा अत्यावश्यक घोषित नहीं किए गए हैं अथवा उन पर लोक-निर्णय के लिए कम से कम ८ कैण्टनों या ३०,००० नागरिकों ने हस्ताक्षर सहित अर्जी दी है।

(३) कैण्टनों में भी संविधान में परिवर्तन लोक-निर्णय द्वारा ही किया जा सकता है।

(४) कैण्टनों की व्यवस्थापिकाओं द्वारा पारित नियमों व कानूनों पर भी लोक-निर्णय लागू किया जा सकता है।

(५) आठ कैण्टनों में तो लोक-निर्णय प्रत्येक नियम पर लिया जाता है। यह आवश्यक लोक-निर्णय (Obligatory Referendum) कहलाता है। सात कैण्टनों में ऐच्छिक लोक-निर्णय (Optional Referendum) प्रचलित है, अर्थात् किसी विषय पर लिया जा सकता है और किसी पर नहीं। तीन कैण्टनों में इन दोनों प्रकार की व्यवस्थाओं में कोई भेद नहीं किया जाता और एक कैण्टन—फ्राइबनी (Fribony)—में कानूनों के सम्बन्ध में लोक-निर्णय की व्यवस्था प्रचलित नहीं है।

यह ध्यान में रखने योग्य है कि लोक-निर्णय की प्रणाली द्वारा जो अधिकार जनता को दिया जाता है उसके द्वारा वह कानून के निर्माताओं पर प्रतिबन्ध लगा सकती है, उन्हें निर्देशित नहीं कर सकती। जनता का अधिकार नकारात्मक (Negative) है। सकारात्मक (Positive) अधिकार जनता को प्राप्त नहीं है कि वह चाहे जिस कानून को पास करवा ले और चाहे जिसको अपनी इच्छानुसार रोक दे। कुछ भी हो यह प्रणाली अत्यन्त सुन्दर है और कम से कम स्विट्जरलैण्ड में तो इसने पूर्ण सफलता से कार्य किया है।

जैसा कि कहा जा चुका है, लोक-निर्णय-प्रणाली केवल स्विट्जरलैण्ड में ही सफल हो सकती है क्योंकि वहाँ की जनसंख्या कम है। कैण्टनों में तो बहुत थोड़ी जनसंख्या है, अतः वहाँ यह अत्यधिक सफलता से कार्यान्वित हो सकती है। परन्तु इसकी सफलता के लिए केवल जनसंख्या का आधार ही पर्याप्त नहीं है। इससे अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि नागरिक इस अस्त्र का सदुपयोग करें और बुद्धि तथा चातुर्य से काम लें। जोश, भावुकता, उतावलापन तथा दलबन्दी—ये सब उपयोगी लोकमत के लिए बहुत हानिकारक हैं और लाभ की अपेक्षा नुकसान ही कर सकते हैं।

लोक-निर्णय-प्रणाली तभी सफल हो सकती है जब जीवन की जटिलता कम हो। आधुनिक काल में परिस्थितियों में जो विषमता आ गई है और जिनके कारण जीवन अत्यन्त कृत्रिम, अप्राकृतिक तथा पेचीदा हो गया है उसकी वजह से व्यक्ति अपनी राय किसी एक "हाँ" या "न" में नहीं दे सकता चूँकि लोक-निर्णय में अधिकतर कार्य "हाँ" और "न" का है, अतः निष्पक्ष, स्वार्थरहित तथा स्वतन्त्र मत प्राप्त करना अत्यन्त मुश्किल कार्य है।

लेकिन लोक-निर्णय की आलोचना उसके लाभों को समाप्त नहीं कर सकती। हम जानते हैं कि सदुपयोग न होने पर अच्छी से अच्छी प्रणाली भी खतरनाक साबित हो सकती है परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि वह प्रणाली ही गलत है। लोक-निर्णय यदि ठीक ढंग से प्रयोग में लाया जाय तो यह एक सुन्दर प्रणाली है परन्तु आधुनिक युग में इसके शत्रु बहुत हैं और उन शत्रुओं के अलावा यह बात भी माननी ही पड़ती है कि इस व्यवस्था का अधिक उपयोग नहीं होना चाहिये क्योंकि इससे शासन-कार्य की गति धीमी पड़ जाती है और आधुनिक संसद के बदलते हुए चक्र पर धीमी चाल का कोई ठिकाना नहीं है। अतः लोक-निर्णय प्रथा अच्छी होते हुए भी ठीक नहीं है यदि उसका अधिक उपयोग किया जाता है। परन्तु स्विट्ज़रलैण्ड में तो यह विशेष महत्त्व रखती है क्योंकि वहाँ की जनसंख्या कम है, वहाँ जीवन इतना जटिल नहीं है जितना अन्यत्र है, और वहाँ की राजनैतिक जटिलता इतनी विषम नहीं है जितनी दूसरे देशों की है।

इस प्रकार हम यह निष्कर्ष निकाल सकते हैं कि लोक-निर्णय-प्रणाली प्रत्येक राज्य में सफल नहीं हो सकती और इसकी उपयोगिता तथा सफलता कई बातों पर निर्भर है। यदि उसका ध्यान न रख कर इसे प्रयोग में लाया गया तो लाभ के बदले हानि ही होगी। इसीलिए इस प्रणाली को आज बहुत कम राज्य अपनाते हैं और यदि अपनाते भी हैं तो काफी सीमित सीमा तक अपनाते हैं।

वास्तव में लोक-निर्णय प्रणाली बहुत कुछ हद तक शासन को दुर्बल बनाती है। कम से कम व्यवस्थापिका को तो यह बहुत कमजोर बना देती है और उसके सदस्यों को सम्मान तथा अधिकार आदि का पात्र नहीं रहने देती। दूसरे, यह व्यक्ति को अपनी चतुरता का लाभ न उठाकर अपनी मूर्खता प्रकट करने के लिये प्रेरित करती है। यह इसलिये सत्य है कि किसी विषय पर मतदान के समय अधिकतर नागरिकों को इतनी फुरसत नहीं होती कि वे उस विषय पर जिस पर लोकमत लिया जा रहा है, अधिक विचार करें। वे तो "हाँ" या "न" बहुत कुछ हद तक दूसरों के कहने पर कर देते हैं। अधिकतर लोग तो अपनी राय देने के लिये आते ही नहीं हैं। कुछ आलस्य का शिकार रहते हैं तो कुछ अपने कार्यों में लगे रहते हैं। जो आते भी हैं उनका मत प्रायः अपना नहीं होता। बड़े-बड़े राज्यों में तो लोक-निर्णय के सफल

होने का प्रश्न ही नहीं उठता क्योंकि वहाँ पर इसको कार्य में लाया ही नहीं जा सकता।

स्विट्ज़रलैण्ड में लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम का कार्य :

लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम जनतन्त्र के दो बड़े-बड़े अस्त्र हैं और स्विट्ज़रलैण्ड में उनका महत्त्वपूर्ण स्थान है। यह दोनों सिद्धान्त जनता की राजसत्ता के अभिसूचक हैं। इनकी व्याख्या स्थान-स्थान पर हम कई बार कर चुके हैं। यहाँ इतना कह देना पर्याप्त होगा कि ये दोनों प्रणालियाँ जनता के ऊपर अपने शासन-कार्य का बहुत बोझ और उत्तरदायित्व डालती हैं तथा व्यवस्थापिका के सदस्यों को जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व धारण करने के लिये प्रेरित करती हैं। एक लेखक ने लोक-निर्णय प्रणाली की प्रशंसा करते हुए कहा है कि "यह एक प्रकार की ढाल है जो अनुपयुक्त विधि के निर्माण को रोकती है।" इसी प्रकार निर्बन्ध-उपक्रम व्यवस्था के विषय में कहा है कि "यह एक ऐसी तलवार है जिसके द्वारा जनता अपनी इच्छा को विधि के रूप में परिणित करने के लिये मार्ग साफ करती है।"

ये दोनों प्रणालियाँ स्विट्ज़रलैण्ड के विधान को अत्यधिक महत्त्व प्रदान करती हैं और यह साबित करती हैं कि वहाँ पर जनता का शासन-कार्य में महत्त्वपूर्ण हाथ है। यदि इन दोनों को व्यवस्थापिका का दूसरा अङ्ग कहा जाय जिसमें दो सदन हैं (एक लोक-निर्णय वाला तथा दूसरा निर्बन्ध-उपक्रम वाला) तो कोई अतिशयोक्ति नहीं होगी। इस कथन से हमारा तात्पर्य यही है कि इन दोनों प्रणालियों का जितना स्विट्ज़रलैण्ड में हाथ है उतना कहीं भी—अमेरिका के उप-राज्यों में भी—नहीं है।

लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम द्वारा किस प्रकार जनता अपने लिये कानून बनाती है ?, इस प्रश्न को समझ लेना आवश्यक है। यद्यपि हम अमेरिका के विधान के सम्बन्ध में इस प्रश्न का उत्तर दे चुके हैं परन्तु यहाँ पर भी उस पर थोड़ा दृष्टिपात करना अनुपयुक्त न होगा।

लोक-निर्णय का अभिप्राय यह है कि व्यवस्थापिका द्वारा पारित नियम पर जनता की राय मालूम पड़ जाय। अतः व्यवस्थापिका द्वारा पारित किसी भी नियम पर एक निश्चित संख्या के नागरिक उस पर लोकमत लेने के हेतु अर्जी दे सकते हैं और उसके सम्बन्ध में अन्तिम निर्णय जनता के ऊपर छोड़ दिया जाता है। निर्बन्ध-उपक्रम के साधन द्वारा जनता ही स्वयं किसी विधेयक की रूपरेखा बनाती है और उसे पास कराने के लिये व्यवस्थापिका के समक्ष प्रस्तुत करती है। इसके ऊपर लोक-निर्णय लिया जा सकता है और यदि वह लोक-निर्णय द्वारा बहुमत से पास कर दिया जाता है तो वह कानून बन जाता है चाहे व्यवस्थापिका भले ही उसे स्वीकार न करे। निर्बन्ध-उपक्रम दूसरी प्रकार से भी प्रयोग में लाया जा सकता है और वह यह

है कि जनता व्यवस्थापिका के सामने किसी विषय सम्बन्धी मूल सिद्धान्तों को रख सकती है और व्यवस्थापिका को उनके आधार पर विधि-निर्माण की जिम्मेदारी दे सकती है। इस हालत में व्यवस्थापिका विधेयक के सम्बन्ध में पहले जनता की राय ले लेती है और जब जनता उसे स्वीकार कर लेती है तब वह आगे बढ़ती है। इस प्रकार हम देखते हैं कि निर्बन्ध-उपक्रम दो प्रकार का है—(१) निर्मित, और (२) अनिर्मित। प्रथम के अनुसार विधि-निर्माण के उपरान्त जनता उसे व्यवस्थापिका के समक्ष प्रस्तुत करती है और दूसरे के अनुसार वह उसके सिद्धान्त बतला देती है, परन्तु उसका निर्णय करना तथा जनता की सम्मति एवं स्वीकृति पाकर आगे कार्य करना, यह सब व्यवस्थापिका पर छोड़ दिया जाता है।

अनिर्मित निर्बन्ध-उपक्रम का आशय यही है कि इसके द्वारा मतदाता एक विधेयक की सामान्य रूपरेखा प्रस्तुत करते हैं। यदि व्यवस्थापिका उसे स्वीकार कर लेती है तो उस पर लोक-निर्णय लिया जाता है और यदि वह उसे स्वीकार नहीं करती है तो भी उस पर लोकमत लेती है और जब मतदाता उसे बहुमत से स्वीकार कर लेते हैं तो व्यवस्थापिका पूर्ण रूप से निश्चित एक विधेयक, जो उस विधेयक की सामान्य रूपरेखा के आधार पर निर्मित किया होता है, तैयार करती है और उसे पुनः लोक-निर्णय के हेतु प्रस्तावित करती है। तदुपरान्त लोक-निर्णय द्वारा जैसा तय होता है वही मान लिया जाता है। इस प्रकार का उपक्रम संघीय शासन में वैधानिक विधियों के सम्बन्ध में ही प्रयोग में लाया जाता है परन्तु कैण्टनों में वैधानिक तथा सामान्य दोनों प्रकार की विधियों के सम्बन्ध में लागू होता है।

जैसा कि ऊपर बतलाया जा चुका है, लोक-निर्णय जनतन्त्र का पूरक है। इसके बिना हम कहीं भी पूर्ण जनतन्त्र की कल्पना नहीं कर सकते। लोक-निर्णय जनतन्त्र का प्रमुख अस्त्र है और जनतन्त्र के विकास के साथ ही साथ इसका प्रादुर्भाव हुआ है।

यद्यपि लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम एक दूसरे के पूरक हैं अर्थात् एक दूसरे के अभिप्राय को सिद्ध करने में मदद करते हे परन्तु फिर भी वे राजनैतिक नामावली में वास्तव में नहीं आते हें। परन्तु वे अलग-अलग तो हैं ही और एक को दूसरा कदापि नही समझा जा सकता।

संघ सरकार में कोई भी प्रस्ताव लोक-निर्णय के लिये तभी रक्खा जाता है जब उसके सम्बन्ध मे ३०,००० नागरिक हस्ताक्षर सहित अर्जी देते हैं। यह प्रथा निर्बन्ध-उपक्रम की है। जब उस पर लोक-निर्णय होता है तब जिधर भी बहुमत होता है वही स्वीकार कर लिया जाता है। कैण्टनों में जिनेवा की कैण्टन को छोड़ कर अन्य सब में वह संख्या जिसके आधार पर किसी निर्बन्ध के लिये उपक्रम की अर्जी दी जा सकती है, अलग-अलग है।

लैण्ड्सजीमैण्डी (The Landsgemeinde) :

लोक-निर्णय, निर्बन्ध-उपक्रम, प्रत्याहरण, लोकमत तथा प्राथमिक असेम्बली (Primary Assemblies)—ये पांच प्रत्यक्ष जनतन्त्र के अंग हैं। स्विट्जरलैण्ड के कुछ कैण्टनों में प्रौढ़ व्यक्तियों की प्राथमिक असेम्बलियां हैं जिन्हें लैण्ड्सजीमैण्डी कहते हैं और जिनका उसी प्रकार का कार्य है जैसा लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम व्यवस्थाओं का। अन्य कैण्टनों में तो लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम की प्रणालियाँ ही प्रचलित हैं।

प्रोफेसर ब्र्‌ुस के अनुसार लैण्ड्सजीमैण्डी एक अत्यन्त सुन्दर एवं आकर्षक संस्था है। यह एक प्रकार की राजनैतिक असेम्बली है जिसका प्रति वर्ष खुले मैदान में अधिवेशन होता है। इसका सभापतित्व करने वाला लैण्ड्समैन (Landsman) कहलाता है और वह एक वर्ष के लिये चुना जाता है। कैण्टन के प्रत्येक प्रौढ़ व्यक्ति को इसमें सम्मिलित होने तथा वोट देने का अधिकार है। इस सम्मेलन में वहाँ की समस्त राजनैतिक भावनाएँ अन्तर्निहित होती हैं। इसकी सात या अधिक सदस्यों की एक कार्यकारिणी होती है जो सम्पूर्ण साल इसकी ओर से कार्य करती है। इसके वृहद् सम्मेलन में कार्यकारिणी के कार्यों की पुष्टि की जाती है और नये कानून भी बनाये जाते हैं। यह वित्त तथा अन्य सार्वजनिक कार्यों सम्बन्धी अनेक मामलों पर सामान्य नीति को भी निश्चित करती है। यह प्रशासकीय कर्मचारियों तथा न्यायाधीशों को भी निर्वाचित करती है। लैण्ड्सजीमैण्डी ने जनतन्त्र को पराकाष्ठा तक पहुँचा दिया है और जहाँ कहीं भी यह है वहाँ यह जनता को पूर्ण रूप से शासन-कार्य सौंप कर, रूसो (Rousseau) तथा अन्य उसी तरह के राजनैतिक दार्शनिकों के शब्दों में, पूर्ण रूप में जनतन्त्र की स्थापना करती है।[1] अतः वहाँ पर अन्य किसी प्रकार की प्रतिनिधि-सभाओं की आवश्यकता नहीं है तथा लोक-निर्णय अथवा निर्बन्ध-उपक्रम की प्रणालियों की भी आवश्यकता नहीं है क्योंकि इनका कार्य भी वही करती है।

लैण्ड्सजीमैण्डी की प्रत्येक कैण्टन में एक-सी शक्ति नहीं है। कहीं-कहीं पर तो उसे विधान में संशोधन करने, सामान्य विधि-निर्माण, कर लगाने, ऋण लेने व देने, मताधिकार प्रदान करने, नये पद स्थापित करने, कुछ पद कम करने, पारितोषिक देने तथा कार्यकारिणी व न्यायपालिका के कर्मचारी नियुक्त करने आदि बातों से सम्बन्धित अनेक शक्तियाँ हैं।

परन्तु इस प्रकार की संस्थाएँ केवल वहीं सफल हो सकती हैं जहाँ जनसंख्या कम है। स्विट्जरलैण्ड में पहले यह संस्था बहुत से कैण्टनों में थी क्योंकि उस समय वहाँ

---

1 Llyod : The Swiss Democracy, p. 47.

की जनसंख्या कम थी। परन्तु अब जनसंख्या बढ़ती जा रही है। अतः इस संस्था की उपयोगिता उतनी नहीं समझी जाती है जितनी पहले समझी जाती थी। सत्रहवीं शताब्दी में १३ कैण्टनों में से ग्यारह कैण्टनों में यह संस्था कायम थी परन्तु सन् १९२० में ६ ही में रह गई और आजकल केवल एक पूर्ण कैण्टन में तथा चार अर्ध-कैण्टनों में यह संस्था कायम है।

प्रत्यक्ष जनतन्त्र के गुण व दोष :

प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली के गुण व दोषों की विवेचना करना आवश्यक है, यदि हम इसके महत्त्व को भली-भाँति समझना चाहते हैं। हम बतला चुके हैं कि प्रत्यक्ष जनतन्त्र "जनता की राजसत्ता" के सिद्धान्त पर आधारित है और इसका इसी कारण अधिक महत्व है। इसके निम्नलिखित **गुण** हैं :—

(१) प्रत्यक्ष जनतन्त्र जनता की इच्छा का परिचायक है और उसे व्यक्त होने का पूर्ण अवसर देता है। "बिना उसके जनतन्त्र एक भावना-मात्र रह जाता है, उसके सहित जनतन्त्र एक सच्चा जनतन्त्र है।"

(२) प्रत्यक्ष जनतन्त्र जनता में राजनैतिक जागृति उत्पन्न करता है और उसे अपनी राजनैतिक समस्याओं के समझने तथा उनका हल निकालने के लिए प्रेरित करता है। यह शासन-कार्य की अन्तिम जिम्मेदारी जनता पर ही छोड़ता है।

(३) प्रत्यक्ष जनतन्त्र विकृत विधि-निर्माण-व्यवस्था को सुन्दर रूप प्रदान करता है। "यह राजनैतिक दलों के दूषित प्रभाव को कम करता है और राजनैतिक दलों के दाँव-पेच के झंझटों को कम करता है।"

(४) प्रत्यक्ष जनतन्त्र व्यवस्थापिका को जनता का सच्चा प्रतिनिधित्व ग्रहण करने के लिये प्रेरित करता है तथा उसे जनता की भावनाओं का आदर करने के लिए बाध्य करता है। व्यवस्थापिका जनता का रवैया देखती है, उसकी इच्छा को महत्व देती है, उसकी कठिनाइयों को सोचती है, और सार्वजनिक राय को स्वीकार करती है। इसकी वजह से व्यवस्थापिका में अधिक उत्तरदायित्व का भार भर जाता है।

(५) प्रत्यक्ष जनतन्त्र लोगों में देशभक्ति की भावना भरता है क्योंकि वे सोचते हैं कि वे ही असली शासक हैं और अपने कार्य को सुन्दर ढंग से चलाने, अपने देश की रक्षा करने तथा अपने राष्ट्र को शक्तिशाली बनाने में वे सदैव तत्पर रहते हैं। इसी कारण वे अपनी राजनैतिक व्यवस्था को दृढ़ बनाने में भी समर्थ रहते हैं।

(६) इस व्यवस्था के कारण दलबन्दी अधिक जोर नहीं पकड़ पाती और इस प्रकार दलबन्दी से उत्पन्न बुराइयाँ—भ्रष्टाचार, स्वार्थ, एक दूसरे को नीचा दिखाना, अपना-अपना उल्लू सीधा करना—नहीं पनपने पातीं।

लेकिन इन सब गुणों के रहते हुए प्रत्यक्ष जनतन्त्र के दोष भी हैं और जहाँ-कहीं भी यह कार्य कर रहा है वहाँ पर थोड़ी-बहुत मात्रा में मौजूद हैं।

(१) लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम की व्यवस्थाओं पर सबसे बड़ा आरोप यह लगाया जाता है कि यह व्यवस्थापिका की शक्ति को कम करती है तथा उसे दुर्बल बनाकर उसके सम्मान को क्षति पहुँचाती है। स्वतन्त्र विचार वाले तथा ईमानदार व्यक्ति उसमें जाने के लिये प्रयत्न नहीं करते हैं।

(२) दूसरी बात यह है कि इसके प्रभाव से जनता कुछ रूढ़िवादी हो जाती है। उनका दृष्टिकोण पुराने ढङ्ग पर अधिक चलता है और वह प्रगतिशील प्रवृत्तियों को बाधा पहुँचाता है। व्यवस्थापिका की शक्ति तो कम होती ही है परन्तु साथ ही साथ जनता भी अपने अधिकार का उचित प्रयोग नहीं कर पाती। यही नहीं बल्कि जनता में बहुत से ऐसे व्यक्ति भी होते हैं जो उसका प्रयोग करने में सर्वथा असमर्थ होते हैं।[1]

(३) प्रत्यक्ष जनतन्त्र पर एक आरोप यह भी लगाया जा सकता है कि इसका अधिक प्रयोग करने से कालान्तर में जनता आलसी हो जाती है और अधिकतर लोग मत देने नहीं जाते। इस प्रकार उनमें नागरिकता का जोश नहीं रहता और वे अपने कर्त्तव्य को भूल जाते हैं। स्विट्जरलैण्ड में भी कभी-कभी ३५% से अधिक जनता वोट देने नहीं आती।

(४) एक बात और जो इस सम्बन्ध में कही जा सकती है वह यह है कि जनता इतनी योग्य और अनुभवी नहीं होती जितने व्यवस्थापिका के सदस्य। अतः इस प्रकार जनतन्त्र में योग्यता व अनुभव की अपेक्षा अज्ञान व अनभिज्ञता को अधिक महत्त्व प्राप्त होता है।

(५) लोकमत द्वारा किसी विधेयक के पास होने का मतलब यह नहीं है कि वह सार्वजनिक मत से पास हो गया है अथवा वह जनता का वास्तविक मत है क्योंकि एक तो मतदाताओं की संख्या कम रहती है और दूसरे जिस विधेयक पर वह वोट देने के लिए एकत्रित होती है उसके बारे में सब व्यक्तियों को पूर्ण जानकारी नहीं होती। बल्कि उसकी जटिलता को वे भली प्रकार समझ ही नहीं पाते।[2]

(६) जैसा कि हम पहले कह चुके हैं, यह व्यवस्था छोटे राज्यों में ही सफल हो सकती है। बड़े-बड़े राज्यों में तो यह लाभ के स्थान पर हानि ही अधिक पहुँचाती है।

(७) प्रत्यक्ष जनतन्त्र का तरीका वास्तव में अत्यन्त दोषपूर्ण है। इसमें बहुमत को स्थान मुश्किल से ही मिलता है क्योंकि बहुमत का पता ही नहीं चल पाता। न सब

1 "Imagine," said Welti, a famous leader, once President of the Confederation, "a cow-herd or a stable-boy with the commercial code in his hand going to vote for or against it."

2 Bryce : Modern Democracies, Vol. II, p. 397.

लोग एकत्रित होते हैं और न बहुमत मालूम पड़ पाता है। इसके द्वारा कुछ अल्पसंख्यक ही अपना मतलब सिद्ध कर लेते हैं।

(८) इस प्रथा के द्वारा विधेयक में संशोधन के लिए स्थान नहीं रह पाता। इसका कारण यह है कि उस पर वाद-विवाद तो हो नहीं पाता और उसे केवल स्वीकृत अथवा अस्वीकृत ही किया जा सकता है। अतः किसी विधेयक पर जो लोक-निर्णय के हेतु रक्खा जाता है, पूर्ण विचार नहीं हो पाता और न छानबीन ही हो पाती है।

स्विट्जरलैंड में प्रत्यक्ष जनतन्त्र :

उपर्युक्त दोषों के रहते हुए भी यह कहा जा सकता है कि स्विट्जरलैण्ड में इस प्रणाली ने हानि की अपेक्षा लाभ अधिक पहुँचाया है। इसके दोष वहाँ पर बहुत कम हो गये हैं क्योंकि वहाँ की जनता प्रगतिशील है तथा राजनैतिक दृष्टि से चैतन्यशील है। उसने अपनी संस्थाओं को भी ऐसा बनाया है कि उनके द्वारा प्रत्यक्ष जनतन्त्र की सफलता अत्यन्त सुगम बन जाती है। स्विट्जरलैण्ड में प्रत्यक्ष जनतन्त्र ने जनता को बहुत कुछ शिक्षित किया है, उसमें नागरिकता का जोश भर दिया है, तथा उसे देश-भक्ति का पाठ पढ़ा कर राष्ट्र की रक्षा के योग्य बना दिया है। अपनी और अपने राष्ट्र की रक्षा के लिए स्विट्जरलैण्ड-निवासियों ने अपनी दलगत भावनाओं को अधिक महत्त्व न देकर प्रत्यक्ष जनतन्त्र से अत्यधिक लाभ उठाया है।

प्रतिनिधित्व के आधार पर स्थित जनतन्त्र में यह आवश्यक है कि व्यवस्थापिका पर किसी न किसी प्रकार का प्रतिबन्ध हो। यदि ऐसा नहीं होगा तो वह अपने उत्तर-दायित्व को नहीं समझेगी और जनतन्त्र का भाव नष्ट हो जायगा। अतः व्यवस्थापिका के इस सम्भावित अनुत्तरदायित्व को रोकने के लिए किसी न किसी प्रकार के प्रतिबन्ध की आवश्यकता है। प्रत्यक्ष जनतन्त्र के दोनों अस्त्र, जिनका हम वर्णन कर चुके हैं, इस कार्य का सम्पादन करते हैं।

इसके अलावा राज्य में कोई सर्वोच्च सत्ता भी होनी चाहिये जिसका निश्चय अन्तिम निर्णय हो तथा उसका कोई खण्डन न कर सके। जनतन्त्र में सिवाय जनता के ऐसी सत्ता और कोई नहीं हो सकती और प्रत्यक्ष जनतन्त्र की व्यवस्था ही ऐसी सत्ता सौंपती है। स्विट्जरलैण्ड ने इस बात को खूब समझ लिया है कि वह अपने जनतन्त्र की रक्षा तभी कर सकता है जब उसकी संस्थाएँ प्रत्यक्ष जनतन्त्र के आधार पर निर्मित हों। ब्राइस का कथन है कि "स्विट्जरलैण्ड में जनतन्त्र की सफलता का मुख्य कारण उसके द्वारा ऐतिहासिक उदाहरणों से लाभ उठाना, उसका अपनी संस्थाओं में स्वशासन को स्थापित करना, तथा उसके द्वारा संघ को समानता प्रदान करना है। इसकी ही वजह से वहाँ देशभक्ति तथा सार्वजनिक कर्त्तव्य के प्रति लोगों में जोश भर जाता है। यही प्रणाली वहाँ पर अपने लगाये हुए पौधों को विकसित होने के लिए

धूप प्रदान करती है। वास्तव में स्विट्जरलैण्ड में जनतन्त्र वहीं की भूमि की उपज है, और वहीं पर उसका पौधा बढ़ कर वृक्ष बन गया है।"[1]

परन्तु यह सब कुछ होते हुए भी स्विट्जरलैण्ड में जनतन्त्र की सफलता में कुछ बाधाएँ हैं। उनमें तीन प्रमुख हैं। मतदाता कभी-कभी अपनी स्वतन्त्र राय नहीं देता है। या तो वह किसी के प्रभाव में आ जाता है, या रिश्वत वगैरह के लोभ में आ जाता है, या अन्य किसी प्रकार के भय से अपने स्वतन्त्र विचार को दबा कर दूसरों के कहने पर मत देता है। ये तीनों बाधाएँ बहुत कुछ अंश तक स्विट्जरलैण्ड में विद्यमान हैं।

स्विट्जरलैण्ड में चुनावों के समय अधिक खींचातानी नहीं रहती। कभी-कभी तो ऐसा हुआ है कि राष्ट्रीय कौंसिल की कई सीटों के लिए प्रतिद्वन्द्वी ही नहीं खड़े हुए हैं और चुनाव बड़ी सुगमता से हो गए हैं। वहाँ पर दलबन्दी उग्र रूप धारण किए हुए नहीं है। अतः चुनाव-क्षेत्र में अधिक कशमकश नहीं चलने पाती। इसीलिए वहाँ चुनाव सम्बन्धी बुराइयाँ अधिक उत्पन्न नहीं होता।

स्विट्जरलैण्ड-निवासी स्वभावतः अत्यन्त उदार हैं और वे व्यक्तिगत स्वतन्त्रता की पूर्ण रक्षा करना चाहते हैं। वे शक्ति के केन्द्रीयकरण के सर्वथा विरोधी हैं और किसी भी प्रकार का राज्य का साम्यवाद सहन नहीं कर सकते हैं।

स्विट्जरलैण्ड में जनतन्त्र का अस्त्र प्रेस (Press) है जिसने उसके प्रचार में अत्यधिक योग दिया है। इसीलिए वहाँ पर अन्याय के लिए स्थान नहीं है और जब कभी ऐसा होने का प्रयत्न भी होता है तो प्रेस उसकी इतनी कटु आलोचना करता है कि सरकार अन्याय की ओर बढ़ ही नहीं पाती यद्यपि किसी भी विधान में हम पूर्णता की सम्भावना नहीं कर सकते परन्तु फिर भी स्विट्जरलैण्ड के विधान के सम्बन्ध में यह कहा जा सकता है कि वहाँ पर प्रत्यक्ष जनतन्त्र का आधार होने की वजह से तथा दलबन्दी प्रथा के दुर्बल होने के कारण जनतन्त्र बहुत कुछ हद तक सफल हुआ है। आधुनिक जनतन्त्रीय देशों के विधानों में स्विट्जरलैण्ड का विधान अत्यधिक महत्त्व रखता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What do you understand by Referendum ? Discuss the conditions under which it can be successfully worked and illustrate your answer with reference to Switzerland.

(Agra, 1936; Punjab, 1943)

---

1 Bryce : Modern Democracies, Vol. I, p. 406.

2. Discuss the part played by Referendum and Initiative in the Swiss Constitution.

   "The advantages of direct democratic devices are more apparent than real." Discuss with reference to the working of democracy in Switzerland.

   (*Alld., 1941, 1944; Nagpur, 1936, 1942, 1944, 1947; Patna, 1936*)
3. The Referendum has been described as essential to complete democracy. What are its principal disadvantages and what differences are there in its working in Switzerland and the U. S. A.? (*Agra, 1942; Punjab, 1938*)
4. Account for the smooth working of democratic institutions in Switzerland. (*Alld., 1941, 1943; Patna, 1938; Punjab, 1937*)

———

चौथा परिच्छेद

राजनैतिक संस्थाएँ तथा स्थानीय स्वशासन

कम्यून (The Communes) :

स्विट्ज़रलैण्ड में स्थानीय शासन की सबसे छोटी इकाई स्विस कम्यून कहलाती है। चूँकि स्विट्ज़रलैण्ड की संस्थाएँ छोटी-छोटी संस्थाओं के आधार पर ही बनी हैं जो अपना कार्य स्वयं करती हैं, अतएव हमें सर्वप्रथम उन्हीं के विषय में कुछ कहना उचित होगा।

कम्यून स्विट्ज़रलैण्ड की सबसे प्राचीन संस्था है और उसी ने वहाँ की जनता को अपना कार्य-संचालन स्वयं करने का पाठ पढ़ाया है। स्विट्ज़रलैण्ड का नागरिक बनने के लिए यह आवश्यक है कि व्यक्ति किसी कम्यून का सदस्य हो। इस समय वहाँ पर ३,११८ कम्यून हैं जिनमें कुछ बड़े-बड़े गाँव व थोड़े से बड़े शहर भी सम्मिलित हैं। इनमें सदस्यों की संख्या भिन्न-भिन्न है। इन सब में प्रजातन्त्रात्मक सिद्धान्त पर आधारित सरकारें बनी हुई हैं। ये स्थानीय कार्यों का प्रबन्ध करती हैं। यद्यपि उनके सब स्थानों पर एक समान कार्य नहीं हैं, परन्तु उनके कार्य-क्षेत्र में सामान्यत: शिक्षा, पुलिस, दरिद्रता-निवारण, जल-प्रबन्ध आदि विशेष आते हैं। प्रत्येक कम्यून में वहाँ का प्रबन्ध करने के लिए एक कौंसिल होती है जिसे कौंसिल ऑफ दी कम्यून कहते हैं। इसके सदस्य कम्यून के सदस्यों द्वारा चुने जाते हैं। यह अपना एक अध्यक्ष चुन लेती है जो मेअर कहलाता है। यह कौंसिल कम्यून के समस्त कार्यों का सम्पादन करती है। कहीं-कहीं तो यह इन कार्यों को स्वतन्त्र रूप में करती है और कहीं कैण्टन के सहयोग से करती है।

अठारहवीं शताब्दी तक तो बहुत से कम्यून पूर्ण स्वतन्त्र थे परन्तु आजकल नहीं हैं। बड़े-बड़े शहरों में उनके प्राय: वही कार्य हैं जो आधुनिक म्युनिसिपैलिटी के होते हैं। स्विट्ज़रलैण्ड में स्थानीय शासन का सदा से बड़ा महत्त्व रहा है और इसने ही उन्हें अपने जनतन्त्र को सफल बनाने में सहायता दी है। यूरोप के अन्य किसी भी देश में स्थानीय शासन का इतना महत्त्व नहीं है।

कैण्टन (The Cantons) :

स्विट्ज़रलैण्ड के २५ पूर्ण तथा अर्ध-कैण्टनों में आपस में बड़ी विभिन्नताएँ हैं। उनके क्षेत्रफल तथा उनकी जनसंख्या भिन्न-भिन्न हैं। ग्रीसन (Grison) का क्षेत्रफल २,७७३ वर्गमील, बर्न का २,६५७ वर्गमील, और जग (Zug) का सिर्फ ९२

वर्गमील है। बर्न की जनसंख्या सन् १६१५ में ६,६५,०००, ज्यूरिच की ५,३८,००० और उरी (Uri) की सिर्फ २३,००० थी। विभिन्न कैण्टनों की भाषाएँ भी भिन्न-भिन्न हैं।

परन्तु यह विभिन्नता अधिक रोचक नहीं है। अधिक रोचक बात तो यह है कि उनकी शासन-प्रणालियों में भी विभिन्नता है। एक पूर्ण कैण्टन तथा चार अर्ध-कैण्टनों में तो प्रतिनिधि-निकाय ही नहीं है। वे कैण्टन लैण्ड्सजीमैण्डी कैण्टन कहलाते हैं। कैण्टन स्वतन्त्र हैं और उन्होंने अपनी शक्ति संघ को नहीं दी है। (जहाँ यह सन्देह होता है कि अमुक अधिकार किस का है, वहाँ उसका यही अर्थ निकाला जाता है कि यह कैण्टन का ही होगा। संविधान में यह स्पष्ट है कि "कैण्टन स्वतन्त्र हैं जब तक कि संघ द्वारा उनकी स्वतन्त्रता पर कोई सीमा नहीं लगाई जाती और इसलिये उन्हें उस प्रकार के वे सब अधिकार प्राप्त हैं जो सङ्घ सरकार को हैं।")

समस्त कैण्टनों को दो भागों में बाँटा जा सकता है—एक तो वे हैं जो प्राथमिक असेम्बलियों (Primaries) द्वारा शासित होते हैं, और दूसरे वे हैं जिनमें प्रतिनिधि असेम्बलियाँ हैं। समस्त कैण्टनों में लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम—निर्मित तथा अनिर्मित—की प्रणाली स्वीकार कर ली गई है।

कैण्टनों की कार्यकारिणी—कैण्टनों में कार्यपालिका शक्ति एक कमीशन में निहित होती है जिसमें ५ से ११ तक सदस्य होते हैं। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि जिस प्रकार संघ सरकार में बहुसंख्यक कार्यकारिणी (Plural Executive) की व्यवस्था है उसी प्रकार कैण्टनों में भी है। इन कमीशनों को विभिन्न नामों (जैसे प्रशासकीय कौंसिल, छोटी कौंसिल, कौंसिल ऑफ स्टेट् आदि) से पुकारा जाता है।

कार्यकारिणी में विभिन्न राजनैतिक दलों के सदस्य होते हैं। कार्यकारिणी में एक अध्यक्ष तथा एक उपाध्यक्ष होता है और उसका प्रत्येक सदस्य शासन के किसी न किसी भाग का अध्यक्ष होता है। उसके कार्य, उसका ढाँचा, उसकी शक्ति और अधिकार लगभग उसी प्रकार के हैं जिस प्रकार संघ सरकार में फैडरल कौंसिल के हैं; परन्तु कैण्टनों में कार्यकारिणी के सदस्य जनता द्वारा चुने जाते हैं और संघ सरकार में वे फेडरल असेम्बली द्वारा चुने जाते हैं।

कैण्टनों की व्यवस्थापिका—पाँचों लैण्ड्सजीमैंडी कैण्टनों में व्यवस्थापिका के अधिकार लोकप्रिय असेम्बली को प्राप्त हैं। बाकी सब कैण्टनों में एक-सभात्मक व्यवस्थापिकाएँ हैं। इनके सदस्य जनता द्वारा ३ या ४ वर्ष के लिये चुने जाते हैं। (दस कैण्टनों में आनुपातिक प्रतिनिधित्व की प्रणाली प्रचलित है। प्रतिनिधियों का आधार कहीं-कहीं तो बहुत कम है। कुछ कैण्टनों में ३०० से ५०० नागरिकों के पीछे ही एक प्रतिनिधि चुन लियां जाता है और कहीं-कहीं १,५०० से २,००० नागरिकों

के पीछे एक प्रतिनिधि चुना जाता है। दूसरे शब्दों में विभिन्न कैण्टनों के निर्वाचन-क्षेत्र बनाने के नियम भिन्न-भिन्न हैं। स्विस कैण्टनों में लोग द्वि-सभात्मक व्यवस्थापक मण्डल पसन्द नहीं करते और एक-सभात्मक व्यवस्थापिका के कारण उनके यहाँ जो कमी रह जाती है उसे वे लोक-निर्णय तथा निर्बन्ध-उपक्रम के साधनों द्वारा पूरा कर लेते हैं।

कैण्टनों का न्यायमण्डल – प्रत्येक कैण्टन की अपनी न्यायिक व्यवस्था है। इस न्यायमण्डल में तीन श्रेणियों के न्यायालय हैं। सब से छोटा न्यायालय जस्टिसेज ऑफ पीस (Justices of Peace) का न्यायालय होता है जो प्रत्येक कम्यून में एक-एक होता है। इसे स्थानीय न्यायालय (Commune's Court) कहते हैं। इसके ऊपर जिले के न्यायालय (District Courts) होते हैं और सब से ऊपर कैण्टन का उच्च न्यायालय (High Court) होता है। व्यवहार सम्बन्धी व अपराध सम्बन्धी मामलों के निर्णय भिन्न-भिन्न न्यायालयों में होते हैं। स्विट्जरलैण्ड की न्यायिक व्यवस्था, इनके कार्यों व अधिकारों के बारे में हम दूसरे परिच्छेद में विस्तृत रूप से बतला चुके हैं।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the system of Local Self-Government in Switzerland. What are its importance and peculiarities ?

सोवियट रूस की शासन-व्यवस्था

प्रथम परिच्छेद

ऐतिहासिक सिंहावलोकन तथा कम्युनिज्म का उत्कर्ष

विषय-प्रवेश :

इस पुस्तक के अन्तर्गत जिन-जिन देशों के संविधानों की व्याख्या की गई है, वे सब हमारे भारतवर्ष से बहुत दूर स्थित हैं; परन्तु रूस इन सब से समीप है। फिर भी आश्चर्य की बात है कि रूस के बारे में हमें अन्य देशों की अपेक्षा बहुत कम ज्ञान है। इसका कारण यह है कि हमने अपने स्कूल और कॉलिजों में रूस के राजनैतिक व सांविधानिक विकास के सम्बन्ध में बहुत अपर्याप्त ज्ञान प्राप्त किया है। इङ्गलैण्ड के इतिहास का अध्ययन करते समय हमने अमेरिका तथा फ्रान्स के बारे में बहुत कुछ पढ़ा परन्तु रूस के बारे में नहीं। इसके अलावा रूस की संस्कृति, उसकी सभ्यता, उसका विधान तथा उसके आदर्श एक ऐसा अपनापन लिए हुए हैं कि वे दूसरे देशों की सभ्यता व आदर्शों से सामंजस्य नहीं रखते। प्रजातन्त्रीय शासन भी रूस में एक अलग दृष्टिकोण को लेकर चला है जिसका संसार की अन्य शक्तियाँ खण्डन करने पर तुली हुई हैं। इसी कारण आधुनिक जगत में बहुत से देशों की रूस के प्रति सहानुभूति नहीं है।

परन्तु इससे यह न समझना चाहिए कि रूसी सभ्यता व आदर्श निन्द्य हैं। इसका निरूपण पाठक अगले पृष्ठों के पढ़ने के बाद स्वयं कर सकेंगे। हाँ, इतना अवश्य कह देना उचित होगा कि रूस का जो आज अन्य राष्ट्रों जैसे इङ्गलैण्ड व अमेरिका से संघर्ष चल रहा है, वह पूर्णतया सैद्धान्तिक है। यह संघर्ष दो सिद्धान्तों का है जो अपने-अपने अलग-अलग दृष्टिकोण से एक ही आदर्श अर्थात् प्रजातन्त्रवाद (Democracy) की अलग-अलग व्याख्या करते हैं और उसकी रक्षा के हेतु आज सर्वस्व न्योछावर कर देने पर आरूढ़ हैं। इङ्गलैण्ड और अमेरिका के बारे में हम पढ़ चुके हैं। यहाँ हमें यह देखना है कि किस प्रकार रूस में आधुनिक शासन का स्वरूप उत्पन्न हुआ और किस प्रकार यह इतना दृढ़ हो गया।

रूस में अनेक विभिन्नताओं का मिश्रण है :

रूस के बारे में हमें बहुत कुछ गलतफहमी है। हम समझते हैं कि इङ्गलैण्ड, फ्रान्स, चीन, जापान आदि राष्ट्रों की तरह रूस भी एक राष्ट्र है। हम यह भी समझते हैं कि वहाँ एक ही भाषा है, एक ही प्रकार की संस्कृति है, एक ही प्रकार का समाज है, तथा एक ही प्रकार की वेश-भूषा है। हम सब रूस-निवासियों का एक ही धर्म समझते हैं और उन्हें एक ही राजनैतिक सूत्र में बँधा हुआ समझते हैं। बात वास्तव में कुछ

ओर है। एक इतने बड़े देश के बारे में जो संसार का ⅙ भाग घेरे हुए है और जो दो महाद्वीपों में फैला हुआ है, हमारी एकत्व की कल्पना करना बिल्कुल निर्मूल है। रूस में हमें सब प्रकार की विभिन्नता मिलती है। ठण्डे से ठण्डे और गर्म से गर्म, उपजाऊ तथा बंजर सब प्रकार के भाग मिलते हैं। वहाँ हमें भिन्न-भिन्न भाषाएँ, भिन्न-भिन्न धर्म और संस्कृति मिलती हैं। इस विशाल देश में एक ही जाति के नहीं वरन् भिन्न-भिन्न जातियों—पोल, यहूदी, तुर्क, लैट्स, मंगोल, फिन आदि निवास करते है। यहाँ तक कि रूसियों में भी तीन प्रकार के रूसी—छोटे रूसी, बड़े रूसी, व सफेद रूसी पाये जाते हैं। इतनी विभिन्नताएँ होते हुए भी कुछ ही वर्षों में रूस ने इतनी राजनैतिक दृढ़ता प्राप्त कर ली, यह आश्चर्य की बात है। इङ्गलैण्ड के सांविधानिक विकास की तरह रूस के वर्तमान शासन के विकास के अध्ययन हेतु हमें शताब्दियों पूर्व से नहीं वरन् केवल वर्तमान शताब्दी के प्रारम्भ से ही अध्ययन आरम्भ करना होगा।

रूस के संविधान का विकास :

प्रत्येक क्रान्ति के पीछे उसकी विचारधारा की प्रबलता निहित रहती है और क्रान्ति के स्वरूप में वह स्पष्ट झलकती है। क्रान्ति एक ज्वालामुखी का आकस्मिक विस्फोट नहीं जिसके पूर्व की दशा दृष्टि में न आवे। क्रान्ति तो सामूहिक घटनाओं के घात व प्रतिघात का परिणाम होती है। इतिहास इस बात का साक्षी है कि जब-जब और जहाँ-जहाँ क्रान्तियाँ हुई हैं वहाँ की तत्कालीन व क्रान्ति के पूर्व की सामाजिक, राजनैतिक व आर्थिक परिस्थितियाँ उनके लिए उत्तरदायी रही हैं। समय की गति के अनुकूल परिवर्तन न करना प्रकृति से संघर्ष करना है। जनता की आवाज व उसके मस्तिष्क की प्रवृत्ति को ठुकराना एक तूफान पैदा करना है। रूस की क्रान्ति इसी दृष्टि से देखी जाय तो प्राकृतिक नजर आवेगी। वह वहाँ की ऐतिहासिक घटनाओं की ही उपज थी। यह समझ लेना कि बोल्शेविज्म (Bolshevism) एक बाह्यवाद था जो रूस की समाज व राजनीति पर जबर्दस्ती धन व शक्ति के लोलुप कतिपय व्यक्तियों द्वारा थोप दिया गया, एक महान् भूल होगी। "बोल्शेविक क्रान्ति की जीत पूर्ण रूप में सम्भव न थी परन्तु बोल्शेविज्म के सिद्धान्त अथवा (यों कहा जाय कि) बोल्शेविक आन्दोलन एक रूसी उपज ही थी जो जार के निरंकुश एकतन्त्रवाद द्वारा पाली गई और जो उसका सामना करने के लिए दृढ़ प्रत्युत्तर के रूप में आई।" जॉर्ज एफ० केनन ने ठीक ही कहा है कि "अधिकेन्द्रीयकरण (Totalitarianism) एक राष्ट्रीय घटना नहीं है बल्कि एक ऐसी बीमारी है जिसकी आंशिक रूप में समस्त मानवता शिकार है।"[1]

---

1 "Totalitarianism is not a national phenomenon; it is a disease to which all humanity is in some degree vulnerable."
(*George F. Kenon: America and the Russian Future: Foreign Affairs, XXIX, No. 3, (April, 1953) p. 365*)

सन् १६१३ से पूर्व रूस में निरंकुश राजाओं का राज्य था और उनकी निरंकुशता पर किसी भी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं था। सन् १६१३ से १६८२ तक का युग भूसक्त दास प्रथा (Serfdom) का युग था। इस युग में जन-साधारण में चेतनता उद्भूत हुई और दासों की दशा को सुधारने के लि॰ ान्दोलन के अंकुर पैदा हुए। जनता में कुछ जागृति हुई और उसमें अपनी दशा को सुधारने की भावना पैदा हुई। परन्तु राज्य की स्थिति में तथा राजाओं के रवैये में कुछ परिवर्तन न हुआ और वे लोग निरंकुशतापूर्वक ही राज्य करते रहे। सन् १६४८ में नये करों के ऊपर मास्को में लोगों ने कुछ आपत्ति उठाई और उपद्रव किया और तत्कालीन जार अलेक्सिस (Tsar Alexis) के ऊपर हमला किया। जार ने अपनी जान बचाने के लिए कुछ प्रशासकीय सुधारों का वचन दिया। परन्तु उसका विशेष परिणाम न निकला और उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त तक रूस में जारशाही तानाशाही का बोल-बाला रहा। कभी-कभी यत्र-तत्र आन्दोलन या उपद्रव होने पर कुछ प्रशासकीय सुधारों का वचन दे दिया जाता था परन्तु वे चिरस्थायी न होते थे। सरकार में उच्च पदों पर केवल जमींदार व सरदार लोग ही रक्खे जाते थे। सन् १८६४ तक जब कि स्थानीय संस्थाओं की स्थापना हुई, रूस में साधारण जनता को राज-काज में भाग लेने का कोई भी अधिकार प्राप्त न था और उन्नीसवीं शताब्दी के उत्तरार्द्ध में ही उस अग्नि का प्रज्ज्वलन प्रारम्भ हुआ जिसने बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में भयंकर रूप धारण किया और शताब्दियों की दासताबद्ध जनता को बन्धन-मुक्त किया और समस्त दासतारंगित संस्थाओं को समाप्त कर रूस में एक नवीन समाज और एक नवीन शासन-व्यवस्था को स्थापित किया।[1]

रूस की क्रान्ति वहाँ की सामाजिक व आर्थिक परिस्थितियों का परिणाम थी। दास-प्रथा-निषेध, व्यावसायिक क्रान्ति तथा रूस की आर्थिक व्यवस्था को आधुनिकता प्रदान करने के प्रयत्न—इन सब तथा अन्य अनेक कारणों द्वारा वहाँ की सामाजिक व आर्थिक दशा का ढाँचा शिथिल हो रहा था। उधर पाश्चात्य देशों की विचार-धारा भी रूस में घुस रही थी और बोल्शेविक दल वालों ने उसे अपने अनुकूल बनाने के लिए उसमें परिवर्तन भी कर लिए थे। इस प्रकार के वातावरण में सन् १६१४ का युद्ध आ पड़ा जिसने सन् १६१७ की क्रान्ति को और नजदीक बुला दिया।

बोल्शेविक क्रान्ति :

प्रथम महायुद्ध के समय रूस में जारशाही शासन ही चल रहा था जो वहाँ पर १५ वीं शताब्दी से ही कायम था। निरंकुश शासन का भण्डा

1 "The history of 19th century Russia is a history of autocratic power and its exercise; it is also a record of great awakening."
(*Fainsod, Merle : How Russia is Governed, p. 5*)

फूटने ही वाला था। एक तो समय की गति उसके विपरीत थी तथा दूसरे विगत शताब्दी तथा इस शताब्दी के प्रारम्भ में निरंकुश सत्ता द्वारा रूस को काफी अपमान सहना पड़ा था। उन्नीसवीं शताब्दी के मध्य में हुए क्रीमिया के युद्ध तथा बीसवीं शताब्दी के प्रारम्भ में हुए रूस-जापान युद्ध में रूस को काफी धक्का पहुँचा था। इन युद्धों की पराजयों ने निरंकुश शासन की जड़ खोखली कर दी थी। परन्तु आश्चर्य तथा अफसोस की बात तो यह थी कि जितनी ही इसकी जड़ खोखली होती जा रही थी उतनी ही यह निरंकुशता शक्ति का ढोंग रचाकर अपनी रक्षा करना चाहती थी। सन् १९०५ में ड्यूमा (Duma) को निकोलस द्वितीय, जो तत्कालीन जार था, द्वारा बुलाया गया परन्तु उसने फिर भी यही घोषणा की कि 'सर्वोच्च शक्ति रूस के राजा में ही निहित है" (The supreme autocratic power belongs to the All-Russian Emperor)। उसने बार-बार यही कहा कि राजा के प्रति आदर व आज्ञानुकारिता कोई राजा पर एहसान नहीं है, यह तो उसका अधिकार है जो ईश्वर द्वारा उसे दिया गया है। उन्नीसवीं शताब्दी के अन्त में भी रूस में दैवी अधिकार (Divine Right) अपना जाल फैलाने की कोशिश में था जब कि इङ्गलैण्ड में इसके ऊपर जनता ने सन् १६४९ में ही अपने राजा चार्ल्स प्रथम का बध कर डाला था।

रूस के जार की इस प्रकार की निरंकुश शक्ति की पोषक उसकी नौकरशाही थी। सेना तथा पुलिस के द्वारा जार की निरंकुशता की रक्षा होती थी। चर्च तथा बड़े-बड़े जमींदारों द्वारा सामाजिक क्षेत्र में निरंकुशता अपने को सुरक्षित समझती थी। साधारण जनता को राजनीति में रुचि न थी। उदर-पूर्ति की ही उसके लिए बड़ी समस्या थी और जार की निरंकुशता को सहन करने तथा राज्य के कानूनों को बिना किसी संकोच के स्वीकार करने के अलावा उसके लिये कोई चारा न था। जार की निरंकुशता इस प्रकार सुरक्षित थी। यदि किसी समय कहीं असन्तोष की लहर मालूम भी पड़ी तो कुछ रियायत देकर शान्त कर दी गई और फिर वही रफ्तार जो पहले थी, शुरू हो गई।

सन् १९०५ तक राज्य के बड़े व छोटे सभी पदों पर सरदारों (nobility) का ही एकाधिकार था और साधारण जनता को वे पद प्राप्त न थे। नेपोलियन के युद्ध के बाद ही पाश्चात्य देशों के विचारों का रूस में प्रवेश होना प्रारम्भ हो गया था और सन् १८२५ में वहाँ एक चिनगारी फूट भी पड़ी थी। परन्तु वह प्रसास निष्फल था। लेकिन उसने रास्ता दिखा दिया और धीरे-धीरे रूस का पाश्चात्य देशों से सम्बन्ध बढ़ा और रूस की शिक्षित जनता में पाश्चात्य देशों की विभिन्न विचारधाराओं का स्वागत प्रारम्भ हुआ।

सन् १८६२ में कार्यपालिका के अत्याचारों से जन-साधारण की रक्षा के लिये कुछ सुविधाएँ प्रदान की गईं परन्तु वे सब व्यर्थ रहीं और रूस में सुधार का आन्दोलन व्यर्थ रहा।

सन् १६०५ की क्रान्ति ने एक नए युग को जन्म दिया और जार को अपनी जनता को सन्तुष्ट करने तथा शासन में सुविधा देने के लिए एक मौका दिया। १७ अक्टूबर सन् १६०५ की एक विज्ञप्ति (Manifesto) के अनुसार सार्वजनिक वोट, भाषण की स्वतन्त्रता, सभा-समिति के संगठन की स्वतन्त्रता की घोषणा की गई। साथ ही साथ यह भी घोषित कर दिया गया कि ड्यूमा (Duma) की स्वीकृति के बिना कोई भी कानून चालू न होगा और ड्यूमा को यह भी अधिकार होगा कि वह राज्य के कार्यों की यह भी जाँच करे कि वे वैध हैं या अवैध। किसानों को भी अनेक अधिकारों का आश्वासन दिया गया। अखिल रूसी किसान संघ (The All-Russian Peasants' Union) का उग्र रूप शान्त कर दिया गया। उसका नारा यह था कि रूस में व्यक्तिगत भूमि न रक्खी जाय और समस्त भूमि को सार्वजनिक सम्पत्ति माना जाय। इस प्रकार सन् १६०५ की विज्ञप्ति के अनुसार निरंकुशता पर अंकुश लगा हुआ प्रतीत हुआ और रूस में एक नवीन गति का प्रारम्भ हुआ।

व्यावसायिक क्रान्ति ने अनेक प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न कर दी थीं और जगह-जगह श्रम-संघ बनते जा रहे थे जो श्रमिकों व कल-कारखानों में काम करने वाले मजदूरों के अधिकारों की माँग पेश कर रहे थे। श्रमिकों व मजदूरों में वर्ग-भावना जागृत हो रही थी और वे राष्ट्र का नेतृत्व ग्रहण कर अपने साथियों की शिकायतों को दूर करने के लिये आतुर थे। रूस के संविधान के बारे में लिखते हुए एक लेखक ने लिखा है कि "रूस की निरंकुश राजसत्ता के पतन का अन्तिम कारण यही था कि वह उन शक्तियों को न समझ सकी जो उसके पतन का रास्ता बना रही थीं। उसकी जीवन-नाटिका की असफलता व दुःखद अन्त पर इतना अफसोस नहीं होता जितना कि उसकी उन रचनात्मक शक्तियों को न समझ सकने की असमर्थता पर होता है जिनके द्वारा रूस में एक नवीन समाज का निर्माण हो रहा था। उस सत्ता की असफलता व असमर्थता ने ही वह भूमि तैयार कर दी जिसमें बोल्शेविज्म का जन्म हुआ।"[1]

1 **"The downfall of the Russian autocracy was ultimately attributable to its inability to comprehend the forces which were shaping its course. The tragedy of its failure lay not in its disappearance but in the creative energies of the Russian society which it could not utilise; the frustration which it engendered prepared a seed-bed upon which Bolshevism grew."**
(Merle Fainsod : How Russia is Governed, p. 30)

संक्षेप में यह कहा जा सकता है कि रूस में आम जनता में विद्रोह की आग प्रज्वलित हो उठी। जनता ने अपने अधिकारों की आवाज ऊँची उठाई। रोटी, मक्खन व स्वतन्त्रता का नारा जनता ने बुलन्द किया और बोल्शेविज्म ने इस नारे को अपनाया। इस नारे की आवाज को बुलन्द करने की प्रक्रिया में लेनिन ने शक्ति प्राप्त की। इस प्रकार रूस में साम्यवाद की प्रगति बढ़ी। साम्यवाद साधारण वर्ग की आवाज व उसके द्वारा शक्ति प्राप्त करने को लेकर चला और उसने जनता को कर्म करने की प्रेरणा दी। लेनिन ने भी कहा था कि 'मार्क्स के सिद्धान्त कर्म के लिए प्रेरणा देते हैं' ("Marx is not a dogma," said Lenin, "but a guide to action.")। रूस की तत्कालीन स्थिति पर विचार प्रकट करते हुए लेनिन ने कहा था कि "रूस की वर्तमान स्थिति की विशेषता यह है कि यहाँ पर क्रान्ति की प्रथम सीढ़ी प्राप्त की जा चुकी है जिसमें वह परिस्थितियाँ जिनके द्वारा श्रमिक व साधारण वर्ग के हाथों से सत्ता उच्च वर्ग के हाथों में पहुँच गई, सहायक हुई हैं और यह परिवर्तन इसलिये हुआ कि निम्न वर्ग के लोगों में संगठन व पर्याप्त वर्गीय चेतना (class-consciousness) की कमी रही। अब दूसरी सीढ़ी आ रही है जबकि सत्ता हस्तान्तरित होने जा रही है जिसमें कि वह उच्च वर्ग से निम्न वर्ग व किसानों के हाथ में जा रही है।"[1] लेनिन के समर्थकों की संख्या बढ़ी और अन्त में उसके सिद्धान्तों ने विजय पाई। सन् १९१७ में २७ अप्रेल से ५ मई तक पीट्रोग्राड (Petrograd) में एक कॉन्फ्रेन्स हुई जिसमें उसकी कार्य-नीति को स्वीकार किया गया। उसने निम्नलिखित शब्दों में अपने प्रोग्राम की घोषणा की और आगे का कार्यक्रम बनाया : "अब हम साम्यवादी ढंग का निर्माण करने में तत्पर होंगे" ("We shall now proceed to construct the socialist order")।

इस प्रकार रूस में साम्यवाद को प्रोत्साहन मिला और लेनिन जैसे नेता के नेतृत्व में उसने दिन दूनी रात चौगुनी प्रगति की। लेनिन वास्तव में एक बहुत ही दृढ़-प्रतिज्ञ व उग्र विचारवादी नेता था। निर्वासन के काल में उसने अपनी विचारधारा को और भी अधिक दृढ़ कर लिया था। बोल्शेविज्म का रूस की तत्कालीन समाज के साथ समन्वय स्थापित करने का उसने ही कार्य किया और जनता की शिकायतों को दूर करने का रास्ता दिखाकर उसमें क्रान्ति व कर्म करने की आग को तेज किया। उसका यह अटल विश्वास था कि जब सत्ता निम्न वर्ग तथा किसान व मजदूरों के

1 "The peculiarity of the present situation in Russia," Lenin declared, "is that it presents a transition from the first stage of revolution, which, of course the inadequate organisation and insufficient class-consciousness of the proletariat led to the assumption of power by the bourgeoisie—to its second stage which is to place power in the hands of the proletariat and the present strata of the peasantry.'

हाथ में आ जावेगी तब वे लोग देश की आर्थिक, सामाजिक तथा राजनैतिक व्यवस्था का पुर्ननिर्माण करेंगे और देश की हालत सुधर जावेगी। उसने यह घोषणा की कि उस हालत में श्रमिकों के संगठन बनेंगे और उनके हाथ में ही देश की आर्थिक, कृषिक व राजनैतिक व्यवस्था होगी और शक्ति विकेन्द्रीकरण के आधार पर वितरित होकर एक के हाथ में निहित न होकर जनता के हाथ में पहुँचेगी और इस प्रकार जनता की सब शिकायतें दूर हो जावेंगी।[1]

स्टालिन के शक्ति प्राप्त करने पर साम्यवादी विचारधारा ने और भी अधिक जोर पकड़ा और स्टालिन ने शीघ्र ही जनता को अपनी ओर आकृष्ट कर लिया। स्टालिन ने रूस में कृषि आन्दोलन व सहकारी कृषि अवन्तियाँ बनाने पर अधिक जोर दिया और अधिक अन्न उत्पादन द्वारा सोवियट व्यवस्था को सुरक्षित रखने की नीति की घोषणा की। उसके सिद्धान्त मार्क्स व लेनिन के सिद्धान्तों के समर्थक ही थे और उनके सिद्धान्त ही उसका पथ-प्रदर्शन कर रहे थे। ६ फरवरी सन् १९४६ के एक भाषण में स्टालिन ने साम्यवादी सिद्धान्तों के आदर्शों की व्याख्या की और पूँजीवाद के द्वारा उत्पन्न किए हुए युद्धों को समाप्त करने का एकमात्र यही उपाय निकाला कि देश में खूब व्यावसायिक व कृषिक उन्नति की जाय जिससे देश की समस्त सम्भावित घटनाओं से रक्षा हो सके। स्टालिन ने इस प्रकार रूस को उन्नति की ओर अग्रसर किया और उसकी आर्थिक व्यवस्था को दृढ़ करके अपने दल का नेतृत्व पुष्ट किया क्योंकि उस प्रकार की दृढ़ता उसी के दल द्वारा प्रदान की गई। रूस की व्यवस्था जन-साधारण को राजनैतिक चेतना प्रदान करती है और उसे अपनी समाज पर गर्व करने के लिये प्रेरणा देती है। मानव अपने को पूँजीवाद के चंगुल से मुक्त हुआ समझता है और सोवियट व्यवस्था को और अधिक दृढ़ करना अपना कर्त्तव्य समझता है। स्टालिन की यह एक अपूर्व देन है जिसके द्वारा रूस में एक दल-तन्त्र शासन की नींव दृढ़ हुई और ज़ार की निरंकुशता एवं कठोर नौकरशाही के आधार पर निर्मित व्यवस्था तथा प्राचीन रूढ़िग्रस्त समाज में समन्वय करने का आन्दोलन निष्फल समझा गया तथा रूस का पुर्ननिर्माण हुआ। इसीलिए तो यह कहा जाता है कि क्रान्तियाँ कभी समाप्त नहीं होतीं[2] क्योंकि क्रान्ति ही पुर्ननिर्माण का लक्षण है। पुरानी व्यवस्था को समाप्त करके रूस में नई व्यवस्था की स्थापना हुई।

1 "The proletariat," Lenin declared, "when victorious will act thus: it will set the economists, engineers, agricultural experts and so on to work out a plan under the control of the workers' organisation, to test it, to seek means of saving labour by means of centralism, and of securing the most simple, cheap, convenient and general control."

2 "There is no such thing as the last revolution, the number of revolution is infinite."

सन् १९१७ की क्रान्ति के बाद :

प्रथम महायुद्ध के प्रारम्भ के समय रूस में चौथी ड्यूमा चल रही थी ; ज़ार की निरंकुशता का बोलबाला था। रूस युद्ध में मित्र-राष्ट्रों का पक्षपाती था और उसने उनकी मदद के लिए असंख्य सैनिक युद्ध-क्षेत्र में भेज दिये थे, परन्तु देश की आन्तरिक स्थिति अत्यन्त नाज़ुक थी। देश में लोग भूखे मर रहे थे और खाद्य-सामग्री चोरी-चोरी जर्मनी व आस्ट्रिया को भेजी जा रही थी। जनता की आवाज को कुचलने का पूर्ण प्रयत्न किया जा रहा था। तत्कालीन ड्यूमा में भी उग्र दल के सदस्यों की संख्या अधिक न थी और यद्यपि वे ज़ार की निरंकुशता के समर्थक न थे फिर भी वे क्रान्ति के विरोधी थे। उन्होंने विद्रोह की आग को जो देश में सुलग रही थी, बुझाने की कोशिश की परन्तु क्रान्ति रुकने वाली न थी।

अन्त में लोगों की क्षुधा, मजदूरों की दीनता, योरुप में प्रजातन्त्रीय शासन-सत्ता का जोर, रूसी युवकों की अधीरता, रूस की राजनैतिक दुर्बलता, आदि कारणों से उत्पन्न होकर मार्च सन् १९१७ में क्रान्ति फैल ही गई। सेना ने बजाय उसे दबाने के उल्टा उसका साथ दिया। ड्यूमा भी उसी ओर झुक गई। ज़ार अकेला रह गया। एक सप्ताह के अन्दर ही अन्दर उसे परिवार सहित बन्दी बना लिया गया। ड्यूमा ने एक अस्थायी (provisional) सरकार की स्थापना की जिसने समाचार-पत्रों के बन्धनों को हटा दिया, मजदूरों की माँगों को पूरा किया, सेना को अनुशासित किया और युद्ध-संचालन के कार्य को ठीक प्रकार से सँभाला। परन्तु यह अस्थायी सरकार अधिक दिनों तक कायम न रही। इसका सबसे बड़ा कारण यह था कि इस सरकार में अधिकतर मध्यम श्रेणी के लोग थे और ये लोग रूस में वैधानिक सरकार की स्थापना करना चाहते थे। उनकी दृष्टि सिर्फ राजनैतिक सुधारों पर ही जमी हुई थी। देश के आर्थिक ढाँचे को वे ज्यों का त्यों रखना चाहते थे। इसके विपरीत रूस में एक ऐसा उग्र दल जोर पकड़ रहा था जो राजनैतिक ढाँचे के साथ-साथ देश के आर्थिक ढाँचे को भी बदलना चाहता था। वह एक ऐसे समाज की स्थापना करना चाहता था जिसमें गरीब व अमीर का प्रश्न न रहे, जिसमें श्रमिकों का प्राधान्य हो, और उन्हीं को शासन सम्बन्धी अधिकार प्राप्त हों। वह पूँजीवाद अथवा व्यक्तिगत सम्पत्ति को जड़ से उखाड़ने के पक्ष में था। यह दल बोल्शेविक दल था, और इसके नेता लेनिन और ट्रौट्स्की थे।

अस्थायी सरकार इस दल का मुकाबिला न कर सकी। अक्टूबर सन् १९१७ में बोल्शेविकों ने बलपूर्वक राज्य-शक्ति अपने हाथ में ले लेने का निश्चय किया और नवम्बर में उन्होंने अपना निश्चय पूरा कर लिया। सोवियटों[1] की अखिल रूसी

१ रूस में सोवियट शब्द का तात्पर्य किसानों, मजदूरों तथा सैनिकों के संघों से है।

कांग्रेस ने एक कार्यकारिणी समिति की स्थापना की और शासन करने के लिये एक प्रशासन बोर्ड बनाया। इसमें लेनिन सभापति, ट्रौस्ट्की परराष्ट्र मन्त्री, तथा स्टालिन विभिन्न जातियों के मन्त्री बनाये गये। इस परिवर्तन से रूस में "रूसी समाजवादी संघीय सोवियट गणतन्त्र" (Russian Socialist's Federated Soviet Republic) की स्थापना हुई। उस नई सरकार ने देश के सामाजिक तथा आर्थिक ढाँचे को सुधारने का प्रयत्न किया और निम्नलिखित बातों पर अपना ध्यान केन्द्रित किया :—

(अ) बाह्य तथा भीतरी दुश्मनों को शान्त करना और केन्द्रीय सत्ताओं (central powers) से तुरन्त सन्धि करना।

(ब) किसान तथा मजदूरों के पूर्ण गणतन्त्र की स्थापना करना और धन के आधार पर स्थित भेदभाव को नष्ट करना।

(स) समस्त व्यवसायों का राष्ट्रीयकरण करना।

(द) देश की आर्थिक दशा को सुधारना।

(य) सम्पूर्ण संसार में श्रमजीवियों की क्रान्ति फैलाना।

सन् १९२३ का विधान :

इस सरकार का निर्माण सन् १९१८ में हुआ और ५ वर्ष बाद सन् १९२३ में इसी के आधार पर नवीन विधान बनाया गया जिसके द्वारा आयोजित सरकार सन् १९३६ तक काम करती रही। सन् १९३६ में विधान को आधुनिक स्वरूप दिया गया, जिसकी विशेषताएँ अगले परिच्छेद में पढ़ेंगे। सन् १९२३ के विधान के अनुसार रूस में पूर्ण रूप से संघ शासन की स्थापना हुई और उसका नाम समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्रों का संघ (Union of Socialist Soviet Republic—U. S. S. R.) रक्खा गया। इस संघ में सात गणराज्य शामिल हुए।

सन् १९२३ की शासन-व्यवस्था अत्यन्त विचित्र थी। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो यह संसार में अद्वितीय थी। इसका आधार कार्ल मार्क्स (Karl Marx) का समाजवाद था। ३० सितम्बर सन् १९२२ की घोषणा से इसका उद्देश्य हमें स्पष्ट हो जाता है।[१] इसका उद्देश्य पूँजीशाही को समाप्त करके मजदूर-वर्ग की स्थापना

१ "सोवियट प्रजातन्त्रों की स्थापना के समय से दुनिया दो भागों में बँट गई है, एक तरफ पूंजीवाद और दूसरी ओर समाजवाद। पहली दुनिया में वैर-भाव, उपनिवेशों की दासता, लड़ाई तथा राष्ट्रीय अत्याचार दीखते हैं, दूसरी में शान्ति, विश्वास, राष्ट्रीय स्वाधीनता तथा भ्रातृ-भाव...सोवियट सरकार का उद्देश्य इस दूसरे लक्ष्य को प्राप्त करना है........पूंजीवाद का खात्मा करके श्रमिकों का संसार में खानदान बढ़ाकर समाजशाही की जड़ मजबूत करना है।"

करना था। इसका अन्तिम उद्देश्य सम्पूर्ण संसार को एक सोवियट संघ बनाना था। इस व्यवस्था के आधार पर संघ को अत्यधिक शक्तियाँ दी गई थीं परन्तु संघ के अन्तर्गत राज्यों को स्थानीय व सांस्कृतिक स्वतन्त्रता के साथ-साथ संघ से अलग होने की स्वतन्त्रता भी दे दी गई (कागज पर तो कम से कम यह बात ठीक थी ही)। संघ सरकार की अधिकार-सीमा में निम्नलिखित विषय थे :—

(१) परराष्ट्र नीति, युद्ध व सन्धि करना।

(२) विदेशों से कर्ज लेना।

(३) देश के आन्तरिक एवं बाह्य व्यापार पर नियन्त्रण करना।

(४) डाक, तार, सड़कें।

(५) मुद्रा व टकसाल।

(६) तौल व मापदण्ड निर्धारित करना।

(७) नागरिकता सम्बन्धी नियम बनाना।

(८) क्षमादान।

(९) इसके अलावा संघीय सरकार को प्रजातन्त्रों (Republics) की काँग्रेसों तथा कार्यकारिणियों के निश्चयों को, जिन्हें वह अपनी नीति के प्रतिकूल समझती हो, रद्द करने का भी अधिकार दिया गया।

(१०) कृषि, व्यापार, आमदनी, चुङ्गी आदि सम्बन्धी प्रमुख करों को लगाने का अधिकार भी सङ्घीय सरकार को दिया गया।

(११) जमीन का बँटवारा, खानें, जंगल, न्यायालयों की स्थापना, राष्ट्रीय शिक्षा के उद्देश्य, राष्ट्रीय स्वास्थ्य की रक्षा के उद्देश्य, आदि सब विषय संघीय सरकार के आधीन रक्खे गये।

सन् १९२३ के शासन की विशेषताएँ :

(१) श्रमिकों का शासन—विधान ने श्रमिकों के शासन की व्यवस्था की, और उस वर्ग के स्त्री-पुरुषों को समान मताधिकार प्रदान किया गया। पूँजीपति, व्यक्तिगत व्यापारी, संन्यासी, पादरी, ज़ार के भूतपूर्व कर्मचारी आदि को मताधिकार नहीं दिया गया। जो लोग दूसरों को मजदूरी देकर अपना काम कराते थे उन्हें भी मताधिकार से वंचित रक्खा गया। यहाँ तक कि उन किसानों को भी जो मजदूरों से खेती कराते थे, मताधिकार नहीं प्राप्त हुआ। इस प्रकार रूस में श्रमिकों के शासन की स्थापना हुई।

(२) सर्वोच्च व्यवस्थापिका शक्ति—राज्य की सर्वोच्च शक्ति "यूनियन काँग्रेस ऑफ सोवियट्स (Union Congress of Soviets) को दी गई। इसमें शहरी और ग्राम्य सोवियटों के प्रतिनिधि आते थे। शहरों के सोवियटों से प्रति २५,००० के पीछे एक प्रतिनिधि और ग्राम्य सोवियटों से प्रति १,२५,००० ग्रामीण

जनता के पीछे एक प्रतिनिधि आता था। प्रतिनिधि सोवियटों में से आते थे। इस प्रकार वे जनता द्वारा अप्रत्यक्ष रूप से ही चुने जाते थे। इस यूनियन की बैठक साल में एक बार ही होती थी परन्तु साल के अन्दर व्यवस्थापिका सम्बन्धी कार्य करने के लिये प्रति वर्ष यूनियन द्वारा एक यूनियन सैण्ट्रल एक्जीक्यूटिव कमेटी (Union Central Executive Committee) बना दी जाती थी, जिसकी बैठक प्रति तीन महीने बाद होता थी और १५ दिन चलती थी। इस कमेटी में करीब ४०० सदस्य होते थे और इसके दो भाग थे—(१) संघीय सोवियट (Soviet of the Union), और (२) जातियों की सोवियट (Soviet of the Nationalities)। पहली सभा में संघ के अन्तर्गत सातों राज्यों के प्रतिनिधि होते थे, और दूसरी में संघ के अन्तर्गत विभिन्न जातियों के बराबर-बराबर प्रतिनिधि आते थे। यह एक्जीक्यूटिव कमेटी २१ सदस्यों का एक प्रेसीडियम (Presidium) बनाती थी जो दिन-प्रति-दिन का कार्य करती था और कमेटी की अनुपस्थिति में समस्त व्यवस्थापिका सम्बन्धी कार्य करती थी (क्योंकि कमेटी की बैठक तो तीन महीने बाद ही होती थी)।

(३) **कार्यपालिका शक्ति**—सर्वोच्च कार्यपालिका शक्ति एक्जीक्यूटिव कमेटी द्वारा नियुक्त १५ सदस्यों के एक मन्त्रिमण्डल के हाथ में थी। ये सदस्य शासन के विभिन्न भागों के अध्यक्ष होते थे और अपने कार्यों के लिये एक्जीक्यूटिव कमेटी के ही नहीं वरन् यूनियन कांग्रेस के प्रति भी उत्तरदायी होते थे। इस मन्त्रिमण्डल का नाम यूनियन कौंसिल ऑफ कमिसर्स (Union Council of Commissars) था। (इस कौंसिल के अन्दर एक छोटी केबिनेट भी थी जो सोवरकम (Sovar-kom) कहलाती थी और इसका नेता जोसेफ स्टालिन था जो कौंसिल का सभापति था)।

(४) **गणराज्यों की सरकारें**—प्रत्येक गणराज्य में करीब-करीब सोवियट-व्यवस्था के आधार पर शासन की स्थापना थी। वैसे तो सब राज्य अपने-अपने क्षेत्र में स्वतन्त्र थे और अब भी हैं परन्तु वास्तव में वे मास्को की सरकार के विरुद्ध कदम नहीं उठाते हैं। उन्हें शिक्षा, स्वास्थ्य, सामाजिक बीमा, छोटे-छोटे न्यायालय तथा कृषि सम्बन्धी अधिकार प्राप्त थे।

(५) **सोवियट की व्यवस्था**—रूसी शासन-व्यवस्था का आधार शहरी तथा ग्राम्य सोवियटें थीं। ये सोवियटें शहरों में प्रत्येक फैक्टरी के श्रमिकों द्वारा तथा गाँवों में ग्रामीण जनता द्वारा बनाई जाती हैं। ग्राम्य सोवियटें अपने प्रतिनिधि जिले की सोवियटों में, जिले की सोवियटें काउण्टी सोवियट में, और काउण्टी सोवियटें प्रादेशिक (Regional) सोवियटों में भेजती थीं। शहरों की सोवियटें अपने प्रतिनिधि सीधे चार बड़े-बड़े सोवियटों—प्रादेशिक सोवियट, सूबे की

सोवियट, गणराज्यों की सामूहिक सोवियट, तथा यूनियन कांग्रेस ऑफ सोवियट्स—में भेजती थीं। गाँवों की सोवियटों को पिछली दो सोवियटों में सीधे प्रतिनिधि भेजने का अधिकार न देकर रूसी सरकार ने शहरों के प्रति कुछ पक्षपात दिखलाया था। निम्नाङ्कित चार्ट से सोवियट-व्यवस्था का पूर्ण रूप, जैसा सन् १९२३ के विधान में था, भली-भाँति समझ में आ जायगा।[1]

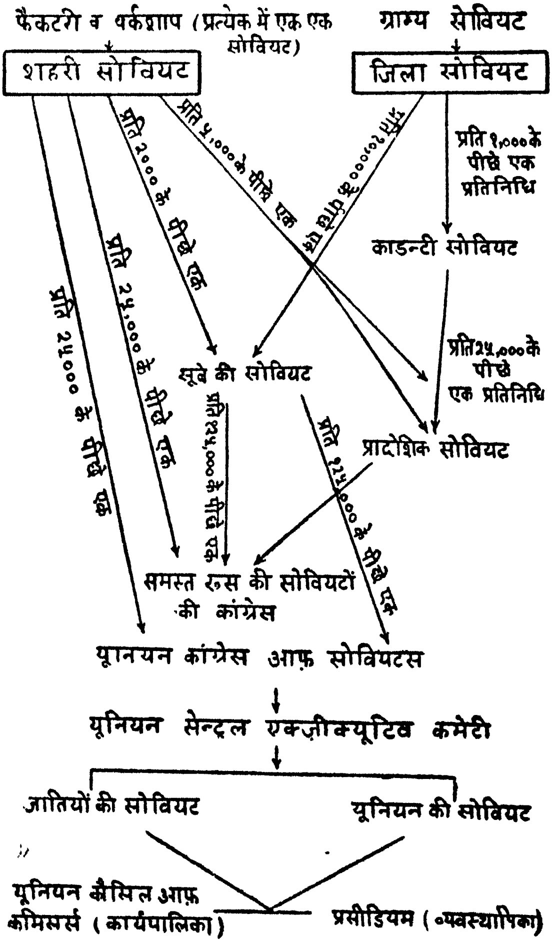

[1] Munro : Governments of Europe, p. 771.

कम्युनिस्ट (साम्यवादी) पार्टी :

आधुनिक काल में संसार के जनतन्त्रीय राज्यों में सरकार दलबन्दी के आधार पर निर्मित हैं। सोवियट सरकार भी दलबन्दी के आधार पर निर्मित है परन्तु वहाँ पर एक दल का बहुमत है और वही सर्वेसर्वा है। उसी दल की सरकार है और उसी के आदर्शों पर समस्त सामाजिक व आर्थिक व्यवस्था स्थित है। यह दल कम्युनिस्ट दल है। सोवियट रूस के पुनर्निर्माण में इसी दल का हाथ है और उसी के प्रभुत्व के कारण रूस ने आशातीत प्रगति की है। कम्युनिस्ट दल का संगठन अत्यन्त ही ठोस है और दलीय संगठन ही उस दल को स्फूर्ति देता है। अपनी दलीय व्यवस्था के आधार पर ही सोवियट रूस आज विश्व के अग्रगण्य राष्ट्रों में गिना जाता है।

सन् १९२१–२२ से रूस में कम्युनिस्ट पार्टी का बोलबाला है और उसकी शक्ति तीव्रतर होती चली जा रही है। कम्युनिस्ट पार्टी की आवाज जनता की आवाज है।[1] कम्युनिस्ट पार्टी जनता का नेतृत्व ग्रहण करती है और जनता उसके पीछे चलती है। स्टालिन ने बड़े गर्व के साथ कहा था कि "सोवियट यूनियन में पार्टी की शक्ति का सबसे बड़ा प्रमाण यह है कि कोई भी राजनैतिक अथवा संगठन सम्बन्धी कार्य तब तक स्थापित नहीं किया जाता है जब तक कि उसे दल की अनुमति प्राप्त नहीं हो जाती है। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि साधारण वर्ग (Proletariat) की तानाशाही का अर्थ यही है कि यह उस वर्ग की रक्षक यानी साम्यवादी पार्टी की तानाशाही है।[2] रूस में वास्तव में यही एक ऐसी बात है जिसकी बहुत आलोचना भी होती है। यह सत्य है कि समय-समय पर जनता को पार्टी के नेता चुनने का अवसर दिया जाता है और जनता को 'हाँ व 'ना' का अवसर है, परन्तु 'ना' का अवसर प्रयोग में नहीं लाया जाता। रूस में एक दल की ही प्रभुता है और उसके विरुद्ध कोई पनप नहीं सकता।[3] संविधान के विद्यार्थी को तो यही मालूम होगा कि रूस में एक दल की तानाशाही है और यह उचित नहीं है परन्तु स्टालिन ने सन् १९३६ में यह कहा था कि "एक पार्टी एक वर्ग से उत्पन्न होती है। विभिन्न

1 The party is "the authentic spokesman of the will of the masses."

2 "The highest expression of the leading role of the party here in the Soviet Union is the fact that not a single important political organisational question is decided by our Soviet and other mass organisations without guiding directions from the party. In this sense it could be said that the dictatorship of the proletariat is in essence the dictatorship of its vanguard, the dictatorship of its party."
(*Stalin: Foundations of Leninism, p. 73*)

3 "There might (or still may) be other parties but on the sole condition that one is in power and the others in jail."
(*A. R. Williams: The Soviets (New York, 1937), p. 196*)

पार्टियाँ तथा उनकी स्वतन्त्रता वहीं स्थित रह सकती है जहाँ कई प्रकार के वर्ग हों और उनमें पारस्परिक विरोध हो और जिनके हितों में संघर्ष हो। परन्तु रूस में ऐसी बात नहीं है। यहाँ किसी प्रकार का वर्गीय संघर्ष जैसे पूँजीपतियों, श्रमिकों, जमींदारों आदि का नहीं है। यहाँ सिर्फ दो ही वर्ग हैं—किसान और श्रमिक, और उनके हितों में कोई संघर्ष नहीं है बल्कि उनके सम्बन्ध मैत्रीपूर्ण हैं। अतः रूस में हमें वास्तविक रूप में प्रजातन्त्रीयता प्राप्त है।"

पार्टी का अनुशासन व एकता :

उपरोक्त कथन से यह स्पष्ट है कि रूस में किसानों व श्रमिकों की तानाशाही है। यह तानाशाही तब तक कार्य नहीं कर सकती जब तक कि इसकी पार्टी में पूर्ण अनुशासन नहीं है। दूसरी बात यह है कि अनुशासन के साथ-साथ एकमत का होना भी जरूरी है। जब कोई प्रस्ताव पास हो गया या कोई फैसला हो गया तब यह जरूरी हो जाता है कि समस्त पार्टी एकमत से उसको स्वीकार करे और उसे आगे बढ़ावे। अनुशासन तथा इस प्रकार की एकता के सहारे रूस में पार्टी पूर्ण रूप में नियन्त्रण करती है और किसी भी प्रकार की विरोधी विचारधारा व प्रस्ताव व भावना को पनपने नहीं देती है। इसीलिए उस पार्टी की विरोधी कोई पार्टी पनप ही नहीं सकती और उसकी गति अविच्छिन्न बनी रहती है। यहाँ एक प्रश्न यह पैदा होता है कि क्या साम्यवाद और प्रजातन्त्र विरोधी हैं? इसका उत्तर देना अपने-अपने दृष्टिकोण के ऊपर निर्भर करता है। यदि प्रजातन्त्र को हम यह समझें कि इसके द्वारा पारस्परिक मतभेद दूर होता है और सब मिलकर एकमत होते हैं तथा विरोधियों को भी उसी मत को स्वीकार करना पड़ता है तब तो साम्यवाद तथा प्रजातन्त्र में विरोध नहीं है। रूस की प्रजातन्त्र सरकार की विशेषता यही है। वहाँ पार्टी की सदस्यता ही महत्त्व नहीं रखती बल्कि पार्टी की मजबूती अधिक महत्त्व रखती है। अतः रूस की इस व्यवस्था को प्रजातन्त्रीय केन्द्रीकरण (Democratic Centralism) कह सकते हैं कि वहाँ स्वतन्त्रता है परन्तु वह स्वतन्त्रता नियन्त्रित है और पार्टी के आदेश से बाहर स्वतन्त्रता नहीं है। सामाजिक तथा राजनैतिक क्षेत्र में पार्टी के आदेश सर्वमान्य हैं। वहाँ सब को समान अवसर है। रूस के संविधान में मौलिक अधिकार उल्लिखित हैं। सब को समान स्वतन्त्रता है परन्तु जो एक के लिए बन्धन है वह सब के लिए बन्धन है। इस प्रकार का नियन्त्रण तथा पार्टी की तानाशाही रूस में साम्यवादी पार्टी में कठोर अनुशासन बनाए हुए है।

इस पार्टी को निम्नलिखित अस्त्रों द्वारा मजबूत बनाया जाता है—(१) प्रथम तो केन्द्रीय कमेटी की सेक्रेटरिएट है जो ऑर्गब्यूरो (Orgburo) के साथ कार्य करती है, और (२) दूसरा अस्त्र केन्द्रीय कमीसन्स (Central Commissions) हैं जिनकी स्थापना सन् १९२० में हुई थी जिसके द्वारा पार्टी के विरुद्ध हुई शिकायतें

सुनने की व्यवस्था हुई थी परन्तु जो अब पार्टी में अनुशासन रखती है और आलोचनाओं को समाप्त करती है।

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन :

कम्युनिस्ट पार्टी का संगठन बिल्कुल पिरामिड के समान है जिसमें एक के ऊपर एक पत्थर रक्खा हुआ है और ऊपर जाकर एक नोकदार शिला है जो सबसे ऊँची है। पार्टी की सबसे छोटी इकाई सैल (Cell) है। इसके कम से कम तीन सदस्य होते हैं। यह किसी गाँव या कारखाने में या किसी ट्रेड यूनियन के ऑफिस में अथवा स्कूल या कॉलिज में बनाई जाती है। यह पार्टी की नीति निर्धारित करती है और उसे कार्यान्वित करती है। इनकी संख्या इस समय १,३०,००० से अधिक है। इस इकाई का यह भी काम है कि यह पार्टी के सिद्धान्तों व नारों का प्रचार करे और उसके नवीन फैसलों व विनिश्चयों से लोगों को परिचित कराये।

सैल के बाद दूसरा संगठन जिले का है। प्रत्येक सैल जिले की कॉन्फ्रेन्स के लिए प्रतिनिधि चुनती है। प्रत्येक साल इसके प्रतिनिधियों का चुनाव होता है। जिले तथा शहर की संस्थाएं प्रादेशिक कांग्रेस के हेतु प्रतिनिधि चुनती हैं। प्रादेशिक कांग्रेस संघ के अन्तर्गत अधिराज्यों की सबसे बड़ी संस्था है। अधिराज्यों की कांग्रेस संघ की काँग्रेस (All-Union Congress) के लिए प्रतिनिधि भेजती है। यह काँग्रेस कम्युनिस्ट दल की सबसे बड़ी संस्था है। इस काँग्रेस में सदस्यों की संख्या बहुत होने के कारण इसकी शक्ति का पूर्ण प्रयोग नहीं हो पाता है। अतः जिस प्रकार रूस की सुप्रीम कौंसिल ने दिन प्रति दिन का कार्य करने हेतु प्रेसीडियम बना रक्खी है उसी प्रकार यूनियन काँग्रेस ने अपनी शक्ति कुछ छोटी-छोटी संस्थाएं बनाकर उन्हें दे रक्खी है। यद्यपि सब मामलों में अन्तिम निर्णय काँग्रेस का ही है परन्तु वास्तव में पार्टी की नीति पर पूर्ण विचार किसी दूसरी निकाय द्वारा ही होता है। काँग्रेस उसे उसी प्रकार स्वीकार कर लेती है जैसे प्रेसीडियम के विनिश्चयों को सुप्रीम कौंसिल। उनमें प्रमुख केन्द्रीय कमेटी है।

केन्द्रीय कमेटी की सेक्रेटरियट :

स्टालिन के शक्ति प्राप्त करने के बाद से केन्द्रीय कमेटी तथा कम्युनिस्ट दल के संगठन में काफी परिवर्तन हुए। प्रारम्भ में यानी सन् १९२५ के बाद से केन्द्रीय कमेटी की सेक्रेटरियट की बनावट पृष्ठ ३४४ पर दिए हुए चार्ट से स्पष्ट होती है। चार्ट से प्रतीत होता है कि केन्द्रीय कमेटी की सेक्रेटरियट ने छोटी-छोटी समितियाँ बना रक्खी हैं जिन्हें ओटडेल (Otdel) कहते हैं और वे विभिन्न कार्यों के लिये जिम्मेदार हैं।

सेक्रेटरियट (Secretariat)

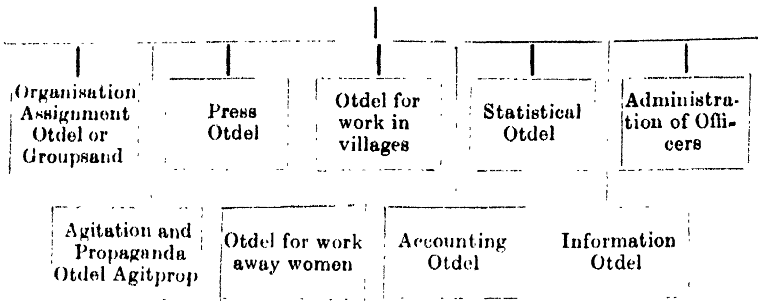

सन् १९५२ की उन्नीसवीं पार्टी कांग्रेस के द्वारा पुरानी पार्टी की समितियाँ जैसे पोलिटब्यूरो (Politbureau) तथा ऑर्गब्यूरो (Orgburo) समाप्त कर दिये गए। अब प्रेसीडियम ही पार्टी की सबसे बड़ी संस्था है। पहले इसमें २५ सदस्य तथा ११ बारी से आने वाले सदस्य (alternates) होते थे परन्तु स्टालिन की मृत्यु के बाद उनकी संख्या क्रमशः १० और ४ रह गई। यह परिवर्तन शक्तिशाली नेतृत्व की प्राप्ति के लिये किया गया। उसी कांग्रेस के द्वारा एक आन्तरिक ब्यूरो स्थापित किया गया जो प्रेसीडियम की अब आत्मा बन गया है। अब मार्शल बुल्गानिन प्रेसीडियम के अध्यक्ष हैं और यह छोटी निकाय पार्टी का पूर्ण नेतृत्व करती है।

आज जो पार्टी का संगठन है उसे संक्षेप में निम्न प्रकार कह सकते हैं :—

(१) पार्टी कांग्रेस पार्टी का सबसे बड़ा संगठन है और इसकी बैठक ४ साल में एक बार होना जरूरी है। पहले इसकी बैठकें तीन साल में एक बार होती थीं परन्तु अठारहवीं कांग्रेस सन् १९३९ के बाद सन् १९५२ (१३ वर्ष बाद) में हुई। वास्तव में पार्टी कांग्रेस तो एक 'हाँ' करने वाली संस्था है। राज्य की नीति की समस्त रूपरेखा प्रशासकों द्वारा निर्मित की जाती है।

(२) कांग्रेस ने एक सेण्ट्रल कमेटी की व्यवस्था की है और एक सेण्ट्रल ऑडिटिङ्ग कमेटी (Central Auditing Committee) की भी व्यवस्था की है। यह दूसरी कमेटी हिसाब-किताब की जाँच करती है और इसका चेयरमैन एक रिपोर्ट तैयार करके कांग्रेस के पास भेज देता है।

रूस में सर्वशक्तिशाली संस्था सेण्ट्रल कमेटी है जिसकी सेक्रेटरियट की बनावट का ढाँचा ऊपर दिया जा चुका है। इसकी बैठकें ६ माह में एक बार कम से कम होती हैं। इसके सदस्यों में पार्टी के सेक्रेटरी, यूनियन के अग्रगण्य सदस्य, गणराज्यों के सेक्रेटरी आदि होते हैं।

(३) जिस प्रकार केन्द्र में सेण्ट्रल कमेटी है उसी प्रकार गणराज्यों में भी पार्टियाँ हैं जो अपने-अपने क्षेत्र में पार्टी के कार्य का प्रचार करती हैं और पार्टी के सदस्यों में अनुशासन रखती हैं तथा नये सदस्यों की भर्ती करती हैं।

एक बात यह ध्यान में रखने की है कि कम्युनिस्ट पार्टी के इस संगठन में केन्द्र का बहुत हाथ है। नीचे की समस्त संस्थाएँ केन्द्र के इङ्गित पर चलती हैं और किसी भी प्रकार की विद्रोही भावना से विपरीत विचारधारा को पनपने नहीं दिया जाता है।[1] इसीलिए कम्युनिस्ट पार्टी शक्तिशाली है और उसमें ऐक्य है। अनुशासन उसका मूल मन्त्र है। व्यक्ति पार्टी के हित के लिये स्वीकृत किया गया है। तभी उसे स्वतन्त्रता प्राप्त हो सकती है। पार्टी के बाहर या उसके विरुद्ध उसे कोई स्वतन्त्रता नहीं है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Give an outline of the Russian Constitution as it was formed in 1923.
2. Trace the genesis of the Revolution of 1917 and account for its success.
3. Give an account of the organisation and discipline of the Communist party in U. S. S. R.

The system of power is built on the institutionalisation of mutual suspicion, and the party apparatus is both controller and controlled. The fragmentation of authority at the periphery serves as a guarantee that the Kremlin's manipulatory monopoly will remain undisturbed. It continues to anchor its power on the formula in which responsibility is universalised and command remains the prerogative of a narrow ruling group." (*Merle Fainsod: How Russia is Governed, p. 20*[illegible])

द्वितीय परिच्छेद

सोवियट रूस के आधुनिक संविधान की विशेषताएँ

विषय-प्रवेश :

रूस की राजनैतिक व्यवस्था एक अनोखे ढङ्ग की है और समाजवाद के आधार पर निर्मित होने के कारण यह अन्य देशों की शासन-व्यवस्था से बहुत कुछ भिन्न है। यह भिन्नता राजनीति-शास्त्र के अध्ययन करने वालों के लिए अत्यधिक महत्त्व रखती है और इसका प्रमुख कारण यह है कि रूस अपनी शासन-व्यवस्था व अपने सामाजिक आदर्श को अपने क्षेत्र में ही सीमित नहीं रखना चाहता है, वरन् उसे सम्पूर्ण संसार में फैलाना चाहता है। उसका यह विश्वास है कि उसके आदर्श के आधार पर निर्मित संसार-समाज में न द्वेष होगा, न वैर-भाव, न लड़ाई, न संघर्ष। रूस की शासन-व्यवस्था केवल सरकार के कार्य-संचालन के लिए ही नहीं है वरन् एक अनूठी सामाजिक व्यवस्था स्थापित करने के लिए भी है जिसके द्वारा आधुनिक जगत का कल्याण हो सकता है।

रूस का नया संविधान :

१ जून सन् १९३६ को स्टालिन ने नवीन संविधान को कांग्रेस के समक्ष प्रस्तुत किया और ५ दिसम्बर सन् १९३६ को वह पास हो गया। नए संविधान में स्टालिन ने कई बातों पर विशेष जोर दिया क्योंकि सन् १९२४ के बाद से सोवियट यूनियन की सामाजिक तथा राजनैतिक परिस्थितियों में बहुत परिवर्तन हो गए थे। स्टालिन ने पंचवर्षीय योजना व कृषि को सामूहिक सहयोग के आधार पर संगठित करने पर अधिक जोर दिया। नए विधान में वर्गीय मतभेद को समाप्त करने पर बल दिया गया। यद्यपि सन् १९३६ के बाद रूस के संविधान में कई परिवर्तन हुए परन्तु आज का संविधान सन् १९३६ का ही संविधान है।

संविधान की विशेषताएँ :

(१) आधुनिक सोवियट रूस लगभग १८ गणराज्यों का संघ है। इसे मजदूरों व किसानों के सोवियटों का संघ भी कहा जा सकता है। संघ व गणराज्यों की सरकारें एक-सी ही हैं। प्रत्येक गणराज्य को संघ से पृथक् होने का अधिकार है (परन्तु वास्तव में ऐसा होता नहीं है)। साथ ही साथ प्रत्येक गणराज्य को अपने क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त है (परन्तु व्यवहार में मास्को की सरकार ही सर्वेसर्वा है और कोई गणराज्य उसके रुख के खिलाफ़ नहीं चल सकता है)।

(२) सोवियट सरकार की दूसरी विशेषता यह है कि इसमें शक्ति-विभाजन (Separation of Powers) के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है। व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका शक्ति सम्मिलित है और शक्ति-नियन्त्रण अथवा सन्तुलन की कोई व्यवस्था नहीं है। कुछ हद तक न्यायपालिका भी उपर्युक्त शक्ति के साथ है। वहाँ पर एक ही दल की सरकार है और उसी के नेता कमिसर नियुक्त किये जाते हैं जो व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका सम्बन्धी शक्ति को अपने हाथ में रखते हैं।

(३) मताधिकार सब को समान रूप से प्राप्त है परन्तु जो लोग अपना कार्य दूसरों से कराते हैं तथा जो पुजारी-वर्ग के हैं या ज़ार वंश के हैं उन लोगों को मत देने का अधिकार नहीं है।

(४) सोवियट रूस के संविधान की सब से बड़ी विशेषता यह है कि इसने पूर्ण रूप से समाजवाद के सिद्धान्तों को अपनाया है। इसने उत्पत्ति के व्यक्तिगत अधिकार को समाप्त कर दिया है और तमाम कल-कारखाने, भूमि, खानें, जंगल, बैंक, आवागमन के साधन आदि का राष्ट्रीयकरण कर दिया है। शिक्षा-विभाग द्वारा भी समाजवाद के सिद्धान्तों की व्याख्या की जाती है। रूस में किसी विशेष धर्म के प्रति रुचि नहीं है। चर्च को रूसी संविधान स्थापित नहीं करता। प्रत्येक क्षेत्र में शोषण समाप्त कर दिया गया है। सन् १९४६ में यू० एस० एस० आर० के आठवें अधिवेशन के समय स्टालिन ने कहा था कि हमने "राष्ट्रीय अर्थ के प्रत्येक क्षेत्र में शोषण समाप्त कर दिया है और उत्पत्ति के साधनों का समाजवादी ढङ्ग से राष्ट्रीयकरण करके सोवियट-व्यवस्था की जड़ को सुदृढ़ बना दिया है।"

(५) सोवियट रूस में प्रतिनिधित्व का आधार भी दूसरे देशों से भिन्न है। यहाँ मतदाता व्यवसाय व पेशे के आधार पर प्रतिनिधि चुनते हैं। इङ्गलैण्ड व अमेरिका की तरह भौगोलिक आधार पर देश को वार्ड, काउण्टी या प्रदेश में बाँटने की भी व्यवस्था है परन्तु वह पेशे के आधार (vocational basis) को ही सफल बनाने के लिए है। रूस में विभिन्न विभागों में काम करने वाले व्यक्ति विभिन्न वर्गों में वोट देते हैं; उदाहरणार्थ, खानों में काम करने वाले एक वर्ग में, सैनिक दूसरे वर्ग में, तथा किसान तीसरे वर्ग में, आदि।

(६) रूस में सरकार जनता से दूर नहीं है। इसका कारण यह है कि सरकार की कार्यकारिणी अथवा व्यवस्थापिका के सभी सदस्य अप्रत्यक्ष अथवा प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली द्वारा चुने जाते हैं। नीचे से ऊपर तक की चुनाव-विधि पहले बहुत लम्बी थी। उदाहरणार्थ, किसान अपना प्रतिनिधि जिले की सोवियट में भेजता था, जिले की सोवियट सूबे की सोवियट को भेजती थी, जिसके प्रतिनिधि यूनियन की कांग्रेस में

जाते थे और तब वे केन्द्रीय कार्यकारिणी में पहुँच सकते थे; परन्तु अब ऐसा नहीं है।)

(७) सन् १९३६ के विधान के अनुसार प्रत्येक व्यक्ति की आमदनी का साधन उसका काम है। प्रत्येक व्यक्ति को स्वयं काम करके पैदा करना पड़ता है और संविधान की १० वीं धारा के अनुसार राज्य व्यक्ति के द्वारा पैदा की हुई सम्पत्ति की रक्षा करता है।

(८) सन् १९३६ के संविधान द्वारा स्टालिन के कथनानुसार रूस में पूर्ण तथा सच्चे जनतन्त्र की स्थापना की गई है और जाति, वर्ग, भाषा तथा संस्कृति के आधार पर निर्मित भेद-भाव को समाप्त कर दिया गया है।[1]

(९) हम पहले कह चुके हैं कि सोवियट रूस के संघ से प्रत्येक अधिराज्य को पृथक होने का अधिकार है; परन्तु यह अधिकार केवल कागज़ पर ही है। लेकिन एक विशेषता यह है कि प्रत्येक अधिराज्य को अन्तर्राष्ट्रीय स्तर का राज्य माना गया है और कुछ को तो संयुक्त राष्ट्र संघ में अपने प्रतिनिधि भेजने का भी अधिकार है।

(१०) सोवियट रूस के संविधान ने व्यक्ति के मूल अधिकारों का वर्णन ही नहीं किया है अपितु उनकी रक्षा के लिए आयोजन भी कर दिया है। शोषण की नीति को समाप्त करके रूस ने मानव-जाति का बड़ा कल्याण किया है और उसे जनतन्त्रीय स्वतन्त्रता का पूर्ण आभास दिया है। यह स्वतन्त्रता केवल अदृश्य संज्ञामात्र ही नहीं है वरन् वास्तविक स्वतन्त्रता है जिसका आधार समाजवाद है।

संघ सरकार की स्थिति :

रूस की संघ सरकार अन्य देशों, जैसे अमेरिका या कनाडा, की संघ सरकार से बिल्कुल भिन्न है। इस व्यवस्था की प्रशंसा भी होती है और आलोचना भी। प्रशंसा इसलिए होती है कि उसने शोषक-वर्ग को समाप्त करके मजदूर और किसानों का राज्य स्थापित किया है, और आलोचना इसलिये कि इसने जनतन्त्र तथा संघत्व का दावा करते हुए तानाशाही की स्थापना की है और संघ के अन्तर्गत राज्यों को स्वतन्त्रता देने का नारा लगाते हुए भी उनकी नाक में नकेल डाल दी है। इन दोनों पहलुओं पर हमें थोड़ा विचार करने की आवश्यकता है।

सोवियट रूस के संविधान के गुण :

(१) रूस के संविधान का सबसे बड़ा गुण यह है कि इसका आदर्श यह है कि धन

1 "The governmental process in the Soviet Union is not only notable for its extensive and detailed operations but it is publicised as the embodiment of the original communist concept of *democratic centralism.* Whereas it does not recognise differences in colour, language, cultural level or level of political development, or any other differences between nations and races, the doctrine of equity and quality characterizes and universals the constitution in all its aspects."

किसी की बापौती नहीं है और न किसी के पास, जो प्रयत्न नहीं करता है, रहना चाहिये। क्रियाशील, परिश्रमी व्यक्ति को ही उसके प्रयोग का हक है और वही व्यक्ति उस धन से लाभ उठाने का अधिकार भी रखता है, वही व्यक्ति शासन-कार्य में भाग लेने का अधिकार रखता है, और वही समाज में उच्च स्थान व आदर प्राप्त करने का अधिकार रखता है। देश के उत्पादन तथा वितरण के साधन किसी एक व्यक्ति के न होकर जनता के हैं और किसी भी वर्ग को अनुचित धन संचित करने या दूसरे वर्ग का शोषण करने का अधिकार नहीं है।

(2) इस सम्बन्ध में यहाँ यह कहना उपयुक्त होगा कि रूसी समाज अन्य देशों के राजनैतिक संगठनों से घृणा करता है और इस बात का प्रचार करता है कि संसार के समस्त देशों में जहाँ समाजवाद नहीं है, राजनैतिक संगठन शोषणकर्त्ताओं का समर्थन करता है, उन्हीं की पीठ ठोकता है और बेकारी, भुखमरी और दीनता पर अट्टहास करता है। जनतन्त्र का दावा भर कर भी वह कभी वास्तविक जनतन्त्र को नहीं अपनाता है। राजकीय व्यवस्था एक ढोंग है, एक जाल है, जिसके द्वारा गरीबों पर अत्याचार होते हैं और अमीरों का पेट भरा जाता है। (यदि हम निष्पक्ष भाव से देखें तो पता चलेगा कि इस कथन में सत्यता तो अवश्य है परन्तु रूस ने अपने यहाँ कहाँ तक इस आदर्श को अपनाया है और कहाँ तक उसे वास्तविक सफलता मिली है, यह बात थोड़े-बहुत संकोच के बिना स्वीकार नहीं की जा सकती।)

(3) शोषण की समस्या के साथ-साथ सोवियट रूस के संविधान ने जाति व धर्म की समस्या को भी समाप्त कर दिया है। रूस में लगभग २० राष्ट्र हैं और अनेक उप-राष्ट्र हैं। लेकिन सब को एक सूत्र में बाँधकर उसने उसके बीच की दीवार समाप्त कर दी है। इसी प्रकार किसी विशेष धर्म को न अपनाकर सरकार ने धार्मिक स्वतन्त्रता प्रदान की है। राज्य किसी भी धर्म का पक्ष नहीं करता है। पादरियों को मत देने का भी अधिकार नहीं है। धर्म राजनीति में लेशमात्र भी स्थान नहीं रखता है।

(4) सब से अधिक महत्त्वपूर्ण बात यह है कि रूस ने नागरिकों को जो अधिकार दिये हैं वैसे अन्य किसी देश में नहीं हैं। अधिकार बिना किसी भेदभाव के दिये गये हैं और उनकी रक्षा का समुचित प्रबन्ध कर दिया गया है, परन्तु ये अधिकार उन्हीं के लिये हैं जो समाजवाद के पक्षपाती हैं।

(5) रूसी संघ में सम्मिलित होने वाले अधिराज्यों को सैद्धान्तिक रूप में अन्य संघों की अपेक्षा अधिक स्वतन्त्रता है और सबसे बड़ी बात तो यह है कि वे संघ से पृथक भी हो सकते हैं। सन् १९४४ में उनके अधिकार और अधिक बढ़ा दिये गये हैं। वे विदेशी राज्यों से सीधा सम्बन्ध स्थापित कर सकते हैं और जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, कुछ गणराज्यों को तो संयुक्त राष्ट्र संघ में अपने प्रतिनिधि भेजने का भी अधिकार है।

उपर्युक्त बातों से स्पष्ट होता है कि रूस में वास्तविक रूप में जनतन्त्र है।[1] यह कहना कि रूस में बुल्गानिन वही शक्ति अपनाये हुए है जो जर्मनी में हिटलर को थी, सर्वथा निर्मूल है। अगर तानाशाही है तो वह मजदूरों की है, और कतिपय धनिकों की तानाशाही के मुकाबिले मजदूरों की तानाशाही सर्वदा क्षम्य है। रूस के विधान के आलोचक उस पर यह दोष और मढ़ते हैं कि रूस में एक ही राजनैतिक दल 'कम्युनिस्ट दल' है और अन्य दल पनप नहीं पाते हैं, और इस प्रकार एक दल की तानाशाही चलती है। लेकिन यह बात दूसरे ढङ्ग से भी सोची जा सकती है और वह ढङ्ग अधिक उपयुक्त होगा। वह यह है कि रूस में कम्युनिस्ट दल इतना लोकप्रिय है और उसने जनता को इतना लाभ पहुँचाया है कि दूसरे दल उसके सामने सिर उठा ही नहीं सकते।[2] यदि इस दृष्टि से देखा जाय तो रूस के प्रति की गई आलोचनाएँ कि वहाँ बुल्गानिन की तानाशाही है, एक दल का प्रभुत्व है, नौकरशाही का राज्य है, भाषण की स्वतन्त्रता नहीं है—सब समाप्त हो जाती हैं। ये सब आलोचनाएँ पूँजीवाद के दृष्टिकोण से हैं। यदि मजदूरों और किसानों के दृष्टिकोण से देखा जाय तो सब की सब निर्मूल हैं, परन्तु इस विचार के साथ-साथ दूसरा भी विचार अत्याज्य है। आलोचनाएँ बिल्कुल निर्मूल कभी नहीं होतीं। रूस के संविधान पर ध्यान देने पर उसकी कमजोरियाँ भी स्पष्ट नजर आती हैं।

सोवियट रूस के संविधान की कमजोरियाँ :

(१) रूस में संविधान का संघीय रूप केवल कागज पर ही है। वास्तव में शासन का रूप एकात्मक है और आधुनिक काल में तो केन्द्रीय शक्ति अत्यधिक बढ़ गई है। संघ और उसके अन्तर्गत गणराज्यों के कार्यों के विभाजन पर दृष्टिपात करने से प्रतीत होता है कि वास्तविक शक्ति केन्द्रीय सरकार में ही निहित है।

(२) सोवियट रूस में संघ और किसी गणराज्य में किसी प्रकार का मतभेद होने पर राज्य को ही संघ के सामने झुकना पड़ता है। विधान में यह स्पष्ट है कि कोई भी गणराज्य यदि कोई ऐसा नियम पास करे जो संघीय सरकार के प्रतिकूल हो तो संघीय सरकार को उसे रद्द करने का अधिकार है।

(३) सोवियट रूस में गणराज्यों में यूनियन की ओर से प्रतिनिधि रहते हैं जो राज्यों के कार्यों में हस्तक्षेप करते हैं। गणराज्यों की स्वतन्त्रता के लिए यह भी एक

---

१ स्टालिन ने कहा भी था कि "सोवियट विधान ही संसार का अकेला जनतन्त्रीय विधान है।"

2 'Soviet patriotism has operated as an ideological tool to weld the people of the regime. Through Soviet patriotism, the party leadership proposes to create the soviet man of the post-war world—politically conscious, proud of his society, aware of the dangers of capitalist encirclement; and prepared to make his contribution to the consolidation and expansion of Soviet power." (*Merle Fainsod : op. cit., p. 114*)

प्रतिबन्ध है। ऑग के कथनानुसार रूस में शासन का स्वरूप संघीय होते हुए भी शक्ति का केन्द्रीयकरण इतना अधिक है कि शायद कोई देश उस हद तक पहुँच भले ही जाय परन्तु उससे इस विषय (केन्द्रीयकरण) में आगे नहीं बढ़ सकता।[1] इसीलिए वह इसे अर्ध-संघात्मक (Quasi-federal) कहने पर ही राजी है। वह इसे "संघात्मक सरकार का क्रियात्मक उदाहरण" मानने पर राजी नहीं है। गणराज्य व्यवहार में केन्द्रीय शक्ति का मुँह ताकते रहते हैं और वे अपनी शक्ति का तभी तक प्रयोग कर सकते हैं जब तक केन्द्रीय सरकार कोई विरोध नहीं करती है।

(४) सोवियट रूस में मताधिकार और मौलिक अधिकारों पर भी काफी प्रतिबन्ध हैं। ये सिर्फ श्रमिक-वर्ग तथा किसानों के लिए हैं। अधिकांश जनता इनसे वंचित रक्खी गई है। इससे यह सिद्ध होता है कि रूस में समस्त व्यवस्था समाजवादी उद्देश्यों की पूर्ति के लिए है, इस बात की उसमें व्यवस्था नहीं है कि किसी विशेष वर्ग या वर्गों के हितों की रक्षा होती है या नहीं। यह जनतन्त्र के सर्वथा प्रतिकूल है।

(५) जनतन्त्र के लिए कम से कम दो दलों का होना आवश्यक है। शासन की सफलता तथा कुशलता के लिए विरोधी दल का होना आवश्यक है नहीं तो तानाशाही ही चलती है और वह व्यवस्था निन्दनीय तथा घृणास्पद हो जाती है। इस दृष्टि से भी रूस में जनतन्त्र नहीं है।[2] कम्युनिस्ट पार्टी ने रूस की सामाजिक, आर्थिक व राजनैतिक व्यवस्था को अपने हाथ में पूर्ण रूप से जकड़ रक्खा है। इस दल ने अपने सिद्धान्तों का प्रचार करके उन पर जो अटल दृढ़ता व विश्वास दिखलाया है उसके कारण रूस की अधिकांश जनता उसी पार्टी के गीत गाती है। रूसी साहित्य में उसी की छाप है और ज्ञान के सब विभागों में उसी की झलक है। स्टालिन के कट्टर आदर्शों ने सोवियट रूस की जनता के मस्तिष्क पर बहुत भारी प्रभाव डाला और वहाँ पर कम्युनिस्ट दल की तानाशाही के लिए रास्ता साफ कर दिया।[3] दल

---

1 Ogg and Zink : Modern Foreign Governments.

2 Inspite of the form of democracy which has been provided for in the constitution quite literally, there is not much of democracy in the country. Whatever democracy there is, it exists within the framework of the party dictatorship. The U. S. S. R. is a totalitarian state, and totalitarianism and democracy are incompatible and strange bed-fellows."

2 "The party has usually pursued an unremitting campaign to tighten its totalitarian grip in every facet of Soviet life. The primary purpose has been the ideological rearmament of the Soviet peoples and the prime virtues were the intellectuals, literature, drama, music, art and every branch of learning The bureaucratic model of Stalinism left no room for autonomy, except where, as in the limited freedom accorded to the orthodox church, it continued to serve state interests."

(*Merle Fainsod : op. cit., p. 116*)

की तानाशाही एक व्यक्ति की तानाशाही में परिवर्तित हो गई और दल का नेता एक तानाशाह बन गया। इस प्रकार एक दल की तानाशाही का अन्तिम रूप एक व्यक्ति की तानाशाही बन गया है जो न कोई विरोध सहन कर सकता है और न कोई मतभेद। (आधुनिक काल में रूसी नेताओं ने जनतन्त्रीय भावनाओं की ओर विशेष आदर दिखलाने का प्रयास करना प्रारम्भ कर दिया है। परन्तु उस दिशा में अधिक जाना कम्युनिस्ट दल की आशाओं व आदर्शों के प्रतिकूल होगा)

हम पहले कह चुके हैं कि रूस के संविधान की प्रशंसा व आलोचना विभिन्न दृष्टिकोणों द्वारा होती है। अँग्रेज तथा अमेरिकन जनतन्त्रवादियों के दृष्टिकोण से तो वहाँ तानाशाही ही है परन्तु एक निष्पक्ष व्यक्ति जो हृदयहीन नहीं है, जो बेकारी, भुखमरी तथा दीनता को नहीं देख सकता, जो भव्य भवन तथा टूटी झोंपड़ी साथ-साथ नहीं देख सकता है, जिसके लिये एक तरफ रुपये का अपव्यय तथा दूसरी तरफ उसकी कमी के कारण जर्जरता असह्य है, जो शोषण का ही शोषण करना चाहता है, उसके लिये यह तानाशाही नहीं है। तानाशाह हिटलर था, मुसोलिनी था। क्या हुआ उनका? चार दिन की चाँदनी थी! परन्तु रूस में ऐसा नहीं है, और यदि यह तानाशाही का ही प्रकार है तो यह ऐसा प्रकाश है जो आज के व्यथित मानव को सान्त्वना का सन्देश देता है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the salient features of the Constitution of U.S.S.R. Would it be correct to describe it as a Federation?
(*Agra, 1945, 1947, 1949*)
2. "The Constitution of U.S.S.R. is unique and makes a serious departure from other constitutions of the world." Discuss and elucidate. (*Agra, 1947*)
3. How far in your opinion is it correct to say that the Stalin Constitution of 1936 has established a democratic and parliamentary form of government in the U. S. S. R.?
(*Delhi, 1949, 1951, 1954; Punjab Suppl., 1953*)

तीसरा परिच्छेद

मौलिक अधिकार तथा कर्त्तव्य

विषय-प्रवेश :

किसी भी देश के शासन-विधान के अन्तर्गत नागरिकों के मूल अधिकारों और कर्त्तव्यों का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। उनके उल्लेख के साथ-साथ यह भी आवश्यक है कि उनकी रक्षा के हेतु पर्याप्त सांविधानिक व्यवस्था कर दी जाय; केवल उल्लेखमात्र से ही उनका महत्त्व कुछ अर्थ नहीं रखता। सोवियट रूस के संविधान ने नागरिकों को अधिकार केवल प्र॰ न ही नहीं किये गये हैं वरन् उनकी रक्षा के हेतु पूरी-पूरी गारण्टी भी प्रदान की है (हाँ इतना अवश्य है और यह होना भी चाहिए कि उन अधिकारों के बदले नागरिक अपने कर्त्तव्य-पालन द्वारा राज्य के प्रति सच्ची भक्ति प्रदर्शित करें)

सन् १९३६ में जब नया विधान बन तैयार हुआ उस समय स्टालिन ने कहा था कि "इस नये विधान की प्रमुख विशेषता यह है कि यह नागरिक के मौलिक अधिकारों का केवल उल्लेख ही नहीं करता है वरन् इस बात पर भी जोर देता है कि उन अधिकारों का किस प्रकार प्रयोग किया जा सकता है। यह केवल नागरिकों को समानता ही प्रदान नहीं करता है वरन् उन्हें इस बात का विश्वास भी दिलाता है कि वे सब प्रकार के शोषण से मुक्त हो गये हैं। यह केवल नागरिकों को काम करने का अधिकार ही नहीं देता वरन् इस बात का नियम भी बनाता है कि प्रत्येक व्यक्ति को कार्य दिया जाय और इस प्रकार बेकारी को बिल्कुल समाप्त करता है। यह केवल जनतन्त्रीय स्वतन्त्रता का नारा ही नहीं लगाता अपितु उसकी वैधानिक रक्षा के हेतु उपयुक्त साधन भी बतलाता है।"

उपर्युक्त कथन के आधार का विश्लेषण करके यदि हम सोवियट रूस में वास्तविक परिस्थिति का अध्ययन करें तो प्रतीत होगा कि स्टालिन का दावा अक्षरशः सत्य है। आज रूस में वास्तव में शोषण नहीं है और वहाँ बेकारी की समस्या नहीं है। संसार के किसी भी अन्य देश को इस क्षेत्र में अभिमान करने का हक नहीं है (ग्रेट ब्रिटेन की हालत को तो छोड़िये क्योंकि वहाँ की स्थिति तो अधिक विकट है। संयुक्त राज्य अमेरिका जो संसार का अत्यन्त समृद्धशाली राज्य है, उसमें भी बेकारी का भूत उपस्थित है। सन् १९४६ में द्वितीय महायुद्ध के पश्चात्

वहाँ पर करीब ५० लाख व्यक्ति बेकार थे। आजकल संख्या और भी अधिक बढ़ गई है।) परन्तु रूस में यह समस्या बिल्कुल नहीं है।

मौलिक अधिकार :

(१) सोवियट रूस में यह बात स्पष्ट रूप से मान ली गई है कि प्रत्येक नागरिक को काम करने का अधिकार है और राज्य का यह कर्त्तव्य है कि वह प्रत्येक नागरिक को काम दे, यदि उसे स्वयं कोई काम नहीं मिला है। रूस ने उत्पादन के साधनों का समाजीकरण करके, नये-नये कल-कारखाने खोल कर तथा अन्य नवीन योजनाएँ कार्यान्वित करके इस अधिकार को वास्तव में अपने नागरिकों को दिया है। यही नहीं, वहाँ पर शोषक-वर्ग का खात्मा होने से श्रमिकों के परिश्रम से पैदा किया हुआ धन भी श्रमिकों का ही हो जाता है। प्रत्येक व्यक्ति को अपने कार्य के अनुसार वेतन दिया जाता है और उसे वह अपनी इच्छानुसार चाहे जिस प्रकार व्यय करता है तथा चाहे जितना संचित कर सकता है।

(२) सोवियट सरकार ने यह भी मान लिया है कि कार्य करने के साथ-साथ श्रमिकों का यह भी अधिकार है कि उन्हें आराम व अवकाश दिया जाय। इसके फलस्वरूप श्रमिकों को ७ घण्टे या अधिक से अधिक ८ घण्टे से ज्यादा काम नहीं करना पड़ता। बच्चे तथा मानसिक कार्य करने वाले व्यक्तियों को केवल ६ घण्टे कार्य करना पड़ता है। सप्ताह में एक अवकाश भी मिलता है तथा अन्य सामयिक छुट्टियाँ भी होती रहती हैं। रूस में जितनी सामयिक छुट्टियाँ होती हैं उतनी शायद संसार के अन्य किसी देश में नहीं होतीं। श्रमिकों के मनोरंजनार्थ पार्क, बगीचे, खेल-कूद के मैदान भी पर्याप्त संख्या में हैं और पुस्तकालय, वाचनालय आदि भी काफी हैं। पूँजीवादी देशों में निम्न स्तर के मजदूरों का जीवन नारकीय जीवन है। परन्तु रूस में ऐसा नहीं है।

(३) काम करने तथा आराम व अवकाश का अधिकार देने के साथ-साथ रूस में श्रमिकों को वृद्धावस्था के समय पेन्शन वगैरह लेने का अधिकार भी दिया गया है। साथ ही साथ बीमारी अथवा किसी दुर्घटनावश मृत्यु हो जाने पर या अंग-भंग हो जाने पर श्रमिकों के परिवार के पालन के लिए भी व्यवस्था है। श्रमिकों का इलाज मुफ्त होता है और उनके स्वास्थ्य-लाभ के हेतु अनेक विश्रामघर भी बने हुए हैं।

(४) **शिक्षा प्राप्त करने का अधिकार**—रूस में प्रत्येक व्यक्ति को अपनी योग्यता प्रदर्शित करने का अधिकार दिया गया है। वहाँ केवल यही नहीं माना गया है कि शिक्षा प्राप्त करने का प्रत्येक नागरिक का अधिकार है, अपितु यह भी व्यवस्था है कि प्रत्येक व्यक्ति को अपनी शक्तियों को विकसित करने का पूर्ण अवसर प्रदान

किया जाय। यह बीमारी भी पूंजीवादी देशों में ही अधिक मिलती है जहाँ बहुत-से होनहार बच्चे व युवक अवसर न मिलने के कारण अपनी प्रकृति-प्रदत्त शक्तियों का प्रयोग नहीं कर पाते हैं। रूस में प्रारम्भिक शिक्षा निःशुल्क तथा अनिवार्य है। उच्च शिक्षा प्राप्त करने वाले विद्यार्थियों को राज्य की ओर से वजीफे वगैरह दिए जाते हैं। फैक्टरियों में काम करने वालों को व्यवसाय सम्बन्धी तथा टेकनीकल शिक्षा मुफ्त प्रदान की जाती है।

(५) **स्त्री तथा पुरुषों को समान अधिकार**—रूस में स्त्रियों को भी वे सब अधिकार प्राप्त हैं जो पुरुषों को हैं। उन्हें केवल मताधिकार ही नहीं है वरन् वे समस्त प्रशासकीय भागों में कार्य कर सकती हैं और पुरुषों के साथ बराबरी का कार्य करती हैं।

(६) **समानता का सिद्धान्त**—रूसी समाजवाद समानता में पूर्ण विश्वास रखता है। वहाँ मालिक व नौकर, बड़ा तथा छोटा, आदि का कोई विचार नहीं है। सब नागरिकों को बिना किसी जाति, वर्ण व धर्म भेद-भाव के समान अधिकार प्राप्त हैं। विभिन्नता होने पर भी सब एक हैं। जीवन, संस्कृति, धर्म, जाति तथा वर्ण-भेद होते हुए भी आज रूस में सामाजिक, आर्थिक तथा राजनैतिक दृष्टि से सब बराबर हैं तथा एक हैं।

(७) सन् १९३६ का विधान नागरिकों को अधिकार प्रदान करने के साथ-साथ कुछ **मौलिक स्वतन्त्रता** भी प्रदान करता है। वे निम्नलिखित हैं :—

(अ) भाषण देने की स्वतन्त्रता।
(ब) प्रेस की स्वतन्त्रता।
(स) सभा वगैरह करने की स्वतन्त्रता।
(द) धार्मिक स्वतन्त्रता।

(८) विधान द्वारा श्रमिकों को **मजदूर संघ वगैरह बनाने की स्वतन्त्रता** दे दी गई है। वे सांस्कृतिक, वैज्ञानिक तथा राजनैतिक संघ भी बना सकते हैं।

(९) विधान द्वारा यह भी निश्चित कर दिया गया है कि किसी नागरिक के **शरीर व गृह के ऊपर किसी प्रकार का आघात न किया जाय।**

अधिकारों के साथ कर्त्तव्य भी बँधे हुए हैं। कोई भी राज्य अधिकार देकर ही नहीं चल सकता यदि उसके नागरिक उसके प्रति अधिकारों के बदले कर्त्तव्य का पालन न करें। रूस में प्रत्येक नागरिक के निम्नलिखित कर्त्तव्य हैं :—

(१) प्रत्येक नागरिक का यह कर्त्तव्य है कि वह विधान के प्रति वफादारी का परिचय दे और उसके द्वारा निर्दिष्ट आज्ञाओं का पालन करे। कानूनों की अवहेलना करना सोवियट व्यवस्था से दुश्मनी मोल लेना है।

(२) प्रत्येक नागरिक का यह भी कर्त्तव्य है कि वह संघ की सार्वजनिक सम्पत्ति की रक्षा करे और उसकी जड़ को मजबूत बनाए। फैक्टरी, मिल, जमीन, रेल, जहाज, वायुयान, अस्पताल, विश्रामालय, स्कूल, कॉलेज आदि सब जनता की धरोहर हैं। प्रत्येक रूसी का यह कर्त्तव्य है कि वह इनका सदुपयोग करे और इसके प्रयोग के समय इनकी कोई वस्तु खराब न करे।

(३) प्रत्येक व्यक्ति को श्रम-अनुशासन (labour discipline) को मानना होगा। रूस-निवासियों के दिल में यह बात भर दी जाती है कि हरामखोरी करना, वक्त का दुरुपयोग करना व दिल लगा कर काम न करना भयंकर अपराध हैं। रूस के लिये यह गौरव की बात है कि जितना अनुशासन वहाँ श्रम दल में है उतना अन्यत्र नहीं है। श्रम करना वहाँ व्यक्तिगत लाभ के लिए ही नहीं माना जाता है वरन् यह एक सामाजिक कर्त्तव्य समझा जाता है जिसे सब व्यक्तियों को करना है।

(४) प्रत्येक रूसी का यह कर्त्तव्य है कि वह आवश्यकता पड़ने पर सेना में प्रविष्ट होकर देश की रक्षा करे। विधान में यह स्पष्ट है कि देश-द्रोह सबसे बड़ा पाप है। ३ जुलाई सन् १९४१ को स्टालिन ने कहा था कि केवल लाल सेना के सैनिकों को ही नहीं वरन् सोवियट भूमि के प्रत्येक नागरिक को अपने खून की बूँदों से सोवियट की एक-एक इंच भूमि की रक्षा करनी है।[1]

(५) प्रत्येक रूसी का यह भी कर्त्तव्य है कि वह कुछ न कुछ काम अवश्य करे। उसे यह सिद्धान्त अपनाना है कि "जो काम नहीं करता वह खाने का भी हक नहीं रखता" (He who does not work will not eat)। काम करना ही धर्म है। रूस किसी धर्म को महत्त्व नहीं देता। काम व्यक्तिगत तथा सार्वजनिक हित के लिए आवश्यक है।

(६) सामाजिक जीवन को सुचारु रूप से चलाने के लिए प्रत्येक समाज की अलग-अलग नियमावली होती है। रूस का सामाजिक जीवन समानता को प्रमुख स्थान देता है और संसार में बन्धुत्व की भावना का प्रचार करता है। रूसी समाज में ऊंच-नीच, छोटा-बड़ा, मालिक-मजदूर आदि का कोई प्रश्न नहीं है। इतना सुडौल समाज अन्यत्र नहीं दीख पड़ता। प्रत्येक रूसी नागरिक का कर्त्तव्य है कि वह ऐसे समाज की उन्नति में योग दे और उसके नियमों का पालन करे।

कभी-कभी यह कहा जाता है कि रूस में मौलिक अधिकार और स्वतन्त्रताएँ सीमित हैं और वे किसान तथा मजदूरों के दृष्टिकोण को रखते हुए ही हैं। परन्तु सन् १९३६ के विधान से यह स्पष्ट है कि वहाँ वास्तव में व्यक्ति को अपनी अधिकार-

[1] "The defence of fatherland is the supreme law......for its honour, glory, might, and prosperity"—*Pravada, June, 1934, p. 1.*

शक्ति को प्रयोग में लाने का अवसर प्राप्त है और वह दरअसल प्राचीन बन्धनों से छुटकारा प्राप्त कर चुका है।[1]

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Mention the Fundamental rights and duties of citizens as embodied in the Constitution of U. S. S. R. (*Agra, 1948*)

1 "There is a certain genuine tendency towards emancipation of the individual from the prison-like collections and cadres in which he was formerly ceased."

चौथा परिच्छेद

सोवियट शासन का ढाँचा और संगठन

सन् १९२३ के शासन-विधान में कुछ कमजोरियाँ थीं और उनका कारण यह था कि वह विधान 'भूल और सुधार' के सिद्धान्त पर नहीं बना था बल्कि सोवियट व्यवस्था की दृढ़ता के लिए जल्दबाजी में बना लिया गया था। १४–१५ साल के अनुभव के बाद रूसियों ने उन कमजोरियों को दूर करने के लिये तथा सोवियट व्यवस्था को अधिक मजबूत बनाने हेतु विधान को पुन: बनाया। सन् १९३५ में एक समिति का निर्माण हुआ जिसका सभापति स्टालिन था, और उस समिति ने एक वर्ष के परिश्रम के बाद सन् १९३६ में नया विधान बनाकर तैयार किया। कार्यकारिणी द्वारा स्वीकृति पाने पर तथा जनता द्वारा मान्यता प्राप्त करने के उपरान्त सन् १९३७ में उसे लागू किया गया। इस विधान की विशेषताओं का वर्णन पिछले पृष्ठों में किया जा चुका है।

संघ सरकार की शक्तियाँ :

नवीन विधान के अनुसार केन्द्रीय सरकार को निम्नलिखित शक्तियाँ प्रदान की गई हैं—

(१) अन्तर्राष्ट्रीय मामलों में, युद्ध व सन्धि वार्ता में, अन्तर्राष्ट्रीय समझौतों में संघ का प्रतिनिधित्व ग्रहण करना तथा अपने अधिराज्यों और विदेशी राज्यों के बीच सम्बन्ध स्थापित करने की सामान्य नीति को निर्धारित करना।

(२) अपने अधिराज्यों के आपसी झगड़ों को तय करना।

(३) संघीय सेना का संचालन करना तथा अधिराज्यों के सैनिक-संगठन सम्बन्धी नियम बनाना।

(४) व्यापार तथा वाणिज्य सम्बन्धी सामान्य नीति निर्धारित करना।

(५) राज्यों की सीमा निश्चित करना।

(६) मुद्रा, यातायात के साधन, डाक, तार आदि का प्रबन्ध करना।

(७) शिक्षा व सार्वजनिक स्वास्थ्य सम्बन्धी सामान्य नीति निश्चित करना।

(८) अधिराज्यों में नये स्वाधीन प्रदेशों व प्रान्तों के निर्माण की अनुमति देना।

(९) न्याय-व्यवस्था सम्बन्धी कानून बनाना।

(१०) जंगल, खानें, जमीन आदि सम्बन्धी मूल सिद्धान्त निश्चित करना।

(११) संघीय बजट बनाना व उद्योग, कृषि, बैंक आदि सम्बन्धी योजनाएँ बनाना।

(१२) ऋण लेना व देना।
(१३) राजकीय बीमा का प्रबन्ध करना।
(१४) नागरिकता तथा विदेशियों सम्बन्धी कानून बनाना।
(१५) श्रम (labour) सम्बन्धी मूल सिद्धान्तों का निर्माण करना।

इस विधान के अनुसार केन्द्रीय सरकार की शक्तियों की इस प्रकार व्याख्या की गई है कि उसके द्वारा केन्द्रीय सरकार बहुत शक्तिशाली बन जाता है और इस प्रकार संघीय व्यवस्था का आदर्श समाप्त हो जाता है।[1] सोवियट रूस की सर्व शक्तिमान संस्था वहां की सुप्रीम सोवियट स्वीकार कर ली गई है। इसके दो सदन हैं—प्रथम, संघ की सोवियट (Soviet of the Union) जिसके प्रतिनिधि प्रति ३००,००० जनसंख्या के लिए एक प्रतिनिधि के आधार पर प्रत्यक्ष रूप में निर्वाचित किए जाते हैं, और द्वितीय, राष्ट्रों की सोवियट (Soviet of the Nationalities) जिसके निर्वाचन का आधार भी प्रत्यक्ष ही है और जिसमें प्रत्येक संघीय गणतन्त्र से २५ प्रतिनिधि (deputies), प्रत्येक स्वायत्तशासन प्रदत्त अधिराज्य से ११ प्रतिनिधि, प्रत्येक स्वायत्तशासन प्रदत्त प्रदेश से ५ प्रतिनिधि तथा प्रत्येक राष्ट्रीय क्षेत्र (National area) से १ प्रतिनिधि शामिल होते हैं।

इस नवीन शासन-विधान के अनुसार संघ में सम्मिलित राज्यों को अपने क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता है। उपरोक्त शक्तियों को छोड़कर शेष सब शक्तियां अधिराज्यों को प्राप्त हैं; परन्तु जैसा कि पहले कहा जा चुका है, प्रत्येक अधिराज्य की स्वतन्त्रता कागज तक ही सीमित है। बिना केन्द्रीय सरकार का रुख देखे वे अपनी स्वतन्त्रता का उपयोग पूर्ण रूप से नहीं कर सकते और अधिराज्य को ही झुकना पड़ता है। साथ ही साथ प्रत्येक अधिराज्य को संघ से पृथक् होने की भी स्वतन्त्रता है परन्तु वास्तव में इस स्वतन्त्रता का प्रयोग होना अत्यन्त कठिन है।

अमेरिका तथा सोवियट रूस में सङ्घीय शक्ति के विभाजन की तुलना :

(१) संयुक्त राज्य अमेरिका की भांति सोवियट रूस में भी केन्द्रीय सरकार की शक्ति के अन्तर्गत विषयों को निश्चित कर दिया गया है। ध्यानपूर्वक अध्ययन करने पर विदित होगा कि उपर्युक्त विषय दोनों ही देशों में राष्ट्रीय महत्त्व के हैं। इन विषयों के अलावा शेष समस्त विषय दोनों ही देशों में विघटित राज्यों के लिए छोड़ दिए गए हैं। परन्तु एक बात में दोनों देशों में हम बहुत अन्तर पाते हैं। रूस में सङ्घ की शक्ति के अन्तर्गत इतने विषय हैं कि गणराज्यों के पास कोई महत्त्वपूर्ण विषय रह ही नहीं जाते हैं। एक बात और भी है और वह यह है कि

1 Cf. Merle Fainsod : op. it. : Chap. *Constitutional Myths and Political Realities*, p. 315.

जो विषय गणराज्यों के लिए छोड़ दिए गये हैं उनमें भी बहुतों के सम्बन्ध में सामान्य नीति को निर्धारित करना केन्द्र का ही कार्य समझा गया है। बहुत से विषय जैसे—शिक्षा, सार्वजनिक स्वास्थ्य, भूमि का प्रयोग, जंगलों का प्रयोग आदि सब विषयों के बारे में अन्तिम अधिकार केन्द्रीय सरकार का ही है। अमेरिका में केन्द्रीय सरकार के पास इतनी शक्ति नहीं है।

(२) सोवियट संघ की एक विशेषता यह भी है कि उसने अपने अधिराज्यों को सङ्घ से पृथक् होने की भी स्वतन्त्रता प्रदान की है। अमेरिका में यह बात नहीं है।

(३) सोवियट सरकार ने अभी हाल में ही कुछ अधिराज्यों को अन्तर्राष्ट्रीय महत्व का मान लिया है। उन्हें दूसरे विदेशी राज्यों से सम्बन्ध स्थापित करने की पूर्ण स्वतन्त्रता है तथा संयुक्त राष्ट्र सङ्घ में अपने प्रतिनिधि भेजने का भी अधिकार है।

(४) सङ्घ के अन्तर्गत राज्य अपनी सेना रख सकते हैं और उनका सङ्गठन अपनी नीति के अनुसार कर सकते हैं परन्तु सैन्य-संगठन व संचालन के सामान्य नियम जो संघ सरकार ने निर्धारित किये हैं उन्हें मानने पड़ते हैं।

(५) अमेरिका में संघ के अन्तर्गत राज्यों को वास्तविक शक्ति प्राप्त है परन्तु सोवियट रूस में नहीं है। यदि निष्पक्ष भाव से देखा जाय तो वहाँ पर संघीय शासन नाममात्र को ही है।[1] वास्तव में सांस्कृतिक स्वतन्त्रता के अलावा अधिराज्यों के पास कोई स्वतन्त्रता नहीं है।[2]

संघ सरकार का ढाँचा :

सन् १९३६ के नवीन शासन-विधान के अनुसार सोवियट रूस में सन् १९२३ से प्रचलित अखिल रूसी सोवियट काँग्रेस तथा केन्द्रीय एक्जीक्यूटिव कमेटी के स्थान पर एक सुप्रीम सोवियट या कौंसिल (Supreme Soviet) की व्यवस्था की गई है। यह राज्य की सर्वोच्च शक्ति है और सबसे बड़ी संस्था है। सोवियट रूस में भी अन्य बड़े देशों के समान द्वि-सभात्मक सिद्धान्त को स्वीकार कर लिया गया है। फलतः सुप्रीम कौंसिल के दो भाग हैं—(१) कौंसिल ऑफ दी यूनियन (Council of the Union), और (२) कौंसिल ऑफ दी नेशनलटीज़ (Council of the Nationalities)। दोनों के सदस्य प्रत्यक्ष निर्वाचन प्रणाली द्वारा निर्वाचित

1 "Inspite of the forms of Federalism centralisation of authority in the U.S.S.R. is possibly equalled but hardly exceeded anywhere else in the world. In the point of fact, the system is not federal in any ultimate sense at all."—*Ogg.*

2 "The republics in actual effect enjoy nothing more than cultural autonomy."—*Amar Chand.*

होते हैं। निर्वाचित सदस्यों की संख्या घटती-बढ़ती रहती है। (सन् १६४६ के चुनाव में कौंसिल ऑफ दी यूनियन में ३५७ सदस्य निर्वाचित हुए और कौंसिल ऑफ दी नेशनलटीज़ में ६८२) कौंसिल ऑफ दी यूनियन में सङ्घ के नागरिकों के प्रतिनिधि होते हैं जैसे कि संयुक्त राज्य अमेरिका में प्रतिनिधि-आगार (House of Representatives) में होते हैं। कौंसिल ऑफ दी नेशनलटीज में सङ्घ के अधिराज्यों, स्वायत्त-शासन प्राप्त प्रदेशों तथा गणतन्त्रों के प्रतिनिधि आते हैं। इसकी तुलना हम अमेरिका की सीनेट से कर सकते हैं यद्यपि दोनों देशों की निर्वाचन-प्रणाली तथा प्रतिनिधियों की संख्या में अन्तर है।

अमेरिका में सीनेट में प्रत्येक राज्य से बराबर-बराबर (दो-दो) प्रतिनिधि आते है परन्तु रूस में ऐसा नहीं है। यहाँ संख्या बराबर नहीं है। वहाँ पर प्रत्येक संघ-प्रजातन्त्र (Republic) को २५, प्रत्येक स्वाधीन राज्य (Autonomous Republic) को ११, तथा प्रत्येक स्वाधीन जिले (Autonomous Region) को ५ सीटें कौंसिल ऑफ दी नेशनलटीज़ में मिली हैं। दोनों सदनों में एक-एक अध्यक्ष तथा दो-दो उपाध्यक्ष होते हैं।

सोवियट रूस की सुप्रीम कौंसिल की आयु ४ साल है हालाँकि दोनों आगारों में अधिक मतभेद हो जाने पर बीच में भी वह प्रेसीडियम के द्वारा भंग की जा सकती है। कौंसिल की बैठक साल में दो बार होती है परन्तु प्रेसीडियम आवश्यकता पड़ने पर विशेष अधिवेशन भी करा सकती है।

(सुप्रीम सोवियट में विभिन्न हितों के सदस्यों की संख्या का प्रतिशत इस प्रकार है—(१) १६ प्रतिशत किसान, (२) ३८ प्रतिशत काम करने वाले मजदूर, तथा (३) ३६ प्रतिशत कार्यालयों में तथा मानसिक कार्य करने वाले लोग।)

रूस में एक विचित्रता यह है कि वहाँ पर कौंसिल में स्त्रियों की संख्या बहुत है। सन् १६४६ में २७७ स्त्रियाँ चुनी गई थीं। इसकी विशेषता यह है कि वहाँ अधिकतर युवावस्था के लोग चुने जाते हैं। दूसरे देशों के आँकड़ों के साथ तुलना करने पर प्रतीत होता है कि रूस में सदस्यों की आयु २५ और ५० के बीच में होती है, जबकि अमेरिका में ज्यादातर ५० से ऊपर बल्कि ६० से भी ऊपर की आयु वाले सदस्य होते हैं। शिक्षा-योग्यता की दृष्टि से भी रूस में कौंसिल के सदस्य (जिन्हें डिप्टी कहते हैं) अमेरिका के सदस्यों की अपेक्षा कम शिक्षित पाए जायेंगे। इन बातों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि रूस में सुप्रीम कौंसिल योग्यता तथा अनुभव में अमेरिका की कांग्रेस का मुकाबला नहीं कर सकती।

जब हम दलीय आधार पर आते हैं तो विदित होता है कि रूस में अधिकतर एक ही पार्टी (कम्युनिस्ट पार्टी) के सदस्य चुने जाते हैं (१० फरवरी सन् १६४६ के चुनावों में ८१ प्रतिशत डिप्टी कम्युनिस्ट दल में से चुने गए) यह स्पष्ट है कि कौंसिल

का सदस्य बनने की आकांक्षा करने वाले को कम्युनिस्ट पार्टी की बहुत दिनों तक सेवा करनी पड़ती है।

सुप्रीम कौंसिल की शक्ति और अधिकार :

(१) सुप्रीम कौंसिल सोवियट रूस की सबसे बड़ी विधि-निर्मात्री संस्था है। जब दोनों आगार बहुमत से किसी विधेयक को स्वीकार कर लेते हैं तब वह कानून बन जाता है और सुप्रीम कौंसिल की बनाई हुई प्रेसीडियम के अध्यक्ष के हस्ताक्षर के बाद देश की विभिन्न भाषाओं में छपकर प्रकाशित कर दिया जाता है। दोनों आगारों में किसी विधेयक पर मतभेद होने पर दलीय आधार पर संगठित एक कमीशन उसकी जाँच करता है और यदि कमीशन भी मतभेद नहीं सुलझा पाता तो वह विधेयक पुनः विचार के हेतु कौंसिल में भेजा जाता है। यदि फिर भी मतभेद हल नहीं होता तो कौंसिल का विलयन करके पुनः निर्वाचन होता है।

(२) सुप्रीम कौंसिल को ही नवीन जनतन्त्रीय देशों को संघ में मिलाने तथा संघ के अन्तर्गत राज्यों की सीमाएं निश्चित करने व उनमें परिवर्तन करने का तथा नवीन स्वाधीन जिले बनाने का अधिकार है।

(३) सुप्रीम कौंसिल ही विधान में संशोधन कर सकती है।

(४) सुप्रीम कौंसिल ही देश के गम्भीर विषयों, जैसे युद्ध व शान्ति, बजट तथा ऋण, अन्तर्राष्ट्रीय समझौते आदि पर अन्तिम निर्णय देने वाली सर्वोच्च संस्था है।

(५) कौंसिल के प्रत्येक आगार में तीन स्थायी समितियाँ होती हैं जिनका स्थान अत्यन्त महत्त्वपूर्ण है, और इसका कारण यह है कि कौंसिल का अधिवेशन तो साल में सिर्फ दो ही बार होता है और अधिक से अधिक दस दिन तक रहता है। इसलिए कौंसिल का अधिकतर कार्य समितियों द्वारा ही होता है। समितियों की बैठकें कौंसिल की बैठकों तक ही सीमित नहीं रहती हैं वरन् वे उनके मध्य में भी कार्य करती रहती हैं। प्रत्येक सदन में इन तीन समितियों के अलावा दिन प्रति दिन की जाँच-पड़ताल, मामूली कागजातों की देखभाल, आदि सम्बन्धी कार्य करने के लिये और भी समितियाँ होती हैं परन्तु महत्त्वपूर्ण विषय जैसे बजट, अन्तर्राष्ट्रीय समस्याएँ, विधेयकों आदि पर विचार उन्हीं तीन समितियों के अन्तर्गत आते हैं। वैसे तो प्रायः समितियाँ भी मन्त्रि-परिषद् (Council of Ministers) द्वारा प्रस्तुत विधेयकों पर विचार-मात्र ही करती हैं लेकिन कभी-कभी वे उनमें संशोधन भी कर सकती हैं।

(६) बजट के विषय में सुप्रीम कौंसिल की समिति काफी छानबीन करती है। बजट समितियाँ अर्थमन्त्री द्वारा प्रस्तावित बजट को बिना छानबीन किए ही स्वीकार नहीं कर लेती है।

(७) उपर्युक्त कार्यों के अलावा सुप्रीम कौंसिल को प्रेसीडियम के सदस्यों को भी

नियुक्त करने का अधिकार है। ये सदस्य दोनों आगारों की सम्मिलित बैठक में नियुक्त किए जाते हैं।

(८) सुप्रीम कौंसिल को जाँच-पड़ताल तथा ऑडिट (audit) सम्बन्धी कमीशन नियुक्त करने का भी अधिकार है।

सुप्रीम सोवियट के प्रत्येक सदस्य को कौंसिल में आते समय अपने प्रदेश की, जहाँ से वह चुना गया है, पूरी रिपोर्ट देने का हक है। उसे मास्को से वापिस जाने पर अपने यहाँ की सोवियट कौंसिल के कार्यों की भी रिपोर्ट देनी पड़ती है। यदि वह ऐसा नहीं करता तो उसे अपनी सदस्यता से त्यागपत्र देना पड़ता है। यह बात रूस में ही है और अपनी एक अलग विशेषता रखती है।

सुप्रीम कौंसिल का वास्तविक कार्य :

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, सुप्रीम कौंसिल की बैठक साल में दो बार होती है और अधिक से अधिक दस दिन तक रहती है। अतः यह स्पष्ट है कि सुप्रीम कौंसिल किसी विषय पर गम्भीरतापूर्वक छानबीन नहीं करती है। वास्तव में वह तो एक विचारार्थ निकाय है और गम्भीर विषय पर ही विचार करती है। परन्तु वह अपनी शक्ति का पूर्ण प्रयोग करती है। उसके सदस्य विभिन्न स्थानों से आकर मन्त्रियों को वहाँ की वास्तविक स्थिति से पूर्ण परिचित कराते हैं और अपना-अपना दृष्टिकोण उनके सामने रख कर विधि-निर्माण में काफी सहायता पहुँचाते हैं।

प्रेसीडियम (Presidium) :

रूस में प्रेसीडियम एक विशेष रोचक संस्था है और इसके समान कोई संस्था इङ्गलैण्ड, अमेरिका, स्विट्जरलैण्ड व अन्य देशों में नहीं है। प्रेसीडियम के सदस्यों की नियुक्ति सुप्रीम कौंसिल के दोनों आगारों द्वारा सम्मिलित बैठक में होती है। इसके समस्त सदस्य डिप्टियों में से चुने जाते हैं। प्रेसीडियम में एक अध्यक्ष (जो कभी-कभी सोवियट संघ का प्रेसीडेण्ट भी कहा जाता है), प्रत्येक संघीय राज्य से एक-एक उपाध्यक्ष (इस प्रकार कुल १६ उपाध्यक्ष), एक सेक्रेटरी, तथा २४ अन्य सदस्य होते हैं। ये सब के सब सुप्रीम कौंसिल के द्वारा चुने जाते हैं और उसी के प्रति उत्तरदायी होते हैं।

प्रेसीडियम की शक्ति तथा कार्य :

शासन-विधान के ४८ वें और ४९ वें अनुच्छेदों में प्रेसीडियम के कार्यों व उसकी शक्तियों का निम्न प्रकार वर्णन है :—

(१) सुप्रीम कौंसिल के अधिवेशनों को आमन्त्रित करना।

(२) यदि कौंसिल के दोनों आगारों में ऐसा मतभेद हो जाये कि वह किसी प्रकार दूर न हो तो अनुच्छेद ४७ के अनुसार कौंसिल को भंग करना तथा चुनाव कराना और नवीन निर्वाचन की तिथि निश्चित करना।

(३) जनता अथवा अपनी इच्छा के अनुसार किसी विषय विशेष अथवा गणतन्त्रों की माँगों पर जनमत संग्रह करना।

(४) संघ अथवा किसी राज्य की पीपुल्स ऑफ कमीसर्स (Peoples of Commissars) द्वारा पारित अवैधानिक नियमों व आदेशों को रद्द करना।

(५) संघ के कानूनों तथा नियमों की व्याख्या करना व उनके उद्देश्य बताना।

(६) सुप्रीम कौंसिल की बैठकों के अन्तरिम समय में संघीय मन्त्रिमण्डल (पीपुल्स ऑफ कमीसर्स) के अध्यक्ष की सिफारिश पर मन्त्रियों (कमीसर) को नियुक्त करना तथा पदच्युत करना।

(७) संघ की ओर से उपाधियाँ, पदक तथा राज्य-चिन्ह प्रदान करना।

(८) संघ के उच्च पदाधिकारियों को नियुक्त करना तथा पदच्युत करना।

(९) क्षमादान देना।

(१०) अन्तर्राष्ट्रीय सन्धियों का पुष्टीकरण करना।

(११) सुप्रीम कौंसिल की बैठकों के अन्तरिम काल में संघ पर आक्रमण होने पर युद्ध-स्थिति की घोषणा करना तथा आवश्यकता पड़ने पर सुरक्षा की व्यवस्था करना और अन्तर्राष्ट्रीय सन्धि के अनुसार प्रतिज्ञाओं को पूरा करना।

(१२) विदेशी राजदूतों को नियुक्त करना व बुलाना तथा अन्य देशों के राजदूतों के प्रमाण-पत्र लेना व उनका स्वागत करना।

(१३) शान्ति भंग होने का भय होने पर अथवा संघ तथा गणराज्यों में अन्य किसी कारण से आवश्यकता होने पर फौजी कानून घोषित करना।

(१४) पूर्ण अथवा आंशिक रूप में नागरिकों को सैनिक सेवा के हेतु बाध्य करना।

(१५) वैदेशिक मामलों में कौंसिल का प्रतिनिधित्व ग्रहण करना।

उपर्युक्त बातों से यह स्पष्ट हो जाता है कि रूस में वास्तव में सत्ता एक व्यक्ति के हाथ में नहीं है। सब से अधिक शक्ति प्रेसीडियम के हाथ में है और उसे वे सब शक्तियाँ प्राप्त हैं जो अन्य देशों में राज्य के अध्यक्ष व मन्त्रिमण्डल को मिली होती हैं। विधान में प्रेसीडियम को सोवियट जनता की राजसत्ता की एकमात्र धुरी कहा गया है।

प्रेसीडियम वास्तव में सुप्रीम कौंसिल की एक प्रकार की स्थायी समिति है और इसके सब कार्यों की स्वीकृति सुप्रीम कौंसिल ही देती है। वास्तव में कौंसिल का बहुत कुछ कार्य प्रेसीडियम ही करती है, कौंसिल तो केवल स्वीकृति प्रदान करती है।

कम्युनिस्ट दल के उन्नीसवें दलीय अधिवेशन (१९५२) में प्रेसीडियम को दल की सर्वोपरि संस्था स्वीकार कर लिया गया और पोलिटब्यूरो तथा आर्गब्यूरो को समाप्त

कर दिया गया। आरम्भ में प्रेसीडियम में २५ सदस्य और ११ आवर्तित सदस्य (alternates) होते थे परन्तु स्टालिन की मृत्यु के बाद दोनों प्रकार के सदस्यों की संख्या घटा कर क्रमशः १० और ४ कर दी गई जिससे प्रेसीडियम अधिक समृद्ध रूप धारण कर ले और अधिक सफलतापूर्वक कार्य कर सके।[1] एक सरकारी विज्ञप्ति में यह भी घोषित किया गया कि प्रेसीडियम में एक आन्तरिक ब्यूरो भी होगा जो प्रेसीडियम की नीति को संचालित करेगा। इस प्रकार यह स्पष्ट हो जाता है कि प्रेसीडियम का यह ब्यूरो ही वास्तव में सोवियट नीति का निर्देशक है और आज मार्शल बुलगानिन की अध्यक्षता में यह कम्युनिस्ट दल का नेता है। सिद्धान्त में इस ब्यूरो के सदस्य केन्द्रीय कमेटी द्वारा चुने जाते हैं परन्तु वास्तविकता यह है कि वे उसके अध्यक्ष के द्वारा उसमें सम्मिलित किए जाते हैं।

दल की नियमावली के अनुसार कम्युनिस्ट दल की सबसे बड़ी शक्ति दल की कांग्रेस है जिसका अधिवेशन प्रत्येक चार वर्ष में एक बार होना चाहिए। पुरानी नियमावली के अनुसार यह अवधि तीन वर्ष की थी परन्तु यह बड़े आश्चर्य की बात है कि कांग्रेस का अठारहवाँ अधिवेशन १९३९ में हुआ और तदुपरान्त उन्नीसवाँ १३ वर्ष बाद सन् १९५२ में हुआ। वास्तव में इस कांग्रेस की शक्ति कागज पर तो बहुत है, यथार्थ में कुछ नहीं है। जो कुछ भी इसमें तय होता है और जिन विषयों पर स्वीकृति दी जाती है उन सब पर दल के नेताओं के पहले से ही फैसले हो चुकते हैं और कांग्रेस की कार्यवाही तो औपचारिक रूप में ही उन फैसलों को मान्यता प्रदान करती है।[2]

परन्तु इसका यह तात्पर्य नहीं कि प्रेसीडियम पूर्णरूपेण सर्वेसर्वा है। बहुत से महत्त्वपूर्ण विषय तो कौंसिल में ही तय किये जाते हैं और प्रेसीडियम का काम केवल दिनचर्यात्मक (routine) रह जाता है।[3] परन्तु इस प्रकार का कार्य भी बहुत अधिक है।[4] इसका कार्य-क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है और इसकी शक्ति के अन्तर्गत व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्याय-विभाग सम्बन्धी अनेक कार्य हैं।

1 Cf. : Merle Fainsod : op. cit., p. 178.

2 "Essentially Congress has become a rally of party and state functionaries who assemble to applaud and ratify the policies proclaimed by the ruling group. It serves only as a convenient platform for outlining policies, for decisions already reached."
(*Cf. Madhu Kanwal : U. S. S. R. Constitution, p. 142*)

3 "Its job is rather more or less perfunctory, the involving routine matters and formalities incidental to carrying out policies already determined by *Politbureau.*"

4 "One ought not to lose sight of the amount of routine work involved in any govt...particularly in a police state, and which in the Soviet Union is handled to an important degree by the Presidium."—*J. Towster.*

प्रत्येक अधिराज्य, स्वाधीन जिले तथा जनतन्त्र में भी इसी प्रकार प्रत्येक की सुप्रीम कौंसिल द्वारा अपनी-अपनी प्रेसीडियम बनाई जाती है। उसका वहाँ पर वही स्थान है जो केन्द्र में केन्द्र की प्रेसीडियम का है परन्तु उसका कार्य-क्षेत्र इतना विस्तृत नहीं है, क्योंकि अधिराज्यों को अधिक शक्तियाँ ही प्राप्त नहीं हैं।

कौंसिल ऑफ कमीसर्स अथवा कौंसिल ऑफ मिनिस्टर्स (Council of Commissars or Council of Ministers) :

कौंसिल ऑफ कमीसर्स अथवा कौंसिल ऑफ मिनिस्टर्स (मन्त्रि-परिषद्) सोवियट रूस की सर्वोच्च कार्यकारिणी शक्ति है। हालाँकि प्रेसीडियम के पास व्यवस्थापिका, कार्यपालिका तथा न्याय-विभाग सम्बन्धी अनेक कार्य हैं परन्तु प्रशासन का वास्तविक कार्य मन्त्रि-परिषद् के हाथ में ही है। यह कौंसिल अपने समस्त कार्यों के लिए सुप्रीम कौंसिल के प्रति उत्तरदायी है और इसे सुप्रीम कौंसिल के सदस्य ही दोनों आगारों की सम्मिलित बैठक में निर्वाचित करते हैं। सुप्रीम कौंसिल की अनुपस्थिति में अर्थात् जब उसकी बैठक नहीं हो रही है, यह परिषद् अपने कार्यों के लिए प्रेसीडियम के प्रति उत्तरदायी है।

रूस के संविधान में तीन प्रकार के मन्त्रियों की व्यवस्था की गई है—संघीय, संघ-गणराज्यीय तथा अधिराज्यीय (All-Union, Union-Republic, and Republic)। सन् १९३६ के बाद से प्रथम दो प्रकार के मन्त्रियों की संख्याओं में वृद्धि होती रही है। यहीं पर यह बात विशेष ध्यान देने योग्य है कि अधिराज्यों में भी केन्द्र की तरह मन्त्रिमण्डल व सुप्रीम कौंसिलें हैं परन्तु वे अपने-अपने क्षेत्र में केन्द्रीय मन्त्रिमण्डल व संघ की सुप्रीम कौंसिल के क्रमशः मातहत हैं।

सन् १९३६ के बाद से संविधान में कुछ आंशिक संशोधन भी हुए हैं परन्तु मूल रूपरेखा में कोई परिवर्तन नहीं हुआ है। फरवरी सन् १९४४ के एक संशोधन का यहाँ पर विशेष संकेत कर देना आवश्यक है जिसके द्वारा संघ के अधिराज्यों को संघ के परामर्श से विदेशी राष्ट्रों से सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार दिया गया। इसी के कारण यूक्रेन तथा बेलोरशिया (Belorussia) को संयुक्त राष्ट्र संघ में सम्मिलित होने का अवसर मिला। १५ मार्च सन् १९४६ के एक संशोधन द्वारा कौंसिल ऑफ कमिसर्स का नाम कौंसिल ऑफ मिनिस्टर्स कर दिया गया।

मन्त्रि-परिषद् (Council of Ministers) **की बनावट** :

जैसा अभी बताया जा चुका है, मन्त्रि-परिषद् के सदस्य सुप्रीम कौंसिल के दोनों आगारों की सम्मिलित बैठक में चुने जाते हैं। इसके सदस्यों की संख्या प्रायः २० से कम नहीं होती और इसमें निम्नलिखित सदस्य रहते हैं :—

(१) सभापति ।
(२) उप-सभापति ।
(३) यू० एस० एस० आर० के कण्ट्रोल कमीशन का सभापति ।
(४) कृषि-कमेटी का सभापति ।
(५) उच्च शिक्षा एवं कलाओं की कमेटियों के सभापति ।
(६) सोवियट की स्टेट प्लानिङ्ग का सभापति ।
(७) अन्य पीपुल्स कमीसर जिनकी संख्या निश्चित नहीं है ।

इस परिषद् का बाह्य रूप केबिनेट के समान है और इसके अध्यक्ष की स्थिति बहुत कुछ इङ्गलैण्ड के प्रधान मन्त्री के समान है परन्तु केबिनेट और इसके कार्यों में बहुत कुछ अन्तर है ।

कौंसिल ऑफ कमीसर्स की शक्ति :

(१) सोवियट राज्य के अन्तर्गत अधिराज्यों तथा संघ की यूनियन के बीच आर्थिक व सांस्कृतिक कार्यों का सन्तुलन स्थापित करना तथा संघीय शासन-विभागों के पारस्परिक कार्य-क्षेत्र में समन्वय स्थापित करना ।

(२) विदेशी राज्यों से सम्बन्ध स्थापित करना ।

(३) देश में शान्ति स्थापित करना व नागरिकों के अधिकारों की रक्षा करना ।

(४) राष्ट्रीय योजनाओं को कार्यान्वित करना और देश की आर्थिक स्थिति को सुधारने के लिए नवीन योजनाएँ बनाना ।

(५) देश की सांस्कृतिक एवं रक्षा सम्बन्धी समस्याओं की रक्षा हेतु समितियाँ नियुक्त करना ।

(६) देश में सेना का संगठन करना व आवश्यकता पड़ने पर सेना बढ़ाना व उसकी उन्नति करना ।

(७) इन कार्यों के अलावा यह परिषद् गणतन्त्रों की परिषदों के आदेशों व आर्डीनेन्सों को भी रद्द कर सकती है ; यदि वे संघीय प्रशासन-नीति के प्रतिकूल हैं ।

इस परिषद् के सदस्य अपने कार्यों के लिए सुप्रीम कौंसिल के प्रति उत्तरदायी हैं और कौंसिल के आगारों में प्रश्न पूछे जाने पर तत्सम्बन्धी कमीसर को उसका जबाब भी देना पड़ता है । यह कार्यवाही करीब-करीब वैसी ही है जैसी इङ्गलैण्ड में केबिनेट और संसद के मध्य होती है । परन्तु रूस में संघीय शासन होने की वजह से उसकी परिषद् में केवल यूनियन के कमीसर ही नहीं रहते हैं वरन् संघ के अन्तर्गत विभिन्न अधिराज्यों की पीपुल्स ऑफ कमीसर्स के कमीसर भी होते हैं ।

परन्तु इङ्गलैण्ड की केबिनेट और रूस की कौंसिल ऑफ कमीसर्स में एक बहुत बड़ा अन्तर यह है कि रूस में कौंसिल के सदस्यों का सुप्रीम सोवियट के प्रति नाममात्र का उत्तरदायित्व है। दूसरे, उसके सदस्यों की सूची कम्युनिस्ट पार्टी की पोलिटब्यूरो द्वारा बनाई जाती है और सुप्रीम सोवियट केवल उसका उपोद्वलन (ratification) करती है और इसलिए कौंसिल ऑफ कमीसर्स की इतनी शक्ति नहीं है जितनी पोलिटब्यूरो की है।[1] इङ्गलैण्ड की केबिनेट के सम्बन्ध में यह बात नहीं कही जा सकती है। तीसरे, रूस ही एक ऐसा देश है जिसमें दो प्रकार के मन्त्री हैं—एक यूनियन के तथा दूसरे अधिराज्यों की पीपुल्स ऑफ कमीसर्स के।

आधुनिक प्रजातन्त्रात्मक राज्यों के मन्त्रिमण्डलों की भाँति रूस में भी मन्त्रियों की दो प्रकार की जिम्मेदारी है। एक तो वे प्रशासन की सामान्य नीति व उसकी कुशल कार्यवाही के लिये उत्तरदायी हैं तथा दूसरे वे व्यक्तिगत रूप में एक-एक विभाग के अध्यक्ष होने के नाते अपने-अपने विभागीय कार्यों के प्रति जिम्मेदार हैं। परन्तु इङ्गलैण्ड की केबिनेट की भाँति उन्हें किसी बात पर सुप्रीम सोवियट में हार जाने पर त्यागपत्र नहीं देना पड़ता है। इङ्गलैण्ड में तो प्रधान मन्त्री त्यागपत्र जेब में ही रखे फिरता है।

इतना ही नहीं यदि हम सोवियट रूस की कौंसिल ऑफ कमीसर्स की तुलना इङ्गलैण्ड अथवा फ्रान्स की केबिनेटों से करें तो हमें और भी अनेक अन्तर मिलेंगे। सबसे पहली बात तो यही है कि इङ्गलैण्ड और फ्रान्स में जहाँ पर राज्य के सर्वोच्च अधिकारी क्रमशः राजा तथा प्रेसीडेण्ट हैं, बहुमत दल के नेता को प्रधानमन्त्री नियुक्त किया जाता है और तब प्रधान मन्त्री अन्य मन्त्रियों को चुनता है। लेकिन रूस में यह बात नहीं है। वहाँ पर बहुमत दल का नेता प्रधान नहीं बनाया जाता और न वह अपने मन्त्रियों को चुनता है। सब मन्त्री सुप्रीम कौंसिल द्वारा ही सम्मिलित बैठक में चुने जाते हैं।

दूसरी बात यह है कि इङ्गलैण्ड में केबिनेट के सदस्यों की पार्लियामेण्ट के प्रति सच्ची जिम्मेदारी है और पार्लियामेण्ट में हार जाने पर केबिनेट को त्यागपत्र दे देना पड़ता है, परन्तु रूस में सुप्रीम कौंसिल के प्रति मन्त्रि-परिषद् की जिम्मेदारी केवल नाममात्र की है, उसकी असली जिम्मेदारी पोलिटब्यूरो के प्रति है जिसका उन्हें विश्वासपात्र बन कर रहना पड़ता है।

1 Probably it does little more than confirm the decisions already made by the communist party through the *Politbureau.* Certainly it is hardly the supreme executive authority in more than a formal sense; the *Politbureau* would leave it no room for such a job."

(*Ogg : Modern Foreign Governments*)

तीसरे, रूस में प्रधान मन्त्री नाम की कोई चीज़ नहीं है। कौंसिल ऑफ कमीसर्स का अध्यक्ष इतनी शक्ति नहीं रखता जितनी इङ्गलैण्ड का प्रधान मन्त्री। वह न तो परिषद् के सदस्य ही चुनता है और न किसी सदस्य से कोई मतभेद होने पर उसे त्याग-पत्र देने को ही विवश कर सकता है। इङ्गलैण्ड तथा फ्रान्स दोनों ही देशों में मन्त्री पालियामेण्ट के अतिरिक्त अन्य किसी बाह्य शक्ति के प्रति उत्तरदायी नहीं हैं, परन्तु रूस में सब के सब पोलिटब्यूरो के प्रति उत्तरदायी हैं जो कि कम्युनिस्ट पार्टी का अत्यन्त प्रभावशाली अंग है।

सोवियट रूस में एक अत्यन्त महत्त्वपूर्ण बात यह है कि वहाँ सिर्फ एक ही दल की सरकार है। इङ्गलैण्ड में तो कभी-कभी, परन्तु फ्रान्स में तो बहुधा, सरकार बदलती रहती है, क्योंकि वहाँ कई दल हैं। इङ्गलैण्ड में तो दो ही दल अधिक शक्तिशाली हैं जो अपना-अपना बहुमत होने पर केबिनेट बनाते हैं, परन्तु फ्रान्स में तो दलों की भरमार है। इन देशों में कभी-कभी सम्मिलित मन्त्रिमण्डल भी बन जाता है। परन्तु रूस में यह बात सम्भव नहीं है। वहाँ न तो अविश्वास का प्रस्ताव पास होने की नौबत आती है और न दूसरे दल की (कम्युनिस्ट दल के अलावा) सरकार बनने की सम्भावना ही है। कम्युनिस्ट दल का संगठन इतना शक्तिशाली है और वह इतने ठोस आधार पर स्थित है कि डिग नहीं सकता और न दूसरे दलों को पनपने दे सकता है। इसीलिए तो रूस पर यह दोष लगाया जाता है कि वहाँ एक दल की तानाशाही है। वहाँ उसी दल के अन्तर्गत स्वतन्त्रता मिलती है, उसके बाहर नहीं। इन सब बातों से यह स्पष्ट है कि रूस में वास्तव में केबिनेट का ढाँचा नहीं है। जो कुछ है वह सिर्फ बाहर से देखने को ही है।[1]

UNIVERSITY QUESTIONS

1. *Give the constitution and functions of the Supreme Soviet in U. S. S. R.*
2. Describe the organisation and *functions of the Presidium. What is* its importance in the governmental machinery of the U.S.S.R.?
3. Analyse the constitution and functions of the Council of Peoples' Commissars and compare this body with the cabinet-system in England.
4. Discuss the relation between the Executive and the Legislative in the U. S. S. R. and show how far they are modelled on the cabinet-system. (*Agra, 1950*)
5. What place does the Presidium occupy in the constitutional set-up of U. S. S. R. ? Describe its powers and functions, (*Delhi, 1949, 1951*; *Punjab, 1953*)

1 "It can be, therefore, said, that the Union Government has the external forms or trappings of the Cabinet system but not its reality or substance. It exists more in name than in reality."

पाँचवाँ परिच्छेद

सोवियट रूस की न्याय-व्यवस्था

विषय-प्रवेश :

सन् १९२३ के संविधान ने सोवियट रूस में एक सर्वोच्च न्यायालय तथा सोवियट रूस की केन्द्रीय कार्यकारिणी समिति (Central Executive Committee) के द्वारा नियुक्त एक प्रोक्योरेटर (Procurator) की व्यवस्था की। सर्वोच्च न्यायालय के कार्य-क्षेत्र में संघीय विधि-निर्माण पर अपनी राय देना, छोटे न्यायालयों की अपीलें सुनना, संघ के अधिराज्यों द्वारा पारित विधि की वैधानिकता स्पष्ट करना तथा उनके पारस्परिक झगड़ों को तय करना रक्खा गया परन्तु संघ की विधि की वैधानिकता व अवैधानिकता घोषित करने का उसे अधिकार न दिया गया। यदि प्रोक्योरेटर और सर्वोच्च न्यायालय के बीच किसी प्रकार का मतभेद हुआ तो प्रोक्योरेटर को यह अधिकार था कि वह संघ की प्रेसीडियम के समक्ष अपनी बात रक्खे। इस प्रकार सर्वोच्च न्यायिक शक्ति सर्वोच्च न्यायालय में निहित न हुई।

सन् १९३६ के संविधान द्वारा सोवियट रूस में एक संघीय सर्वोच्च न्यायालय तथा अधिराज्यों के सर्वोच्च न्यायालयों (प्रत्येक में एक-एक), प्रादेशिक न्यायालयों, क्षेत्रीय न्यायालयों तथा सुप्रीम सोवियट द्वारा स्थापित विशेष न्यायालयों की व्यवस्था की गई है। न्यायाधीशों को स्वतन्त्रता प्रदान की गई है। संविधान की ११२ वीं धारा के अनुसार "न्यायाधीश स्वतन्त्र हैं और वे केवल विधि के मातहत हैं।" यह स्वतन्त्रता कहाँ तक व्यवहार में दृष्टिगोचर होती है, यह एक कल्पना का विषय है। रूस की दलबन्दी व दल की तानाशाही उस स्वतन्त्रता को अपना उज्ज्वल रूप धारण नहीं करने दे सकती। रूस की न्यायिक व्यवस्था की सामान्य विशेषताओं पर ध्यान देने से इस कथन की पुष्टि हो जाती है।

सोवियट न्यायालयों की सामान्य विशेषताएँ :

जिस प्रकार शासन संविधान के क्षेत्र में सोवियट रूस एक नवीन उदाहरण प्रस्तुत करता है उसी प्रकार न्यायिक क्षेत्र में भी हम सोवियट व्यवस्था में एक अनोखापन पाते हैं। संसार के अन्य देशों में की सी न्यायिक व्यवस्था सोवियट रूस में नहीं है। वहाँ के न्याय-विभाग के सम्बन्ध में निम्नलिखित बातें विशेष रोचक हैं :—

(१) सोवियट रूस में न्याय-विभाग की स्थिति वैसी नहीं है जैसी इङ्गलैण्ड या अमेरिका में है। इन दोनों देशों में न्याय-विभाग सरकार के अन्य दो विभागों—

व्यवस्थापिका तथा कार्यपालिका—से स्वतन्त्र है। अतः कानून की व्याख्या करने में तथा उसका पालन करवाने में उसे पूर्ण स्वतन्त्रता है परन्तु रूस में न्याय-विभाग सरकार का स्वतन्त्र अंग नहीं है, वरन् अन्य विभागों की भाँति यह भी एक प्रकार का प्रशासकीय विभाग है जो सरकार द्वारा प्रतिपादित नीति को स्वीकार करता है और उसके उल्लंघनकर्त्ताओं को दण्ड देता है।[1] न्यायाधीशों को कहाँ तक स्वतन्त्रता होगी इसका एक अन्दाज ही लगाया जा सकता है क्योंकि जहाँ पार्टी न्यायपालिका के भी ऊपर है वहाँ न्याय-विभाग की स्वतन्त्रता संदेहास्पद ही है।

(२) परन्तु इसका यह आशय नहीं है कि सोवियट न्याय-व्यवस्था में पक्षपातपूर्ण कार्यवाही होती होगी। वास्तव में रूस में पक्षपात है ही नहीं। पक्षपात वहाँ पर होने की सम्भावना अधिक रहती है जहाँ समाज में विभिन्न वर्ग हों और प्रभावशाली वर्ग अपनी धन-सम्पत्ति का अनुचित प्रयोग करके न्याय को अपने पक्ष में खींच लेता हो। पूँजीपति देशों में इस प्रकार के अनेक उदाहरण मिल सकते हैं। रूस में वर्गीकरण का प्रश्न ही पैदा नहीं होता, इसलिए न्याय को खरीदने की बीमारी भी न्यायालयों में नहीं घुसने पाती।

(३) सोवियट रूस के न्यायालयों का प्रमुख कार्य यह है कि वे सन् १९१७ की क्रान्ति द्वारा स्थापित सामाजिक व्यवस्था की रक्षा करें। वहाँ पर सरकार के द्वारा नागरिकों के अधिकारों पर आक्रमण होने का प्रश्न नहीं है और न कोई इस बात को सोच ही सकता है, क्योंकि सरकार ही जनता की है। अधिकारों की रक्षा का भी प्रश्न पैदा नहीं होता, उनकी रक्षा सरकार स्वयं करती है। न्याय-विभाग का काम यह है कि वह समाज जिसके आधार पर सोवियट शासन-व्यवस्था कायम है, टूटने न पावे। रूस के न्यायालय उस समाज के दुश्मनों को दण्ड देते हैं (उक्त समाज कार्ल मार्क्स के समाजवाद के आधार पर निर्मित है)।

(४) सोवियट रूस में न्यायालयों को न्याय प्रदान करने में भी इतनी स्वतन्त्रता नहीं है जितनी इङ्गलैण्ड या अमेरिका में है। इसका प्रमाण यह है कि न्याय राज्य के कानून के अफसरों की मदद से किया जाता है। इस कार्य में प्रधान व्यक्ति एटोर्नी जनरल (Attorney General) है जो सुप्रीम कौंसिल द्वारा सात वर्ष के लिये

1 "The independence of the judges referred to in Article 112 of the Stalin Constitution does not and cannot signify their independence of politics. The judges are only subject to the law—this provision expresses the subordination of the judges to the policy of the Soviet regime which finds its expression in the law. The demand that the work of the judge be subject to the law and the demand that it be subject to the policy of the commuuist party cannot be in contradiction in our country."
(*N. M. Polyansky: The Soviet Criminal Court as a conductor of the policy of the Parts and the Soviet Regime, pp. 125-139*)

नियुक्त किया जाता है। संविधान की १२७ वीं धारा के अनुसार यह स्पष्ट किया गया है कि कोई भी व्यक्ति न्यायालय अथवा प्रोक्योरेटर की अनुमति के बिना हिरासत में न रक्खा जाय। परन्तु अक्सर यह देखा जाता है कि जब राष्ट्र के हित का प्रश्न आता है तब व्यक्तिगत स्वतन्त्रता का खून कर दिया जाता है।

(५) न्यायाधीशों की नियुक्ति भी रूस में विचित्र प्रकार से होती है। इङ्गलेण्ड और फ्रान्स में न्यायाधीश कार्यपालिका द्वारा नियुक्त किये जाते हैं, परन्तु रूस में या तो उन्हें जनता चुनती है या वे विभिन्न सोवियटों द्वारा निर्वाचित होते हैं।

(६) न्यायाधीशों के लिये विशेष योग्यता की आवश्यकता नहीं है। प्रत्येक नागरिक न्यायाधीश होने के योग्य है।

(७) सोवियट न्यायालयों का मुख्य लक्ष्य दण्ड देना ही नहीं है बल्कि अपराधी को सुधारना है। मृत्यु-दण्ड तो सन् १९४७ से बन्द कर दिया गया है। परन्तु जो व्यक्ति जन-सम्पत्ति के नाशक हैं, या जो सट्टेबाज, लुटेरे या अनुशासन को भंग करने वाले हैं, उन्हें कड़ी से कड़ी सजाएँ दी जाती हैं।

(८) रूस के न्यायालयों में एक भाषा का प्रयोग नहीं होता वरन् स्थानीय भाषाएँ प्रयोग में लाई जाती हैं।

(९) रूस में न्यायिक व्यवस्था में केन्द्रीयकरण अधिक है। यह दो बातों से स्पष्ट है—प्रथम तो रूस में कोई संघीय न्यायालय नहीं है बल्कि सम्पूर्ण यूनियन का एक ही न्यायालय है; और दूसरे इस न्यायालय की शक्ति का क्षेत्र अत्यधिक विस्तृत है।

(१०) रूस में एक अजीब बात यह है कि वहाँ पर अभियुक्त अपनी रक्षा के लिए प्रायः प्राइवेट वकील वगैरह नहीं लाते हैं। रूस में इस प्रकार के वकील कम हैं। जान, माल तथा समाज-व्यवस्था सम्बन्धी नियमों की रक्षा करना बहुत आवश्यक है, और कोई अभियुक्त इनका विनाश करने पर सख्त सजा बिना नहीं बच सकता। अभियुक्त की रक्षा के लिए एक वकील सरकार की ओर से मुफ्त मिलता है।

सुप्रीम कोर्ट :

सुप्रीम कोर्ट रूस का सर्वोच्च न्यायालय है। इसको कार्य की सुविधा के लिए पाँच भागों में विभाजित कर दिया गया है–(१) फौजदारी (Criminal), (२) दीवानी (Civil), (३) सैनिक (Military), (४) रेलवे (Railway), (५) जल-यातायात (Water Transport)। इस न्यायालय के सदस्य सुप्रीम कौन्सिल द्वारा ५ वर्ष के लिए चुने जाते हैं। न्यायालय में एक अध्यक्ष, एक उपाध्यक्ष और अनेक न्यायाधीश होते हैं। सन् १९३८ में इनकी संख्या ४५ थी परन्तु सन् १९४६ में यह ६८ तक पहुँच गई। यह न्यायालय छोटे न्यायालयों की अपीलें ही नहीं सुनता है वरन् मौलिक रूप में कुछ मुकद्दमों का फैसला भी करता है। इस न्यायालय के प्रमुख कार्य निम्नलिखित हैं—

(१) प्रजातन्त्रों की सुविधा के लिए संघीय कानूनों की व्याख्या करना।
(२) छोटे-छोटे न्यायालयों की अपीलें सुनना।
(३) छोटे-छोटे न्यायालयों के कार्यों का निरीक्षण करना।
(४) सोवियट समाज-व्यवस्था की रक्षा करना।
(५) निर्मित जनतन्त्रों (Constituent Republics) की अदालतों द्वारा दिये गये फैसलों की कार्य-समिति को रिपोर्ट देना, यदि वे संघ के अनुकूल नहीं हैं।
(६) संघ के बड़े-बड़े अधिकारियों के खिलाफ आरोपों की जाँच करना।
(७) निर्मित जनतन्त्रों के आपसी झगड़ों को तय करना।

सुप्रीम कोर्ट को,अपने कार्य में सहायता देने के लिये एक एटोर्नी जनरल होता है। वह सात वर्ष के लिये नियुक्त किया जाता है और प्रत्येक मामले में उसकी पूर्व-सम्मति लेना अनिवार्य है।

न्यायालय कार्य की सुविधा के लिये ५ भागों में बंटा हुआ है, परन्तु कुछ मामलों में सम्पूर्ण न्यायालय की बैठक भी होती है। इसमें प्राय: ११ सदस्य होते हैं।

अन्य न्यायालय :

पीपुल्स कोर्ट (People's Courts)—इन न्यायालयों में एक-एक न्यायाधीश तथा दो-दो उनके सहायक होते हैं। ये जनता द्वारा तीन वर्ष के लिये चुने जाते हैं।

जिला कोर्ट (District Courts)—ये जिले की सोवियटों द्वारा चुने जाते हैं। इनके न्यायाधीश ५ वर्ष के लिये निर्वाचित होते हैं।

जनतन्त्रों के सुप्रीम कोर्ट—प्रत्येक निर्मित जनतन्त्र राज्य में अपना-अपना एक सर्वोच्च न्यायालय होता है। इसकी अवधि भी ५ साल की होती है। उस अवधि के बाद फिर चुनाव होता है। यह अधिराज्य की सबसे बड़ी अदालत होती है।

जैसा कि ऊपर कहा जा चुका है, रूस में न्याय-विभाग प्रशासकीय विभाग का एक अङ्ग है। वैसे तो न्यायाधीश स्वतन्त्र हैं और सिर्फ कानून के आधीन हैं परन्तु जहाँ सन् १९१७ की क्रान्ति द्वारा स्थापित सामाजिक तथा आर्थिक ढाँचे का प्रश्न उठता है वहाँ न्यायालयों को उसी के पक्ष में न्याय देना होता है। इसके अलावा अन्य मामलों में जितना निष्पक्षतापूर्ण न्याय रूस में होता है उतना अन्यत्र कहीं नहीं मिलेगा।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. What are the distinguishing features of the Soviet Judiciary? Describe its organisation.
2. How far is the judiciary independent in Soviet Russia?

छठा परिच्छेद

सोवियट संघ का ढाँचा तथा इकाई राज्यों की सरकारें

सोवियट राज्य संघों का संघ (Federation of Federations) है। यह इस प्रकार है कि सोवियट संघ के अन्तर्गत जो राज्य हैं, उन राज्यों के भी कई छोटे-छोटे भाग हैं जो स्वाधीन हैं और जिनका अलग विधान है, जिसकी संघ सरकार ने सामान्य रूपरेखा बना दी है तथा जिसे अधिराज्य की सरकार ने स्वीकृत कर लिया है। किसी-किसी अधिराज्य में तो १६-१७ तक ऐसे स्वाधीन राज्य मिलेंगे। उदाहरण के लिये रूस के सोवियट संघात्मक समाजवादी प्रजातन्त्र (Russian Socialist Federated Soviet Republic : R. S. F. S. R.) में ऐसे स्वाधीन क्षेत्रों की संख्या १७ है। इसी प्रकार अन्य अधिराज्यों में भी जातियों के आधार पर स्वाधीन राज्य (Autonomous Republics) बने हुए हैं। ये संघ मिलकर सोवियट यूनियन बनाते हैं। इस प्रकार सोवियट संघ उप-संघों का संघ बन गया है।

सोवियट संघ में आजकल यूक्रेन के दो विभाग हो जाने से १७ संघ सम्मिलित हैं। सन् १९४८ में इनकी संख्या १६ थी। वे निम्नलिखित हैं:—

(१) रूसी समाजवादी संघात्मक सोवियट प्रजातन्त्र (The Russian Socialist Federated Soviet Republic।

(२) सफेद रूसी समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The White Russian or Byelo Russian Socialist Soviet Republic)।

(३) यूक्रेन का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Ukrainian Socialist Soviet Republic)।

(४) तुर्कमान समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Turkinian Socialist Soviet Republic)।

(५) उज़बेगों का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Uzbek Socialist Soviet Republic)।

(६) तदजैक का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Tedzhik Socialist Soviet Republic)।

(७) एज़रबेजान का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Azerbaidzhan Socialist Soviet Republic)।

(८) कज़ाख का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Kazakh Socialist Soviet Republic)।

(९) किरघिज़ का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Kirghiz Socialist Soviet Republic)।

(१०) जॉर्जिया का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Georgian Socialist Soviet Republic)।

(११) अर्मीनिया का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Armenian Socialist Soviet Republic)।

(१२) करोलियन-फिनिस समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Karolian-Finish Socialist Soviet Republic)।

(१३) इस्टोनियन समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Estonian Socialist Soviet Republic)।

(१४) लटेवियन समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Latavian Socialist Soviet Republic)।

(१५) लिथुएनिया का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Lithuanian Socialist Soviet Republic)।

(१६) मोल्डेविया का समाजवादी सोवियट प्रजातन्त्र (The Moldavian Socialist Soviet Republic)।

जैसा पिछले एक परिच्छेद में बतलाया जा चुका है, इनमें से प्रत्येक राज्य सोवियट संघ में अपनी इच्छा से शामिल हुआ है, और प्रत्येक राज्य को संघ से पृथक होने का भी अधिकार प्राप्त है।

इनमें से प्रत्येक राज्य में जाति अधिक संख्या में पाई जाती है उसी के नाम से वह रिपब्लिक पुकारी जाती है और वे यूनियन रिपब्लिक कहलाते हैं परन्तु प्रत्येक रिपब्लिक में अनेक जातियाँ रहती हैं और इन जातियों ने मिलकर उस रिपब्लिक के अन्दर अपने-अपने स्वाधीन राज्य बना लिए हैं जो उस नाम से (यानी Autonomous Republic) पुकारे जाते हैं।

स्वीधान राज्य (Autonomous Republic) किसान तथा मजदूरों का समाजवादी राष्ट्र होता है जो किसी रिपब्लिक के अन्दर हो और उसके द्वारा वह सोवियट रूस का भाग हो। इसका अलग विधान होता है, परन्तु उसके समस्त नियम व कानून रिपब्लिक अथवा सोवियट यूनियन सरकारों के विरुद्ध न होने चाहिए।

प्रत्येक स्वाधीन राज्य का निश्चित भू-भाग होता है और उसका नागरिक रिपब्लिक (जिसके अन्तर्गत वह राज्य है) का तथा सोवियट यूनियन (U.S.S. R.)

दोनों का नागरिक होता है। उसका झण्डा भी वही होता है जो रिपब्लिक का होता है। केवल उस राज्य का उस पर नाम और होता है।

जिस प्रकार स्वाधीन राज्य हैं उसी प्रकार कुछ प्रजातन्त्रों अर्थात् सोवियट यूनियन के अधिराज्यों में स्वाधीन रीजन (Autonomous Regions) होते हैं। कुछ छोटी जातियाँ मिलकर इन्हें बना लेती हैं और इनके भी वही अधिकार होते हैं जो स्वाधीन राज्यों को प्राप्त हैं।

स्वाधीन जिलों की भाँति ही कुछ जातियों ने कहीं-कहीं अपने-अपने राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas) बना लिए हैं। ये क्षेत्र किसी न किसी स्वाधीन रीजन (Autonomous Regions) या R.S.F.S.R. के किसी स्वाधीन राज्य के भाग होते हैं और इनको अपना शासन स्वयं करने की सीमित शक्ति प्रदान की जाती है।

इस प्रकार हम देखते हैं कि सोवियट यूनियन एक सङ्घों का सङ्घ है। इसका चित्र निम्न प्रकार से खींचा जा सकता है।

सोवियट यूनियन (U.S.S.R.)

संघ के प्रजातन्त्र अधिराज्य (Union Republics)

(संख्या सन् १९४८ में १६ थी परन्तु अब १७ है)

स्वाधीन राज्य (Autonomous Republics)	स्वाधीन रीजन (Autonomous Regions)
राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas)	राष्ट्रीय क्षेत्र (National Areas)

संघ के यूनियन रिपब्लिक राज्यों के सम्बन्ध में कुछ विशेष बातें :

(१) संघ के अन्तर्गत राज्यों की अलग-अलग सरकारें हैं और उन्हें यूनियन की सरकार की स्वीकृति प्राप्त है। सङ्घ से ये राज्य अपना सम्बन्ध भी विच्छेद कर सकते हैं।

(२) इनके पास अपनी-अपनी अलग-अलग सेना है जिसका संगठन इनके हाथ में है।

(३) इन्हें विदेशों से सीधा सम्बन्ध स्थापित करने का अधिकार प्राप्त है।

(४) इनकी नागरिकता अलग है। इनका नागरिक प्रथमतः अधिराज्य का और दूसरे सोवियट यूनियन का नागरिक होता है।

(५) इनकी अलग-अलग सीमा निश्चित है और सोवियट रूस की सुप्रीम कौंसिल ही उसमें हेर-फेर कर सकती है।

(६) इन्हें अपने-अपने क्षेत्र में पूर्ण स्वतन्त्रता प्राप्त है और ये अपने-अपने राज्य में अपनी-अपनी स्थानीय भाषा का प्रयोग करते हैं।

(७) इनके अपने-अपने राज्य के कानून हैं जो सब राज्यों में मान्य होते हैं।

(८) प्रत्येक राज्य में विधान का वही आधार है और वही ढाँचा है जैसा केन्द्र में है।

प्रत्येक यूनियन रिपब्लिक में जनता द्वारा निर्वाचित एक सुप्रीम सोवियट होती है। यह केन्द्र की भाँति एक प्रेसीडियम बनाती है और प्रशासकीय कार्यों के लिए एक मन्त्रिमण्डल बनाती है। सुप्रीम सोवियट, प्रेसीडियम तथा मन्त्रिमण्डल के अपने-अपने राज्य में वही कार्य हैं जो केन्द्र में यूनियन सरकार के हैं।

यूनियन की सुप्रीम सोवियटों की अवधि चार साल है और इनकी बैठकें साल में चार बार होती हैं। अधिकतर व्यवस्थापिका सम्बन्धी कार्य उनकी प्रेसीडियम द्वारा किया जाता है, और कार्यपालिका सम्बन्धी उनकी मन्त्रि-परिषद् द्वारा।

मन्त्रि-परिषद् (Council of People's Commissars) में केन्द्र की भाँति विभिन्न विभागों के मन्त्री, राष्ट्रीय योजना कमीशन का सभापति, एक अध्यक्ष तथा एक उपाध्यक्ष होते हैं। प्रत्येक राज्य में प्रायः निम्नलिखित प्रशासकीय विभाग होते हैं और उनका एक-एक मन्त्री होता है—

(१) खाद्य-उद्योग (Food Industry)
(२) काष्ठ-उद्योग (Wood Industry)
(३) अन्न तथा पशु (Food and Animals)
(४) सरकारी फार्म (Government Farms)
(५) कृषि (Agriculture)
(६) छोटी वस्तुओं का उद्योग (Light Industries)
(७) घरेलू व्यापार (Internal Trade)
(८) घरेलू मामले (Internal Affaiss)
(९) स्वास्थ्य (Public Health)
(१०) न्याय (Justice)
(११) वैदेशिक मामले (Foreign Affairs)
(१२) शिक्षा (Education)
(१३) आय-व्यय (Budget and Communal Economy)
(१४) कला-संस्कृति (Art and Culture)
(१५) सेना (Army)

(९) प्रत्येक अधिराज्य को संघ में और प्रत्येक स्वाधीन राज्य व जिले को अधिराज्य में समानता का अधिकार प्राप्त है। इसी अधिकार की रक्षा के कारण रूस के राष्ट्र तथा उप-राष्ट्र एक सूत्र में बँधे हुए हैं।

(१०) प्रत्येक अधिराज्य के अलग-अलग न्यायालय, धारा-सभाएँ और शिक्षालय हैं, जिनमें प्रत्येक को अपनी-अपनी भाषा प्रयोग करने का अधिकार है। रूस के लिए यह गौरव की बात है कि वह न किसी के ऊपर कोई धर्म थोपता है और न कोई भाषा। इन सब बातों को ध्यान में रखकर हम कह सकते हैं कि रूस में नागरिक को वास्तविक स्वतन्त्रता प्राप्त है।

UNIVERSITY QUESTIONS

1. Describe the system of government of Federated Republics in U. S. S. R.
2. Describe the salient features of the Constitutions of the Union of Soviet Socialist Republics. Is it correct to say it Federation ? *(Delhi, 1949)*

सातवाँ परिच्छेद

सोवियट रूस का जनतन्त्र

रूस और दलगत प्रथा :

संसार में रूस ही एक ऐसा जनतन्त्रात्मक देश है जहाँ पर एक-दल प्रणाली द्वारा शासन-कार्य बद्ध है। द्वितीय महायुद्ध से पूर्व तो और भी देशों में—जर्मनी और इटली—एक-दलगत राज्य था। जर्मनी में नाजी पार्टी और इटली में फासिस्ट दल सर्वशक्तिमान् थे। परन्तु युद्ध में इन देशों की हार हो जाने के कारण इन दलों की शक्ति नष्ट हो गई। रूस को इस प्रकार के किसी कटु अनुभव से पाला नहीं पड़ा है। सन् १९१७ की क्रान्ति के बाद वहाँ पर बोल्शेविक दल का जोर हुआ और उसकी शक्ति इतनी बढ़ी कि उसने सम्पूर्ण शासन-सत्ता अपने हाथ में ले ली। तब से उस दल की शक्ति निरन्तर बढ़ती ही गई। वही दल आज कम्युनिस्ट दल कहलाता है और रूस की प्रशासकीय शक्ति को अपने हाथ में लिये हुए है। दूसरे दल भी रूस में मौजूद हैं परन्तु उनकी कोई वास्तविक शक्ति नहीं है और उनकी स्थिति अत्यन्त नाजुक है।[1]

जिस देश में एक-दलीय प्रणाली होती है वहाँ पर यह बात तो अवश्य है कि उस दल और सरकार की गुत्थी बड़ी मजबूत होती है। उन्हें एक दूसरे से पृथक करना या करने का प्रयत्न करना सर्वथा असम्भव है। कागज पर तथा सैद्धान्तिक रूप में वे एक दूसरे से भले ही पृथक हों परन्तु वास्तव में वे पृथक नहीं रह सकते। सरकार उस दल की कठपुतली बन जाती है और परोक्ष रूप में वह दल ही शासन करता है। सोवियट रूस में यह बात पूर्ण रूप से चरितार्थ होती है। शासन की छोटी इकाई से लेकर केन्द्रीय शासन की सर्वोच्च पदाधिकारी-समिति तक हमें दल की छाप और उसका प्रभाव स्पष्ट दृष्टिगोचर होता है।[2] पार्टी ही प्रत्येक स्थान के

1 There might (or still may) be other parties, but "on the sole condition that one is in power and the others in jail."

(A. R. Williams: The Soviets (New York, 1937), p. 96)

2 "From Moscow down through the constituent republics, the regions and districts, and out into the remotest villages, the two run parallel, each with its own headquarters, congresses, councils, officers, treasuries, newspapers, and what not; and officially it is the government, not the party, that makes laws, issues decrees, conducts foreign relations, carries on administration, controls the army and the navy, and gives orders to the police. Actully, however it is the party that rules"

(Ogg and Zink : Modern Foreign Governments, p. 812)

अधिकारी चुनती है, पार्टी ही सामान्य नीति का निर्माण करती है और इस बात को देखती है कि उसके सिद्धान्त और आदर्शों की पूर्ण रक्षा होती है।[1]

अन्य दल :

कम्युनिस्ट दल के अलावा रूस में अन्य कोई राजनैतिक दल नहीं है और दूसरा दल कोई रह भी नहीं सकता है। हाँ, कम्युनिस्ट पार्टी से सम्बन्ध रखने वाले विभिन्न ऐसे समुदाय हैं जिनका कार्य-क्षेत्र भिन्न है परन्तु राजनैतिक दृष्टि से वे सब एक ही सूत्र में बँधे हुए हैं। इन समुदायों में ट्रेड यूनियन, सहकारी फार्म संगठन, यंग कम्युनिस्ट दल आते हैं। इसके अलावा वैज्ञानिक, सांस्कृतिक, आमोद-प्रमोद सम्बन्धी अनेक समुदाय भी हैं, परन्तु वे सब कम्युनिस्ट दल द्वारा एक सूत्र में बँधे हुए हैं।

कम्युनिस्ट दल के उद्देश्य—रूस का जनतन्त्र :

कम्युनिज्म का उद्देश्य संसार में मार्क्स और लैनिन द्वारा प्रतिपादित सिद्धान्तों का प्रचार करना है। कम्युनिज्म के स्वयं के विस्तृत आर्थिक और राजनैतिक सिद्धान्त हैं जिन्हें कम्युनिस्ट दल के सदस्यों को पूर्णरूप से मानना पड़ता है और साथ ही साथ इसका एक सुसंगठित संगठन भी है जिसका ध्येय उन सिद्धान्तों की रक्षा करना तथा उन्हें संसार में फैलाना है। वर्ग-भेद मिटाना, व्यक्ति के परिश्रम के आधार पर उसके राजनैतिक तथा सामाजिक अधिकारों को निश्चित करना, उत्पादन तथा वितरण के समस्त साधनों का समाजीकरण करना, पूँजीवाद को मिटाना आदि कम्युनिज्म के सिद्धान्त हैं। इन सिद्धान्तों की रक्षा करने तथा इनका प्रसार करने के लिये कम्युनिज्म ने क्रान्ति को अपना अस्त्र बनाया है। बिना क्रान्ति के इन सिद्धान्तों को नहीं फैलाया जा सकता। कम्युनिस्ट दल वाले कहते हैं कि आधुनिक प्रजातन्त्र तो केवल एक ढोंग है। जनता को प्रजातन्त्र के नाम पर शोषित किया जाता है और आम जनता पूँजीपतियों के अन्याय की शिकार है। रूस के लोग अपनी प्रथा पर पूर्ण प्रजातन्त्र होने का दावा भरते हैं। इसके विपरीत संसार के पूँजीपति देश रूस की कम्युनिस्ट व्यवस्था की तीव्र आलोचना करते हैं। वे कहते हैं कि रूस की व्यवस्था एक आडम्बर है। वहाँ जनता को स्वतन्त्रता नहीं है। जनता के मौलिक अधिकारों की रक्षा का ढिंढोरा पीट कर रूस में जनता के अधिकारों का सबसे अधिक निरादर किया जाता है। वहाँ की न्यायपालिका दल के विरुद्ध कोई फैसला नहीं दे सकती और कम्युनिस्ट दल सब प्रकार जनता का मुँह बन्द किए हुए है। पाश्चात्य देशों के लोगों का यह भी कहना है कि वास्तविक विधान तो वह है जो समाज की रग-रग

[1] "The party openly admits," Stalin has said, "that it guides and gives general direction to the government."

में समाया हुआ है, उसी से उत्पन्न हुआ है और जिसके प्रति जनता की हार्दिक श्रद्धा है जो स्वतः ही उत्पन्न हुई है। रूस में यह बात नहीं है। रूस के विधान व उसकी राजनैतिक व्यवस्था का जनता पर जबर्दस्ती का प्रभाव है।[1] जनता उसके खिलाफ आवाज नहीं उठा सकती है। उसकी शक्ति अपरिमित है। कोई उसे कम नहीं कर सकता। एक लेखक का तो यह मत है कि रूस में जनतन्त्र के बाने द्वारा तानाशाही की दृढ़ नींव को ढकने का प्रयत्न किया गया है। वैधानिक प्रतीकों के द्वारा तानाशाही को जनतन्त्र का नारा प्रदान किया गया है। वास्तविकता यही है कि रूस में एक दल की तानाशाही है और पूर्ण शक्ति एक छोटे से दलीय वर्ग के हाथ में है।[2]

यद्यपि इस प्रकार के मतों में कुछ अतिशयोक्ति अवश्य है परन्तु इतना अवश्य है कि रूस का जनतन्त्र आज के अन्य देशों के जनतन्त्र के बहुत कुछ विपरीत है। रूस की व्यवस्था का आधार केन्द्रीयकरण है और स्टालिन का दावा भी था कि रूस की व्यवस्था ही वास्तविक जनतन्त्रीय व्यवस्था है क्योंकि एक जीर्ण-शीर्ण, दुर्बल, आर्थिक व राजनैतिक संकटों का शिकार रूस थोड़े ही समय में एक बहुत ही शक्तिशाली राष्ट्र बन गया। आलोचना करते समय हमें किसी व्यवस्था के परिणामों को देखना ही होगा। यह रूस की अनूठी व्यवस्था का ही परिणाम है। वह आज दुनिया के अग्रगण्य देशों में है। तो फिर आलोचना क्यों? आलोचना का आधार आज रूस की स्थिति व उसकी उन्नति नहीं है बल्कि रूसी दृष्टिकोण है और रूस का संसार पर साम्यवादी दृष्टिकोण को थोपने का प्रयत्न है। जहाँ तक रूस की व्यवस्था व उसकी उन्नति का सम्बन्ध है यह निश्चित रूप में कहा जा सकता है कि इस व्यवस्था के बिना रूस की उन्नति इतनी शीघ्र नहीं हो सकती थी और इतना स्पष्ट है ही कि सामाजिक व आर्थिक दृष्टि से भी रूस ने काफी उन्नति की है।

1 "Soviet public administration replaces western constitutional restraints on administration by a formidable proliferation of central controls of variety and on a scale without parallel in the west. The whole range of their activity as well as that of the central organs is always under careful surveillance by the representatives of the party."
(Merle Fainsod : op. cit.: Ch. *The Control of the Bureaucracy*, p. 329)

2 "The soviet regime has demonstrated great skill in using the trappings of mass democracy to mask their exonerated position of the dictatorial elite which dominates Soviet society. Constitutional myths and symbols have been ingeniously adopted to contribute to the illusion of mass participation and mass control. But the actual configurations of power in the Soviet system are difficult to conceal. The political realities of Soviet life speak the unmistakable language of a one-party dictatorship in which ultimate power is deposited in a narrow ruling group in the Kremlin."
(*Merle Fainsod : Constitutional Myths and Political Realities, pp. 325-326*)

भुखमरी, शोषण, गरीबी आदि जैसे रोगों का नाश कर दिया है। यदि मानव जाति के इन भयंकर अभिशापों को समाप्त करके रूस मानव की दुर्बलताओं पर नियन्त्रण कर सकता है तो वह इसीलिए कि वे बीमारियाँ फिर पनप न जावें। पूँजीपति राष्ट्र इनके शिकार हैं। रूस अपने ही यहाँ नहीं बल्कि सम्पूर्ण विश्व में अपने ही सिद्धान्तों का प्रचार करना चाहता है। आज उसका अन्य राष्ट्रों से जो द्वन्द्व है वह सिद्धान्तों का है। रूस का विधान जनता की आकांक्षाओं की पूर्ति करता है और उसके अधिकारों की रक्षा करता है। नियन्त्रण है अवश्य परन्तु वह इसलिए कि जब उस व्यवस्था ने राष्ट्र को लाभ पहुँचाया है तो उसकी रक्षा भी होनी है। इसीलिए इसे जनतन्त्रीय केन्द्रीयकरण (Democratic Centralism) कहा गया है। यही नाम इसके लिये उपयुक्त होगा।

परिशिष्ट

इङ्गलैंड का सन् १९११ का संसदीय अधिनियम

सन् १९११ के संसदीय अधिनियम का कारण सन् १९०९ में धन-विधेयक पर संसद के दोनों आगारों—लॉर्डसभा तथा लोकसभा—का मतभेद था। इस अधिनियम के द्वारा लॉर्डसभा का धन-विधेयकों पर कोई अधिकार न रहा। धन-विधेयक न तो लॉर्डसभा में पेश ही हो सकते हैं और न उन पर उसका कोई विरोध ही महत्त्व रखता है। समस्त धन-विधेयक लोकसभा में ही पेश होते हैं और उसके द्वारा पास किए जाने के तीस दिन बाद वे पास हुए ही माने जाते हैं चाहे लॉर्डसभा भले ही उनका विरोध करती रहे।

दूसरी बात जो इस अधिनियम द्वारा तय हुई वह यह थी कि लोकसभा को कानून बनाने का अनियन्त्रित अधिकार दे दिया गया। लोकसभा के द्वारा दो बार पास किया हुआ बिल कानून बन ही जाता है। लॉर्डसभा इस प्रकार विधेयक पास होने में देरी ही कर सकती है, वह उसे रोक नहीं सकती।

लोकसभा का स्पीकर ही यह तय करता है कि कौन-सा विधेयक धन-विधेयक है और कौन-सा साधारण विधेयक है। उसके इस निर्णय के विरुद्ध किसी न्यायालय में अपील नहीं हो सकती।

चौथी बात यह तय हुई कि लोकसभा की अवधि सात साल (जो सन् १७१५ के सप्तवार्षिक अधिनियम द्वारा तय हुई थी और तब से चली आ रही थी) के बजाय ५ साल कर दी गई।

सन् १९११ का संसदीय अधिनियम अत्यधिक महत्त्व रखता है क्योंकि इसने लोकसभा को अपरिमित शक्ति प्रदान कर दी और लॉर्डसभा की शक्ति को करीब-करीब समाप्त-सा ही कर दिया।

धन-विधेयकों की व्याख्या के सम्बन्ध में इस अधिनियम में स्पष्ट है कि ये विधेयक वे हैं जिनका सम्बन्ध निम्नलिखित विषयों में से किसी भी एक या एक से अधिक से है :—

नए कर लगाना, कर उठाना, कर माफ करना, बजट बनाना, खर्च की मदें निश्चित करना, ऋण लेना व देना, विभिन्न मदों के व्यय में कमी करना या बढ़ाना, सार्वजनिक धन का दान देना, हिसाब की जाँच करना, ऋण की प्रत्याभूति बढ़ाना, सब विषयों के हिसाबों की जांच करना। यह "कर" सार्वजनिक धन से सम्बन्ध

रखता है न कि स्थानीय संस्थाओं के धन से। वह "कर" इसके अलावा है और उस पर स्थानीय संस्थाओं का ही अधिकार है।

इस अधिनियम के बनाए जाने का कारण यह था कि ब्रिटिश जनता लॉर्डसभा को समाप्त नहीं करना चाहती थी परन्तु साथ ही साथ वह उसका विरोध भी सहन नहीं कर सकती थी। उस अधिनियम का उद्देश्य संसद के दोनों सदनों के सम्बन्ध को नियमित करना तथा पूर्ण लोकसत्तात्मक शासन-प्रणाली को स्थान देना था। लॉर्डसभा के संगठन का आधार पैतृकाधिकार होने के कारण लोकतंत्रीय भावना का उससे विरोध उत्पन्न होना स्वाभाविक था। परतु साथ ही साथ अँग्रेज जनता लॉर्डसभा को समाप्त नहीं करना चाहती थी, अतः उसकी स्थिति को स्वीकार करते हुए उसकी शक्ति को कम कर दिया।

SELECT BIBLIOGRAPHY

1. Adams, G. B. : Constitutional History of England (1934 Edition)
2. Dicey, A. V. : The Law of the Constitution (1939 Edition)
3. Anson, W. R. : Law and Customs of the Constitution.
4. Bounty : Studies in Constitutional Law.
5. Finer, H. : Theory & Practice of Modern Government.
6. Jennings, W. T. : The Law and the Constitution.
7. Laski, H. J. : Parliamentary Government in England.
8. Ogg & Zink : Modern Foreign Governments.
9. Munro : Governments of Europe.
10. Ramsay Muir : How Britain is Governed.
11. Marriott, J. A. R. : English Political Institutions.
12. Blackstone : Commentaries.
13. Bagehot, W. : The English Constitution.
14. Sydney Low : Government ot England.
15. Bryce, Viscount : Modern Democracies, Vol. II.
16. Dimock & Dimock : American Government in Action.
17. Macdonald H. Malcolm et al. : Outside Readings in American Government.
18. Haskin, F. J. : The American Government.
19. Munro, W. B. : The Government of the United States,
20. Reed, T. H. : Forms and Functions of American Government.
21. Wilson, Woodrow : The State.
22. Munro : The American Presidency.
23. Buell, R. L. : New Governments of Europe (Nelson, 1934).
24. Batsell, W. R. : Soviet Rule in Russia.
25. Brooks : Government and Politics of Switzerland.
26. Lowell, A. L. : Govts. and Parties in Continental Europe.
27. Select Constitutions of the World.
28. Buck, P. W. & Masland, J. W. : Govts. of Foreign Powers.
29. Bryce, Viscount : Modern Democracies, Vol. I.
30. Harris Montague : Local Governments in Many Lands.
31. Laski : The American Presidency.
32. Virginia Corrles : How America is Governed.
33. Patterson : The American Government.
34. Merle Fainsod : How Russia is Ruled.

लाल बहादुर शास्त्री राष्ट्रीय प्रशासन अकादमी, पुस्तकालय
L.B.S. National Academy of Administration, Library

मसूरी
MUSSOORIE

यह पुस्तक निम्नांकित तारीख तक वापिस करनी है ।
This book is to be returned on the date last stamped

दिनांक Date	उधारकर्त्ता की संख्या Borrower's No.	दिनांक Date	उधारकर्त्ता की संख्या Borrower's No.

GL H 342
GAN

H
342
गेंद
अवाप्ति सं०
ACC. No........ ~~10757~~
वर्ग सं.
Class No................
पुस्तक सं.
Book No..............
लेखक
Author गेंद, डी0 एन0

342
गेंद
~~10757~~

LIBRARY

LAL BAHADUR SHASTRI

National Academy of Administration

MUSSOORIE

Accession No. 122055

1. Books are issued for 15 days only but may have to be recalled earlier if urgently required.
2. An over-due charge of 25 Paise per day per volume will be charged.
3. Books may be renewed on request, at the discretion of the Librarian.
4. Periodicals, Rare and Reference books may not be issued and may be consulted only in the Library.
5. Books lost, defaced or injured in any way shall have to be replaced or its double price shall be paid by the borrower.

Help to keep this book fresh, clean & moving